सेनानी पुष्यमित्र

सेनानी पुष्यमित्र

मौर्य साम्राज्य के ह्रासकाल का कल्पनाप्रसूत कथानक

लेखक
सत्यकेतु विद्यालंकार
डी० लिट० (पेरिस)

राधाकृष्ण प्रकाशन

प्रस्तावना

भारत के प्राचीन इतिहास म सनानी पुष्यमित्र का महत्त्वपूण स्थान है। मौय वश का अ त कर उ हाने मगध म शुङ्गवश के शासन का सूत्रपात किया था (१८४ ईस्वी पूव)। च द्रगुप्त और बिन्दुसार जैसे मौय राजा बडे प्रतापी थे। उनके प्रयत्न से प्राय सम्पूण भारत एक शासन मे आ गया था, और मौय साम्राज्य की उत्तर-पश्चिमी सीमा हि दूकुश पवतमाला से भी परे तक पहुँच गई थी। अशोक न शस्त्रशक्ति द्वारा साम्राज्य विस्तार की नीति का परित्याग कर धमविजय की नीति को अपनाया, और अपन साम्राज्य की असीम शक्ति का उपयोग सेवा और लोक-कल्याण द्वारा अ य देशा की विजय के लिए किया। परिणाम यह हुआ कि पश्चिमी और मध्य एशिया के विविध राज्या म भारतीय धम और सभ्यता का प्रसार हुआ, और भारत का यह सास्कृतिक साम्राज्य सदिया तक कायम रहा। पर अशोक न धमविजय की जिस नीति का अवलम्बन किया था निबल हाथा म पडकर वह विनाशकारिणी भी हो सकती थी। धमविजय की धुन म अशोक के उत्तराधिकारियो न स य शक्ति की उपेक्षा प्रारम्भ कर दी जिसके कारण विशाल मौय-साम्राज्य खण्ड-खण्ड होने लगा, और यवनो ने भारत पर आक्रमण फिर प्रारम्भ कर दिए। मगध की सेना यवना का सामना करन मे असमथ रही, और वे भारत को आक्रा त करते हुए अयोध्या तक चले आए। अशोक की धमविजय की नीति उसके निबल उत्तरा धिकारिया के हाथा मे असफल और बदनाम हा गई। इसीलिए एक प्राचीन ग्रथकार ने लिखा है कि राजाआ का काय शत्रुआ का दमन तथा प्रजा का पालन करना है सिर मुडा कर चन म बठना नही है। पुष्यमित्र ने मौर्यों के निर्वीय शासन का अन्त कर भारत की क्षात्रशक्ति का पुनरुद्धार किया और यवना को सि धु नदी के परे धकल देन म सफलता प्राप्त की।

यह स्वाभाविक था कि धमविजय की असफल नीति के कारण जनता म बौद्ध धम के प्रति भी असतोष की भावना उत्प न होन लगे। अनेक मौय राजा बौद्ध धम के अनुयायी थ। उनका आश्रय पाकर इस धम का बहुत उत्कप हुआ था। बहुत से विहार और सघाराम इस काल म स्थापित हो गए थ जिनम हजारो स्थविर और भिक्षु निवास करत थे। मनुष्य मात्र की सेवा मे तत्पर रहने वाले, भिक्षावृत्ति से भोजन प्राप्त करने वाले और

निरन्तर घूम घूमकर जनता को कल्याण मार्ग का उपदेश करने वाले भिक्षुओं का स्थान अब सम्राटों के आश्रय में सब प्रकार का सुख भोगने वाले भिक्षुओं ने ले लिया था। जनता के हृदय में भिक्षुओं के प्रति जो आदर था यदि अब उसमें न्यूनता आने लगी हो, तो इसमें आश्चर्य ही क्या था ? इसी का यह परिणाम हुआ कि भारत में बौद्ध धर्म के विरुद्ध प्रतिक्रिया प्रारम्भ हुई और लोगों का ध्यान उस प्राचीन वैदिक धर्म की ओर आकृष्ट हुआ जिसके अनुसार शत्रुओं का संहार कर अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान करना राजाओं का पुनीत कर्तव्य माना जाता था। यही कारण है कि मौर्य वंश के अंतिम राजा बृहद्रथ के शासन का अंत कर सेनानी पुष्यमित्र ने जब पाटलिपुत्र के राजसिंहासन को अधिगत किया तो उन्होंने मगध की सैन्यशक्ति को संगठित कर यवनों को परास्त किया और प्राचीन आर्य राजाओं की परम्परा का अनुसरण कर अश्वमेध यज्ञ का आयोजन किया। बौद्ध धर्म का ह्रास और वैदिक धर्म का पुनरुत्थान पुष्यमित्र के काल की महत्त्वपूर्ण घटनाएं हैं।

प्राचीन भारतीय इतिहास की जो सामग्री इस समय उपलब्ध है उससे पुष्यमित्र के जीवन तथा कर्तृत्व पर अधिक प्रकाश नहीं पड़ता। पौराणिक अनुश्रुति से केवल इतना ही ज्ञात होता है कि मौर्य वंश के अंतिम राजा बृहद्रथ को उखाड़ कर (समुद्धृत्य) सेनानी पुष्यमित्र ने मगध में शुङ्ग वंश के शासन का प्रारम्भ किया था। बृहद्रथ को किस प्रकार उखाड़ा गया इस सम्बन्ध में बाणभट्ट के 'हर्षचरितम्' में एक निर्देश विद्यमान है। उसके अनुसार सैन्यशक्ति के प्रदर्शन के बहाने से पुष्यमित्र ने मौर्य साम्राज्य की सब सेनाओं को पाटलिपुत्र में एकत्र कर लिया और बृहद्रथ को पीस कर स्वयं राजसिंहासन प्राप्त कर लिया। सिन्धु तट पर यवनों को परास्त कर पुष्यमित्र ने अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान किया था यह बात महाकवि कालिदास के नाटक मालविकाग्निमित्रम् से ज्ञात होती है और इसकी पुष्टि अयोध्या में प्राप्त एक उत्कीर्ण लेख द्वारा हुई है जिसमें पुष्यमित्र को द्विरश्वमेधयाजी कहा गया है। पाणिनि की अष्टाध्यायी पर महाभाष्य लिखने वाले पतञ्जलि पुष्यमित्र के समकालीन थे। उन्होंने लिखा है—इह पुष्यमित्रं याजयामः जिससे यह अनुमान किया गया है कि पुष्यमित्र के अश्वमेध यज्ञ का पौरोहित्य पतञ्जलि द्वारा ही किया गया था। अशोक के

कुछ समय पश्चात भारत पर यवनो के आक्रमण प्रारम्भ हो गए थे, इसकी सूचना जहा ग्रीक विवरणो से प्राप्त होती है वहा पतञ्जलि के महाभाष्य और 'गर्गसहिता' मे भी यवन आक्रमणो का उल्लेख है। दूसरी सदी ईस्वी पूर्व मे यवनो के अनेक राज्य उत्तर पश्चिमी भारत मे स्थापित हो गए थे, जिनके बहुत से सिक्के भी इस समय उपलब्ध हुए हैं। पर पुष्यमित्र के कारण यवन लोग चिरकाल तक सिन्धु नदी के पूर्व मे अपनी शक्ति का विस्तार नही कर सके थे।

मौर्य साम्राज्य के ह्रास तथा शुग वश के अभ्युदय के काल की धार्मिक दशा के विषय मे भी अनेक निर्देश प्राचीन साहित्य मे विद्यमान हैं। पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य मे ब्राह्मणो और श्रमणो के 'शाश्वतिक विरोध' की बात लिखी है। जैसे साप और नेवले मे स्वाभाविक एव शाश्वत विद्वेष होता है वसे ही ब्राह्मणो और श्रमणो मे भी। यह विद्वेष व विरोध इस युग मे इतना अधिक बढ गया था, कि अपने साम्प्रदायिक उत्कर्ष के लिए बौद्ध स्थविरो और श्रमणो ने यवन आक्रान्ताओ के साथ मिलकर भारत के शासनतन्त्र के विरुद्ध षडयन्त्र करने मे भी सकोच नही किया था। एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक के अनुसार "एसा प्रतीत होता है कि पजाब मे बौद्ध लोगो ने ग्रीक आक्रान्ताओ का खुले तौर पर साथ दिया था जिसके कारण पुष्यमित्र उनके प्रति वस बरताव करने के लिए विवश हुआ था जैसा कि देशद्रोहियो के प्रति किया जाता है। बौद्ध अनुश्रुति मे पुष्यमित्र के बौद्धो के प्रति विद्वेषभाव का सजीव वर्णन किया गया है। वहा लिखा है कि उसने बहुत से बौद्ध स्तूपो का ध्वस कराके शाकल नगरी मे यह घोषणा की थी कि जो कोई किसी श्रमण का सिर ला कर देगा उसे सौ सुवर्ण मुद्राए पारितोषिक के रूप मे प्रदान की जाएगी।

ये ही कतिपय ऐतिहासिक तथ्य है जो पुष्यमित्र के सम्बन्ध मे हम ज्ञात हैं। इस उपन्यास को लिखते हुए मैंने इन्हे अपनी दृष्टि मे रखा है। पर मैंने अपनी कल्पना से भी बहुत काम लिया है। इतिहास और उपन्यास मे यही मुख्य भेद है। इतिहास मे केवल उन्ही घटनाओ का वर्णन किया जाता है जो अनुसन्धान एव विवेचन द्वारा सत्य सिद्ध हो। पर उपन्यास मे लेखक को अपनी कल्पना से भी काम लेने का अवसर मिल जाता है।

पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आरूढ होने से पूर्व पुष्यमित्र मौर्य साम्राज्य के सेनानी या प्रधान सेनापति थे। उनके जीवन का बडा भाग सेनानी के रूप मे ही व्यतीत हुआ था। मैंने कल्पना की है कि पुष्यमित्र ने सैनिक सेवा तब प्रारम्भ की थी जब कि राजा दशरथ मौर्य-साम्राज्य के अधिपति थे (२२५ ईस्वी पूर्व)। धर्मविजय की आड लेकर मौर्य राजा देश की रक्षा के अपने कर्तव्य की जिस प्रकार उपेक्षा कर रहे थे पुष्यमित्र को उससे बहुत उद्वेग हुआ। उन्होने यत्न किया कि मगध के शासनतन्त्र को अपने कर्तव्य का बोध कराएँ। पर इसमे उन्हे सफलता प्राप्त नही हुई। इसीलिए उन्होने मौर्यों के निर्वीर्य शासन का अन्त किया और स्वय पाटलिपुत्र के राजसिंहासन को अधिगत कर लिया। वस्तुत इस उपन्यास की कथा का सम्बन्ध उस युग के साथ है, जब कि मौर्य-साम्राज्य का निरन्तर ह्रास हो रहा था।

भारत का प्राचीन इतिहास एक ऐसे गहरे अन्धकूप के समान है जिसमे कोई भी वस्तु अपने यथार्थ रूप मे दिखायी नही देती। वृक्षो की शाखाएँ वहाँ लटकते हुए साँपो जैसी प्रतीत होती हैं और तैरते हुए पत्ते जल जन्तुओ के समान। प्राचीन इतिहास की न घटनाएँ स्पष्ट हैं और न पात्रो के चरित्र। इस उपन्यास मे देववर्मा शतधनुष और बृहद्रथ जैसे मौर्य राजाओ को जिस रूप मे चित्रित किया गया है सम्भव है कि वे उससे सर्वथा भिन्न हो। जेतवन कुक्कुट विहार आदि के जिन स्थविरो के नाम इस उपन्यास मे दिए गए हैं वे सब कल्पित हैं। यही बात अन्य भी बहुत-से पात्रो के सम्बन्ध मे है। पर इसमे सन्देह नही कि मौर्य-साम्राज्य के ह्रास-पतन का जो चित्र मैंने उपस्थित किया है वह बात एतिहासिक तथ्यो के अनुरूप है।

इस उपन्यास मे कुछ ऐसे शब्दो का प्रयोग हुआ है जिनसे अनेक पाठक अपरिचित होंगे। ये शब्द उस युग मे प्रचलित थे और उस युग का वातावरण उत्पन्न करने मे इनसे सहायता मिलती है। आशा है पाठको को इन्हें समझने मे कठिनाई नही होगी। पुस्तक के अन्त मे इनके अर्थ भी दे दिए गए हैं।

सत्यकेतु विद्यालंकार

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

हमारी यह कथा उस समय प्रारम्भ होती है जब सम्राट अशोक की मृत्यु हुए पन्द्रह वर्ष व्यतीत हो चुके थे, और पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर अशोक के पौत्र सम्राट दशरथ विराजमान थे। चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार जैसे प्रतापी मौर्य सम्राटों ने मगध के जिस विशाल साम्राज्य की स्थापना की थी, वह अभी प्रायः अक्षुण्ण रूप में विद्यमान था, यद्यपि उसमें ह्रास के चिह्न प्रगट होने लग गए थे। आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य ने कभी यह स्वप्न लिया था कि हिमालय से समुद्रपर्यन्त सहस्र योजन विस्तीर्ण जो आर्यभूमि है वह एक चक्रवर्ती राज्य का क्षेत्र है और वह सब एक ही शासन में रहनी चाहिए। चाणक्य के शिष्य चन्द्रगुप्त ने इस स्वप्न को पूरा कर दिखाया था, और इसमें जो कमी रह गई थी उसे बिन्दुसार और अशोक ने पूरा कर दिया था।

यदि मौर्य सम्राट चाहते, तो अपने विशाल साम्राज्य की असंख्य सैनिक शक्ति का उपयोग देशदेशान्तर को जीतने के लिए कर सकते थे। यदि वे यवनराज सिकन्दर के समान दिग्विजय के लिए प्रवृत्त होते तो सम्पूर्ण पश्चिमी एशिया को जीतकर अपनी अधीनता में ला सकते थे। सीरिया मिस्र, मसिडोन और बाख्त्री के यवन राजाओं में यह शक्ति नहीं थी कि वे मौर्यों का सामना कर सकते। पर कलिंग की विजय करते समय अशोक को यह अनुभूति हुई कि युद्ध में मनुष्यों का व्यर्थ संहार होता है लाखों स्त्रियाँ विधवा हो जाती हैं और अनगिनत बच्चे अनाथ हो जाते हैं। शस्त्र शक्ति द्वारा जो विजय की जाती है वह स्थायी नहीं होती उससे मनुष्यों में विद्वेष की ही वृद्धि होती है। इसी अनुभूति से अशोक ने शस्त्र विजय के स्थान पर धर्म विजय की नीति को अपनाया और यह यत्न किया कि

मनुष्यो के मनो पर विजय प्राप्त की जाए। उस युग के राजा प्राय परस्पर युद्ध मे व्यापृत रहा करते थे शस्त्र शक्ति का प्रयोग कर पडोसी राज्यो को परास्त कर देना वे गौरव की बात समझते थे और अपनी प्रजा के हित व सुख पर व जरा भी ध्यान नही देते थे। पश्चिमी एशिया के यवन राजाओ को तो आपस म लडने मे ही अवकाश नही मिलता था। इस दशा म अशोक के मन म यह विचार उत्पन्न हुआ कि भारत की पश्चिमी सीमा पर जो अनेक यवन राज्य विद्यमान हैं उनकी प्रजा के हित व सुख का साधन किया जाए और इस प्रकार उनके हृदयो को जीतकर एक नये ढग का चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित किया जाए। इन यवन राज्यो के साथ भारत का राजनीतिक सम्बन्ध पहले भी विद्यमान था। मौर्य सम्राटो के राजदूत यवन राजाओ के दरबारो म रहा करते थे और यवनो के राजदूत पाटलिपुत्र की राजसभा म। अशोक ने इन यवन राज्यो म एक नये प्रकार के राजकर्मचारी नियुक्त किये जिन्हे 'धम्ममहामात्य' कहते थे। धम्ममहामात्यो का काय यह था कि जनता के हित व कल्याण के साधन जुटाएँ मनुष्यो और पशुओ की चिकित्सा के लिए चिकित्सालय खुलवाएँ अनाथो और वृद्धो की रक्षा करें और प्राणिमात्र के सुख के लिए प्रयत्न करें। धम्ममहामात्यो का एक महत्त्वपूर्ण काय यह भी था कि वे जनता को धर्म का वास्तविक अभिप्राय समझाएँ। अशोक यह मानता था कि सच्चा धर्म सम्प्रदायवाद से भिन्न होता है। दासो और भृत्यो के प्रति उचित बरताव करना गुरुजनो का आदर करना माता पिता की सेवा करना सबके प्रति करुणा की भावना रखना दान करना, सयम और सदाचारपूर्वक जीवन बिताना अपने आचरण को पवित्र बनाना और वाणी पर सयम रखना ही सच्चा धर्म है। धर्म के ये तत्त्व सब सम्प्रदायो म समान रूप से पाये जाते हैं। उनके विधि विधानो अनुष्ठानो और पूजा-पाठ की विधि म कितनी ही भिन्नता क्या न हो पर कौन-सा ऐसा सम्प्रदाय है जो धर्म के इन आधारभूत तत्त्वो को स्वीकार न करता हो ? फिर साम्प्रदायिक विद्वेष से क्या लाभ है ? सब सम्प्रदायो को एक-दूसरे का आदर करना चाहिए और सबको मेल-जोल से परस्पर मिलकर रहना चाहिए। सम्राट अशोक ने अपने साम्राज्य के सीमान्त प्रदेशो और विदेशो म सर्वत्र धम्ममहामात्य नामक राजकर्मचारी

इसी प्रयोजन से नियुक्त किए थे कि व जनता का ध्यान धम के मूल तत्वा की ओर आकृष्ट करें और प्राणिमात्र के हित-सुख का साधन करें। यवन शासका के अयाचारा से पीडित और निरतर युद्धा से उद्विग्न जनता ने भारत के धममहामात्यो का उत्साहपूवक स्वागत किया। यवन राज्या का प्रजा राजनातिक दष्टि से यवन राजाआ के अधीन थी पर अपन हित व सुख के लिए वह भारत के धममहामात्या की आर देखती थी। वह अशाक को अपना हितचितक और सुखसाधक मानती थी। परिणाम यह हुआ कि भारत का धम-साम्राज्य यवन देशा म सवत्र स्थापित हो गया और अशाक गव के साथ यह कह सका—'सव जगह लोग देवताआ के प्रिय प्रियदर्शी राजा क धर्मानुशासन का अनुसरण कर रहे हैं और भविष्य मे भी करेंगे। इस प्रकार सवत्र जो विजय स्थापित हुई है, वह वस्तुत आनन्द देनेवाली है।

अशोक की मृत्यु के अनन्तर उसक उत्तराधिकारियो ने भी धम विजय की नीति का अनुसरण किया। मौय सम्राटा द्वारा नियुक्त धममहामात्यो का सहारा लेकर बौद्ध भिक्षु भी तथागत बुद्ध के अष्टांगिक आय माग का प्रचार करने के लिए विदेशा म गए और पश्चिम के यवन राज्या के कितने ही नगरो म बौद्ध विहारा स्तूपा और चत्यो का निर्माण हुआ। अशोक द्वारा भारत का जा सास्कृतिक साम्राज्य स्थापित किया गया था वह वस्तुत अनुपम था। सिकन्दर ने शस्त्र शक्ति का प्रयोग कर जिस साम्राज्य की नीव डाली थी वह उसके जीवन-काल म ही खण्ड खण्ड हाना प्रारम्भ हा गया था। पर अशोक ने जो धम विजय का, वह सदियो तक कायम रही।

यवनराज सिकन्दर की मृत्यु के पश्चात उसका विशाल साम्राज्य अनेक खण्डा म विभक्त हा गया था। हिदूकुश से भूमध्यसागर तक के जो बहुत-स प्रदेश सिकन्दर ने अपने अधीन किए थे, उन सब पर उसके अन्यतम सनापति सल्युकस ने अपना स्वतन्त्र शासन स्थापित कर लिया था। उसे सीरिया का साम्राज्य कहत थे। पर वह भी चिरकाल तक कायम नही रह सका था। बाख्त्री और पार्थिया उसकी अधीनता मे स्वतन्त्र हो गये थे और वहाँ अन्य यवन राजवश शासन करने लग थे।

तीन चौथाई सदी के लगभग का बाख्त्री का प्रदे

स्थापित सीरिया के साम्राज्य के अन्तर्गत रहा। पर बाद में यहाँ के ग्रीक शासक (क्षत्रप) डियोडोटस ने सीरिया के विरुद्ध विद्रोह कर अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। बाख्त्री का यह राज्य हिन्दुकुश पर्वतमाला से परे वक्षु नदी तक विस्तृत था। वर्तमान समय में यह प्रदेश रूस के समाजवादी लोकतन्त्र संघराज्य के अन्तर्गत है। भारतीय इसे बाल्हीक देश कहते थे। इसकी राजधानी का नाम भी बाल्हीक (बल्ख) ही था। आजकल यह प्रदेश एक मरुभूमि के समान है। पर उन दिनों यह अत्यन्त उपजाऊ और समृद्ध था। सिंचाई के लिए वहाँ बहुत-सी नहरें विद्यमान थीं जिनके कारण इस प्रदेश को सहस्रभुज भी कहा जाता था। भारतीय लोग वहाँ अच्छी बड़ी संख्या में बसे हुए थे और बाल्हीक नगरी में उनकी एक पृथक् बस्ती थी जो नव राजगृह के नाम से प्रसिद्ध थी। मगध की पुरानी राजधानी का नाम भी राजगृह था। मगध के मागधी नागरिक जहाँ भी गये नये राजगृह बसाते गये। बाल्हीक देश में भी एक राजगृह की सत्ता थी।

बाल्हीक नगरी या नव राजगृह के दक्षिण में एक विशाल विहार था जो मध्य एशिया में भारतीय संस्कृति और बौद्ध धर्म का प्रधान केन्द्र था। कोई आठ सौ वर्ष बाद सातवीं सदी के शुरू में जब चीनी यात्री ह्यु एन्त्साङ विश्व की यात्रा के लिए निकला तो वह बाल्हीक देश भी गया। बाल्हीक नगरी में वह इसी विहार में ठहरा था। उसने लिखा है कि इस विहार के संघाराम में सैकड़ों भिक्षु और अर्हत निवास करते हैं। यहाँ एक विशाल बुद्धमूर्ति है जो अनेक प्रकार के रत्नों और मणि माणिक्यों से जटित है। विहार के साथ एक स्तूप है जो दो सौ हाथ ऊँचा है। इस विहार का निर्माण अशोक के समय में ही प्रारम्भ हो गया था और इसे उन भारतीयों ने ही बनवाया था जो आचार्य उपगुप्त की प्रेरणा से इस यवन देश में बौद्धधर्म का प्रचार करने के लिए गए थे। ह्यु एन्त्साङ ने विहार को नवविहार नाम से लिखा है। हम अपनी कथा का प्रारम्भ इस नवविहार से ही करना है।

नवविहार में महोत्सव

सम्राट अशोक के शासनकाल से देश विदेश में बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए जो महान आयोजन आचार्य उपगुप्त द्वारा किया गया था, उसके अनुसार बाल्हीक देश के यवन राज्य में धर्मप्रचार का कार्य स्थविर महारक्षित को दिया गया था। हिन्दूकुश और पामीर की दुर्गम पर्वत-मालाओं को लाँघकर महारक्षित बाल्हीक देश में गए और सहस्रों नर-नारियों को उन्होंने बौद्ध धर्म में दीक्षित किया। महावंश के अनुसार एक लाख सत्तर हजार यवनों ने बुद्ध के अष्टांगिक आर्य मार्ग को स्वीकार किया और दस सहस्र यवनों ने भिक्षुव्रत ग्रहण किया। नवविहार का निर्माण भी स्थविर महारक्षित के प्रयत्न से ही हुआ था। सम्राट दशरथ के शासनकाल में इस विहार का भव्य भवन बनकर तैयार हो गया था और उसके उदघाटन के लिए एक महोत्सव का आयोजन किया गया था। बहुत-से स्थविर आचार्य और भिक्षु इस अवसर पर भारत से निमन्त्रित किए गए थे और सम्राट दशरथ ने भी एक शिष्टमण्डल इस महोत्सव में सम्मिलित होने के लिए प्रेषित किया था। इस शिष्टमण्डल के नेता आचार्य वीरभद्र थे, जो अपने ज्ञान, पाण्डित्य और सदाचारमय जीवन के लिए भारत भर में प्रसिद्ध थे। उन्हें यह भी आदेश दिया गया था कि नवविहार के उत्सव में सम्मिलित होने के अनन्तर बाल्हीक देश में ही धर्ममहामात्य का कार्य करें और वहाँ की यवन प्रजा को धर्म द्वारा जीतने का प्रयत्न करें। बाल्हीक देश में धर्ममहामात्य पहले भी नियुक्त थे पर नवविहार जैसे समृद्ध व वैभवशाली बौद्ध केन्द्र के स्थापित हो जाने के कारण यह आवश्यकता अनुभव की गई थी कि वहाँ धर्म विजय का कार्य एक ऐसे व्यक्ति द्वारा सञ्चालित किया जाए जो विद्या और प्रभाव में अद्वितीय हो। बाल्हीक के राजसिंहासन पर इस समय राजा एवुथिदिम विराजमान था जो बड़ा प्रतापी और महत्त्वाकांक्षी था। राज्यविस्तार की इच्छा से वह अपनी सैन्य शक्ति की वृद्धि में तत्पर था और पड़ोस के पार्थिव [पार्थियन] राज्य को जीतकर अपने अधीन कर लेने की योजना बना रहा था। सम्राट दशरथ को विश्वास था कि वीरभद्र एवुथिदिम को सन्मार्ग पर ला सकेंगे

और भारत के पश्चिमी सीमान्त पर कोई नया उपद्रव खडा नही हो पाएगा।

आचाय वीरभद्र के शिष्टमण्डल के साथ एक छोटी सी सेना भी वाल्हीक नगरी भेजी गई थी। पूर्वी समुद्र स हिन्दूकुश पवतमाला तक विस्तीण सुविशाल मौय साम्राज्य म उस समय पूण शान्ति विराजती थी। पर उसके पश्चिम म जो यवन राज्य थ उनमे यह दशा नही थी। वहाँ दस्युओ और तस्करो के बहुत से दल सगठित थे जिनके कारण कोइ भी माग सुरक्षित व निरापद नही था। हिन्दूकुश पवतमाला को पार कर व्यापारियो के जो साथ (काफिले) पश्चिम की ओर जाते दस्युओ के ये दल उन पर आक्रमण करते और उन्ह लूट लिया करते। तीथयात्रियो और धम प्रचारको तक पर ये दस्यु दया नही दिखाते थे। इसी कारण व्यापारियो के साथ अपनी रक्षा के लिए सनिको को साथ रखा करते थे और कोई भी यात्री यह साहस नही करता था कि अकेला इन प्रदेशो मे आ जा सके। वीरभद्र के साथ जो सेना सम्राट दशरथ द्वारा भेजी गई थी, उसका सेनापति एक युवक था जिसका नाम पुष्यमित्र था। पुष्यमित्र विदिशा (भिलसा) का निवासी था, और शुङ्ग कुल म उत्पन्न हुआ था।

नवविहार का उदघाटन समारोह बडी धूमधाम के साथ सम्पन्न हुआ। स्थविर महारक्षित अभी जीवित थ। वीरभद्र का स्वागत करते हुए उन्होने कहा— सम्पूण वाल्हीक दश म तथागत बुद्ध के धर्मानुशासन का भलीभाति पालन हो रहा है। यवनो ने हिंसा का परित्याग कर दिया है। सहस्रो यवनो ने भिक्षुव्रत ग्रहण कर लिया है और वे प्रतिदिन त्रिपिटक के सूत्रो का पाठ करते हैं। आप स्वय अपनी आखो से देखिए कि भारत ने धम द्वारा कसी शानदार विजय इस देश म स्थापित की है।

आचाय वीरभद्र ने वाल्हीक नगरी म जो कुछ दखा उससे वह आश्चय चकित रह गए। वहा के यवन सस्कृत म बातचीत करना गौरव की बात समझते थे भारतीय रहन-सहन और खान-पान उन्होने अपना लिया था और उनकी यही आकाक्षा रहती थी कि उनके बच्चे शिक्षा के लिए नव विहार जाए। सघाराम के भारतीय स्थविर और भिक्षु बडे गव के साथ वाल्हीक नगरी म घूमते फिरते थे। व जहाँ भी निकल जाते यवन लोग उनके

चारो ओर एकत्र हो जाते। यवन माताएँ बच्चो को उनके पास ले जाकर कहती—'स्थविर! यह बालक अभी से उस दिन का स्वप्न लेने लगा है जबकि यह भी काषाय वस्त्र धारण कर नवविहार म शिक्षा के लिए जाएगा। बेटा, स्थविर को प्रणाम करो।' मधुर मुसकान के साथ अपना दाया हाथ ऊँचा उठाकर स्थविर बालक को आशीर्वाद देते—'आयुष्मान् हो, बुद्ध, धम और सघ म तुम्हारी श्रद्धा सदा स्थिर रहे। सदा त्रिरत्न की सेवा करो।' सम्पन्न यवन परिवारो के लोग सस्कृत भाषा मे ही बात किया करते और माताएँ बचपन म ही अपनी सतान को सस्कृत सिखाती। आचाय वीरभद्र ने यह सब अपनी आखो से देखा और गव से उनकी छाती फूल उठी।

बाल्हीक नगरी की पौर सभा ने एक दिन वीरभद्र के सम्मान म भोज का आयोजन किया। आचाय का स्वागत करते हुए महापौर ने कहा—भारत के विश्वविख्यात आचाय को अपने देश म धममहामात्य के पद पर नियुक्त देखकर हम अपार हष है। यवन और भारतीय एक ही आय जाति की दो शाखाएँ हैं हम सब म एक ही रक्त प्रवाहित हो रहा है। यवन और भारतीय परस्पर भाइ भाइ हैं। हमारा सम्बध बहुत पुराना है। हम यवन लोग भारतीयो के छोटे भाई हैं और साथ ही भारत के ऋणी भी। भारत ने हम धम का सच्चा माग प्रदर्शित किया है। विशाल मौय साम्राज्य हमारा पडोसी है पर उसकी शक्तिशाली सनाओ ने कभी हम पर आक्रमण करने का प्रयत्न नही किया। फिर भी हम भारत से पराम्त हो गए हैं उसक धम से उसकी सस्कृति से, और उसके सद्‌यवहार से। भारत के लोग हमारे देश म सवत्र छाए हुए हैं, हमे दास बनाने के लिए नही, हमे पराक्रान्त करने के लिए नहीं, अपितु हमारा हित और कल्याण सम्पादित करने के लिए। प्रियदर्शी राजा अशोक ने धम विजय की जिस नीति का अनुसरण किया था, उसने हमारे हृदयो को जीत लिया है और बाल्ही का यह यवन राज्य भारत के विशाल सास्कृतिक साम्राज्य के अतगत हो गया है। हमें विश्वास है कि आचाय वीरभद्र के कतृत्व से यवनो और भारतीयो के सौहाद्रपूण सम्बध म और भी अधिक वृद्धि होगी और बाल्हीक देश तथा भारत की मत्री सदा स्थिर रहेगी।

वीरभद्र भारत की इस धर्म विजय से सतुष्ट थे। पर पुष्यमित्र ? इस युवक सेनानायक का मन आश्वस्त नहीं था। वह सोचते थे नवविहार या नवराजगृह ही तो वाल्हीक देश नहीं है। राजा एवुथिदिम जिस ढंग से अपनी सैन्यशक्ति की वृद्धि में तत्पर है क्या भारत उसकी उपेक्षा कर सकता है ? यदि वाल्हीक देश का यवन राजा भी सिकन्दर और सैल्युकस के समान दिग्विजय के लिए प्रवृत्त हो तो क्या वह केवल पार्थिया को जीतकर ही सन्तुष्ट हो जाएगा ? यदि उसने भारत पर भी आक्रमण कर दिया तो क्या मौर्य साम्राज्य की सेनाएँ उसका सामना कर सकेंगी ? धर्मविजय की नीति को अपना कर मौर्य सम्राटों ने सैन्य शक्ति की उपेक्षा करना प्रारम्भ कर दिया है। अशोक की मृत्यु के केवल दो साल बाद आन्ध्र देश ने मौर्य साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था। सीमुक के नेतृत्व में वहाँ एक स्वतन्त्र राजवंश का शासन स्थापित हो चुका है। क्या सम्राट कुणाल आन्ध्रों को अपने वश में ला सके ? कुछ ही वर्षों के अनन्तर कलिङ्ग में भी विद्रोह हो गया। वह भी अब मौर्य साम्राज्य से पृथक हो चुका है। आचार्य चाणक्य की बुद्धि और चन्द्रगुप्त के शौर्य से जिस विशाल मागध साम्राज्य की स्थापना हुई थी वह अब खण्ड-खण्ड होने लगा है और उसकी शक्ति निरन्तर क्षीण होती जा रही है। पर मौर्य सम्राट धर्म द्वारा पृथ्वी की विजय के लिए प्रयत्नशील हैं। भारत के राजकोष का उपयोग विदेशों में चिकित्सालय खुलवाने सड़क बनवाने, धर्मशालाओं का निर्माण कराने और विदेशी जनता के हित व सुख का सम्पादन करने में किया जा रहा है। क्या यह भारत के धन का अपव्यय नहीं है ?

नवविहार के उद्घाटन समारोह के समाप्त हो जाने पर पुष्यमित्र आचार्य वीरभद्र के पास गए और प्रणाम निवेदन के अनन्तर उनसे बोले—

आचार्य ! अब मैं भारत वापस लौट जाना चाहता हूँ। यहाँ अब मेरा कोई कार्य शेष नहीं रहा है। सब स्थविर और भिक्षु निरापद रूप से वाल्हीक नगरी पहुँच गए हैं और नवविहार का महोत्सव भी अब समाप्त हो चुका है।

स्वदेश वापस जाने को तुम इतने आतुर क्यों हो तात ! वाल्हीक देश के हित और सुख को सम्पादित करने के लिए मेरे सम्मुख अनेक योज

नाएँ हैं। उन्हें क्रियान्वित करने में तुम भी मेरी सहायता करो।'

'पर मैं तो एक सैनिक हूँ, आचार्य! सैनिकों की यहाँ आपको क्या आवश्यकता है?'

'तथागत बुद्ध के धर्मानुशासन में न युद्धों का स्थान है और न सैनिकों का। वाल्हीक देश के यवनों को हमें अहिंसाव्रत की दीक्षा देनी है। हमें इन्हें सिखाना है कि अक्रोध से क्रोध पर विजय प्राप्त करो और अपनी साधुता से असाधुओं को वश में लाओ। यह कार्य हम तभी सम्पन्न कर सकते हैं जबकि यवन प्रजा के हित व कल्याण में अपनी सब शक्ति लगा दी जाए।

'आपको एक विदेशी राज्य के सुख साधन की इतनी चिंता है, आचार्य! पर मैं तो स्वदेश वापस जाकर उसकी सुरक्षा के लिए कुछ कार्य करना चाहता हूँ।'

'भारत की सुरक्षा! भारत भूमि पूर्णतया सुरक्षित है। युद्धों का युग अब भूतकाल का विषय बन चुका है, तात! क्या तुम देवानाप्रिय प्रियदर्शी राजा अशोक की यह शिक्षा भूल गए हो कि समवाय अच्छा है, सबको परस्पर मेल जोल के साथ रहना चाहिए और सह अस्तित्व में ही सबका कल्याण है। हमारी धर्म विजय की नीति के कारण भारत का धार्मिक और सांस्कृतिक साम्राज्य सर्वत्र स्थापित है। कौन-सा ऐसा देश है, जो भारत को अपना गुरु नहीं मानता? सर्वत्र हमारे धर्ममहामात्य जनता के हित व कल्याण में तत्पर हैं। सब देश भारत के ऋणी हैं सब उसका आदर करते हैं। कौन-सा ऐसा देश है जो भारत पर आक्रमण कर उसे क्षति पहुँचाने का यत्न करेगा?'

क्षमा करें, आचार्य! मैं किशोरवय युवक हूँ। राजनीति का मुझे बहुत कम अनुभव है। वाल्हीक देश में आए हुए भी मुझे अधिक समय नहीं हुआ है। पर क्या आपको यह ज्ञात नहीं कि यवनराज एवुथिदिम युद्ध की तैयारी में तत्पर है? वह अपनी सैन्य शक्ति में वृद्धि कर रहा है। इस दशा में क्या यह उचित है कि भारत अपनी सेना की उपेक्षा करे?'

'मुझे सब कुछ ज्ञात है तात! राजा एवुथिदिम ने अभी भगवान् तथागत के आर्य मार्ग को नहीं अपनाया है। हमें उसे सन्मार्ग पर लाना है। हमें उसे समझाना है कि हिंसा अत्यन्त गर्ह्य है और अहिंसा संसार की सबसे

उत्कृष्ट शक्ति है। हिंसा का सामना करने के लिए हम अहिंसात्मक उपायो का अवलम्बन करेंगे। तथागत की यही शिक्षा है। भारत की रक्षा का सबसे उत्तम साधन यही है कि यवनो को भी अहिंसा का पाठ पढ़ाया जाए, ससार का कोई भी देश हिंसा के मार्ग का अनुसरण न करे।

'पर क्या यह सम्भव है आचार्य !'

यह सम्भव क्यो नही है तात ! क्या तुम नही देखते कि इस बाल्हीक नगरी म सहस्रो यवन युवक बुद्ध धम और संघ की शरण म आ चुके हैं। उन्होने अहिंसा व्रत को स्वीकार कर लिया है। राजा एवुथिडिम को भी हमे सद्धम का अनुयायी बनाना होगा। यदि पश्चिम के सब यवन राज्य भगवान् तथागत के सद्धम को अपना लें तो कौन भारत पर आक्रमण करेगा और किससे स्वदेश की रक्षा के लिए तुम्ह सैन्य शक्ति की आवश्यकता होगी ? अहिंसा से हिंसा का सामना करो तथागत की यही शिक्षा है तात !'

सैन्यशक्ति की उपेक्षा कर क्या कोई राज्य स्थिर रह सकता है आचार्य ! हमारे शास्त्रो म ब्रह्म और क्षत्र—दोनो शक्तियो को समान महत्त्व दिया गया है।'

तुम उन शास्त्रो की बात कहते हो, जो सत्य नही हैं। तुम तथागत बुद्ध के उस अष्टाङ्गिक मार्ग का अनुसरण करो जो आदि म सत्य है मध्य म सत्य है और अन्त म सत्य है। इस सद्धम के अनुसार जीवन म हिंसा के लिए कोई भी स्थान नही है। यह कभी न भूलो कि अहिंसा विश्व की सबसे उत्कृष्ट शक्ति है। राजा अशोक ने इसी शक्ति का प्रयोग कर सर्वत्र भारत के धर्म-साम्राज्य की स्थापना की थी। इसी शक्ति का आश्रय लेकर हम यवनो के हृदयो को परिवर्तित कर देंगे और वे कभी भारत पर आक्रमण करने की बात भी मन म नही लायेंगे। बाल्हीक देश के यवन आज भी भारत के प्रति श्रद्धा रखते हैं वे भारतीय धम के अनुयायी हैं और भारतीय संस्कृति को अपनाने म गौरव अनुभव करते हैं। भारत को किससे भय है तात !

स्पष्ट भाषण के लिए मुझे क्षमा करें आचार्य ! आप केवल उन यवनो के सम्पर्क म आए हैं जो बौद्ध धम को अपना चुके हैं और जो भिक्षु

जीवन व्यतीत कर रहे हैं। मुझे यवन सैनिकों से मिलने का अवसर मिला है। उन्हें वह दिन भलीभाँति स्मरण है, जब कि चन्द्रगुप्त की सेनाओं ने सैल्युकस को परास्त किया था और जब यवनराज चन्द्रगुप्त के साथ अपनी कन्या का विवाह करना स्वीकार कर सन्धि की याचना के लिए विवश हुआ था। वे अपने जातीय अपमान को भूल नहीं हैं। नवविहार के शान्त वातावरण के पीछे वाल्हीक नगरी में भारत के विरुद्ध एक भयंकर तूफान उठ रहा है और वह दिन दूर नहीं है जबकि एवुथिदिम की यवन सेना भारत भूमि पर आक्रमण कर अपने जातीय अपमान का प्रतिशोध करने का प्रयत्न करेगी। धर्म विजय की उपयोगिता को मैं स्वीकार करता हूँ, आचार्य! अपने स्थान पर उसका भी महत्त्व है। वह हमारी ब्रह्मशक्ति को प्रगट करती है। पर क्षात्रशक्ति की उपेक्षा करना मेरी समझ में कभी नहीं आता। क्षत्रशक्ति की उपेक्षा का ही यह परिणाम है कि मौर्य साम्राज्य खण्ड-खण्ड होना प्रारम्भ हो गया है। आन्ध्र और कलिङ्ग स्वतन्त्र हो गए हैं और अन्यत्र भी विद्रोह के चिह्न प्रगट होने लग गए हैं। यदि यही दशा रही और इस बीच में यवनों ने भारत पर आक्रमण कर दिया, तो भारत की राजनीतिक एकता नष्ट हो जाएगी।

भारत की राजनीतिक एकता का तुम इतना महत्त्व क्यों देते हो? साम्राज्य तो बनते बिगड़ते ही रहते हैं। राज्यलक्ष्मी कभी किसी एक वंश में स्थिर नहीं रहती। राजशक्ति कभी किसी के हाथों में रहती है, कभी किसी के। एक सदी पूर्व मौर्यों के शासन की सत्ता ही कहाँ थी? आन्ध्र, कलिङ्ग, पाञ्चाल, कोशल, वाहीक, गान्धार, केकय—सब स्वतन्त्र थे। यदि आज आन्ध्र और कलिङ्ग फिर से स्वतन्त्र हो गए हैं, तो इससे क्या हानि हुई है? क्या इन राज्यों में ब्राह्मणों और श्रमणों के प्रति जनता की श्रद्धा में कोई कमी आई है? क्या वहाँ दान दक्षिणा बन्द हो गई है? क्या वहाँ के निवासियों में धर्मानुशासन के प्रति शैथिल्य प्रारम्भ हो गया है? इन राज्यों में अब भी हमारा धार्मिक साम्राज्य विद्यमान है। हमारे धर्म महामात्य अब भी वहाँ जनता के हित-सुख के लिए तत्पर हैं। राज्य कभी स्थायी नहीं रहते तात! यह केवल धर्म है जो सदा स्थिर रहता है। प्राणिमात्र का हित और सुख सम्पादित कर यदि हमने यवनों के हृदयों पर विजय

है। यदि किसी ने सुन लिया तो मेरे लिए वाल्हीक नगरी में रह सकना असम्भव हो जाएगा। चलिए, अन्दर चलकर एकान्त में बात करें।

पणदत्त की पण्यशाला एक दुर्ग के समान विशाल था। उसके प्रवेश द्वार के दायीं ओर एक प्रदर्शन-कक्ष था, जहाँ पण्य का क्रय विक्रय हुआ करता था। पार्श्व की वीथिका से होकर एक अन्य द्वार था जिससे व्यापारियों के साथ आया-जाया करते थे। पण्य से लदे हुए सैकड़ो घोड़े खच्चर और ऊँट वहाँ पण्य उतारा करते थे और उसे भाण्डागारों में सँभालकर रख दिया जाता था। पणदत्त पुष्यमित्र को एक एकान्त कक्ष में ले गए और सुवर्णजटित आसन्दी पर बिठाकर उन्होंने कहा—

यवनराज एवुथिडिम से भय का क्या कारण है सेनापति! उसके लिए तो अपने राज्य को सँभाल सकना भी कठिन हो रहा है। शक तुखार और ऋषिक (युइशि) जातियाँ पश्चिम और उत्तर से उस पर निरन्तर आक्रमण करती रहती है। वाल्हीक राज्य में जो सैन्यशक्ति है वह तो इन जातियों का सामना करने के लिए भी पर्याप्त नहीं है।

यह सही है कि यवन इस समय सशक्त नहीं है। पार्थिया और बाख्त्री की स्वतन्त्रता के कारण यवनों का विशाल साम्राज्य तीन खण्डों में विभक्त हो गया है। पर सीरिया का यवन सम्राट अन्तियोक बड़ा प्रतापी और महत्त्वाकांक्षी है। यदि वह पार्थिया को जीत ले तो वाल्हीक देश के साथ उसका सीधा सम्बन्ध स्थापित हो जाएगा। सीरिया और वाल्हीक दोनों के राजकुल यवन जाति के हैं। दोनों के हृदयों में यवनों की शक्ति के पुनरुद्धार की आकांक्षा विद्यमान है। यदि वे परस्पर मिलकर एक हो जाएँ तो यह बात क्या भारत के लिए भय और आशंका का कारण नहीं होगी? सैन्यशक्ति की उपेक्षा कर कोई भी देश अपनी रक्षा में समर्थ नहीं हो सकता।

'आप ठीक कहते हैं सेनापति! पर मैं इस विषय में क्या कर सकता हूँ? मैं तो एक साधारण वणिक हूँ। देश की रक्षा की व्यवस्था करना तो राजा और उसके अमात्यों का कार्य है।

'कोई राज्य तब तक अपनी रक्षा नहीं कर सकता जब तक कि उसके नागरिक भी जागरूक न हों। हमारा शासनतन्त्र बहुत शिथिल हो गया है। धर्म एक ऐसी मदिरा के समान है जिसका सेवन कर लोग अपनी सुध

बुध खो बैठते हैं। उन्हें अपने कर्तव्य का ज्ञान नहीं रहता। पर शासनतन्त्र बदलता रहता है, यद्यपि राज्य स्थायी रहता है। आप भारत के नागरिक हैं। आपके समान सैकड़ों-हजारों भारतीय नागरिक आज वाल्हीक देश में निवास कर रहे हैं। क्या आप मेरी सहायता नहीं करेंगे?'

'मैं किस प्रकार आपकी सहायता कर सकता हूँ?'

'यवनों की गतिविधि पर दृष्टि रख कर। आप यवनों के निकट सम्पर्क में आते हैं। क्या आपके लिए यह सम्भव नहीं है कि यवनों की गतिविधि और योजनाओं से मुझे सूचित करते रहें?'

'बताइए, मुझे क्या करना होगा।

मैं आज पहली बार नवराजगृह आया हूँ। मार्ग में मैंने कितनी ही नृत्यशालाएँ और पानगृह देखे हैं जिनके नाम भारतीय हैं। सम्भवत, इनके स्वामी भी भारतीय ही होंगे और इनमें काम करने वाली दासियाँ, गणिकाएँ और नर्तकियाँ, वे भी शायद भारतीय ही होंगी। यवन लोग इनमें आमोद प्रमोद के लिए अवश्य आते जाते होंगे। क्या हम इनके द्वारा यवनों का भेद नहीं ले सकते?'

'क्या नहीं ले सकते? सामने की उस अट्टालिका पर जो नृत्यशाला है वह कुमारी सुभगा की है। वाल्हीक देश के कितने ही अमात्य, सेनानायक और सम्पन्न नागरिक वहाँ नृत्य के लिए आया करते हैं। सुरापान कर वे मत्त हो जाते हैं और अपने तन मन की उन्हें कोई सुध नहीं रहती। वहाँ जो भी दासियाँ व नर्तकियाँ काम करती हैं सब केकय और गान्धार जनपदों की हैं। उनके द्वारा यवनों की गतिविधि का पता कर सकना सम्भव होगा।

'क्या आप कुमारी सुभगा को जानते हैं?'

मैं उससे भलीभाँति परिचित हूँ। वह कोई चौबीस वर्ष की युवती है। पुष्कलावती की रहने वाली है। सुना है वहाँ के किसी राजपुरुष की कन्या है। अपने कुल के सम्बन्ध में वह किसी से बात नहीं करती। मैं आपको उससे मिलवा दूँगा।

यहाँ के नवविहार में बहुत-से यवन स्थविर और भिक्षु निवास करते हैं। वाल्हीक देश का राजकुल भी बौद्ध धर्म के प्रति श्रद्धा रखता है। समय-

समय पर अनेक यवन राजपुरुष भी विहार म आते जात रहत हैं। क्या आप किसी ऐसे भारतीय स्थविर स परिचित है जो इन यवना पर दष्टि रख सक ?

मैं बौद्ध नहा हू सेनापति ! भगवान शिव मेरे उपास्य देव हैं। अनेक बार मन म आया कि नवराजगह म एक शिव मन्दिर का निर्माण कराऊँ। धन सम्पदा की मेरे पास कोई कमी नही है। पर यहा बौद्ध धम का इतना अधिक प्रभाव है कि बाल्हीक नगरी के पौर मुझे इसके लिए अनुमति ही प्रदान नही करत। नवविहार के स्थविर अहत और भिक्षु मेरे प्रति विद्वेष की भावना रखत हैं क्योकि उन्ह मुझसे काई विपुल धनराशि प्राप्त नही हुई है।

'पर अशोक ने ता सब सम्प्रदायो मे समवाय (मल जोल) का उपदेश दिया था। क्या यहा के धममहामात्य धार्मिक सहिष्णुता के लिए प्रयत्न नही करते ?

'मुझे तो धम विजय की नीति एक ढाग प्रतीत होती है। बौद्ध धम का प्रचार ही उसका वास्तविक लक्ष्य है। राज्य का आश्रय पाकर बौद्ध स्थविर और भिक्षु अपने धम के प्रचार मे तत्पर है। अन्य धर्मों के प्रति वे विद्वेष की भावना रखत हैं।'

'आपसे मिलकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई श्रेष्ठी ! मैं भी सनातन वदिक धम का अनुयायी हू। वेदविरोधी और नास्तिक बौद्ध धम के प्रति मेरे हृदय म जरा भी श्रद्धा नही है। यह देखकर मुझे भी दु ख होता है कि धमविजय की आड म बौद्ध धम के प्रचार के लिए राजकोष के धन का पानी की तरह बहाया जा रहा है। पर क्या नवविहार म कोइ भी ऐस स्थविर या भिक्षु नही है जिन्हे भारत से प्रेम हो और जो आयभूमि के हित को दष्टि म रखकर यवनो की गतिविधि स हमें अवगत करते रह ?

'मुझ आशा ता नही है सनापति ! पर मैं प्रयत्न कर देखूगा। कुमारी सुभगा पर मुझे पूर्ण विश्वास है। वह भगवती दुर्गा की उपासिका है। वेद शास्त्रो और सनातन आय मर्यादाओ के प्रति उसे असीम श्रद्धा है। वह आपके काय म अवश्य सहायता प्रदान करेगी। पर क्या मैं आपसे एक प्रश्न पूछ सकता हूँ ?

'निस्सकोच होकर पूछिए ।'

'आप तो आचाय वीरभद्र के साथ आए है। आपसे यह आशा की जाती है कि आप आचाय की सहायता करें। वीरभद्र का किस प्रयोजन से वाल्हीक दश मे भेजा गया है यह आप जानते ही हैं। इस दशा मे मेरे हृदय मे एक शका उत्पन्न होती है, सेनापति !'

'निस्सकोच होकर कहो श्रेष्ठी पणदत्त ! सैनिक कभी किसी को धोखा नही दिया करते।

'कही आप मेरा भेद तो नही ले रहे हैं ? नवविहार के सब स्थविर और भिक्षु मुझसे द्वेष रखते हैं। कही उन्होंने आचाय वीरभद्र से मेरे विरुद्ध कुछ कह तो नही दिया है और आप आचाय के प्रतिनिधि रूप से मेरे मन की बात जानने का प्रयत्न तो नही कर रहे हैं ?

'यह विचार मन मे न लाइए, श्रेष्ठी ! मैं ब्राह्मण कुल म उत्पन्न हुआ हूँ, और आचाय पतञ्जलि का शिष्य हूँ। गोनद आश्रम का नाम आपने सुना ही होगा। वहाँ आज भी सनातन आय मर्यादा का पालन किया जाता है और मानव, वाहस्पत्य तथा औशनस सम्प्रदायो की दण्डनीति का अध्ययन-अध्यापन वहाँ आज भी बन्द नही हुआ है। आचाय विष्णुगुप्त चाणक्य ने जिन आदर्शों को सम्मुख रखकर सम्पूर्ण आयभूमि को एक शासनसूत्र मे सगठित किया था पतञ्जलि के इस आश्रम म वे आज भी मान्य है। गोनद आश्रम म एक अन्तेवासी के रूप मे निवास कर मैंने उस राजनीति की शिक्षा प्राप्त की है जिसका प्रतिपादन वाचस्पति, पाराशर और चाणक्य जसे आचार्यों ने किया था। कलिंग की विजय करते हुए थोडा सा रक्तपात देखकर जो क्लव्य अशोक के हृदय मे उत्पन्न हुआ, वह क्षत्रियो के अनुरूप नही था। अशोक को तो एक भिक्षु होना चाहिए था। यह भारत का दुर्भाग्य था जो उस जसा क्लीव मगध के राजसिंहासन पर आरूढ हुआ। दुख की बात यह है कि कुणाल और दशरथ ने भी उसी की नीति का अनुसरण किया। मुझ पर विश्वास रखो श्रेष्ठी पणदत्त ! मैं चाहता हूँ कि भारत की क्षत्र-शक्ति का पुनरुद्धार हो और अशोक की नीति के कारण भारत के शासन-तन्त्र म जो क्लव्य आ गया है उसे दूर किया जाए।

'मैं अब पूर्णतया आश्वस्त हूँ, सेनापति ! मेरे पास जो भी धन-सम्पत्ति

है, सब आपके महान् काय के लिए समर्पित है। मैं तन मन धन से आपकी सहायता के लिए उद्यत हूँ।

ता चलिए, कुमारी सुभगा से भेंट की जाए।'

सुभगा की नृत्यशाला

नवराजगह के प्रधान पथ चत्वर पर एक ऊँची अट्टालिका म कुमारी सुभगा की नत्यशाला स्थित थी जो सगीत नत्य और विलासमय वातावरण के लिए सम्पूण वाल्हीक देश म प्रसिद्ध थी। श्रेष्ठी पणदत्त के साथ पुष्यमित्र ने जब उस नृत्यशाला म प्रवेश किया तो रात्रि का प्रथम प्रहर व्यतीत हो चुका था। सहस्रों पुष्पमालाओं से सजे हुए नृत्यशाला के विशाल भवन म सुगन्धित तैलों से परिपूर्ण असख्य दीपक जल रहे थे। नत्य और सगीत का समा बँधा हुआ था। कौशेय वस्त्रों मणि माणिक्यों और पुष्प-अलकारो से सुसज्जित सकडों नर नारी वहा एकत्र थे जिनमे यवनो की सख्या अधिक थी। पेशलरूपा दासिया मन्दस्मित के साथ सबका स्वागत करने म तत्पर थी, और सुवणपात्रों म सुवासित सुरा उनके सम्मुख प्रस्तुत कर रही थी। श्रेष्ठी पणदत्त के साथ पुष्यमित्र भी नत्यशाला के एक कोने मे जाकर बठ गए। सुभगा तुरन्त उनके पास आई और मन्दहास के साथ बोली—

अरे आज किधर रास्ता भूल गए श्रेष्ठी! और आप? आप तो सनिक प्रतीत होते है। भारत के सनिको को देखने के लिए तो आँखें तरस गई हैं। भारत से जो भी यहाँ आता है सिर मुडाए हुए और काषाय वस्त्र पहने हुए। अहोभाग्य है मेरा जो आज एक सनिक के दशन हुए हैं। कहिए क्या सेवा करू? मदक प्रस्तुत करू या मरय?

यह मेरे अतिथि हैं देवि! आचाय वीरभद्र के साथ नवविहार के महोत्सव म सम्मिलित होने के लिए आए थे। पणदत्त ने कहा।

अरे उस बुड्ढे के साथ! कसा नीरस आदमी है! मुझे तो ऐसे लोगों को देखकर डर लगता है। कहीं मुझे भी यह उपदेश न देने लगें कि सिर मुडाकर भिक्षुणी बन जाओ। कहाँ वह खूसट बुड्ढा और कहाँ यह सुन्दर

युवक ! इनका क्या साथ ?'

'हिंदूकुश के पार पामीर की पवनमालाओं के मार्ग में कोई दस्यु उन्हें लूट न ले, इस भय से सेनापति पुष्यमित्र को उनके साथ भेजा गया था।'

'वीरभद्र पर कौन दस्यु हाथ उठाएगा, श्रेष्ठी ! हां, वे तो बौद्ध धर्म के अनुयायी हैं अहिंसा में विश्वास रखते हैं। क्या अक्रोध, करुणा और वात्सल्य द्वारा दस्युओं का दमन नहीं किया जा सकता था, जो अपनी रक्षा के लिए उन्होंने सैनिकों को साथ लिया ? अच्छा छोड़िए इन बातों को। आप दोनों आज मेरे अतिथि हैं। कहिए, कौन-सी सुरा प्रस्तुत करूँ, मेदक प्रसन्न, मृद्वीका या मरय ? साथ में आप क्या लेंगे, पक्वान्न या मांस ?

सुभगा उन्हें एक सुसज्जित कक्ष्या विभाग में ले गई। इशारा पाते ही एक दासी अनेकविध पक्वान्न मांस और मदिराएँ ले आई। दासी के चले जाने पर पणदत्त ने प्रश्न किया—'यह स्थान पूर्णतया एकान्त तो है ?'

आप निश्चिन्त रहें, श्रेष्ठी ! नृत्यशाला के साथ जो यह पानगृह है उसके सब कक्ष्या विभाग पूर्णरूप से एकान्त हैं। इनमें क्या हो रहा है इसे कोई भी देख-सुन नहीं सकता।

'तो फिर सुनिए देवि ! यह जो सेनानायक मेरे साथ है, इन्हें साधारण सैनिक न समझिए। यह आचार्य पतञ्जलि के शिष्य हैं उनके आश्रम में निवास कर इन्होंने आन्वीक्षकी त्रयी और दण्डनीति का सुचारु रूप से अध्ययन किया है। शस्त्र और शास्त्र दोनों में इनकी समान गति है। चन्द्रगुप्त मौर्य का पौरोहित्य करते हुए आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य ने जिस नीति का प्रतिपादन किया था उस पर इनका दृढ़ विश्वास है। धर्म विजय के नाम पर शस्त्रशक्ति की जो उपेक्षा इस समय भारत में की जा रही है, उससे यह अत्यन्त उद्विग्न हैं।'

शस्त्र और शास्त्र दोनों में पारंगत सेनानी पुष्यमित्र मेरा प्रणाम स्वीकार करें।'

'क्या कहा देवि ! सेनानी ! मैं तो एक साधारण गुल्मपति हूँ। मेरे जैसा युवक सेनानी बनने का कभी स्वप्न भी नहीं ले सकता। पुष्यमित्र ने कहा।

'मैं भविष्यवाणी करता हूँ एक दिन तुम अवश्य ही मौर्य साम्राज्य के

सेनानी पद पर आरूढ़ होगे, युवक सैनिक! मैं माँ दुर्गा की उपासिका हूँ। मेरी भविष्यवाणी कभी अन्यथा नहीं हो सकती। पर मैं पूछती हूँ, भारत को सैन्यशक्ति की आवश्यकता ही क्या है? हिमाचल से दक्षिण समुद्र पर्यन्त सम्पूर्ण आर्यभूमि में इस समय शान्ति विराज रही है। यवन, पार्थिव, वाह्लीक, सुग्ध—सब भारत के धर्म-साम्राज्य के अन्तर्गत हैं। सर्वत्र श्रमणों और भिक्षुओं को आदर की दृष्टि से देखा जाता है।

'तुम तो भगवती दुर्गा की उपासिका हो, सुभगे! क्या इतना भी नहीं समझती कि असुरों का संहार करने के लिए भगवान् को भी शस्त्र शक्ति का आश्रय लेना पड़ता है?' पर्णदत्त ने कहा।

'सब समझती हूँ, श्रेष्ठी! मैं भी आचार्य विश्वश्रवा के आश्रम में रह चुकी हूँ। आपको ज्ञात होगा कि पुष्कलावती नगरी के समीप एक तपोवन में आचार्य विश्वश्रवा का आश्रम है। वहाँ एक पुराना दुर्ग है जिसे गान्धार राज पुष्करसाति ने बनवाया था। जब गान्धार जनपद मौर्यों के अधीन हो गया, तो सम्राट् चन्द्रगुप्त ने उसका जीर्णोद्धार किया। मुझे बचपन की याद है। सुभाग सेन उन दिनों गान्धार और कपिशा के शासक थे। उस दुर्ग में तब कैसी चहल-पहल रहा करती थी! वहाँ के स्कन्धावार में लाखों सैनिक निवास करते थे। हाथियों, घोड़ों और रथों के कारण जो धूल उड़ा करती थी, उसके कारण दिन में भी अंधेरा छाया रहता था। पर जब मैं पुष्कलावती से विदा लेकर वाल्हीक नगरी में आई, वह स्कन्धावार उजड़ चुका था। सैनिकों को छुट्टी दे दी गई थी। हाथी, घोड़े और रथ धर्ममहामात्यों को सौंप दिए गए थे, ताकि वे धर्म-यात्राओं के लिए उनका उपयोग कर सकें।

'वाल्हीक आते हुए मार्ग में मैंने भी उस दुर्ग को देखा था। वहाँ अब दिन में भी शृगालों का शोर सुनाई देता है।' पुष्यमित्र ने कहा।

'यही दशा सीमान्त के अन्य दुर्गों की भी है। भारतीय व्यापारियों के साथ मेरी पान्थशाला में आते रहते हैं। मैं उनसे सब समाचार पूछती रहती हूँ। उदानपुरी की समृद्ध नगरी अब उजड़ चुकी है। कुभा नदी के साथ-साथ जो अनेक दुर्ग सम्राट् चन्द्रगुप्त ने बनवाए थे, वे सब आज खाली पड़े हैं। न वहाँ सैनिक हैं और न अस्त्र-शस्त्र। सर्वत्र श्मशान की सी शान्ति विराज

रही है।' पणदत्त ने कहा।

'यही तो मेरे उद्वेग का कारण है। भारत का पश्चिमी सीमान्त आज पूर्णतया अरक्षित दशा में है। इस स्थिति से लाभ उठाकर यदि यवनराज एवुथिदिम आर्यभूमि पर आक्रमण कर दे, तो मौर्य सम्राट किस प्रकार उसकी रक्षा कर सकेंगे ?'

'पर इस विषय में मैं क्या कर सकती हूँ ? देश की रक्षा करना तो राजाओं और सैनिकों का कार्य है। यदि राजा ही अपने कर्तव्यपालन में प्रमाद करने लगें, तो प्रजा क्या कर सकती है ?'

'आप बहुत कुछ कर सकती हैं देवि ! आपकी नृत्यशाला में प्रतिदिन सैकड़ों यवन आते हैं, राजपुरुष भी, अमात्य भी और सैनिक भी। आप उनकी गतिविधि पर दृष्टि रख सकती हैं। सुरा के प्रभाव से मदमत्त होकर जब वे शिथिल हो जाएँ, तो उनके मनोभावों और योजनाओं को पता कर सकना जरा भी कठिन नहीं है।'

'मैं समझ गई, सेनानी ! औशनस नीति का मुझे भी कुछ-कुछ ज्ञान है। देश के कल्याण के लिए और उत्कृष्ट साध्य की प्राप्ति के लिए हीन व निकृष्ट साधनों का प्रयोग भी सर्वथा उचित है, यही भगवान् उशना की दण्डनीति का सार है। मेरी नृत्यशाला में जो भी दासियाँ गणिकाएँ और नर्तकियाँ हैं, सब भारतीय हैं। सब भगवती दुर्गा की उपासिका हैं। मैं उन्हें सब कार्य समझा दूँगी। उन पर आप विश्वास कर सकते हैं।'

पुष्यमित्र देर तक देवी सुभगा के साथ इसी प्रकार वार्तालाप करते रहे। तीन प्रहर रात्रि व्यतीत हो जाने पर जब वह अपने निवास स्थान को वापस आये, तो उनका मन शान्त था। बाल्हीक नगरी में उन्हें दो ऐसे सहायक प्राप्त हो गए थे, जिनके द्वारा वह यवनों की गतिविधि का पता लगा सकते थे। पर इससे वास्तविक समस्या का हल नहीं होता था। जब तक भारत की सैन्यशक्ति का पुनः संगठन न किया जाए यवनों से देश की रक्षा कर सकना सम्भव नहीं था। पुष्यमित्र सोचने थे—यह कार्य किस प्रकार सम्पन्न होगा। मौर्य सम्राटों के सिर पर तो यह भूत सवार है कि धर्म द्वारा सम्पूर्ण विश्व की विजय की जाए। सेना को वे जरा भी महत्त्व नहीं देते। क्या मुझे भी वही मार्ग अपनाना होगा जिसे कभी चन्द्रगुप्त ने

अपनाया था। न दकुल का विनाश कर उन्होंने स्वय पाटलिपुत्र के राज सिंहासन को अधिगत कर लिया था। क्या मुरा भी यही करता होगा? कितने ही राजा इस कारण राज्यच्युत हुए क्योंकि व कामुक लोभी या प्रजापीडक थे। पर ऐसे राजा भी तो हुए हैं जिन्होंने परमार्थ के चिन्तन म अपने राजधर्म की उपेक्षा कर दी और इसी कारण प्रजा उनके विरुद्ध उठ खडी हुई। विदह के राजा जनक एस तत्त्वज्ञानी थे कि उन्ह किसी के प्रति भी ममता नही रह गई थी। उनका कहना था—'यदि सम्पूर्ण मिथिला नगरी जलकर भस्म हो जाए तो इससे मेरा क्या बनता बिगडता है। जनक संन्यासी नही थे राजा थ। अपनी राजधानी के प्रति उनकी यह वृत्ति कसी हास्यास्पद व हीन थी। इसी कारण उन्ह अपने राजसिंहासन स हाथ धोना पडा। सम्राट दशरथ इन्द्रियजयी हैं उनका व्यक्तिगत जीवन पवित्र है। पर अशोक के मार्ग का अनुसरण कर वह अपने राजकीय कर्तव्यों की उपेक्षा कर रहे हैं। आचार्य चाणक्य ने ठीक कहा था—'यदि राजा उत्थान शील हो तो प्रजा भी उत्थानशील हो जाती है। यदि राजा प्रमादी हो, तो प्रजा भी प्रमाद करने लगती है। मौर्य सम्राट अब उत्थानशील नही रहे है धर्म विजय की धुन मे वे राजधर्म स विमुख हो गए है। क्या मैं उन्ह सन्मार्ग पर ला सकूंगा? पर मैं तो एक साधारण सनिक हू। चन्द्रगुप्त तभी सफल हो सका जब चाणक्य जसे नीतिज्ञ न उसका पथप्रदर्शन किया। क्या आचार्य पतञ्जलि मुझे मार्ग दिखाना स्वीकार करेंगे? वह मेरे गुरु है अपने शिष्यों पर उनकी सदा कृपा रही है। उचित यह होगा कि मैं भारत लौट जाऊँ और आचार्य स भेंट करूँ। बाल्हीक देश म मेरा कार्य समाप्त हो गया है। देवी सुभगा और श्रेष्ठी धनदत्त यहाँ यवनों की गतिविधि पर दृष्टि रखेंगे और उनकी योजनाओं स मुझे सूचित करते रहेंग।

सम्राट् सम्प्रति का धर्म-विजय के लिए उद्योग

पुष्यमित्र ने भारत वापस लौट आने का निश्चय कर लिया था। पर वह मौर्य शासनतन्त्र की सनिक सवा म थ। मगध की सेना के सगठन म

चाह कितनी ही शिथिलता क्या न आ चुकी हो, पर अभी उसमें अनुशासन का सवथा अभाव नहीं हुआ था। मौय साम्राज्य के पश्चिमी चक्र के शासक इस समय वपसन थे और वहाँ की सना के सेनापति थे सिंहनाद। सिंहनाद की अनुमति प्राप्त किये विना पुष्यमित्र के लिए वाल्हीक नगरी से वापस आ सकना सम्भव नहीं था। पुष्यमित्र इसके लिए यत्न कर ही रहे थे, कि उन्हें कुछ ऐसे समाचार मिले जिन्हें सुनकर वह स्तब्ध रह गए। कुरुदेश के व्यापारियों का एक साथ वाल्हीक नगरी आया था, जिसके साथवाह श्रेष्ठी पुष्पदत्त थे। उनसे यह समाचार मिला कि सम्राट दशरथ की मृत्यु हो गई है, और उनके छोटे भाई सम्प्रति पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आरूढ हो गए हैं। सम्प्रति राज्यकाय मे दक्ष थे और चिरकाल से मौय शासनतन्त्र का सचालन कर रहे थे। कुणाल के शासनकाल म भी वही साम्राज्य के कणधार रहे थे और दशरथ के समय मे भी। अशोक की प्रेयसी तिष्य-रक्षिता के षडयन्त्र के कारण राजा अशोक की दन्तमुद्रा से अंकित राज-शासन के अनुसार कुणाल की आखें निकाल ली गई थी और वह स्वय शासन करने म समथ नहीं रहे थे। दशरथ का शरीर निबल था। वह अपना सब समय प्राय अर्हतो स्थविरो और श्रमणो के सत्सग म ही व्यतीत किया करते थे। अपने कनिष्ठ भ्राता सम्प्रति के हाथो मे राज्यकाय सौंपकर वह परलोक की चिन्ता म मग्न रहते थे। इसी कारण दशरथ की मृत्यु और सम्प्रति के सम्राट पद प्राप्त कर लेने पर मौय साम्राज्य के शासन म कोई विशेष परिवतन नहीं हुआ था।

पर जिस समाचार को सुनकर पुष्यमित्र स्तब्ध रह गय थे, वह दूसरा ही था। श्रेष्ठी पुष्पदत्त ने यह सूचना दी थी कि सम्प्रति ने राजपुरुषो और सनिको को भी धमप्रचार म लग जाने का आदेश दिया है। वह चाहते हैं कि मौय साम्राज्य के सैनिक भी अस्त्र शस्त्रो का परित्याग कर प्रत्यन्त दशो म धमविजय के लिए व्यापृत हो जाएँ। पुष्यमित्र को विश्वास नहीं होता था कि सम्प्रति जसा अनुभवी और दक्ष राजा भी ऐसा आदेश प्रचारित कर सकता है। वह समझते थे कि यह समाचार सत्य नहीं है। पर यह उनकी भूल थी। दो अश्वारोही धममहामात्य वीरभद्र की सेवा म उपस्थित हुए। सम्प्रति की दन्तमुद्रा म अंकित

जिसे वीरभद्र ने बड़े सम्मान के साथ ग्रहण किया। पत्र इस प्रकार था—

दवताओं के प्रिय प्रियदर्शी ने अपने राज्याभिषेक के प्रथम वर्ष में यह राजशासन प्रचारित किया है। चालीस वर्ष हुए जब मेरे पितामह राजा अशोक ने धर्म विजय के लिए प्रक्रम प्रारम्भ किया था। इस प्रक्रम में सर्वत्र धर्ममहामात्य नियुक्त किये गए धर्मयात्राएँ आयोजित की गई मनुष्यों और पशुओं की चिकित्सा के लिए चिकित्सालय खुलवाये गए मार्गों पर प्याऊ बिठाये गए मार्गों के साथ-साथ छायादार वृक्ष लगवाये गए और अन्य अनेक उपायों द्वारा मनुष्यों के सुख एवं हित का सम्पादन किया गया। इसी प्रक्रम का यह परिणाम है कि न केवल मौर्यों के विजित में अपितु प्रत्यन्तवर्ती प्रदेशों में और उनसे परे जो राज्य हैं उन सबके निवासी देवानाप्रिय के धर्मानुशासन का अनुसरण कर रहे हैं। पर देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा सम्प्रति को इससे सतोष नहीं है। मौर्यों के प्रत्यन्त में अब भी अनेक ऐसे प्रदेश हैं जिनमें साधु मुनि और स्थविर सुखपूर्वक विचरण नहीं कर पाते। इनके निवासी यह नहीं जानते कि कौन से वस्त्र भाजन और पात्र साधुओं के योग्य हैं। इससे साधुओं को धर्मप्रचार के कार्य में कठिनाई होती है। देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा की यह इच्छा है कि इन प्रदेशों को साधुओं के लिए सुविहार बनाया जाए। यह कार्य राजपुरुष और सैनिक ही सुचारु रूप से सम्पादित कर सकते है। अतः देवानाप्रिय प्रियदर्शी राजा सम्प्रति का यह आदेश है कि राजपुरुष और सैनिक अन्न अस्त्र शस्त्रों का परित्याग कर प्रत्यन्त प्रदेशों में जाएं और वहाँ के निवासियों को ऐसी शिक्षा दें जिससे कि वे साधुओं के योग्य भोजन वस्त्र और पात्र आदि का उपयोग सीख जाए। देवानाप्रिय प्रियदर्शी राजा यह चाहते हैं कि सब प्रत्यन्त प्रदेश साधुओं के सुविहार व सुखपूर्वक विचरण के योग्य हो जाएँ ताकि देवानाप्रिय का धर्मानुशासन वहा सुचारु रूप से हो सके। मौर्यों के प्रत्यन्त में जो यवन राज्य हैं उनके सैनिक भी अब सैनिक जीवन का परित्याग कर साधु वेश को अपना लें।

यह राजशासन पढ़कर आचार्य वीरभद्र का मुखमण्डल प्रफुल्ल हो गया। सम्प्रति के पत्र को उन्होंने बार बार अपने मस्तक से लगाया और पुष्यमित्र को बुलाकर कहा—इस राजशासन को पढ़ लो और अपने

सनिका को भी सुना दो। यह सम्राट का आदेश है। इसका पालन होना ही चाहिए। सम्राट् सम्प्रति महान हैं। मुझे उनसे यही आशा थी। भगवान् तथागत ने जिस अष्टाङ्गिक आय धम का प्रतिपादन किया था, उसके उत्कष का माग अब प्रशस्त हो जाएगा। सुनो पुष्यमित्र ! जो अस्त्र शस्त्र तुम्हारे पास हो उन सबको नवविहार के गूढगह मे जमा करा दो। वहाँ से तुम्हें साधुओं के योग्य वस्त्र और पात्र प्राप्त हो जाएँगे। धम विजय के महान काय म तुम्हारे जसे युवको का सहयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। मौय साम्राज्य के लिए अब सनिकों की आवश्यकता भी क्या है ? न उसे बाह्य शत्रु का भय है और न आभ्यन्तर शत्रुओं का। साम्राज्य मे सवत्र शान्ति विराज रही है। तुम जाओ, सम्राट के आदेश का पालन करो। अपने सनिकों को भी यह आदेश सुना दो। भगवान तथागत तुम्हारा कल्याण करें।'

पुष्यमित्र न सिर झुकाकर वीरभद्र को प्रणाम किया और अपने शिविर को वापस आ गए।

पुष्यमित्र और उनके सनिक शैव धम के अनुयायी थे। क्षात्र धम म उनकी अगाध आस्था थी। सनिक व्रत का परित्याग कर साधु जीवन को अपना लेने की बात उनकी समझ मे नही आती थी। अगले दिन व वीरभद्र की सेवा म उपस्थित हुए। पुष्यमित्र ने आचाय से प्रश्न किया—'हम क्या काय करना होगा, आचाय !'

'तुम्हे प्रत्यन्त देशों के निवासियों को सद्धम की शिक्षा देनी होगी। पर क्या तुम सद्धम के मन्तव्यो से भली भाँति परिचित हो ?'

आचाय पतञ्जलि के गोनद आश्रम में रहकर मैंने शास्त्रों का अनुशीलन किया है।'

पर ब्राह्मणो के जो शास्त्र हैं, व सत्य नही हैं। भगवान तथागत ने जिस अष्टाङ्गिक आय धम का उपदेश किया था, वह त्रिपिटक म सकलित है। त्रिपिटक ही सत्य शास्त्र है। क्या तुमने उनका अध्ययन किया है ?'

'नही, आचाय !

तो तुम्हे सबसे पूव सत्य शास्त्रों का अध्ययन करना होगा। नवविहार के स्थविर तुम्हारे लिए इसकी व्यवस्था कर देंगे। कुछ ही समय म तुम्हें

अतिरिक्त और कौन हो सकता है ? तुम भी बुद्ध, धम और सघ की शरण म आ जाओ, पुष्यमित्र ! त्रिरत्न की पूजा कर साधुवश को ग्रहण करो और सम्राट के आदश के अनुसार प्रत्यन्त प्रदशो म धम प्रचार के लिए व्यापृत हो जाओ।

पतञ्जलि के शिष्य पुष्यमित्र की सत्य सनातन वदिक धम म अगाध श्रद्धा थी। वीरभद्र की बात उनकी समझ म नही आई। उन्होने निणय किया कि राजकीय सवा का परित्याग कर भारत वापस लौट जाएँ। अन्य सनिको न भी उनका अनुसरण किया। श्रेष्ठी पणदत्त और कुमारी सुभगा से एक बार फिर भेंट कर उन्होने वाल्हीक दश से विदा ली। इस समय उन्ह केवल यही धुन थी कि स्वदेश लौटकर सम्प्रति की नीति का प्रतिरोध करें सैन्य बल को क्षीण न होने दें और प्राचीन आय मर्यादा को अक्षुण्ण रखन के लिए अपनी सब शक्ति लगा दें—उस आय मर्यादा को जिसका आधार चातुवण्य है जो यह प्रतिपादित करती है कि समाज के लिए क्षात्र शक्ति का भी उतना ही महत्त्व है जितना कि ब्रह्मशक्ति का। इसम सन्देह नही कि समाज के कल्याण और हित के लिए साधुओ मुनियो और स्थविरों का भी उपयोग है। पर यदि सब कोई सन्यास या भिक्षुव्रत ग्रहण कर लें तो यह ससार चक्र कस चल सकगा ? समाज को कृषक भी चाहिएँ वन्हेक भी, कमकर भी, सनिक भी और साधु सन्यासी भी। यदि सब कोई अपने अपने स्वधम का पालन करने म तत्पर रह, तभी समाज का कल्याण सम्भव है। समाज के सभी अग पुष्ट होने चाहिएँ। वर्णाश्रम व्यवस्था का यही मूल तत्त्व है। अशोक और उसके उत्तराधिकारियो की धम विजय की नीति के कारण समाज का सतुलन बिगड गया है। स्थविरो, अहतो और मुनियो को आवश्यकता स अधिक महत्त्व प्राप्त हो गया है। जिन किशोरवय बालको को अपन शरीर और मन का प्रशिक्षित करने म तत्पर रहना चाहिए और पुष्ट शरीर के जिन युवको को कृषि तथा शिल्प म अपन समय का उपयोग करना चाहिए, व आज भिक्षुव्रत ग्रहण कर सघारामो म निष्क्रिय जीवन बिता रह हैं। पर अब सम्प्रति ने जिस माग को अपनाया है वह तो और भी अधिक भयावह है। क्या राजपुरुषो और सनिको को भी साधुओ का वेश धर धमप्रचार म व्यापृत कर देना मौर्यों के

योग्य हो जाएँ। क्या यह काय महत्त्वपूर्ण नहा है ? तुम जसे साहसी युवक ही इसे सम्पन्न कर सकते हैं। रण क्षेत्र म जाकर शत्रु म युद्ध करत हुए मृत्यु को प्राप्त कर लना ही वीरता नहीं है पुष्यमित्र ! घोर सरगावुल प्रदेशा म जाकर वहाँ के क्रूर और दुस्साहसी लोगा म काय करना भी वीरता की बात है।'

यह सत्य है आचाय ! पर दस्युआ का वश म लान क लिए शस्त्र शक्ति की आवश्यकता को आप स्वीकार करेंगे। जब आप कपिश देश क पश्चिम की पवतमाला को पार कर पार्थिव देश म प्रवेश करेंगे तब आपको सनिका की उपयोगिता का बोध होगा। वहाँ दस्युओ के दल न मुनियो का विचार करते हैं और न स्थविरो का। आपके साथ जो यह अपार सम्पत्ति है उसे लूट लेने और मुनियो की हत्या कर देने म व जरा भी सकोच नहीं करेंगे।

यह तुम्हारी भूल है वत्स ! दस्यु लोग जो सार्थों और यात्रियो को लूटते हैं उसका कारण उनकी निधनता ही तो है। उन्हे धन ही तो चाहिए। हमारे पास अपार धन-सम्पत्ति है। पर यह धन हमारे अपने सुख भोग के लिए नहीं है। क्या तुम नहीं देखत कि हमारी इस भुक्तिशाला मे जो चाहे भोजन पा सकता है। जिस वस्त्र की आवश्यकता हो वह यहाँ वस्त्र प्राप्त कर सकता है। हम जहाँ भी जाएगे इसी प्रकार की भुक्तिशालाएँ स्थापित कर देंगे। फिर दस्यु हम पर क्या आक्रमण करेंगे ? हम उनका स्वागत करेंगे भोजन से वस्त्र से धन स। हमारे द्वार मनुष्यमात्र क लिए खुले हैं हमे दस्युआ स कोई भय नहीं है।

पर दस्युवृत्ति का कारण केवल निधनता ही तो नहीं होती आचाय ! कुछ लोग स्वभाव से ही दुष्ट, लोभी और कामुक होते हैं। उनका दमन करने के लिए शस्त्र शक्ति का प्रयोग करना ही पडता ह।

तुम समझत नहीं हो पुष्यमित्र ! मनुष्या का हृदय परिवतन करके ही सच्चा सुधार सम्भव है। जिन्हे तुम लम्पट दस्यु और दुष्ट कहते हो वे भी मनुष्य है। हमारा प्रयत्न यह है कि उनके सदगुणो का विकास किया जाए। परिस्थितियो के कारण उनकी जो नीच प्रवत्तिया उभर आई हैं उनका दमन कर उनम मानवोचित गुणा को विकसित किया जाए। अच्छा

अब तुम जाओ। जो कुछ मैंने कहा है, उस पर गम्भीरता से विचार करो। जिन महावीर तुम्हारा कल्याण करें।''

पुष्यमित्र ने सिर झुकाकर कालक मुनि को प्रणाम किया और चुपचाप वहाँ से चल पड़े। लौटते हुए वह उस मार्ग से गए जिसके समीप पुष्कलावती का प्राचीन दुर्ग स्थित था। दुर्ग की विशाल प्राचीर अब भी विद्यमान थी, पर कितने ही स्थानों पर उसकी शिलाएँ उखड़ गई थीं और वहाँ पौधे, घास और झाड़ियाँ उग आई थीं। दुर्ग की परिखा अब भी सुरक्षित थी, पर उसमें जल की एक बूँद भी नहीं थी और सर्वत्र मिट्टी भर गई थी। प्राचीर पर बने हुए उच्छ्रित ध्वज (बुर्ज) अब भी धूप में चमक रहे थे, पर उनमें एक भी प्रहरी दिखाई नहीं देता था। दुर्ग के महाद्वार खुले पड़े थे और गडरिए वहाँ भेड़-बकरियाँ चरा रहे थे। सम्पूर्ण दुर्ग झाड़-झंखाड़ से परिपूर्ण था। सर्वत्र श्मशान की सी शान्ति छाई हुई थी। पुष्यमित्र देर तक खड़े हुए पुष्कलावती के इस प्राचीन दुर्ग को देखते रहे। उनकी आँखों से आँसू टपकने लगे। वह चुपचाप उस पान्थशाला को लौट आए जहाँ उनके साथी उत्सुकतापूर्वक उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

जेतवन विहार में गूढ़ मन्त्रणा

कोशल जनपद की राजधानी श्रावस्ती अपने धन-वैभव के लिए भारत भर में प्रसिद्ध थी। पाटलिपुत्र से उत्तरापथ और कपिश-गान्धार जानेवाला राजमार्ग इसी नगरी से होकर जाता था। अनाथपिण्डक जैसे धनकुबेर श्रावस्ती के ही निवासी थे। इस नगरी के समीप जेतवन नाम का एक रमणीय उद्यान था। धर्मचक्र का प्रवर्तन करते हुए भगवान् बुद्ध जब श्रावस्ती आए थे तो उन्होंने जेतवन में ही विश्राम किया था। कोटि-कोटि सुवर्ण मुद्राएँ प्रदान कर श्रेष्ठी अनाथपिण्डक ने इस उद्यान को कुमार जेत से क्रय कर लिया था और वहाँ तथागत के निवास की व्यवस्था की थी। बुद्ध के आगमन की स्मृति में अनाथपिण्डक ने जेतवन में एक विशाल विहार का निर्माण कराया था, तीन चार सदी बीत जाने पर अब तक भी जो पूर्णतया

मे हुआ है मागध सम्राटो का साहाय्य उसका प्रधान कारण है। अशोक कुणाल और दशरथ बौद्ध धर्म के अनुयायी थे। आचार्य उपगुप्त ने सद्धर्म को देश विदेश में फैलाने के लिए जो महान आयोजन किया धर्म विजय की नीति उसमें कितनी सहायक हुई। शासनतन्त्र द्वारा जो भी धर्ममहामात्य नियुक्त किए गए सब स्थविर या श्रमण थे। धर्मविजय के प्रयोजन से वे जब धर्म यात्राए करते तो त्रिपिटक के सूत्रो का आश्रय लेकर ही उपदेश दिया करते। वे जो चिकित्सालय स्थापित करते उनमे भी तथागत तथा बोधिसत्त्वो की प्रतिमाए प्रतिष्ठापित की जाती। मौर्य सम्राट जो दान दक्षिणा देते वह सब भी बौद्ध विहारो और सघारामो को ही दी जाती। जनता राजा का अनुसरण किया करती है वस्तुत ! काल राजा को नही बनाता अपितु राजा काल का निर्माता हुआ करता है। राजशक्ति का सहारा पाए बिना कोई भी धर्म पनप नही सकता। अब राजशक्ति जैनो को प्राप्त हो गई है। अब जैन मुनि ही धर्ममहामात्य के पदो पर नियुक्त किए जा रहे हैं। यह सब क्या हमारे लिए चिन्ता की बात नही है ?

स्थविर बुद्धघोष अब तक शान्त बैठे थे। उन्होने किंचित रोष के साथ कहा—आप ठीक कहते हैं स्थविर ! सम्प्रति को हमे सन्मार्ग पर लाना ही होगा। यदि वह स्वय पश्चात्ताप कर पुन बुद्ध धर्म और सघ की शरण मे आ जाए तो अच्छा है। अन्यथा '

चुप क्यो हो गए बुद्धघोष ! यहाँ किसका भय है ?

अन्यथा हमे उसे राजसिंहासन से च्युत करना होगा। मौर्य कुल मे अनेक ऐसे कुमार हैं जो सद्धर्म मे आस्था रखते हैं। कुमार शालिशुक को मैं भलीभाति जानता हू। वह श्रद्धालु उपासक है। सम्प्रति अब वृद्ध हो गया है। उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। पाटलिपुत्र छोडकर वह उज्जैन मे रहने लगा है। पर मौर्य शासनतन्त्र का केन्द्र तो पाटलिपुत्र ही है। क्या हम यह प्रयत्न नही कर सकते कि पाटलिपुत्र मे सम्प्रति के विरुद्ध विद्रोह करा दिया जाए और शालिशुक राजसिंहासन पर आसीन हो जाए। प्रजा इससे सतुष्ट ही होगी। सम्प्रति को तो अब राजकार्य की कोई चिन्ता ही नही है।

क्या यह सम्भव हो सकेगा बुद्धघोष !

क्यो नही स्थविर ! पाटलिपुत्र का एक गूढ पुरुष इन दिनो श्रावस्ती

आया हुआ है। इस समय वह विहार म ही है। सद्धम के प्रति उसकी अगाध श्रद्धा है। क्या नाम है उसका ? हा, स्मरण हुआ, चण्डवर्मा। वह बडा साहसी और महत्त्वाकाक्षी व्यक्ति है। कहिए ता उसे बुला लाऊँ।

'क्या उसका विश्वास किया जा सकता है ?'

'मैं उसे भलीभाति जानता हूँ। सद्धम के लिए वह अपने प्राणो तक को न्यौछावर कर सकता है।'

मज्झिम से अनुमति प्राप्त कर बुद्धघोप चण्डवमा को बुला लाए। आदेश पाकर वह भी एक आसन पर बठ गया और विनयपूवक बोला—मरे लिए क्या आज्ञा है, स्थविर ?'

'गूढपुरुप का काय करते हुए तुम्हें कितना समय हुआ है, वत्स ?'

दस वप।

उससे पहले तुम क्या काय करते थे ?'

लोहकार का स्थविर! मैं अहिच्छत्र का निवासी हूँ। वहा का लोहशिल्प भारत भर म प्रसिद्ध था। अस्त्र शस्त्रा का वहा बडी सख्या मे निमाण होता था। सेना के लिए खडग, बाण, परशु आदि तयार करा के वहाँ के श्रेष्ठिया ने अपार धन कमाया। मैं भी एक श्रेष्ठी की कमशाला मे लौहशिल्पी का काय किया करता था। पर धीरे धीरे अस्त्र शस्त्रो की माँग म कमी होती गई। धम द्वारा विश्व की विजय करने के लिए प्रयत्नशील मौय सम्राटो के लिए सेना का विशेष महत्त्व नही रह गया। जब सेना म कमी हुई, तो अस्त्र शस्त्रा की माँग स्वय घट गई। धीरे धीरे अहिच्छत्र की कमशालाएँ बन्द होती गइ, और मैं बेकार हो गया। काम की खोज मे मैं पाटलिपुत्र चला गया। वहाँ मुझे गूढपुरुप की नौकरी मिल गई।

तुम किस आचाय के सत्री हो, वत्स! और किस वेश मे काय करते हो ?'

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए चण्डवर्मा को सकोच हुआ। वह चुप रहा। उसके मनोभाव को समझकर स्थविर बुद्धघोप ने कहा—

तुम्हारी कठिनाई को मैं समझता हूँ, चण्डवर्मा! राजकीय सेवा म जब किसी गूढ पुरुप की नियुक्ति की जाती है तो उसे मन्त्रगुप्ति की

शपथ दिलायी जाती है। उसे यह भी ज्ञात नही होता कि किस राजकीय अधिकरण के साथ उसका सम्बन्ध है और किस राजपुरुष के अधीन उसे काय करना है। वह केवल उस आचाय को जानता है जो उस काय का आदेश देता है। आचाय के अतिरिक्त कोई भी यह नही जानता कि कौन-कौन व्यक्ति गूढपुरुष के काय म व्यापृत है। कोई गूढ पुरुष अपने उन साथी सत्रियो से भी परिचित नही होता जो उसी आचाय की अधीनता म काय कर रहे हो। जनता को तो यह ज्ञात ही नही हो सकता कि कौन व्यक्ति गूढ पुरुष है। तुम स्वय विचार करो चण्डवर्मा! मुझे यह ज्ञात है कि तुम एक गूढपुरुष हो। यदि मैं श्रावस्ती के दण्डपति को यह सूचना दे दू कि तुम पाटलिपुत्र के गूढ पुरुष हो तो तुम्हारी क्या गति होगी? तुम्हारा गूढ पुरुष होना किसी अय को भी ज्ञात हो गया है क्या दण्डपाल इसे सहन कर सकेगा?

चण्डवर्मा अब भी चुप रहा। इस पर स्थविर मज्झिम ने कहा—

वुद्धघोष की बात पर तुम कोई ध्यान न दो वत्स! बुद्ध धम और सघ म तुम्हारी अगाध श्रद्धा है। तुम उपासक हो वत्स! तथागत द्वारा प्रतिपादित अष्टाङ्गिक आय धम की रक्षा के निमित्त तुम अपने तन-मन धन की बलि दे सकते हो। मैं ठीक कह रहा हूँ न वत्स!'

हा स्थविर! सद्धम के लिए यदि मेरा यह तुच्छ शरीर काम आ सके, तो मेरा सौभाग्य होगा।

तो सुनो वत्स! सद्धम को आज एक घोर सकट का सामना करना पड रहा है। सम्प्रति ने तथागत द्वारा प्रतिपादित मध्यमा प्रतिपदा का परित्याग कर दिया है। उसने जन धम की दीक्षा ग्रहण कर ली है। विचार तो करो इसका क्या परिणाम होगा। वह समय दूर नही है जब सघ की शक्ति क्षीण हो जाएगी सघाराम निजन हो जायेंगे चत्य उजड जाएँगे और उपासना बन्द हो जाएगी। क्या तुम यह सहन कर सकोगे वत्स!

'कदापि नही, स्थविर!

'मुझे तुमसे यही आशा थी वत्स! राजकीय सेवा को स्वीकार करते हुए मन्त्रगुप्ति की जो शपथ तुमने ग्रहण की थी मेरी दृष्टि म उसका बहुत महत्त्व है। उसका पालन करना तुम्हारा कतव्य है। पर क्या सद्धम के प्रति

तुम्हारा कोई कर्तव्य नहीं है ? यह मत भूलो वत्स ! धर्म परलोक में भी मनुष्य के साथ रहता है। राजकीय सेवा इहलोक में मनुष्य का हित अवश्य सम्पादित करती है, पर धर्म इहलोक और परलोक दोनों में कल्याणकारी होता है। तुम्हारे सम्मुख दो कर्तव्य हैं, वत्स ! दोनों में से किसी एक को चुन लो।'

'मुझे आपकी आज्ञा शिरोधार्य है स्थविर ! सद्धर्म के प्रति मेरा कर्तव्य अधिक महत्त्व का है।'

'साधु साधु वत्स ! बुद्धघोष, कहो चण्डवर्मा को क्या करना होगा ?'

'मैंने यह जानना चाहा था कि चण्डवर्मा किस आचार्य के अधीन गूढ-पुरुष का कार्य करता है और उसने सत्री के रूप में क्या वेश अपनाया हुआ है।'

'पाटलिपुत्र के राजप्रासाद के महानस में प्रधान ओदनिक के पद पर जो व्यक्ति नियुक्त हैं उनका नाम निपुणक है। वही मेरे आचार्य हैं। मैं वर्द्धक के रूप में कार्य करता हूँ। महानस को अन्न, फल आदि पहुँचाना मेरा कार्य है। गूढ पुरुष के रूप में जो सूचनाएँ मैं प्राप्त करता हूँ, उन्हें अन्न फल के साथ आचार्य निपुणक तक पहुँचा देता हूँ।'

तो राजप्रासाद में तुम्हारा अनवहृत प्रवेश है ?

'हाँ स्थविर ! मुझे प्रायः प्रतिदिन ही राजप्रासाद जाना होता है।

श्रावस्ती में तुम किस प्रयोजन से आए हो ?'

'जेतवन विहार के महोत्सव में सम्मिलित होने के लिए।

क्या केवल इसीलिए ? क्या निपुणक ने तुम्हें कोई अन्य कार्य नहीं सौंपा था ?'

'आप तो सर्वज्ञ हैं स्थविर ! आपसे कुछ भी छिपाऊँगा नहीं। निपुणक ने मुझे कहा था कि श्रावस्ती जाकर जेतवन विहार के स्थविरों के सम्पर्क में आना और यह जानने का प्रयत्न करना कि सम्प्रति के जैन धर्म की दीक्षा ग्रहण कर लेने के कारण उन पर क्या प्रतिक्रिया हुई है।

तो इसी प्रयोजन से तुमने मुझसे परिचय किया था ?' बुद्धघोष ने प्रश्न किया।

हाँ स्थविर ! मुझे आश्चर्य है कि आपको यह कैसे ज्ञात हो गया कि मैं एक गूढपुरुष हूँ।'

हमारे भी गूढपुरुष है वत्स ! तुम यह नही जानते कि चातुरन्त सघ सवशक्तिमान है। मौर्यों की राजशक्ति तो निरन्तर शिथिल होती जा रही है पर सघ की शक्ति मे दिन दूनी रात चौगुनी वद्धि हो रही है। तुम जब से श्रावस्ती आए हो हमारे सत्री तुम्हारी गतिविधि का सूक्ष्मता के साथ निरीक्षण करने म तत्पर हैं। अच्छा, अब तुम जाओ, और विहार के उद्यान मे दो घडी ठहर कर प्रतीक्षा करो।

चण्डवर्मा के चले जाने पर स्थविरो ने परस्पर मन्त्रणा प्रारम्भ कर दी। बुद्धघोष ने कहा—

सम्प्रति को राजसिंहासन से च्युत किए बिना सद्धम की रक्षा असम्भव है। उसे हमे अपने माग से हटाना ही होगा। इसके लिए चाहे किसी भी साधन को अपनाना पडे।

पर वह साधन क्या है जो तुम्हारे मन म है ? स्थविर मज्झिम ने प्रश्न किया।

'हत्या।

हत्या ! आप भी क्या कह रह है स्थविर ? कस्सप ने उद्विग्न होकर कहा— तथागत ने जिस अष्टाङ्गिक आय माग का प्रतिपादन किया है उसके अनुसार हिंसा घोर पाप है। यदि हम स्थविर लोग भी अहिंसा व्रत का त्याग कर हिंसा जसे हीन साधनो का प्रयोग करने लग तो सद्धम रसातल को चला जाएगा।

यह आपकी भूल है स्थविर ! त्रिपिटक म आपकी अबाध गति है। पर दण्डनीति को आप नही जानते। राज्य के उत्कष के लिए औशनस नीति को भी अपनाना पडता है। यदि साध्य उत्कृष्ट हो तो साधन की हीनता व सम्बन्ध म तक वितक करना मूखता है।

पर क्या यह उचित है कि सघ राज्य के क्षेत्र म इस प्रकार हस्तक्षेप करने लग ?

यह बताइए कि हमने अपने गूढ पुरुष किस प्रयोजन से नियुक्त किए हैं स्थविर ! इसीलिए तो कि व राजपुरुषों पर दष्टि रखें उनकी गतिविधि का पता लगाते रह। शासनतन्त्र कही सद्धम से विमुख न हो जाए इसकी चिन्ता हम क्या करते हैं ? यह स्मरण रखिए कि भारत म वद्धमान सम्प्रदायों

और पापण्डा की सत्ता है। सब कोई जनता को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए प्रयत्नशील हैं। सद्धम का जो इतना उत्कप हुआ, उसका प्रधान कारण राजशक्ति का साहाय्य ही तो था। वह समय आपको स्मरण होगा जब इस देश के राजा याज्ञिक कम काण्ड मे तत्पर रहा करते थे, यज्ञकुण्ड म हज़ारो निरीह पशुओ की बलि दी जाया करती थी, और सवमाधारण गहस्थ भी पशु बलि दना अपने धार्मिक अनुष्ठानो का आवश्यक अग माना करत थे। जब से प्रियदर्शी राजा अशोक न भगवान् तथागत की मध्यमा प्रतिपन्ना को स्वीकार किया, इस दशा म परिवतन आ गया। आज जो सम्पूण भारत म भगवान बुद्ध के धर्मानुशासन का पालन किया जा रहा है, उसका कारण क्या राजशक्ति का आश्रय नही है ? यदि राजा ही सद्धम से विमुख हो गए तो हमारे इस चातुरन्त सघ की शक्ति ही क्या रह जाएगी ? कुमार शालिशुक सद्धम का अनुयायी है, तथागत के अष्टाङ्गिक आय माग के प्रति उसकी अगाध श्रद्धा है। वह अब प्रौढ भी हो चुका है। सम्प्रति को राजसिहासन स च्युत कर हमे शालिशुक को राजा बनाना ही होगा, चाहे इसके लिए हमे सम्प्रति की हत्या भी क्यो न करनी पडे।'

'हत्या के अतिरिक्त क्या कोई अन्य उपाय नही है ?' स्थविर मज्झिम ने प्रश्न किया।

'सम्प्रति की आयु सत्तर वप स ऊपर हो चुकी है। उसके अग शिथिल हो गए है और बुद्धि भी स्थिर नही रही है। वह अधिक दिन तो जियगा नही। पर उसकी मृत्यु की प्रतीक्षा म हम कब तक शान्त बठे रह सकते हैं ? हमारे सम्मुख अब दो ही उपाय हैं या तो उसकी हत्या करा दी जाए और या उसके विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खडा किया जाए। पुराने नीति ग्रन्था में राजकुमारो की उपमा ककटो (केकडा) स दी गई है, जो अपने जनक को ही खा जाते हैं। सम्प्रति की कितनी ही रानिया हैं और बहुत से राजकुमार। व सब इस प्रतीक्षा म बठे हैं कि कब बुड्ढा मरे और उन्हे राजसुख के उपभोग का अवसर प्राप्त हो। कुमार शालिशुक की आयु अब पचास वर्ष के लगभग हो चुकी है और भववर्मा तो उससे भी दो साल बडा है। दोनो राजसिहासन के लिए लालायित हैं। क्यो न इन्हे विद्रोह के लिए उकसा दिया जाए ?' बुद्धघोप न उत्तर दिया।

चण्डवमा उद्यान म प्रतीक्षा कर रहा था। उसे बुलाया गया और बुद्ध घोष न उस कहा—'तुम पाटलिपुत्र के आतवशिक को जानते हो वत्स !'

हा स्थविर ! मौय साम्राज्य के आतवशिक गुणसेन से मैं भलीभांति परिचित हूँ।'

क्या वह तथागत द्वारा प्रतिपादित मध्यमा प्रतिपदा म विश्वास रखता है ?

'हा, स्थविर ! बुद्ध, धम और सघ म उनकी अगाध श्रद्धा है।

'उसकी सेना म कितने सनिक हैं ?

'कोई दस सहस्र के लगभग। गत वर्षों म मौय शासनतन्त्र सन्य-शक्ति की निरंतर उपेक्षा करता रहा है। यही कारण है जो आतवशिक सेना के सनिकों की सख्या भी इतनी कम रह गई है।

आवश्यकता पडन पर क्या नए सैनिक भरती किए जा सकते हैं ?'

क्या नही, स्थविर ! मगध की सैनिक परम्परा अभी नष्ट नही हुई है। मौल भृत और आटविक—सब प्रकार के सनिक मगध म सुगमता से प्राप्त किए जा सकते हैं। इन सबकी आजीविका सनिक सेवा पर ही निभर थी। मौर्यों द्वारा जब सना म भरती बन्द कर दी गई, तो य बेकार हो गए। इनकी आजकल बहुत दुर्दशा है।'

तुम तुरन्त पाटलिपुत्र लौट जाओ। शीघ्र से शीघ्र वहा गुणसेन से मिलो। उसे कहो चातुरन्त सघ का आदेश है कि सना म नए सनिक भरती किए जाएँ। सना पर जो व्यय बढेगा उसे सघ प्रदान करेगा।

यदि गुणसेन मुझसे पूछें कि नई सेना की क्या आवश्यकता है तो मैं क्या उत्तर दू, स्थविर ?

वह देना कि चातुरन्त सघ का यही आदेश है। सद्धम का कोई भी अनुयायी सघ के आदेशों की अवहेलना नही कर सकता।

मेर लिए कोई अन्य आज्ञा स्थविर ?'

हाँ तुम गूढपुरुषों का एक नया दल सगठित करो। कापालिक, उदास्थित वदेहक, तापस, रसद भिक्षुक दासी आदि सब के भेस भर हुए सत्री तुम्हारे दल म सम्मिलित हो। यह दल अन्त पुर की गतिविधि पर दृष्टि रखे। जाओ तुरन्त अपना काय प्रारम्भ कर दो। सघ के

तुम्हें निरंतर प्राप्त होते रहेंगे। जाओ तथागत तुम्हारा कल्याण करें।'

तो फिर मैं चलता हूँ। स्थविर मेरा प्रणाम स्वीकार करें।

'ठहरो एक काय और है। पाटलिपुत्र के कुक्कुटविहार के संघ-स्थविर के नाम एक पत्र भी तुम्हें ले जाना है। यह तुम्हें कल प्रात तक दिया जा सकेगा। उसे बहुत संभालकर ले जाना।

जो आज्ञा स्थविर!

चण्डवर्मा ने झुककर स्थविर को प्रणाम किया और अपने निवास स्थान को लौट गया।

शिष्य की गुरु से भेंट

पुष्यमित्र पुष्कलावती से तक्षशिला गए और वहाँ से केकय जनपद की राजधानी राजगृह। वह शीघ्र दशार्ण देश जाकर आचार्य पतञ्जलि से मिलने के लिए उत्सुक थे। वाहीक कुरु और मत्स्य देश में होते हुए वह शीघ्र विदिशा पहुँच गए। पर वह विदिशा में ठहरे नहीं। यद्यपि उनका घर विदिशा में था और अपने माता पिता से मिले उन्हें बहुत दिन हो गए थे, पर दशार्ण जाने की उन्हें बहुत जल्दी थी। यदि माता पिता से मिलने चले जाते तो शीघ्र छुटकारा न मिल पाता। पर रात तो विदिशा में बितानी ही थी। वह एक पान्थशाला में चले गए जिसका स्वामी शुभ्ररूप उनका पुराना मित्र था। पतञ्जलि के आश्रम में व दोनों साथ-साथ रह चुके थे। भोजन के अनन्तर दोनों मित्र एक साथ बैठ गए और उनमें बातें होने लगी।

विदिशा के क्या समाचार हैं शुभ्ररूप! सब कुशल मंगल तो है? पुष्यमित्र ने प्रश्न किया।

'भगवान् अप्रतिहत की कृपा है।

'पर तुम्हारी पान्थशाला तो सूनी-सूनी-सी दिखाई दे रही है। न कहीं नाचरंग हो रहा है और न संगीत की ध्वनि ही सुनाई पड रही है। ऐसा प्रतीत होता है मानो किसी संघाराम में आ गए हों। कहाँ गई तुम्हारी वे देवलम्पा दासियाँ जिनकी नूपुर ध्वनि और मृदु हास्य से यह पान्थशाला

सदा मुखरित रहा करती थी ! कहा हैं तुम्हारी व नतकिया जिनके शिल्प को देखने के लिए दूर-दूर के जनपदा के युवका की विदिशा म भीड लगी रहती थी ?'

'क्या कहूँ भाई पुष्यमित्र ! किन पुरान दिनो की बातें कर रहे हो। सनानायक और सनिक तो अब विदिशा मे रहे ही नही। स्कन्धावार खाली पडा है। सब सनिका को प्रत्यन्त देशा म भेज दिया गया है। जब सैनिक ही नहा रह तो पाट्यशाला म रौनक कहा से हो ? क्या मुनि, साधु और श्रमण नत्य दखन के लिए आएँगे ? तुम्ही बताओ, किसके लिए नृत्य और सगीत का आयोजन करूँ ? किसी प्रकार दिन काट रहा हूँ।

अच्छा यह बताआ, क्या जनता इसमे सतुष्ट है ?'

'राजनीति स सवसाधारण जनता का क्या सम्बन्ध ? सनिक विदिशा मे रहें या प्रत्यन्त देशो म जाकर धम विजय म हाथ बटाएँ, जनता को इससे क्या ? सम्भवत तुम्हे नात हागा कि गतवष यहा वर्षा हुई ही नही। खेत खडे-खडे सूख गए। प्रजा म हाहाकार मच गया। एस समय म सम्राट सम्प्रति ने बडी बुद्धिमत्ता स काम लिया। स्थान-स्थान पर भुक्तिशालाएँ स्थापित करवा दी गइ। सब काइ वहा जाकर भोजन प्राप्त कर सकते हैं। लोग इसस सन्तुष्ट हैं। सवत्र सम्राट सम्प्रति की जय-जयकार हो रही है।'

हा, विदिशा आत हुए माग म मैंन बहुत सी भुक्तिशालाएँ देखी हैं। वहाँ स्त्री-पुरुषा की भीड लगी रहती है। सुना है, एसा घोर दुर्भिक्ष देश म पहले कभी नही पडा था। आचाय चाणक्य न एस कुसमय के लिए ही यह व्यवस्था की थी कि राज्य का काप धन धान्य स सदा पूण रहा कर। प्रतिवप उसम नया अन्न भर दिया जाया करे और पुराने अन्न को बेच दिया जाए। पर क्या आज इस पुण्यकाय का दुरुपयोग नहीं हो रहा है ?

अवश्य हो रहा है। जब लागो का परिश्रम किए बिना ही अन्न भाजन प्राप्त हा जाए ता व क्या कमशालाआ म जाकर श्रम करें ? श्रेष्ठी और वदहक इस दशा स उद्विग्न हैं। कमशालाएँ बन्द पडी हैं और वदहक हाथ पर हाथ रखे बठ हैं। भुक्तिशालाएँ स्थापित कर सम्प्रति न अवश्य उत्तम काय किया, पर निःशुल्क भोजन की व्यवस्था को वाञ्छनीय नही कहा जा सकता। इस अवसर स लाभ उठाकर यदि नए राजमाग बनवाए

होग। भोजनशाला म जाकर भोजन कर लो। आश्रम की सब व्यवस्था तो तुम्हे ज्ञात ही है।

'जो आज्ञा आचाय !'

पतञ्जलि का आश्रम केवल दशाण म ही नहीं अपितु सम्पूण भारत म प्रसिद्ध था। सुदूर देशो से विद्यार्थी वहा शिक्षा के लिए आया करते थ। वेद दशन दण्डनीति व्याकरण, शिल्प कला धनुर्वेद आदि सब विद्याओ के अध्ययन की वहाँ व्यवस्था थी। तक्षशिला काशी उज्जन आदि के प्राचीन विद्यापीठो म उन दिनो बौद्ध विद्वानो का आधिपत्य हो गया था, और वहा आस्तिक दशन तथा प्राचीन शास्त्रो की शिक्षा की वहाँ उपेक्षा की जाने लगी थी। यद्यपि आश्रमो का स्थान अब बौद्ध विहारो न ले लिया था। पर गोनद का आश्रम इस युग म भी प्राचीन वदिक अध्ययन का केन्द्र था और आचाय पतञ्जलि की विद्वत्ता की ख्याति के कारण इसका महत्त्व और भी अधिक बढ गया था। पुष्यमित्र की शिक्षा भी इसी आश्रम म हुई थी। उनके बहुत से सहपाठी अब वहाँ शिक्षक का काय कर रहे थ। आचाय पतञ्जलि के जाते ही आश्रमवासियो ने पुष्यमित्र को घेर लिया और उनकी यात्रा के अनुभव सुनने लगे। वाल्हीक देश के सम्बन्ध म उन्होने बहुत-से प्रश्न पूछे। सुना है, यवन लोग लेटकर भोजन करते हैं क्या यह सच है? क्या वाल्हीक नगरी के राजमार्गों और पथचत्वरो पर स्त्रियो की नग्न मूर्त्तिया स्थापित हैं? यवनो का अपना धम क्या है? वे किन देवी-देवताओ की पूजा करते हैं? उनकी पूजाविधि क्या है? वे कसे वस्त्र पहनते हैं? उनका रहन सहन और खान पान कसा है? क्या वहाँ भी आश्रम विद्यमान हैं? पुष्यमित्र देर तक आश्रमवासियो के प्रश्नो का उत्तर देते रहे। अपने कुलबन्धुओ से मिलकर उनकी सारी थकावट दूर हो गई।

प्रात काल जब आचाय पतञ्जलि नित्यकर्मों और याज्ञिक अनुष्ठान आदि से निवृत्त हो गए तो उन्होने पुष्यमित्र को अपनी पणकुटी म बुलाया। वहा सब ओर भोजपत्रो और तालपत्रो पर लिखे हुए ग्रन्थो के ढेर लगे हुए थे। स्वय आचाय पाणिनि मुनि की अष्टाध्यायी पर महाभाष्य लिखने म व्यस्त थे। वात्सल्य से पुष्यमित्र को अपने पास बिठाकर पतञ्जलि ने प्रश्न किया—

'वाल्हीक देश के क्या समाचार हैं, वत्स ! तुम तो बहुत लम्बी यात्रा करके आये हो। वीरभद्र के साथ यवनराज्य मे गए थे न ? इतन शीघ्र कैसे वापस लौट आये ?'

'सम्राट सम्प्रति ने आदेश दिया था कि सनिका को भी धमविजय के काय मे लगा दिया जाए। जो यह स्वीकार न करें, उन्हे राजकीय सेवा से छुट्टी दे दी जाए। आप तो जानते ही हैं आचाय, मैं एक सनिक हूँ आपके आश्रम मे नियमपूवक निवास कर मैंने धनुर्वेद की उच्च शिक्षा प्राप्त की है। भिक्षुओ का जीवन बिता सकना मेरे लिए असम्भव है।

तो फिर अब क्या विचार है ? सम्प्रति के शासन म सनिका के लिए कोई भी स्थान नही है। दशाण देश की सेना को भी भग कर दिया गया है।

'यही तो मेरी चिन्ता का विषय है, आचाय ! यवना की गतिविधि को मैं स्वय अपनी आखो से देख आया हूँ। यवनराज एवुथिदिम अपनी सैन्यशक्ति की वद्धि मे तत्पर है। सीरिया का राजा अन्तियोक और पार्थिव देश का स्वामी मिथ्रदात भी नई सेनाओ को सगठित करने के लिए प्रयत्नशील हैं। भारत के उत्तर-पश्चिमी सीमान्त पर एक भयकर तूफान के चिह्न प्रगट हो रहे हैं। वह समय दूर नही है जबकि कपिश गान्धार के पश्चिम से उठती हुई यह आधी भारत के शान्त वातावरण को विक्षुब्ध कर देगी। मौय शासनतन्त्र को इस विपत्ति की जरा भी चिन्ता नही है। सम्राट् सम्प्रति सुहस्ति मुनि की चरणसेवा करते हुए अणुव्रतो के पालन म तत्पर हैं। भारत का धन धान्य विदेशो म भेजा जा रहा है, ताकि वहा की प्रजा के हृदयो को धम द्वारा जीता जाए। सैनिको को भी विदेशियो की सेवा मे लगा दिया गया है। धम विजय की नीति का यह कैसा उपहास है। मैं सोचता हूँ देश को इस भावी विपत्ति से बचाने के लिए हमारा भी कुछ कतव्य है।'

देखो वत्स मैं एक वैयाकरण हूँ। शब्दानुशासन के गूढ तत्त्वो का विवेचन करने म ही मेरी सारी आयु व्यतीत हो गई है। राजनीति की ओर मैंने कभी ध्यान नही दिया। आचाय दण्डपाणि को तो तुम जानते ही हो। दण्डनीति के वह प्रकाण्ड पण्डित हैं। मनु वाचस्पति शुक्र पराशर व्यास वहस्पति, च

लिया है। तुम्हारे यह गुरु भी रहे हैं। मैं उन्हें सुनकर सदा हूँ। तुम उनके साथ विचार विमर्श करो। मैं ध्यानपूर्वक सुनूंगा।

आचार्य दण्डपाणि अपने छात्रों के सम्मुख औशनस नीति के सम्बन्ध में प्रवचन कर रहे थे। पतञ्जलि के पहुँचने पर वह उनकी पर्णकुटी में चले आए। पुष्यमित्र ने खड़े होकर उन्हें प्रणाम किया। उनके आसन ग्रहण कर लेने पर पतञ्जलि ने कहा—

आपका यह शिष्य वाल्हीक कपिश गान्धार वाहीक कुरु मत्स्य आदि सर्वत्र भ्रमण करके आया है। देश की वर्तमान राजनीति के सम्बन्ध में मुझसे विचार विमर्श करना चाहता था। आप तो जानते ही हैं उपाध्याय राजनीति में मुझे रुचि नहीं है। आप ही इसे सत्परामर्श दे सकेंगे। पुष्यमित्र आपका पुराना शिष्य है।

मुझे अपने इस शिष्य पर गर्व है आचार्य! यह हमारे आश्रम का नाम उज्ज्वल करेगा।

पतञ्जलि से अनुमति प्राप्त कर पुष्यमित्र ने अपने विचारों को फिर से दोहरा दिया। उन्हें सुनकर दण्डपाणि बहुत गम्भीर हो गए। कुछ क्षण चुप रहकर उन्होंने कहना प्रारम्भ किया—

'राजा अशोक की धर्म विजय की मैंने कभी भी सराहना नहीं की, वत्स! शस्त्रशक्ति की उपेक्षा कर कोई राज्य अपनी रक्षा में समर्थ नहीं हो सकता। भारत के राजाओं और गृहस्थों की सदा से यह परम्परा रही है कि वे सब धर्मों सम्प्रदायों और पाषण्डों का सम्मान करें ब्राह्मणों श्रमणों और मुनियों का आदर करें दान-दक्षिणा द्वारा सबको सन्तुष्ट रखें, और विविध जातियों जनपदों तथा श्रेणियों के अपने-अपने जो भी धर्म चरित्र व व्यवहार हों उनमें किसी भी प्रकार से हस्तक्षेप न करें। अशोक ने विविध सम्प्रदायों में समन्वय की जो शिक्षा दी वह भारत की सनातन परम्परा के अनुरूप थी। उसने सब सम्प्रदायों के सर्वसामान्य मूल तत्त्वों पर बल देकर भी एक उपयोगी कार्य किया। धर्म द्वारा विश्व की विजय का उसका विचार भी उत्तम था। पर शस्त्रशक्ति की उपेक्षा कर उसने भारी भूल की थी। बौद्ध धर्म के प्रति जो पक्षपात उसने प्रदर्शित किया वह भी अनुचित था। पर अशोक के शासनकाल में उसकी नीति के दुष्परिणाम विशेष रूप

से प्रगट नही हुए। राधागुप्त जसे महामन्त्री उस समय विद्यमान थ, जो आचाय विष्णुगुप्त की नीति का सशक्त रूप मे अनुसरण करने की क्षमता रखते थे। तुम्हे स्मरण होगा वत्स मैंने तुम्हें पढाया था कि एक बार राजा अशोक ने भिक्षु सघ को सौ कोटि सुवण मुद्राएँ दान मे देने का सकल्प किया। पर जब इस धन का एक अश उसने राज्यकोष से देना चाहा, तो अमात्य राधागुप्त ने उसे ऐसा करने से रोक दिया। राज्यकोष का स्वामी राजा नही हुआ करता वत्स ! वह अपनी इच्छा से एक कार्षापण भी राज्यकोष से व्यय नही कर सकता। अशोक को घोर निराशा का सामना करना पडा, क्योंकि उसकी मन्त्रिपरिषद् जनता के धन को बौद्धसघ के लिए प्रदान करने के विरुद्ध थी। पर अब स्थिति परिवर्तित हो गई है। धम-विजय की धुन मे राजा सम्प्रति राज्यकोष को बुरी तरह से लुटा रहा है। खेद है कि आज मौय शासनतन्त्र म राधागुप्त जैसा एक भी मन्त्री नहीं है जो राजा को मर्यादा मे रख सके। सेना की उपेक्षा तो अशोक ने भी की थी और उसके पश्चात कुणाल और दशरथ ने भी, पर उस सीमा तक नही जसा कि अब सम्प्रति कर रहा है। मुझे सम्प्रति पर आश्चय है। वह एक अनुभवी शासक है। अशोक के जीवनकाल म ही उसने युवराज पद प्राप्त कर लिया था, क्योंकि नेत्रविहीन हो जाने के कारण कुणाल शासन की उत्तरदायिता का वहन कर सकने मे असमथ हो गया था। कुणाल और दशरथ के शासन काल म भी वही युवराज के पद पर रहा। बीस साल से भी अधिक समय तक वह शासनतन्त्र का महत्त्वपूर्ण अग बन कर रहा, पर उसे बुद्धि नही आई। उसने अब जो नीति अपनाई है वह देश के लिए अत्यन्त विघातक है। उसका विरोध तो किया ही जाना चाहिए। पर प्रश्न यह है कि मैं इस विषय म क्या कर सकता हूँ? मौय सम्राट् भारत की परम्परागत राजनीति का परित्याग कर चुके हैं। क्षात्रधम का उनकी दृष्टि म कोई महत्त्व नही रह गया है। हमारे शास्त्रो के अनुसार वदिकी हिंसा को हिंसा नही माना जाता। अहिंसा का हमारे धम म भी महत्त्वपूण स्थान है पाच यमो म उसका स्थान सवप्रथम है। पर क्या कृमियो की हिंसा किए बिना अन्न उत्पन्न किया जा सकता है ? कृषि करते हुए बहुत से कृमियों की हत्या अनिवाय है। पर हम उसे हिंसा नही मानते। शत्रुओ का सहार भी

नही यहाता। दस्युओ से जाता की रक्षा करना राज्य का प्रधान कर्तव्य है चाहे वे दस्यु आभ्यन्तर हो या बाह्य। उनका दमन करने के लिए सेना की सत्ता अनिवार्य है। अपने कर्तव्य का पालन करते हुए सेना को जो प्रहार करना पड़ता है उसे हम हिंसा नही मानते। जिन महावीर भी इस तथ्य को स्वीकार करते थे। इसीलिए उन्होंने यह प्रतिपादित किया है कि गृहस्थ अणुव्रतो का पालन करें और मुनि महाव्रतो का। महावीर ने अहिंसा को एक व्रत माना है पर कृषक और कर्मकर अविकल रूप से उसका पालन नही कर सकते। केवल मुनि ही पूर्ण रूप से अहिंसक हो सकते हैं। अहिंसा को हम भी धर्म का आवश्यक अंग मानते हैं पर प्राणिमात्र के हित व सुख के लिए जो हिंसा अनिवार्य है वह धर्म द्वारा विहित है। वर्तमान समय के स्थविरो मुनियो और श्रमणो ने इस तथ्य को भुला दिया है। सम्प्रति ने जो मार्ग स्वीकार किया है, वह वस्तुत हानिकारक है। पर प्रश्न यही है कि हम इस विषय मे क्या कर सकते हैं ?

'मैं आपका ध्यान आचार्य चाणक्य के इस कथन की ओर आकृष्ट करना चाहता हू कि जब राजशक्ति का सही ढंग से प्रयोग न किया जा रहा हो, तो श्रोत्रिय तापस और संन्यासी भी उद्विग्न हो उठते है और राजा का विरोध करने के लिए तत्पर हो जाते हैं। आपने ही तो हमे बताया था कि यवनराज सिकन्दर ने जब वाहीक देश को आक्रान्त कर अपने अधीन कर लिया था तो उसके विरुद्ध हुए विद्रोह का नेतृत्व विष्णुगुप्त चाणक्य जसे श्रोत्रिय ने ही किया था। चाणक्य को न राजशक्ति की अभिलाषा थी और न धन वैभव की। जब नन्दवश के विलासी और निर्वीर्य राजाओ के कारण मगध की राजशक्ति क्षीण हो गई तो चाणक्य जसे निरीह ब्राह्मण ने ही उसमे नवजीवन का सञ्चार किया। क्या आज भी वह समय नही आ गया है जबकि गोनर्द आश्रम के श्रोत्रिय और उपाध्याय सम्प्रति के निर्वीर्य शासन के विरुद्ध उठ खडे हो और आर्य मर्यादा का पुनरुद्धार करें। क्या आप इस पुण्यकार्य का नेतृत्व अपने हाथो मे नही ले सकते आचार्य! आप दण्डनीति के प्रकाण्ड पण्डित है। अब तक आप राजशास्त्र के प्रवक्ता रहे हैं अब उसके प्रयोक्ता होना भी स्वीकार कीजिए। आप केवल हमे मार्ग प्रदर्शित करते रहिए। हम सब शिष्य आपका अनुसरण करने को

उद्यत हैं।'

'पर मैं तो वृद्ध हो चुका हूँ वत्स ! न मेरे तन में शक्ति रही है और न मन में स्फूर्ति।'

'ऐसा न कहें, आचार्य ! इस समय देश को आपके नेतृत्व की आवश्यकता है। आपके युवक शिष्य स्वदेश की रक्षा के लिए अपने तन मन और धन को न्यौछावर कर देने के लिए उद्यत हैं। पर आप सदृश अनुभवी और नीति निपुण नेता के अभाव में वे क्या कर सकते हैं ?'

'पर देखो वत्स ! चाणक्य को अपने कार्य में जो सफलता प्राप्त हुई थी, उसका एक प्रधान कारण यह था कि चन्द्रगुप्त जैसा शिष्य उन्हें मिल गया था। ब्रह्मशक्ति तभी फलवती हो सकती है जब क्षत्रशक्ति का साहाय्य उसे प्राप्त हो।'

आचार्य पतञ्जलि ध्यानपूर्वक दण्डपाणि और पुष्यमित्र का वार्तालाप सुन रहे थे। अब उन्होंने कहा— ठीक तो है। तुम्हें भी पुष्यमित्र जैसा शिष्य प्राप्त है, उपाध्याय ! साहस और शौर्य में यह चन्द्रगुप्त से किसी भी प्रकार कम नहीं है। तुम चाणक्य का स्थान ग्रहण करो और यह चन्द्रगुप्त का। ब्रह्म और क्षत्र का फिर एक बार संगम हो।

'पर मैं तो क्षत्रिय कुल में उत्पन्न नहीं हुआ हूँ, आचार्य !' पुष्यमित्र ने कहा।

'तुम सैनिक तो हो, वत्स ! क्षत्रिय कुल में जन्म लेने से ही कोई क्षत्रिय नहीं हो जाता। सम्प्रति मौर्य कुल में उत्पन्न हुआ है, पर क्या तुम उसे क्षत्रिय कहोगे ? उसकी धमनियों में चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार का रक्त प्रवाहित हो रहा है, पर क्या इसी से उसे क्षत्रिय कहा जा सकता है ? द्रोणाचार्य ब्राह्मण थे, पर महाभारत के युद्ध में उन्होंने अनुपम वीरता प्रदर्शित की थी। पुरानी इतिहास की बात जाने दो। सिमुक का नाम तो तुमने सुना ही है। मौर्य सम्राटों को निर्वीर्य देखकर दक्षिणापथ में उसने अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया है। जन्म से तो वह भी ब्राह्मण ही है। जब क्षत्रिय अपने कर्तव्य से विमुख हो जाएँ, तो ब्राह्मणों को उनका स्थान लेना ही पड़ता है। तुम गुण कर्म और स्वभाव से क्षत्रिय ही हो वत्स !'

मैं अविकल रूप से आपकी आज्ञा का पालन करने के लिए उद्यत हूँ आचाय ।'

'दण्डपाणि तुम्हे माग प्रदर्शित करें और तुम भारत में क्षात्र धम का पुनरुद्धार करो। तुम्हे मेरा यही आदेश है। मेरा आशीर्वाद है तुम्हारे द्वारा आयभूमि का कल्याण हो।'

पुष्यमित्र ने आचाय के सम्मुख सिर झुका दिया। वह उनसे विदा लेकर चलने वाले ही थे कि आचाय पतञ्जलि ने उन्हें रोककर कहा—

अभी कुछ देर और बठो वत्स ! तुम्हे एक और आदेश देना चाहता हूँ। श्रोत्रिय इन्द्रदत्त मेरे पास आए थ। तुम्हारे विवाह के सम्बन्ध म बात करते थे। कुमारी दिव्या को तुम जानते ही हो। तुम्हारे साथ इसी आश्रम म रही है और तुम्हारे समान ही धनुर्वेद म निष्णात है। सब प्रकार से वह तुम्हारे योग्य है। अब विवाह म देर न करो।

पर भारत की क्षत्र शक्ति के पुनरुद्धार का जो महत्त्वपूण काय आपने मुझे सौंपा है उसका क्या होगा, आचाय ! क्या विवाह से उसम विघ्न नही पडेगा ?

नहीं तात ! दिव्या सच्चे अर्थों मे तुम्हारी सहधर्मिणी बनकर रहेगी। आय महिलाएँ पति के काय म विघ्नरूप नहीं हुआ करती। सच्चे प्रेम से मनुष्य म शक्ति का सञ्चार ही होता है। वह प्रेम जघन्य है जिसके कारण मनुष्य को अपने कतव्य अकतव्य का ज्ञान न रहे। पुरुष की शक्ति स्त्री ही होती है तात ! उसी से प्रेरणा और बल पाकर पुरुष कतव्य के माग पर निरन्तर आगे बढ़ता है, और विघ्न बाधाओ की किञ्चिन्मात्र भी परवाह नहीं करता। जिस यज्ञ का अनुष्ठान तुम प्रारम्भ कर रहे हो सहधर्मिणी के अभाव म वह कभी पूर्ण नहीं हो सकेगा। अब तुम अधिक विलम्ब न करो। श्रोत्रिय इन्द्रदत्त के पास मैं आज ही सूचना भेज रहा हूँ। तुम्हारे विवाह का पौरोहित्य मैं स्वय करूगा। मेरा आशीर्वाद है कि तुम दोनो द्वारा आयभूमि म क्षत्रशक्ति का पुनरुद्धार हो।

'आपकी आज्ञा शिरोधाय है आचाय ! पुष्यमित्र ने नतमस्तक हो आचाय को प्रणाम किया।

राजप्रासाद का षड्यन्त्र

सम्राट सम्प्रति को पाटलिपुत्र से गए हुए तीन वर्ष बीत चुके थे। अब वह उज्जैन में ही निवास करने लगे थे। उनका शरीर श्रान्त हो चुका था, और मन क्लान्त। उनके अंग शिथिल हो गए थे, और सांसारिक सुख-वैभव के प्रति उनमें ज़रा भी आसक्ति नहीं रह गई थी। उज्जैन के जिस राज-प्रासाद में वह निवास कर रहे थे, वहाँ न कोई राजपुरुष था और न कोई अंगरक्षक सैनिक। राजपुरुषों का स्थान मुनियों और श्रावकों ने लिया हुआ था। मुनि सुहस्ति भी अब राजप्रासाद में निवास करने के लिए आ गए थे। प्रातःकाल होते ही सम्प्रति सुहस्ति के पास चले आते और उनकी चरण-धूलि को मस्तक से लगा श्रद्धावनत हो समीप में बैठ जाते। अङ्गों और उपाङ्गों का प्रवचन सुनने में उन्हें अपूर्व आनन्द आता। सुहस्ति उन्हें उप-देश देते—

'जब मनुष्य संसार के संसर्ग से सर्वथा विमुक्त हो जाता है, सुख-दुःख की अनुभूति से ऊपर उठ जाता है, अपने को अन्य सब सत्ताओं से पृथक् कर 'केवल रूप' समझने लगता है, तभी वह 'केवली पद' प्राप्त करने में समर्थ होता है। केवली पद प्राप्त करना ही मानव जीवन का चरम लक्ष्य है। तुम भी अब सब प्रकार के बन्धनों और ग्रन्थियों से मुक्त होने का प्रयत्न करो। अब तक तुमने अणुव्रतों का ही पालन किया है। पर मुमुक्षु के लिए वे पर्याप्त नहीं हैं। अब तुम्हें महाव्रतों का पालन करना होगा। तुम भी अब मुनिव्रत ग्रहण करो, और सत्य, अहिंसा, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह—इन महाव्रतों का अविकल रूप से पालन करो। मोक्ष प्राप्ति का यही उपाय है।

सम्प्रति गुरु के उपदेश का ध्यानपूर्वक श्रवण करते। उसे सुनकर उनका मन संसार के प्रति ग्लानि अनुभव करने लगता। सांसारिक सुखों और भोग की अब उनमें न इच्छा रही थी और न शक्ति।

विशाल मौर्य साम्राज्य के शासनतन्त्र का संचालन अब भी पाटलिपुत्र से ही हो रहा था। सब तीर्थों (मुख्य अमात्यों) के अधिकरण वहीं पर स्थित थे। सम्प्रति का ज्येष्ठ पुत्र भववर्मा युवराज के पद पर नियुक्त था,

देवभूति अपनी सना को साथ लेकर पाटलिपुत्र पर आक्रमण कर देगा, और कोई उसका सामना नही कर सकेगा। यह मत भूला कि राज्यलक्ष्मी सदा सैन्यशक्ति की दासी होकर रहती है।' चौथा नागरिक कहता—'मौर्य साम्राज्य म सना का अब महत्त्व ही क्या है ? अब ता सवत्र श्रमणा और भिक्षुआ का बालबाला है। वे जिसके पक्ष म हागे वही सम्राट बनेगा।' पाटलिपुत्र म सवत्र इसी प्रकार की चर्चा होती रहती थी। वहाँ का वातावरण विक्षुब्ध था। लोग समझते थे, शीघ्र ही युद्ध हाने वाला है। जाने किस दिन मौर्य शासनतन्त्र म एक नया तूफान उठ खडा हो।

पाटलिपुत्र का राजप्रासाद गगा और सोण नदिया क सगम पर स्थित था। उसकी रचना एक दुग के समान की गई थी। पाटलिपुत्र नगरी के विशाल दुग के अन्दर यह एक दूसरा दुग था, जिसके चारा ओर भी एक ऊँची प्राचीर थी जो जल से परिपूण एक चौडी परिखा स घिरी हुई थी। राज प्रासाद के प्राचीर पर सशस्त्र प्रहरी रात दिन पहरा देते रहते थे, और कोई भी व्यक्ति तब तक उसके महाद्वारा म प्रवेश नही पा सकता था, जब तक कि आन्तवशिक का अनुज्ञापत्र उसके पास न हो।

एक दिन की बात है, साझ का समय था अधेरा हो चुका था और दीपक जल गए थे। एक भिक्षु राजप्रासाद क द्वार पर आया और प्रहरी से बोला — मुझे तुरन्त कुमार शालिशुक स मिलना है।

कुमार इस समय अन्त पुर म हैं। उनम भेंट कर सकना कदापि सम्भव नही है।'

पर मेरा काय अत्यन्त आत्ययिक है। कुक्कुटविहार क सघ-स्थविर ने एक विशेष काय से मुझे भेजा है। मुझे यह आदेश मिला है कि तुरन्त कुमार स भेंट करूँ। मुझे राजप्रासाद म प्रविष्ट हो लेने दो। कुमार स मिलने की व्यवस्था मैं स्वय कर लूगा।'

क्या आन्तवशिक का अनुज्ञापत्र आपके पास है ?

उसे प्राप्त करने का समय ही कहा था, नायक! सूर्यास्त के बाद तो मुझे यहाँ आने का आदेश मिला, तब तक आन्तवशिक का कार्यालय बन्द हो चुका था।'

फिर मैं क्या कर सकता हूँ, भन्ते! अनुज्ञापत्र के अभाव म मैं आपके

राजप्रासाद म क्से प्रविष्ट होने दे सकता हूँ ? दौवारिक की आज्ञा का उल्लघन कर सकना मेरे लिए असम्भव है। जब तक आन्तर्वशिक का अनुज्ञापत्र न हो, कोई भी व्यक्ति इस द्वार म प्रवेश नहीं कर सकता।'

मैं आपकी कठिनाई को समझता हूँ नायक ! पर आप मेरा एक काम तो कर सकते हैं। गुल्मपति सिंहनख को आप जानते होंगे। महाद्वार के भीतर की ओर दाएँ पार्श्व म जो कक्ष है वही उनका निवास है। वह आन्तर्वशिक सेना म गुल्मपति के पद पर हैं।

'हाँ, मैं उन्ह भलीभाँति जानता हूँ।

आप सिंहनख को केवल यह सूचना दे दें कि भिक्षु सारिपुत्त महाद्वार पर खडा आपकी प्रतीक्षा कर रहा है। तथागत तुम्हारा कल्याण करेंगे नायक ! शीघ्र ही आप गुल्मपति का पद प्राप्त कर लेंगे।

पर मैं इस स्थान को एक क्षण के लिए भी नहीं छोड सकता भन्ते !'

भिक्षु सारिपुत्त ने चुपचाप एक थली नायक के हाथ म सरका दी। थली सुवर्ण निष्कों से भरी हुई थी। उस हाथ म लेते ही नायक का रुख बदल गया। उसने धीरे से कहा—'मैं यहीं खडा हूँ भन्ते ! आप जाइए और गुल्मपति सिंहनख से मिल आइए। पर देर न करना।

सिंहनख वस्त्र उतारकर विश्राम की तयारी म था। रात के समय एक भिक्षु को अपने घर आते देखकर उसे आश्चय हुआ। पर सारिपुत्त को पहचानकर उसने कहा—'भन्ते ! इस समय आप यहाँ कैसे ? कुशल मंगल तो है ?

एक अत्यन्त आत्ययिक काय से आया हूँ भाई ! संघ-स्थविर मोग्गलान ने मुझ भेजा है। तुरन्त कुमार शालिशुक से मिलने को कहा है। उन्ह एक आवश्यक सन्देश पहुँचाना है।

'पर कुमार तो अब अन्त पुर म प्रविष्ट हो चुके हैं। इस समय तो वहाँ शुक सारिकाओ तक का प्रवेश सम्भव नहीं है मनुष्यों की तो बात ही क्या है ?

'कोई उपाय करो, भाई ! यह सद्धम का काय है। तुमसे क्या छिपाना? बुद्ध धम और संघ म तुम्हारी आस्था है। जानते ही हो तथागत के धम पर आज कसा सकट उपस्थित है। श्रावस्ती से कोई व्यक्ति आज तीसरे

पहर पाटलिपुत्र आया था, जेतवन विहार के संघ-स्थविर मज्झिम का एक पत्र लेकर आया है। उसे पढ़ते ही स्थविर मोग्गलान की मुखमुद्रा अत्यन्त गम्भीर हो गई। उन्होंने मुझे बुलाया और आदेश दिया—एक क्षण की भी देर न करो, तुरन्त जाओ और कुमार शालिशुक से कहो, मोग्गलान ने उन्हें स्मरण किया है।'

'पर प्रश्न यह है कि शालिशुक को यह संदेश भेजा कैसे जाए ? उनके अन्तःपुर के द्वार पर मूक और बधिर सैनिकों का पहरा है। किसी की बात को तो वे समझते ही नहीं। जहां कोई आदमी द्वार के समीप गया, उन्होंने खड्ग से उसके सिर को धड़ से अलग कर दिया।'

'कुमार अभी सोए तो नहीं होंगे। मदिरा के पात्र हाथ में लेकर दासियाँ अन्तःपुर में आ-जा रही होंगी।'

तुम अन्तःपुर को क्या जानो, भन्ते ! वह भी एक दुर्ग के समान है। दासियाँ भी तो वहां अन्दर ही रहती हैं। सब कुछ वहां अन्दर ही उपलब्ध है। रात्रि के इस प्रहर में अन्तःपुर से बाहर वे किसलिए आएँगी ?'

'यत्न कर देखो, भाई ! सद्धर्म का कार्य है। तुम्हें बहुत पुण्य होगा।

काम तो बहुत ही कठिन है। पर यत्न कर देखता हूँ। तुम तो इस समय कुमार से मिल ही नहीं सकते। कहो, उन्हें क्या कहलवा दूं ?

'बस, इतना कहलवा दो कि कुक्कुट विहार से एक भिक्षु आया है। संघ-स्थविर मोग्गलान ने उसे भेजा है। स्थविर विहार के गर्भगृह में कुमार की प्रतीक्षा कर रहे हैं। तुरन्त उनसे मिलना चाहते हैं। मैं महाद्वार लौट जाता हूँ वहीं खड़ा होकर प्रतीक्षा करूँगा।'

गुल्मपति सिंहनख शालिशुक के अन्तःपुर के समीप जाकर खड़े हो गए। घड़ीभर प्रतीक्षा के अनन्तर उन्होंने देखा, एक युवती अन्तःपुर से बाहर आ रही है। इंगित से उसे अपने पास बुलाकर सिंहनख ने कहा—'भद्रे ! क्या कुमार शालिशुक सो गए हैं ?

'क्या कहा कुमार शालिशुक अभी से सो गए। अभी उन्हें नींद कहाँ ? कहो, क्या बात है ?' युवती ने हँसते हुए कहा।

'संघ-स्थविर का एक अत्यन्त आत्ययिक संदेश उन तक पहुँचाना है।

'ना बाबा, यह काम मुझसे नहीं हो सकेगा। कुमार के रंग में भंग क्या

करें ? जानते नहीं इस समय कुमार रूपाजीवाओं के साथ प्रमोद में व्यस्त हैं।

सद्धर्म का कार्य है, भद्रे ! तथागत तुम्हारा कल्याण करेंगे।

अच्छा, यत्न कर देखती हूँ। कहो, कुमार से क्या कहना है।

सिद्धनख ने स्थविर मोग्गलान का संदेश युवती को जता दिया। जब वह शालिशुक के शयनकक्ष को वापस गई तो कुमार एक रूपाजीवा को अंक में भरे हुए सुरापान में व्यस्त थे। युवती उनकी मुँहलगी दासी थी। शयनकक्ष के बाहर खड़े होकर हँसते हुए बोली—

महाराज की जय हो। आज रात विश्राम करना कुमार के भाग्य में नहीं है। स्थूलकाय स्थविर ने कहलाया है तुरंत कुक्कुट विहार के गर्भगृह में जाकर उनसे मिलें। वहाँ महापरिनिर्वाण सुत्त का पाठ हो रहा है। कुमार की उपस्थिति आवश्यक है।

शालिशुक को वास्तविक बात समझने में कठिनाई नहीं हुई। वह जानते थे कि मगध के राजसिंहासन के लिए जो विषम चक्र चल रहा है उसमें संघ-स्थविर मोग्गलान का बड़ा हाथ है। उनकी सहायता से ही वह सम्राट पद प्राप्त कर सकते हैं। वह झुँझलाकर उठ खड़े हुए और छद्म वेश बनाकर राजप्रासाद से बाहर चल आए। अपनी गतिविधि को वह गुप्त रखना चाहते थे क्योंकि युवराज भद्रवर्मा के गूढपुरुष सर्वत्र नियुक्त थे।

कुक्कुट विहार के दक्षिण में अशोक द्वारा बनवाया हुआ जो विशाल चैत्य था उसके पश्चिम द्वार के नीचे एक गुप्त गर्भगृह था जिस तक पहुँचने के लिए एक गुप्त सुरंग मार्ग था। इस मार्ग का द्वार तथागत बुद्ध की मूर्ति के नीचे से खुलता था। बहुत कम व्यक्तियों को इसका पता था। स्थविर मोग्गलान इसी गर्भगृह में बैठे हुए थे और बेचैनी के साथ शालिशुक की प्रतीक्षा कर रहे थे। कुमार के आ जाने पर उन्होंने कहा—

एक सूत्रपुरुष आज ही श्रावस्ती से आया है। जेतवन विहार के संघ स्थविर मज्झिम ने एक पत्र उसके हाथ भेजा है। पहले उसे पढ़कर सुना देता हूँ। मज्झिम ने लिखा है— अब वह समय आ गया है जब कि सद्धर्म के अनुयायियों को सम्प्रति के विरुद्ध विद्रोह का झंडा खड़ा कर देना चाहिए। तथागत द्वारा प्रतिपादित सम्यक् प्रतिपदा से विमुख होकर सम्प्रति ने एक

ऐसा अपराध किया है जिसे चातुरंत संघ कभी क्षमा नहीं कर सकता। उसे हम राज्यच्युत करना ही होगा। इसका एकमात्र उपाय यह है कि उसके विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया जाए। हम तुरन्त शालिशुक को मौर्य साम्राज्य का सम्राट् घोषित कर देना चाहिए। सद्धर्म के उत्कर्ष के लिए यह आवश्यक है कि पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर ऐसा ही व्यक्ति आरूढ़ हो जो भगवान् बुद्ध के अष्टांगिक आर्य मार्ग का अनुयायी हो। मौर्य राजकुल में एसा व्यक्ति कुमार शालिशुक ही है। सम्प्रति को तो राज्य कार्य की कोई चिन्ता ही नहीं है। महाव्रतों के पालन में वह अपनी सब सुध-बुध खो बैठा है। वह हमारा क्या विरोध करेगा? पर भववर्मा और देवभूति से हम सावधान रहना होगा। यदि वे शालिशुक का विरोध करें, तो संघशक्ति द्वारा हम उनका सामना करना चाहिए। पाटलिपुत्र का आन्तवंशिक गुणसेन बुद्ध, धर्म और संघ में अगाध आस्था रखता है। उसकी सेना में जो भी सैनिक हैं सब अपने सेनापति के प्रति अनुरक्त हैं। यह आन्तवंशिक सेना हमारी सहायता करेगी। पर हम केवल इसके भरोसे नहीं रह सकते। दक्षिणापथ में मौर्य साम्राज्य की जो सेना है वह देवभूति का साथ देगी। उसे परास्त करने के लिए हम नई सेना संगठित करनी चाहिए। बौद्ध विहारों में जो अपार धन सञ्चित है वह किस समय के लिए है। मगध में भृत और आटविक सैनिकों की कोई कमी नहीं है। धन द्वारा इन्हें सेना में भरती करना होगा। आप तुरन्त कुमार शालिशुक से मिलें और उन्हें सम्राट घोषित कर दें। मैं भारत के अन्य संघ-स्थविरों को भी इसी आशय के पत्र भेज रहा हूँ। श्रावस्ती में मैंने संघ संगठन का कार्य प्रारम्भ भी कर दिया है। भगवान तथागत हमारे इस पुण्य कार्य में सहायक हों।''

मज्झिम के पत्र को सुनाकर मोग्गलान ने शालिशुक से कहा—मैं मज्झिम के विचार से पूर्णतया सहमत हूँ। रात्रि के इस समय मैंने आपको इसी कारण कष्ट दिया है कि भविष्य की सब योजना तैयार कर ली जाए।'

'योजना तो आप स्वयं भी बना सकते थे। उसके लिए मेरी क्या आवश्यकता थी? चित्रलेखा कैसी सज धजकर आई थी! नृत्य और हास का कैसा समां उसने बांध रखा था! आपने तो रंग में भंग डाल दिया। शालिशुक ने लड़खड़ाती हुई आवाज में कहा। सुरापान के कारण उसका

अभी उत्तर पता नहीं रह गया था।

पर राजसिंहासन पर तो आरूढ़ होना है कुमार!

इसमें क्या कठिन है। जब आप कहेंगे राजगद्दी पर जा बैठूंगा। उस दिन बड़ा भारी उत्सव मनाया जाएगा। ढोल बजेंगे, शहनाई! नर्तकियां नाचेंगी और माधुरी गाएगी। कैसा आनन्द आएगा। पर उस समय भी मैं निरमुंड भिक्षुओं को राजप्रासाद में न घुसने दूंगा। भिक्षुओं का राजप्रासाद में क्या काम?

पर राजसिंहासन प्राप्त करना सुगम काम नहीं है कुमार! उसके लिए हमें अपनी शक्तियों का संगठन करना होगा और भद्रजित और देवभूति को युद्ध में परास्त करना होगा।

'ना बाबा लड़ाई से मुझे डर लगता है। वह बाबा—क्या नाम था उनका? हां याद आ गया। अशोक तो कहते थे लड़ना-झगड़ना अच्छी बात नहीं है। मुझे तो खून देखते ही कंपकंपी चढ़ जाती है। तलवार चलाना मेरे बस की बात नहीं है बाबा!

फिर राजसिंहासन कैसे प्राप्त कर सकोगे कुमार! उसके लिए तो खून की नदियां बहानी होंगी।

नदियां! मुझे तो तैरना भी नहीं आता। यदि कहीं मंझधार में डूब गया तो?

संघ-स्थविर मोग्गलान ने देखा सुरा के प्रभाव से शालिगुप्त को तन मन की सुध नहीं रह गई है। इस समय उनसे बात करना व्यर्थ है। उन्होंने कहा—'अच्छा आप अब विश्राम कीजिए। हम स्वयं योजना तैयार कर लेंगे। आप चिंता न करें शीघ्र ही आप राजसिंहासन पर आरूढ़ हो जाएँगे।'

किस पर आरूढ़ हो जाऊँगा, सिंह पर? ना बाबा मुझे सिंह से बहुत डर लगता है। घोड़े तक पर तो मुझसे सवारी की नहीं जाती। शेर पर कैसे चढ़ूंगा।

मोग्गलान से निर्देश पाकर दो भिक्षु आगे बढ़े और कुमार शालिगुप्त को साथ के कक्ष में ले गए। वहां शय्या तैयार थी। कुमार उस पर पैर फैलाकर लेट गए। शीघ्र ही उन्हें नींद आ गई।

कुक्कुट विहार के गर्भगृह म जो अन्य स्थविर उपस्थित थे, उन्ह सम्बो-धन कर मोग्गलान न कहा—

'शालिशुक को इस दशा म देखकर मुझे घोर निराशा हुई है। ब्राह्मण चाणक्य सद्धम का विरोधी था पर दण्डनीति को वह भलीभाति समझता था। उसने ठीक लिखा है कि राजाओ के लिए इन्द्रियजयी होना आवश्यक है। जो राजा इन्द्रिया का दास हो, वह कभी राजधम का पालन नही कर सकता। चाणक्य का लिखा अथशास्त्र मैंने पढा है, अच्छी पुस्तक है। पर मौय राजकुल मे शालिशुक ही एक ऐसा कुमार है जो बुद्ध, धम और संघ म आस्था रखता है। सम्राट् तो उसे बनाना ही है पर उसकी दशा को देख-कर मेरा मन आशकाओ से परिपूण हो गया है।'

'आप कोई चिन्ता न करें स्थविर ! राज्यकाय का सचालन तो आपके ही हाथो मे रहेगा। शालिशुक तो नाम को ही सम्राट होगा।' चण्डवर्मा ने कहा।

'फिर तुम्हारी क्या योजना है चण्डवर्मा !

प्रात आतवशिक गुणसेन से परामश कर लिया जाए और कल ही शालिशुक को सम्राट घोषित कर दिया जाए।'

देखो चण्डवर्मा ! इन कार्यों म विलम्ब करना उचित नही होगा। भववर्मा को मैं भलीभाँति जानता हूँ। सच पूछो तो वही मागध साम्राज्य का अधिपति होने के योग्य है। पर उसकी तो बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। सद्धम से विमुख हो वह शिव पावती और जयन्त की उपासना करने लग गया है। कुक्कुट विहार म रहकर जो शिक्षा उसने प्राप्त की थी, उसे वह भूल गया है। आचाय भारद्वाज को तो तुम जानते ही होग। औशनस नीति मे पारगत है। उसी के परामश से भववर्मा सब काय करता है। शालिशुक आज रात कुक्कुट विहार म आया था यह बात उससे छिपी नही रहेगी। भारद्वाज के मत्री सवत्र नियुक्त हैं। देर करने का काम नहीं है। कल सूर्योदय से पूव ही शालिशुक को सम्राट घोषित कर देना होगा। आन्तवशिक को तुरन्त यहाँ बुलाना चाहिए। उसे आदेश देना है कि रात म ही शासनतन्त्र के सब अधिकरणो पर अधिकार कर लिया जाए। न कोई राजप्रासाद म जाने पाए और न कोई वहाँ से बाहर जा सके। अन्त पुर पर भी रात म ही कब्जा

सता होगा। यह सब कार्य तभी सम्भव है जबकि आन्तरिक सेना हमारे साथ हो और गुणसेन नायक होकर काम करे।

'पर अब तो आधी रात बीत चुकी है स्थविर!'

कोई चिन्ता नहीं अभी पहर समय है। जाओ, तुरन्त आन्तरिक को बुला लाओ।

आन्तरिक गुणसेन का निवास भी राजप्रासाद में ही था। पर चण्डवर्मा को वहाँ जाने में कोई कठिनाई नहीं हुई। वह एक गुप्तचर था जो राजप्रासाद के प्रधान आन्तरिक त्रिपुरक के अधीन काम करता था। चण्डवर्मा त्रिपुरक के पास गया और उसके द्वारा स्थविर मोग्गलान के सन्देश को गुणसेन के पास पहुँचा दिया गया।

राजसिंहासन के लिए जो षड्यन्त्र राजप्रासाद में चल रहे थे गुणसेन उनके सम्बन्ध में बहुत सतर्क था। वह भलीभाँति समझता था कि जो आग धीरे धीरे सुलग रही है सम्प्रति के मरते ही वह एक भयंकर दावानल का रूप प्राप्त कर लेगी। वह यह भी जानता था कि युवराज शतवर्मा के लिए सम्राट पद को सम्भालना सुगम नहीं होगा क्योंकि पाटलिपुत्र बौद्ध संघ उसके विरुद्ध है। वह स्वयं शालिशुक के पक्ष में था क्योंकि मौर्यकुल में वही एक कुमार था जिसकी सद्धर्म में आस्था थी। उसे अपनी शक्ति का भी भली भाँति ज्ञान था। वह जानता था कि मौर्य साम्राज्य की सैन्य शक्ति क्षीण हो चुकी है। जो सेनाएँ अभी विद्यमान हैं वे सब सीमान्त के स्कन्धावारों में हैं। पाटलिपुत्र में केवल आन्तवशिक की ही सेना रह गई है जो उसके प्रति अनुरक्त है। यह सेना जिसका साथ देगी वही सम्राट पद प्राप्त कर सकेगा।

संघ-स्थविर का संदेश पाते ही आन्तवशिक गुणसेन कुक्कुट विहार आ गया। मोग्गलान उत्सुकतापूर्वक उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उनकी योजना सुनकर गुणसेन को प्रसन्नता हुई। वह अपने काय में अत्यन्त चतुर था। रात्रि का चौथा प्रहर व्यतीत होने से पूर्व ही उसने अपनी सेना के गुल्म पतियों और नायकों को एकत्र किया और उन्हें सब आवश्यक आदेश दे दिए। प्रातःकाल होने पर जब पाटलिपुत्र के नागरिक सोकर उठे तो उन्होंने देखा, सब राजमार्गों, पथचत्वरों और पण्यवीथियों पर सैनिक तनात हैं।

राजप्रासाद के महाद्वार बन्द हैं और सकडो शस्त्रधारी सैनिक वहा पहरा दे रहे हैं। मन्दिरो और उद्याना के माग भी अवरुद्ध है, और किसीको वहाँ जाने की अनुमति नही है। नागरिक लोग यह सब देखकर स्तब्ध रह गए। उन्हें यह समझ मे नही आ रहा था कि सेना का यह प्रदशन किस वजह से है। पर उन्ह देर तक प्रतीक्षा नही करनी पडी। सूर्योदय के साथ ही राज प्रासाद के उच्छत ध्वजो पर तूयधर प्रगट हुए, और तुरही के निनाद के साथ उन्होंने यह घोपित करना प्रारम्भ कर दिया कि राजकुमार शालिशुक ने सम्राट पद ग्रहण कर लिया है, और शीघ्र ही उनका राज्याभिषेक सम्पन्न होगा।

पाटलिपुत्र के नागरिको को इस घोपणा से बहुत आश्चय हुआ। सम्राट सम्प्रति अभी जीवित थे, और शासन का सचालन युवराज भववर्मा के हाथो म था। स्थविर मोग्गलान के षडयन्त्र का उन्ह कुछ भी ज्ञान नही था। कुछ समय के अनन्तर नागरिका को यह समाचार भी सुनने को मिला कि भववर्मा को अन्त पुर मे ही बन्दी बना लिया गया है।

यवनों का दुर्दान्त चक्र

सुभगा की नत्यशाला म आज असाधारण भीड थी। तिल रखने को भी वही स्थान नही था। यवन सैनिक वहा बहुत बडी सख्या मे एकत्र थे। सगीत और नत्य का समा बँधा हुआ था। पेशलरूपा दासिया सुरापात्र हाथ म लेकर घूम रही थी, और यवन सैनिक उनके साथ हास्य विनोद म मग्न थ।

दो वष के अनन्तर आज वाल्हीक नगरी मे शान्ति स्थापित हुई थी। सीरिया के यवनराज अन्तियाक ने अपने साम्राज्य का विस्तार करते हुए पहले पार्थिव देश को जीता और फिर उत्तर-पूव दिशा म आगे बढकर वाल्हीक राज्य पर आक्रमण किया। राजा एवुथिदिम ने बडी वीरता से उसका सामना किया। दो वष तक वाल्हीक नगरी सीरिया की सेनाआ से घिरी रही। विवश होकर एवुथिदिम ने यही उचित समझा कि अन्तियोक-

के साथ सधि कर ली जाए। अपने युवक पुत्र दिमित्र को उसने शान्ति की बातचीत के लिए यवन सम्राट की सेवा म भेजा। अतियाक को सम्बोधन कर दिमित्र न कहा—

'आप भी यवन हैं और हम भी यवन हैं। यवना का आपस म लडने से क्या लाभ ?'

'पर यवना की एकता तभी सम्भव है जब उनके सब राज्य परस्पर मिलकर एक शक्तिशाली साम्राज्य क रूप म सगठित हो जाएँ। तुम उन दिना को भूल गए युवक जब कि सिकन्दर ने मिस्र से व्यास नदी तक के विशाल भूखण्ड की विजय कर यवना का अनुपम उत्कर्ष किया था। मकदूनिया से भारत तक सवत्र तब यवनो का शासन था। आपस की लडाई के कारण यवनो की शक्ति अब क्षीण हो गई है। मैं उसी का पुनरुद्धार करने के लिए प्रयत्नशील हूँ।

पर वाल्हीक देश के यवन राज्य पर आक्रमण के कारण यवना की कितनी शक्ति व्यथ ही नष्ट हो गई है, सम्राट! इस युद्ध मे जो हजारो सनिक काम आए हैं वे सब यवन ही तो थे। क्या यह सम्भव नही है कि सीरिया और वाल्हीक के यवन परस्पर मत्री-सम्बध से रह सकें। यवनो की शक्ति के विस्तार का वास्तविक क्षेत्र भारत है सम्राट! वहाँ की शस्यश्यामल भूमि अपार धन सम्पत्ति नीला आकाश कलकल करती हुई नदिया और दूर तक फले हुए उपजाऊ मदान—क्या हम मिलकर इन पर यवना का प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयत्न नही करना चाहिए। विश्व विजेता सिकन्दर व्यास नदी से आगे नही बढ सके थे क्योकि मगध का शक्तिशाली साम्राज्य उनके माग म चट्टान के समान खडा था। सल्युकस को चन्द्रगुप्त स मुह की खानी पडी थी क्योकि चाणक्य के नीतिबल से भारत की राजशक्ति एक सूत्र म सगठित हो गई थी। पर आज भारत की जो दशा है उसे तो आप जानते ही होगे सम्राट! मगध की शक्ति क्षीण हो गई है और चन्द्रगुप्त मौय और बिन्दुसार के वशज सन्यशक्ति की उपेक्षा कर धम द्वारा विश्व की विजय करने की धुन म देश की धन सम्पत्ति को स्वाहा कर रहे हैं। क्या न हम मिलकर भारत पर आक्रमण करें। वह देश बहुत विशाल है सम्राट! उसके सुविशाल भूखण्ड म कितने ही नये यवन

राज्य स्थापित हो सकते हैं।'

'तुम ठीक कहते हो, युवक !'

'वाल्हीकराज एवुथिदिम की यही योजना थी सम्राट ! वह अपनी सैन्य शक्ति को इसी उद्देश्य से सगठित कर रहे थे कि हिन्दूकुश पर्वतमाला को पार कर भारत पर आक्रमण करें और यवनो की शक्ति का पुनरुद्धार करें। न वह पार्थिव देश को जीतना चाहते थे और न सीरिया को। पर आपके आक्रमण से उनकी योजना निरर्थक हो गई।

निरर्थक नही हुई, युवक ! यवन फिर भारत पर आक्रमण करेंगे, अकेले वाल्हीकराज नही अपितु सीरिया और वाल्हीक दोनो के यवन परस्पर मिलकर।'

पर हमारे इस युद्ध का तो अन्त होना ही चाहिए सम्राट ! जब तक दो यवन राज्य परस्पर लडते रहेगे, यवनो की शक्ति कैसे सगठित हो सकेगी ?'

तुम ठीक कहते हो, युवक ! मैं इसी क्षण युद्ध को बन्द करने का आदेश दे रहा हूँ।

'तो क्या वाल्हीक राज्य की स्वतन्त्र सत्ता को आप स्वीकार करते हैं, सम्राट् !'

अन्तियोक को चुप देखकर दिमित्र ने फिर कहा— हम भी वीर हैं सम्राट ! अपनी मान-मर्यादा की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करने को उद्यत हैं। क्या आप यह उचित समझते हैं कि वाल्हीक के यवन लडते-लडते नष्ट हो जाएँ या कायरो के समान हथियार डालकर अपनी पराजय स्वीकार कर लें। इससे तो यवनो के माथे पर कलक का टीका लग जाएगा सम्राट ! क्या यवनो की इस दुर्दशा से आपको सतोष होगा ?

'मुझे तुमसे मिलकर अपार प्रसन्नता हुई, युवक ! तुम्हारे जैसे वीर यवनों की सहायता से ही मेरा स्वप्न पूर्ण हो सकता है। मैं तुम्हें नीचा नही दिखाना चाहता मैं तुम्हारे साहाय्य और सहयोग का इच्छुक हूँ। सिकन्दर और सल्युकस जिस कार्य को पूरा कर सकने में असमर्थ रहे मैं उसे पूर्ण करना चाहता हूँ। मिस्र से कामरूप तक सर्वत्र यवनो का साम्राज्य स्थापित हो मेरा यही सकल्प है। वाल्हीक देश के यवनो को मैं अपना शत्रु नही

समझता मैं उनसे मत्री-सम्बन्ध स्थापित करना चाहता हूँ। उनके स्वाभिमान को आघात पहुचाने म मुझ कोई लाभ नहीं है।

तो फिर आइए हम परस्पर मिलकर एक हो जाएँ। भारतवर्ष में शिमग और यवन मिलकर एक हो जाए। न कोई विजेता रहे न कोई पराजित। यवनों की शक्ति के पुनरुद्धार का जो पुनीत लक्ष्य आपके सम्मुख है वाह्नीक राज दिमित्र उसी के लिए प्रयत्नशील हैं। सीरिया पार्थिव वाह्नीक—सब मिलकर सगठित हो जाएँ। ससार की कोई भी शक्ति तब हमारे सम्मुख नहीं टिक सकेगी। भारत का विशाल भूखण्ड हमारे सामने है। आइए, हम मिलकर उसकी विजय करें। इसी म यवनों का हित है।

सम्राट अन्तियोक ध्यान से दिमित्र को देख रहे थे। उसका युवा शरीर पुष्ट अग उन्नत भाल तेजस्वी मुखमण्डल और उच्च आदर्श उनके हृदय म एक नई आकाक्षा उत्पन्न कर रहे थे। कुछ देर तक चुप रहकर उन्होंने कहा—'आज का भोजन तुम मेरे साथ करोगे युवक।'

'आपके निमन्त्रण से मैं गौरवान्वित हुआ सम्राट! मुझे विश्वास है मेरे साथ किसी प्रकार का धोखा नहीं किया जाएगा। एक यवन दूसरे यवन का विश्वास कर सकता है।'

'किसी प्रकार की कोई आशका मन म न लाओ, युवक! तुम मेरे अतिथि हो।'

सम्राट अन्तियोक ने बड़ी धूमधाम के साथ भोज की तयारी की। कौशेय वस्त्र से निर्मित विशाल पटमण्डप म भोज का आयोजन किया गया। षडरस भोजन तयार कराया गया। विविध प्रकार की सुराएँ लाई गई। सीरिया के सब प्रमुख सेनानायक इस भोज म सम्मिलित हुए। जब दिमित्र ने पटमण्डप म प्रवेश किया तो अन्तियोक ने बड़ी आत्मीयता और वात्सल्य से उसका स्वागत किया। सम्राट के साथ एक युवती भी थी जिसका नाम एथेना था। उससे दिमित्र का परिचय कराते हुए अन्तियोक ने कहा—'यह राजकुमारी एथेना है। रणक्षेत्र म इसे बड़ा आनन्द आता है। तभी तो राजप्रासाद के सुख-वभव को छोड़कर मेरे साथ साथ रहती है। स्वय भी बड़ी वीर है। कहा करती है मुझे भी सैन्यसचालन का अवसर प्रदान कीजिए।'

दिमित्र ने अपना दाया हाथ ऊपर उठाकर कुमारी एथेना का अभि

नन्दन किया। उन दोनों को भोज में साथ साथ बिठाया गया। बातचीत प्रारम्भ होने पर एथेना ने कहा—

सुना है वाल्हीक नगरी बहुत सुन्दर है। दो वर्ष से हम यहा आए हुए हैं पर आपकी इस सुन्दर नगरी के अवलोकन का अवसर ही नहीं मिला।'

'आप मेरे साथ चलिए। वाल्हीक नगरी में नवराजगृह नाम की एक वस्ती है। उसके राज मार्गों और पण्यवीथियों को देखकर आप आश्चर्यचकित रह जाएँगी। ऐसे सुन्दर प्रासाद ऐसी गगनचुम्बी अट्टालिकाएँ और ऐसी सजी धजी पण्यशालाएँ आपको अन्यत्र कहीं भी देखने को नहीं मिलेंगी। चीन, कपिश गान्धार तुखार, वाहीक आदि सब देशों के साथ वहां व्यापार के लिए आते रहते हैं। हर समय एक मेला सा लगा रहता है और वहाँ की नृत्यशालाएँ और पानगृह—उनका तो कहना ही क्या ?

क्या आप मुझे नवराजगृह ले चलेंगे ? पट मण्डपों में निवास करते हुए और आहत सैनिकों की चीत्कार सुनते हुए मेरा मन घबराने लगा है।'

क्या नहीं, राजकुमारी ! आपकी आज्ञा की देर है।

'यदि मुझे वहाँ किसी ने पकड़ लिया तो ! हूँ तो शत्रु देश की कन्या ही।

'मेरे साथ रहते हुए आपको किसका भय है कोई आपका बाल भी बांका नहीं कर सकता।'

भोज की समाप्ति पर अन्तियोक ने दिमित्र से कहा—'सीरिया और वाल्हीक का मैत्री सदा स्थिर रहेगी युवक ! मैं इस मैत्री को एक एसे सूत्र में बाँध देना चाहता हूँ, जिसे ससार की कोई भी शक्ति छिन्न भिन्न न कर सके।'

इससे उत्तम बात क्या हो सकती है सम्राट !

तो फिर सुनो, युवक ! क्या तुम्हें कुमारी एथेना का पाणिग्रहण करना स्वीकार है ?

अन्तियोक का प्रस्ताव सुनकर दिमित्र का मुखमण्डल लज्जा और सकोच से रक्तवर्ण हो गया। कुछ देर चुप रहकर उसने कहा—क्या सचमुच मैं इतना भाग्यशाली हूँ सम्राट !

'सकोच न करो युवक ! तुमने ही तो कहा था

वाल्हीक दोना के यवन परस्पर मिलकर एक हो जाएँ और एक साथ मिल कर यवनो की शक्ति का पुनरुद्धार करें। हमारा युद्ध समाप्त हो चुका है कुमार दिमित्र! अब हम एक हैं। न कोई विजता है और न कोई विजित। तुम्हारी स्वीकृति प्राप्त होते ही मैं यह शुभ समाचार वाल्हीकराज क पास भेज दूगा।'

पहले राजकुमारी की स्वीकृति तो प्राप्त कर लीजिए सम्राट!

'वह सहमत है युवक! जब से तुम्हे देखा है तुम्हारा ही गुणगान कर रही है। जब हम सधि की बातचीत कर रहे थे वह साथ के कक्ष म बठी हुई सब कुछ सुन रही थी।

कुमार दिमित्र ने सिर झुका दिया। अतियोक का आदेश पाते ही सीरिया के स्कन्धावार पर श्वेत ध्वजाए फहराने लगी। सनिको ने कवच और शिरस्त्राण उतारकर रख दिए और मगल वाद्यो की ध्वनि से आकाश मडल गूज उठा। जब यह समाचार वाल्हीक नगरी पहुचा दुग के महाद्वार खोल दिए गए और सवत्र प्रसन्नता छा गई।

कुमारी सुभगा की नत्यशाला म आज जो अपूव समारोह था वह इसी उपलक्ष्य मे था। थके हुए सेनानायक आज वहा अपने शरीर की श्रान्ति और मन की क्लान्ति को दूर करने के लिए एकत्र थे। पुष्पमालाओं से सुसज्जित और गन्धमाल्य से सुवासित सुन्दरिया सब ओर घूम रही थी अपने अतिथियो का स्वागत करने के लिए और पक्वान्न तथा सुरा से उन्हे तृप्त करने के लिए। सीरिया और वाल्हीक देशो के सेनाध्यक्ष आज एक साथ बठकर हास्य विनोद मे मग्न थे। रात्रि के तीन प्रहर व्यतीत हो जाने पर जब ये सेनानायक सुरा के प्रभाव स अपनी सुध बुध खो बठे तो विश्राम के लिए कक्ष्याविभागो म चले गए अकेले नही अपितु पेशलरूपा रूपाजीवाओ को साथ लेकर।

सीरिया की यवन सेना के जो सेनापति उस दिन सुभगा की नत्यशाला म विद्यमान थे उनम से एक का नाम हारमोअस था। अत्यधिक मात्रा मे सुरापान कर लने क कारण जब वह बहुत वाचाल हो गया, तो माधवी नाम की एक दासी उसे एक सुसज्जित कक्ष्याविभाग म ले गई। शय्या पर उसे लिटाकर माधवी ने कहा—कहिए आपकी क्या सेवा करूँ सेनापति!

कौन-सी सुरा प्रस्तुत करूँ, मरेय या मृद्वीका ?'

'जो भी चाहो ले आओ, पर मेर पास स न उठा।' हारमाअम ने माधवी का अक मे भरते हुए कहा।

'मैं तो एक तुच्छ दासी हूँ, सेनापति ! आपके योग्य मैं कहाँ हूँ।'

'तुम अनुपम सुन्दरी हो। तुम्हारी यह सघन केशराशि उज्वल साँवला रग, चमकती हुई आखें और उभरी हुई गोल छातियां ! किस देश की हो कपिश की या गान्धार की ? सुना है, इन दशा की स्त्रियाँ बहुत सुन्दर होती हैं।'

'पर मैं तो पाञ्चाल देश की रहन वाली हूँ, सेनापति !'

'क्या कहा ? यह नाम तो पहले कभी नही सुना। कहा है यह दश ?'

गगा नदी का नाम तो आपने सुना ही होगा सनापति ! हम हिन्दू लोग उसे पवित्र मानते है। हिमालय स उतर कर वह भारत की शस्य श्यामल समतल भूमि म प्रवश करती है और सुदूर पूव म समुद्र म जा मिलता है। इसी गगा की घाटी म मेरा पाञ्चाल दश है, बडा सुन्दर, बडा रमणीक !'

'क्या वहाँ की सभी स्त्रिया तुम्हारे समान सुदर होती हैं ? आओ, समीप आ जाओ। तुम्ह जी भरकर देख लू। पता नही, कब वाल्हीक पुरी से चल दना पडे।'

'क्या सेनापति ? अब तो आप यही पर रहग न ? युद्ध की ता अब समाप्ति हो गई है। फिर यहा से जाने की क्या ज रत है ? क्या वाल्हीक नगरी आपको पसन्द नहा आइ ? कुछ दिन यही रहकर विश्राम कीजिए न।' माधवी ने हारमोअग के गले मे बाह डालकर कहा।

हम सनिका को विश्राम कहा ? अब तुरत भारत पर आक्रमण करना है। पर तुमने यह क्या शुष्क चर्चा प्रारम्भ कर दी। लाआ, मरय का एक चषक और दे दो और तुम मरे साथ सटकर बठ जाओ।

'पर भारत के साथ ता यवना की कोई लड़ाई नहीं है, सनापति ! भारत के राजा तो अहिंमा म विश्वास रखत हैं धर्म द्वारा मत्री स्था म तत्पर हैं। इस वाल्हीक दश का ही देखिए। भारत द्वारा नियुक्त धर्म म मात्य न यहाँ कितने ही चिकित्सालय खुलवा दिए हैं धर्मशालाएँ

है और कुएँ खुदवा दिए है। भारत के राजा द्वारा स्थापित भुक्तिशालाओ से हजारो यवन प्रतिदिन भोजन और वस्त्र प्राप्त करते है। क्या ऐसे शाति प्रिय देश को आप युद्ध द्वारा तहस नहस कर देंगे सेनापति !'

तुम राजनीति को क्या समझोगी ? लाओ एक चषक और दो। हाँ तुमने अपने देश का क्या नाम बताया था ? याद आया पाञ्चाल। मैं पाञ्चाल भी अवश्य जाऊँगा। देखूगा वहा की सब स्त्रियाँ क्या तुम्हारे समान ही सुन्दर होती है।'

भारत पर आक्रमण कब प्रारम्भ होगा सेनापति !

इसी साल कार्तिक मास म।

यवन सेना म कितने सनिक होगे सेनापति ! माधवी ने मृद्वीका का एक चषक हारमाअस के होठो से लगाते हुए प्रश्न किया।

कम से कम दो लाख। तुमने यवनिया तो देखी ही है व भी युद्ध म भाग लिया करती है धनुष बाण स भी और नयनो के बाणो से भी।

मैं समझी नही सेनापति !

तुम समझी नही ? जो ये बहुत सी यवन युवतिया वाल्हीक नगरी के विहारो म भिक्षुणिया बनकर रह रहा है सब भारत चली जाएगी। क्या समझी ? किसलिए ? शत्रु का भेद लेन क लिए। राजनीति को तुम क्या समझोगी ? आओ मरे और समीप आ जाओ। रात भर इसी प्रकार सुरा पान कराती जाओ और साथ ही अपन होठो का अमृत भी।'

माधवी न पात्र को सुरा स भरकर उसे हारमोअस के मुह स लगा दिया। एक ही घूट म उस पीकर उसन फिर कहना प्रारम्भ किया— तुम कितनी अच्छी हो। जब मैं भारत जाऊगा तो तुम्हे भी अपन साथ ले चलूगा। *मर साथ चलोगी न ? पाञ्चाल जाकर अपन बधु-बाधवो स मिल* लना।

पर मैं तो देवी सुभगा की दासी हूँ सनापति !

तो सुभगा को भी साथ ले चलेंगे।

मुझ तो युद्ध म डर लगता है सनापति ! बाणो और खड्ग परशुओ म क्षत विक्षत सनिको को जब रणक्षेत्र म उठाकर लाया जाता है, तो मुझे कम्पकपी चढ़ जाती है।

'तुम्हे इन क्षत विक्षत सनिको से क्या लेना है। यवनो के स्कन्धावार को तुम नही जानती। वहा ऐसे पटमण्डप भी होते है जहा सदा नत्य सगीत होता रहता है। सनिको का मनोरजन भी तो होना चाहिए। यवन यदि वीर है, तो साथ ही विनोदप्रिय भी है। जीवन म आमोद प्रमोद का महत्त्व पूर्ण स्थान है। कभी मेरे साथ हमारे स्कन्धावार को देखना। कितनी नर्तकियाँ, रूपाजीवाएँ और गणिकाए वहा हैं सब देशो की, शक, पार्थिव, यस युइशि, तुखार आदि सब जातियो की। पर सच कहता हूँ, तुम्हे देख कर उनका रूप और यौवन मुझे फीका लगने लगा है। महासेनापति से कहूँगा, भारत की युवतियो को भी सनिको के मनोरजन के लिए नियुक्त कर लो। वाल्हीक नगरी मे जितनी भी भारतीय युवतियाँ हैं, उन सबको हम अपने साथ ले जाएँगे। तुम तो मेरे साथ ही रहोगी न ?

माधवी ने सुरा का एक और चषक हारमोअस के मुह से लगाकर कहा— अब बहुत रात बीत गई है, सेनापति ! अब सो जाओ। मैं भी कुछ देर विश्राम कर लू। सुबह होने मे केवल एक घडी शेष है।'

सुरा के प्रभाव से हारमोअस को अब नीद आ गई थी। माधवी चुपचाप वहा से उठी और धीरे धीरे बाहर चली गई। देवी सुभगा उसकी प्रतीक्षा कर रही थी।

मैं बडी देर से तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हूँ, माधवी ! इतनी देर क्या लग गई ? सुभगा ने प्रश्न किया।

'हारमोअस छोडता ही नही था देवि ! बडी कठिनता से पिण्ड छुडा कर आई हूँ।

'कोई रहस्य की बात ज्ञात हुई ?'

हाँ देवि ! यवन सेनाएँ शीघ्र ही भारत पर आक्रमण कर रही है इसी साल कार्तिक मास म।"

'बस इतना ही ? यह तो मैं पहले भी सुन चुकी हू।'

एक बात और ज्ञात हुई है। यवन राज्यो के बौद्ध विहारो म जो यवन भिक्षुणियाँ हैं उन्हे भी भारत भेजा जा रहा है सनो का साथ करने के लिए, हमारी सेना और शासननीति के सम्बन्ध म सूचना प्राप्त करने के लिए। भिक्षुणी होने के कारण कोई उन पर सन्देह नही करेगा।

"यह तो रहस्य की बात तुमने पता लगाई है माधवी। ये सब सूचनाएँ तुरत ही गोनद आश्रम म भेजनी होगी। तुम्हारे कपोत तो तयार हैं न? शीघ्र ही सब बातें गुप्त लिपि म लिख डालो। अभी अँधेरा है। सूर्योदय से पूर्व ही कपोतो को उडा देना चाहिए।

माधवी अपने काय म व्यग्र हो गई। पूर्वी क्षितिज म लालिमा के चिह्न प्रगट होते ही लोगो ने देखा, दस कपोत दक्षिण-पूर्वी दिशा म उडे जा रहे है। प्रात के समय पक्षी आकाश म उडा ही करते हैं। किसी को कोई सन्देह नही हुआ।

सुभगा श्रेष्ठी पणदत्त से मिलने के लिए बहुत उत्सुक थी। वाल्हीक नगरी के युद्ध का अन्त हो जाने पर उसकी पण्यशाला म फिर से जीवन का सचार हो गया था। सुदूर देशो के साथ फिर से नवराजगह आन लग गए थे। सूर्योदय होते ही सुभगा पणदत्त के पास गई और एकान्त कक्ष म जाकर उससे बोली—

कहिए, श्रेष्ठि! क्या कोई नया समाचार है?

'बहुत बुरा समाचार है देवि! यवन सेनाएँ शीघ्र ही भारत पर आक्रमण करने वाली हैं।'

यवनो की गतिविधि के विषय मे मैं सब कुछ सुन चुकी हू। कोई नई बात हो तो कहो।'

एक बात और सुनने म आई है, देवि! भारत के स्थविर और श्रमण भी युद्ध म यवनो का साथ देंगे।

यह किसलिए श्रेष्ठि? क्या उन्हे अपनी मातभूमि स प्रेम नहा है?'

सम्राट सम्प्रति ने तथागत के धम का परित्याग कर जन धम को अपना लिया है। बौद्ध इसस बहुत रुष्ट हैं। युवराज भववर्मा को भी व सद्धम का शत्रु समझते ह। इसीलिए बौद्ध विहारो म मौय शासनतन्त्र के विरुद्ध षडयन्त्र प्रारम्भ हो गए है। यवन सेना जब भारत पर आक्रमण करगी तो बौद्ध भिक्षु उसका स्वागत करेंगे।"

पर यवन लोग भी तो बौद्ध नहीं है। धममहामात्यो क प्रयन्न स कुछ यवनों ने भिक्षु व्रत अवश्य ग्रहण कर लिया है। पर यवन देशा के न राजा बौद्ध धम के अनुयायी हैं और न प्रजा। फिर यवनो के प्रति बौद्धो का पक्ष

बात क्या है ?'

"मैं इन बातों को क्या समझूं देवि ! पर कल मध्य रात्रि के समय विद्यानिधि मेरे पास आया था। विद्यानिधि को तो आप जानती ही हैं न, देवि। पहले मेरी पण्यशाला में काम किया करता था। वह पतला दुबला सुन्दर युवक, विदेशी सार्थों के आतिथ्य का कार्य जिसके सुपुर्द था।"

"हां मुझे याद आ गया।'

"नवराजगृह के संघाराम का भेद लेने के लिए मैंने उसे नियुक्त कर दिया था। आजकल वह भिक्षु बनकर नवविहार में ही रह रहा है। वह कहता था कि स्थविरों की कुछ गुह्य बातचीत उसके कानों में पड़ गई। सम्प्रति के विरुद्ध एक घोर षडयन्त्र संघाराम में तैयार किया जा रहा है। स्थविर चाहते हैं कि पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर ऐसा व्यक्ति ही आरूढ रहे सद्धर्म में जिसकी अगाध श्रद्धा हो। सम्प्रति को वे सद्धर्म का शत्रु मानने लगे हैं।"

पर सम्प्रति प्राचीन सनातन वैदिक धर्म का तो अनुयायी नहीं है।'

पर वह बौद्ध भी नहीं है। उसका झुकाव निरन्तर जैन धर्म की ओर होता जा रहा है। कालक मुनि के धर्ममहामात्य के पद पर नियुक्त किए जाने से बौद्ध स्थविर सम्प्रति के विरुद्ध हो गए हैं। वे समझते हैं कि राज्यकोष का जो धन अब तक धर्ममहामात्यों द्वारा तथागत के अष्टांगिक धर्म के प्रचार के लिए प्रयुक्त हुआ करता था, अब उसका प्रयोग वर्धमान महावीर की शिक्षाओं के प्रसार में किया जाएगा। उनकी योजना यह है कि सम्प्रति को पदच्युत कर पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर किसी ऐसे कुमार को बिठाया जाए सद्धर्म के प्रति जो अटूट श्रद्धा रखता हो।'

"पर सम्प्रति के ज्येष्ठ पुत्र कुमार भववर्मा हैं और वह युवराज के पद पर भी नियुक्त हैं। राजसिंहासन पर उन्हीं का अधिकार है और वे बौद्ध नहीं हैं।'

'तभी तो स्थविर यह चाहते हैं कि कुमार शालिशुक को सम्राट पद पर अभिषिक्त किया जाए। शालिशुक तथागत के अष्टांगिक धर्म के अनुयायी हैं।'

'पर क्या मगध की जनता और सेना यह स्वीकार करेगी ?

पर्याप्त हैं। ममता का परित्याग कर देने म ही तुम्हारा कल्याण है। किसी के प्रति भी ममत्व बुद्धि न रखो—न पुत्र कलत्र क प्रति न धन-सम्पत्ति क प्रति और न राज्य के प्रति। अपरिग्रह व्रत का बहुत महत्त्व है। उसी का पालन कर मनुष्य तष्णा मोह, पाप और घणा स मुक्त हो सकता है। मुनि को चाहिए कि शरीर, मन और आत्मा के सब बन्धनो को काट दे। न किसी स स्नेह कर और न किसी स घृणा। यह कभी न भूलो कि मोह सब पापो का मूल है। राजसिंहासन के प्रति तुम्हारी ममता क्या है ? उसस ममत्व-बुद्धि को हटा लो। केवलित्व क आदश को सदा अपने सम्मुख रखो। तुम केवल रूप बनन का प्रयत्न करो, सबस पृथक्, सबसे विरक्त। यह शरीर तक तो तुम्हारा है नही, फिर राज्य को तुम क्यो अपना समझते हो ?"

सुहस्ति क वचनो को सुनकर सम्प्रति का क्रोध शान्त हो गया। हाथ जोडकर उन्होने कहा— मुझे क्षमा करें, आचार्य ! अब तक भी मैं तष्णा और मोह पर विजय नही पा सका हूँ। बूढा हो गया, अग शिथिल हो गए, आखो स दिखाई नही देता। पर ममता अब तक भी दूर नही हुई।

प्रयत्न करते रहो, श्रावक ! सब विषयो स निर्लिप्त होकर ही मनुष्य केवली पद को प्राप्त कर सकता है। राज्य के प्रति भी उदासीन वृत्ति ग्रहण कर लो। मुनि को राज्य स क्या काम ?

'मुझे माग प्रदर्शित कीजिए आचाय ! मैं एक निबल प्राणी हूँ।

'इस अश्वारोही को वापस लौट जाने क लिए कह दो। राजसिंहासन पर कोई भी आरूढ हो, तुम्ह इससे क्या लेना-देना ह ?

'यहा उज्जन मे रहत हुए मोह और तष्णा पर विजय पा सकना मेरे लिए कठिन होगा आचाय ! कोई न कोई राजपुरुष यहाँ आता ही रहता है। इसस मेरी साधना म विघ्न पडता है। पाटलिपुत्र के राजसिंहासन के लिए भाई भाई म जो युद्ध होगा उसके समाचार सुनकर मेरे लिए शान्त रह सकना सम्भव नही रहेगा। भववर्मा बहुत योग्य है उस शासन का अनुभव भी है। कूटनीति म भी वह प्रवीण है। शालिशुक को वह सम्राट पद पर नही रहने देगा और देवभूति, वह उत्कट साहसी तथा वीर है। दक्षिणापथ की सेनाएँ उसके प्रति अनुरक्त हैं। वह अवश्य पाटलिपुत्र पर

करेगा। भाई भाई स युद्ध करेगा। यह मुझसे नही सहा जाएगा। सन्तान के प्रति माता पिता को अगाध मोह होता है आचाय ! वे उसकी दुर्दशा नही देख सकते। मैं इन्द्रियो पर विजय पा सकता हू सासारिक सुखो को तुच्छ समझ सकता हूँ धन-सम्पदा को लोष्ठवत मान सकता हूँ। पर मरे पुत्र एक दूसरे के विरुद्ध शस्त्र उठाएँ राजप्रासाद म खून की नदियाँ बहें और पाटलिपुत्र म सवत्र मारकाट मच जाए यह मुझसे नही देखा जाएगा। अपने राजकुल की दुदशा के समाचार सुनते ही मरा मन अशान्त हो जाएगा।

'तो फिर तुम क्या चाहते हो श्रावक !

क्यो न हम कही बहुत दूर चले जाएँ, आचाय ! किसी ऐसे सुदूर प्रदेश म निवास करने लगें जहाँ पाटलिपुत्र का कोई भी समाचार न पहुचने पाए। मैं एक निबल मनुष्य हूँ आचाय ! मैं सब कुछ सह लूगा पर सतान का दुख मुझसे नही देखा जायगा।

'तुम ठीक कहते हो श्रावक ! मोह और ममत्व पर विजय पा सकना अत्यन्त कठिन है। इसके लिए निरन्तर अभ्यास की आवश्यकता होती है। अच्छा, चलो सुदूर दक्षिण म चले चलते हैं। मौर्यों का शासन तो अब गोदावरी नदी तक भी नही रहा है। प्रतिष्ठान म सिमुक ने अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया है। सिमुक के राज्य के दक्षिण मे एक शस्य श्यामल प्रदेश है जिसे कर्णाटक कहते हैं। कलकल करती स्रोतस्विनियो और हरी भरी घाटियो स परिपूण वह देश अत्यन्त मनोहर है। उसकी जलवायु भी उत्तम है। साधना और तपस्या के लिए वह उपयुक्त है। श्रुतकेवली आचाय भद्रबाहु ने वही समाधि ग्रहण कर अपने शरीर का अन्त किया था। पाटलिपुत्र से वह इतना अधिक दूर है कि वहाँ तुम्हे अपने बन्धु-बान्धवो और सन्तान का कोई भी समाचार नही मिल सकेगा।

सम्प्रति न आचाय सुहस्ति के साथ उज्जैन से दक्षिणापथ की ओर प्रस्थान कर दिया। मुनियो का एक सन्दोह उनके साथ था। नर्मदा ताप्ती और गोदावरी को पार कर मुनियो और श्रावको की यह मण्डली दक्षिण दिशा म निरन्तर आगे बढ़ती गई। अन्त मे वह कटवप्र नामक उस स्थान पर पहुँच गई जहाँ भद्रबाहु न समाधि लेकर प्राणो का त्याग किया था।

यहा सम्प्रति को असीम शांति की अनुभूति हुई। जिस मौय शासनतत्र का उन्होने बीमा वप सचालन किया था उसकी अब क्या दशा है, जिन कुमारा को उन्होने गोदी म खिलाया था व किस प्रकार अब एक-दूसरे के खू़ के प्यास हो रहे हैं और यवन सेनाएँ किस प्रकार उनके साम्राज्य को आक्रात कर रही हैं—इन बातो की ओर अब उनका जरा भी ध्यान नही था। जिस प्रकार कछुआ सब अगा को अपन अदर समेट लेता है, वसे ही अपनी सब चित्तवृत्तिया को समेटकर वह पूणतया अन्तमुख हो गए। दिशाव्रत लेकर वह एक स्थान पर बैठ गए। न उन्हे शरीर का ध्यान रहा, न वस्त्रा का और न भाजन का। उन्होने यत्न किया, कि सबसे अपने को पूणतया पृथक् कर केवली' हो जाएँ। पञ्च महाव्रतो का अविकल रूप से पालन करन के लिए अन्त म उन्हाने अनशन प्रारम्भ कर दिया। त्रिखण्ड-भरताधिप' महाराज सम्प्रति की अब किसी के प्रति ममता नही रह गई। योगनान्ते तनुत्यजाम्' का जो चरम आदश भारत के प्राचीन राजा अपने सम्मुख रखा करते थे उसी का अनुसरण कर राजा सम्प्रति ने समाधि ग्रहण कर ली, और वह केवलीरूप' हो गए।

भ्रातृ युद्ध

स्थविर मोग्गलान द्वारा कुमार शालिशुक को पाटलिपुत्र म सम्राट् घोषित कर दिया गया था और युवराज भववर्मा अन्त पुर मे ही बन्दी बना लिए गए थे। पर शालिशुक का माग निष्कण्टक नही था। मौय शासनतत्र म एस लोगा की कमी नही थी जो स्थविरा के कुचक्र से उद्वेग अनुभव कर रहे थे। पाटलिपुत्र का सन्निधाता (राजकीय आय का अमात्य) देवगुप्त चतुर राजनीतिज्ञ था। विष्णुगुप्त चाणक्य और अमात्य राधागुप्त की शासन-परपराआ का उस समुचित ज्ञान था और धमविजय की नीति को वह राज्य क लिए हानिकारक मानता था। बौद्ध धम म उसकी आस्था नही थी, और वह प्राचीन सनातन वदिक धम का अनुयायी था। उसका विश्वास था कि युवराज भववर्मा न केवल मौर्यों के राजा

अधिकारी है अपितु उसी द्वारा मागध साम्राज्य का कल्याण व उदय सम्भव है। उसने निश्चय किया कि जिस प्रकार भी सम्भव हो भववर्मा को बन्दीगृह से मुक्त कराया जाए और स्थविरों के कुचक्र से मौर्य शासनतन्त्र की रक्षा की जाए। शक्ति का प्रयोग कर यह अपना प्रयत्न म सफल नहीं हो सकता था क्योंकि पाटलिपुत्र का आतवशिक गुणसेन शान्तिशुक के वश में था। पाटलिपुत्र में जो भी सेना थी वह गुणसेन के अधीन थी। इस दशा में देवगुप्त ने कूटनीति का आश्रय लिया। राजप्रासाद का दौवारिक वज्रधर्मा उसका मित्र था। अन्तःपुर की सब व्यवस्था उसी के अधीन थी। देवगुप्त ने वज्रधर्मा को बुलाकर कहा—

"भववर्मा को बन्धनमुक्त करने का कोई उपाय कीजिए अमात्य! राजसिंहासन का वास्तविक अधिकारी वही है। शान्तिशुक न केवल अकर्मण्य है अपितु इन्द्रियों पर भी उसका वश नहीं है। वह विशाल मौर्य साम्राज्य को कैसे सभाल सकेगा? उसके राजा बन जाने पर मौर्यों की बची-खुची शक्ति भी नष्ट हो जाएगी। साम्राज्य की रक्षा करना हम सब का कर्तव्य है।

मैं आप से सहमत हूँ अमात्य! कहिए मुझे क्या करना चाहिए।

ब्राह्मण और श्रमण तो अन्तःपुर में आ जा सकते हैं न?

'ब्राह्मण पुरोहितों का अन्तःपुर में प्रवेश निषिद्ध कर दिया गया है। मोग्गलान समझता है कि वे भववर्मा के पक्षपाती हैं। पर श्रमण और भिक्षु अभी वहाँ आ जा सकते हैं। महारानी तारादेवी आजकल बहुत प्रसन्न हैं क्योंकि उनके पुत्र शालिशुक को सम्राट घोषित कर दिया गया है। वे मुक्त हस्त से दान पुण्य कर रही हैं। अन्तःपुर में श्रमणों और भिक्षुओं की भीड़ लगी रहती है। वे पेट भर भोजन करते हैं और दान दक्षिणा प्राप्त कर नये सम्राट की जय जयकार करते हैं।

तब तो हमारा कार्य भी कठिन नहीं होना चाहिए। हमारे कितने ही गुप्तचर भिक्षुवेश में भी रहते हैं।

'पर कल से भिक्षुओं के विषय में भी कुछ नई आज्ञाएं प्रचारित की गई हैं। अब केवल वे भिक्षु ही अन्तःपुर में प्रवेश पा सकते हैं जिन्हें कुक्कुट विहार के संघ-स्थविर की मुद्रा से अंकित प्रवेशपत्र प्राप्त हों। आतवशिक

गुणसेन बडा कुशल और जागरूक व्यक्ति है। उसे भय है कि भववर्मा के पक्षपाती गुप्तपुरुष कहीं भिक्षुवेश मे अन्त पुर मे प्रवेश न पा जाएँ।'

'आपकी अधीनता म जो बहुत से युक्त और आयुक्त राजप्रासाद म कार्य करते हैं वे तो अन्त पुर म आते-जाते ही होगे। क्या उनम कोई ऐसे नही है जो हम सहायता द सकें ?"

'महानस म औदनिक के पद पर जो व्यक्ति काय कर रहा है, वह मोग्गलान के गूढपुरुषो का आचाय है। राजप्रासाद म सवत्र उसके सत्री विद्यमान है। अन्त पुर म आने-जाने वाला कोई भी व्यक्ति उसकी गृध्र दष्टि स बचा नही रह सकता।

'हा मैं औदनिक निपुणक को भलीभाति जानता हूँ। वह अपने काय म अत्यन्त निपुण है। पर भिक्षुओ के लिए तो अन्त पुर म प्रवेश पा सकना अभी अधिक कठिन नही हुआ है ?"

'यह सच है भिक्षुओ के लिए प्रवेश पत्र पा सकना अभी बहुत कठिन नहा है।'

"तब तो काम बन जाएगा। हमारे कुछ गूप्तपुरुष भिक्षुओ के वेश मे कुक्कुट विहार म रह रहे हैं। मोग्गलान का विश्वास भी उन्ह प्राप्त है। हमारे मत्रियो के आचाय चन्द्रकीर्ति ह। उन्हें तो आप जानते ही होंगे। राजपथ पर उनकी पण्यशाला है। बुद्ध धम और सघ के प्रति वह अगाध श्रद्धा प्रदर्शित करत हैं। श्रमण और भिक्षु उनके पास आत जाते रहते हैं। मैं आज ही उनसे मिलूगा।

चन्द्रकीर्ति से मिलकर देवगुप्त ने अपनी योजना तैयार कर ली। अन्त पुर क जिस कक्ष म भववर्मा बन्दी थे, उसकी परिचारिका भानुमती को एक सहस्र सुवण निष्क देकर अपने साथ मिला लिया गया। भिक्षुओ के परिधानयोग्य काषाय चीवर को अपने अधोवस्त्र म छिपाकर वह अन्त पुर म ले गइ और उसे भववर्मा को दे दिया। चन्द्रकीर्ति का एक पत्र भी वह अपने साथ ले गई, जिसम सारी योजना गुप्तलिपि म लिखी हुई थी।

राजमाता तारादेवी ने बुद्ध पूर्णिमा के अवसर पर एक भोज का आयोजन किया था जिसम कुक्कुट विहार के सब स्थविरो, श्रमणो और भिक्षुओ को आमत्रित किया गया था। अन्त पुर के जिस भाग मे भववर्मा

यन्नी थ उस दिन वह प्राय निर्जन हो गया था क्योंकि वहाँ के सम्पूर्ण प्रहरी युद्ध जयन्ती महोत्सव की धूम धाम म आनन्द मनाने वहाँ स चले आए थ। रात्रि का धुंधलका हो जाने पर भानुगुप्त न भववर्मा के कक्ष का द्वार खोल दिया। युवराज तैयार थे ही। उन्होंने और चन्द्रकीर्ति न गेरुए वस्त्र पहन लिए थ और भिक्षुओं के कषाय वस्त्र धारण कर लिए थ। वे चुपचाप बाहर आए और भिक्षुओं की भीड़ म मिल गए। चन्द्रकीर्ति के नियुक्त चारी गूढ़पुरुषों न उन्ह चारों ओर स घेर लिया और वह उनके साथ अन्तःपुर स बाहर निकल गए। किसी को उन पर सन्देह नहीं हुआ। राजप्रासाद की दक्षिण प्राचीर के समीप दो घोड़े तयार खड़े थ। चन्द्रकीर्ति के साथ उन्होंन तुरन्त वहाँ स प्रस्थान कर दिया और रात्रि का तीसरा प्रहर व्यतीत होन स पूर्व ही वह एक शिवमन्दिर म पहुँच गए जो पाटलिपुत्र के दक्षिण म कोई पाँच योजन की दूरी पर विद्यमान था। वहाँ उन्होंने भिक्षुओं का चीवर उतार कर फेंक दिया और एक मुण्डतापस का वेश बना लिया।

पर वह देर तक शिवमन्दिर म नहीं टिके। वह जानत थ कि मागधराज के गूढ़पुरुष शीघ्र ही उनका पता खोज निकालेंगे। यद्यपि पाटलिपुत्र की जनता उनके प्रति सहानुभूति रखती थी पर आन्तवशिक सेना शालिशुक के साथ थी। इस दशा म यह आशा नहीं की जा सकती थी कि पाटलिपुत्र के लोग नए सम्राट क विरुद्ध विद्रोह के लिए उठ खड़े होंगे। भववर्मा के सम्मुख केवल यह मार्ग था कि वह शीघ्र स शीघ्र पाटलिपुत्र से दूर चले जाएँ। मागध साम्राज्य के दक्षिणी सीमान्त का शासन कुमार देवभूति के हाथों म था। वह भववर्मा का अनुज था और उसके प्रति अनुरक्त भी। यद्यपि मौर्य शासनतन्त्र की सैन्य शक्ति क्षीण हो चुकी थी, पर दक्षिणापथ के दुर्गों म अब भी ऐसी सेनाए विद्यमान थीं जो गुणसेन की आन्तवशिक सेना का सामना कर सकती थीं। भववर्मा को इतना ही भरोसा था। चन्द्रकीर्ति के साथ उन्होंने तुरन्त दक्षिण की ओर प्रस्थान कर दिया। सोण नद के साथ साथ चलते हुए वह दक्षिण दिशा म निरन्तर आगे बढ़ते गए और महाकान्तार को पार कर अमरकण्टक पहुँच गए। पाटलिपुत्र के षड्यन्त्र के समाचार देवभूति को ज्ञात हो चुके थे और वह अपनी सेना के साथ मगध की ओर प्रस्थान करने की तयारी म व्यग्र थे। दोनों भाई गले

लगकर मिर। देवभूति को यह पसन्द नहीं था कि शालिशुक जैसा अकर्मण्य और निर्वीर्य व्यक्ति पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आरूढ़ हो। वह आर्यों की प्राचीन मर्यादा में विश्वास रखता था और भववर्मा को सम्राट् पद का योग्य अधिकारी मानता था।

मौर्य साम्राज्य का संनिधाता देवगुप्त भी इस समय शान्त नहीं बैठा था। उसने भृत और आटविक सैनिकों की एक नई सेना का संगठन प्रारम्भ कर दिया था। मगध के दक्षिण में जो महाकान्तार अब तक भी विद्यमान है, प्राचीन काल में वहाँ अनेक आटविक जातियों का निवास था। इनके युवक विकट योद्धा हुआ करते थे। आटविक सैनिकों की अनेक श्रेणियाँ इस युग में संगठित थीं जिनके 'श्रेणिमुख्य' इस बात के लिए उत्सुक रहा करते थे कि कोई राजा धन देकर उनका साहाय्य प्राप्त करे। युद्ध करना ही इन आटविक श्रेणियों का पेशा था। मौर्य सम्राटों ने धर्मविजय की नीति को अपनाकर सैन्य शक्ति की जिस ढंग से उपेक्षा कर दी थी, [illegible] आटविक सैनिकों की इन श्रेणियों को कहीं भी काम मिल [illegible] नहीं रहा था। अन्य कोई व्यवसाय उन्हें आता नहीं था, [illegible] अत्यन्त शोचनीय हो गई थी। देवगुप्त के नये सैन्य-[illegible] उत्साहपूर्वक स्वागत किया और भववर्मा का पक्ष लेकर [illegible] हो गई। बहुत से मौल सैनिकों ने भी भववर्मा का साथ [illegible] लिया।

कुमार देवभूति ने दक्षिणापथ की सेना के साथ जब [illegible] आक्रमण किया तो देवगुप्त द्वारा संगठित नई सेना उसके साथ [illegible]। शालिशुक की स्थिति इस आक्रमण से डावाँडोल हो गई। पर [illegible] जरा भी चिंतित नहीं हुआ। रात भर वह सुरा और सुन्दरियों में [illegible] और दिन भर पड़ा सोता रहता। जब देवभूति और [illegible] पाटलिपुत्र के समीप पहुँच गई, तो आन्तर्वंशिक गुणसेन [illegible]। [illegible] सेना के लिए इस विपत्ति का निवारण कर सकना [illegible] था। वह शालिशुक के पास गया और हाथ जोड़कर बोला—'[illegible] बुरे समाचार हैं सम्राट!'

"कौन है? यह मेरे विश्राम का [illegible] किसी समय

शालिशुक ने वहा ।

'देवभूति और भववर्मा की सनाआ ने पाटलिपुत्र वा घर लिया है सम्राट ! नागरिक घबरा रहे हैं और हमारी सना भी व्याकुल हो गइ है। आप क्षण भर के लिए प्राचीर क ऊपर आ जाइए। आपके दशन से हमारे सनिका का उत्साह वढेगा।

'तो तुम किसलिए हो ? सेनापति तुम हो या मैं ? मरा काम युद्ध करना नही है। हम धम की शक्ति मे विश्वास रखते हैं सयशक्ति म नहीं। जाओ मोग्गलान स मिला वह सब ठीक कर देंगे। मरे विश्राम म विघ्न न डालो।"

'पर शत्रु सेना दुग के महाद्वार तक पहुँचने ही वाली है सम्राट ! जब भववर्मा के सनिक राजप्रासाद म घुस आवेंगे तब तो आपके विश्राम मे विघ्न पडेगा ही।'

'तव की तब देखी जाएगी। मुझे नीद आ रही है अब तुम जाओ।

शालिशुक से निराश होकर गुणसेन स्थविर मोग्गलान के पास गया। उसकी बात सुनकर सघ-स्थविर ने कहा— तुम चिता न करो गुणसेन ! देश का वास्तविक शासक ता चातुरत सघ ही है। उसकी शक्ति अजेय है। मैं जानता हूँ शालिशुक अकमण्य और निर्वीय है। पर वह सद्धम का अनुयायी है। इसीलिए उसे राजसिंहासन पर बिठाया गया है। यदि वह शस्त्र हाथ मे लकर युद्धक्षत्र म नेही आता तो इसस क्या बनता बिगडता है ? यह युद्ध भववर्मा और शालिशुक का नही है। यह तो एक धम युद्ध है सद्धम और मिथ्या पापण्डो का। देख लेना अत मे सद्धम की ही विजय होगी।

पर शत्रु सेना दुग के समीप तक पहुँच गई है स्थविर ! मेर वहुत से सनिक आहत हो चुके हैं। शत्रु के सनिक सख्या मे बहुत अधिक हैं। आट विक सनिक बहुत वीर हैं। चिरकाल पश्चात उन्हे अपना शौय प्रदर्शित करन का अवसर मिला है। मेरी आतवशिक सेना के पर उखडने प्रारम्भ हो गए है।'

इस युद्ध का अत पाटलिपुत्र की इस लडाई से नही होगा गणसेन ! देश के प्रत्यक नगर और ग्राम म यह युद्ध लडा जाएगा। एक ओर सद्धम

के अनुयायी हाेंगे और दूसरी ओर मिथ्या सम्प्रदायो और पापण्डो के लोग। जिन प्रत्यन्त देशो मे हमारी धर्मविजय स्थापित हो चुकी है वे भी हमारा साथ देंगे। तुम नही समझते गुणसेन! कौन सा ऐसा प्रदेश, नगर या जनपद है जहा हमारे विहार न हो, जहा महस्रो भिक्षु न हो जहा लाखो गृहस्थ सद्धम के श्रावक व उपासक न हो। हमारे धम-साम्राज्य की शक्ति असीम है। ये थोडे से सैनिक उसे कदापि परास्त नही कर सकते। हमारा आदेश पाते ही सद्धम के अनुयायी शस्त्र लेकर सवत्र उठ खडे होगे, मौर्यों के विजित म भी, सीमान्ता म भी और प्रत्यन्त देशो मे भी। भववर्मा का क्या सामर्थ्य है, जो इस अपार जनशक्ति का सामना कर सके।'

"तो फिर मेरे लिए क्या आदेश है स्थविर!"

"तुम केवल एक पक्ष तक भववर्मा और देवभूति की सेनाओ को पाटलिपुत्र म प्रविष्ट होने से रोके रखो। क्या तुम नीतिकारो के इस कथन को भूल गए हो कि दुग म बैठा हुआ एक सैनिक बाहर से आक्रमण करने वाले सौ सैनिको का सुगमता से सामना कर सकता है। केवल दो सप्ताह तक शत्रुसेना को दुग से बाहर रोके रखो। फिर सब ठीक हो जाएगा। तुम से क्या छिपाना, गुणसेन! श्रावस्ती के जेतवन विहार के सघ-स्थविर मज्झिम एक शक्तिशाली सेना सगठित कर चुके हैं। यह सेना वाराणसी पहुच गई है। दस बारह दिनो म वह पाटलिपुत्र आ जाएगी। वह पीछे की ओर से भववर्मा की सेना पर आक्रमण कर देगा। दो पाटो के बीच म पड कर भववर्मा चूर-चूर हो जाएगा। शालिशुक के विश्राम म विघ्न न डालो, गुणसेन! उसे सुरा-सुन्दरी म मस्त रहने दो। यह मत भूलो कि राजा तो 'ध्वजमात्र' ही हुआ करते हैं। वास्तविक राजशक्ति चातुरन्त सघ के हाथो म है शालिशुक के नही।'

'आपकी माया अपरम्पार है, स्थविर! आपकी योजना सुनकर मैं आश्वस्त हो गया हूँ। आप निश्चिन्त रहिए, एक पक्ष तक शत्रुसेना पाटलिपुत्र म प्रवेश नही कर सकेगी।'

भववर्मा और देवभूति की सेनाएँ पाटलिपुत्र के महाद्वारो तक पहुँच गई थी। प्राचीर पर खडे हुए धनुधर उन पर निरन्तर बाण-वर्षा कर रहे थे। अग और वग के सधे हुए हाथियो की चोट से महाद्वारो के कपाट हिलने

लग गए थ, पर उन्हे तोड सकना सुगम नहीं था। थ दो हाथ मोटे थे, और उन पर दो अंगुल मोटा लोहा मढ़ा हुआ था। पाटलिपुत्र म आग लगाने के प्रयोजन स अग्नि बाण भी छोड़े जा रहे थ। पर भद्रवर्मा की सेना दुग म प्रवेश नहीं पा सकी। दस दिन बीतते-बीतते श्रावस्ती की सेना पाटलिपुत्र के समीप पहुच गई। उसकी गति को अवरुद्ध करने के लिए देवभूति पीछे की ओर मुडा। वह चाहता था कि श्रावस्ती की सेना सोण नद को पार न करने पाए। सोण के पश्चिमी तट पर घमासान युद्ध प्रारम्भ हो गया। मौर्यों की जो शक्ति सीमान्त की रक्षा और विदेशी शत्रुओ को परास्त करने म प्रयुक्त होनी चाहिए थी वह भ्रातृयुद्ध म लग गई। जिस समय मौरिया का सम्राट अन्तियोक और बाह्लीकराज एवुथिदिम परस्पर मिलकर भारत का आक्रान्त करने की योजनाए बनाने म तत्पर थ, मौर्य राजकुल क कुमार आपस म लडकर एक दूसरे का संहार करने म लगे थे। भारत के शासनतन्त्र की यह कैसी दुदशा थी!

पुष्यमित्र का वाहीक देश के लिए प्रस्थान

दिव्या और पुष्यमित्र का विवाह सम्पन्न हो चुका था। पर अभी दिव्या अपने पितृगृह म ही थी। पुष्यमित्र आचाय पतञ्जलि के आश्रम म निवास कर रहे थ यद्यपि वहा रहते हुए वह बाल्हीक और पाटलिपुत्र के समाचार सुगमता स प्राप्त कर सकते थे। यवनो की गतिविधि को वह अपनी आखो स देख आए थे। उन्हे यह चिन्ता सता रही थी कि बाल्हीक राज क आक्रमण से देश की किस प्रकार रक्षा की जाए। देवी सुभगा द्वारा भेजे हुए कपोत जब गोनर्द आश्रम म पहुँचे तो पुष्यमित्र को यवनो के नये दुदान्त चक्र के समाचार ज्ञात हुए। वह तुरन्त आचाय दण्डपाणि के पास गए और उन्हे नई परिस्थिति स अवगत किया।

यह तो अत्यन्त भयकर समाचार है वत्स! क्या यवन सेनाएँ एक बार फिर भारत की पवित्र भूमि को आक्रान्त करेंगी? उनके माग को अव रुद्ध कर सकने की शक्ति अब भारत म रह ही कहा गई है? धम विजय की

नीति ने मौर्यों के शासनतन्त्र का सवथा निर्वीय बना दिया है। वह सेना अब कहाँ है जो चन्द्रगुप्त के समय म थी और जिसने सल्युक्स को हिंदुकुश पवतमाला के परे ढकेल दिया था। मौय साम्राज्य अब छिन्न भिन्न हो गया है। कलिंग, आन्ध्र और सुदूर दक्षिण के सब प्रदेश उसम पृथक हो चुके हैं। मध्यशक्ति क्षीण हो गई है सीमान्त के दुग उजड गए है, सनिकों को राजकीय सेवा से छुट्टी दे दी गई है और शासनतन्त्र अपने कतव्यो के प्रति उपेक्षावृत्ति धारण करने लगा है। ऐसी दशा म यवनो से आय भूमि की रक्षा के लिए तुम क्या उपाय सोचते हो वत्स !'

उपाय तो आप ही बताएँगे आचाय ! मरा काय तो आपकी आज्ञाओं का पालन करना मात्र है। आपको ज्ञात ही है कि पाटलिपुत्र म राजसिंहासन के लिए सघष प्रारम्भ हो चुका है। भाई भाई स लड रहा है। मौय साम्राज्य म जो थोडी-बहुत सेना अवशिष्ट थी, वह भी गृहयुद्ध म लग गई है। यवनो की गतिविधि पर ध्यान देने वाला ही अब कौन है ?

मुझे सब कुछ ज्ञात है वत्स ! आय भूमि की रक्षा का उत्तरदायित्व अब हमी पर है। जब राजा निर्वीय और कतव्यविमुख हो जाएँ तो ब्राह्मणो को ही कायक्षेत्र म उतरना पडता है। ऐसे समय म प्रजा को माग प्रदर्शित करना उन्ही का कतव्य हो जाता है।

'तो फिर मुझे आदेश दीजिए आचाय !

अच्छा, यह बताओ कि भारत के उत्तर पश्चिमी सीमान्त पर कपिश और गान्धार के जो जनपद है उनकी क्या दशा है ? वहा का शासन तो कुमार सुभागसेन के हाथो म है न ? तुम तो अभी इन प्रदेशो का पयटन करके आए हो। क्या सुभागसेन यवनो का सामना कर सकता है ?

'मुझे सन्देह है, आचाय ! पुष्कलावती म मैं कुछ दिन रहा था। वहा का विशाल दुग अब खण्डहर हो गया है। न वहा अस्त्र शस्त्र हैं और न सेना। यही दशा सीमान्त के अन्य दुर्गों की भी है। सुभागसेन का मध्य शक्ति की ओर जरा भी ध्यान नहीं है। वह इसी मे सतुष्ट है कि यवन राज्यो पर भारत के सास्कृतिक प्रभाव म निरन्तर वद्धि हो रही है।'

काश्मीर की क्या दशा है ? वह भी तो भारत का सीमान्त प्रदेश है। वहा का शासन कुमार जालौक के हाथो म है। राजा अशोक का यह

पुर और आगत है पर यह अव [illegible] है। [illegible]
म [illegible]
आक्रमण की [illegible] [illegible]
सा यह उसका सामना [illegible] । [illegible]
[illegible] है।

तो क्या हम [illegible] शान्तिगुप्त [illegible] का [illegible]
प्रयत्न करना चाहिए ? [illegible] को [illegible]
है, वत्स ! यदि शान्तिगुप्त न राजसिंहासन पर बा [illegible] और चीदवानु
कुमार [illegible] हो जाए तो मौर्य [illegible] का [illegible] उद्धार कर
सकना अधिक कठिन नहीं होगा। [illegible] और [illegible] भी अब भी कोई
कमी नहीं है। उन [illegible] योग्य नेता की आवश्यकता है। शान्तिगुप्त
पूर्णतया अयान और अकर्मण्य है। उस सम्राट को न हटाए बिना मौर्य
शासनतन्त्र म शक्ति का सचार कर सकना असम्भव है। भववर्मा को राज
सिंहासन पर बिठाकर उसके नेतृत्व म यवना का सामना कर सकना सम्भव
हो सकता है। क्या न हम नई सेना सगठित कर भववर्मा की सहायता
करें ?

पर यवन लोग तो भववर्मा के सम्राट बनने की प्रतीक्षा करेंगे नहीं
आचाय ! वे तो भारत पर आक्रमण करने की सब तयारी कर चुके हैं। जब
तक भववर्मा और शान्तिगुप्त के गृहयुद्ध का अन्त होगा, यवन सेनाएँ हिन्दू
कुश पवतमाला को पार कर भारत को आक्रान्त कर देंगी।

वाहीक देश के पुराने गणराज्यो की क्या दशा है ? कठ, मालव
क्षुद्रक आग्रेय आदि गणराज्या ने सिकन्दर से डटकर युद्ध किया था। क्षुद्रको
की सेना तो सिकन्दर को परास्त करने म भी समथ हो गई थी। क्या इन
गणो की शक्ति का पुनरुद्धार नहीं किया जा सकता ?'

पर ये गण तो चिरकाल से अपनी स्वतन्त्रता खो चुके हैं आचार्य !
इनकी अपनी सेनाए अब रही ही कहाँ है ?

यहीं तुम भूल करते हो वत्स ! इन राज्यो की सेनाएँ तो कभी भी
नही थी। इनका तो प्रत्येक नागरिक सनिक भी होता है। युद्ध के अवसर
पर वह अस्त्र शस्त्र लेकर रणक्षेत्र म उतर पडता है। आचाय चाणक्य ने

इन गणा को मौय साम्राज्य म सम्मिलित अवश्य किया, पर इनकी आन्त-रिक स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण रखा। य गणराज्य अब भी स्वतन्त्र हैं, यद्यपि ये मौय साम्राज्य के अग हैं। वीरता की परम्परा इनके नागरिको मे अभी नष्ट नही हुई है। क्या न हम वाहीक देश जाएँ और वहाँ क गणराज्यो को देश की रक्षा के लिए प्रेरित करें।

'पर क्या कपिश और गान्धार को यवना के हाथ चले जाने देना उचित होगा, आचाय! वाहीक देश के गणराज्य तो तभी यवन सेना का सामना करने के लिए अग्रसर होंगे, जबकि वह कपिश-गान्धार को जीतकर सिन्धु नदी को पार कर लेगी।'

यह सही है। पर जब सवनाश उपस्थित हो तो आधे की रक्षा करके ही सतुष्ट होना पडता है, वत्स! सुभागसेन म यह सामथ्य नहीं है कि वह यवना से कपिश-गान्धार की रक्षा कर सके। शालिशुक और भववमा मे जो युद्ध चल रहा है उसकी उपेक्षा भी वह नही कर सकेगा। जो थोडी-बहुत सय शक्ति उसके पास है, उसका प्रयोग वह सम्भवत इन दोनो मे से किसी एक की सहायता के लिए करना चाहेगा। यवना का सामना करने की उसमे शक्ति ही कहा है जो हम उससे किसी प्रकार की आशा कर सकें।'

पर क्या कपिश गान्धार का यवना द्वारा आक्रान्त होने दना उचित होगा, आचाय!'

दखो, वत्स! भावना के वशीभूत न होओ। मौर्यों के शासनतन्त्र म शक्ति-सचार करने का काय सुगम नही है। उसम बहुत समय लगगा। हमारे सम्मुख प्रथम काय यह है कि अन्तियोक और एवुथिदिम की सेनाएँ भारत मे अधिक दूर तक न बढने पाएँ। यदि उन्ह सिंधु नदी पर रोक दिया जाए तो भविष्य म यह आशा की जा सकती है कि मौय शासन की सन्य-शक्ति को सुसगठित करने के अनन्तर कपिश-गान्धार से भी उन्ह बाहर निकाला जा सके। पर यदि एक बार यवनो न सिंधु नदी का पार कर वाहीक देश पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया तो उनक आक्रमणो से आर्यावत की रक्षा कर सकना असम्भव हो जाएगा।'

तो मरे लिए क्या आदेश है, आचाय!

'तुम तुरन्त वाहीक दश के लिए प्रस्थान कर दो। मैं **तुम्हारे साथ**

करत सुनकर वह शय्या से उठ खडी हुई और पुष्यमित्र के स्वर को पहचान-कर माग म ही ठिठककर खडी रह गई। पतिदव के इस प्रकार अकस्मात् आ जाने पर उसे आश्चय भी हुआ और प्रसन्नता भी। 'देखा, वेटी ! कौन आया है। तुरन्त स्नान के लिए जल रख दो, और पूजा के लिए सब सामग्री भी। भोजन तो तैयार ही है पर कुछ व्यजन और बना लो। कोई झझट न करना बहुत देर हो गई है।' इन्द्रदत्त ने उसे कहा।

दिव्या तुरन्त काम मे लग गई। नित्यकर्मों और भोजन से निवटकर जब पुष्यमित्र शय्या पर लेटन लगे, तो वह उनके पास आकर बोली—

तो तुम शीघ्र वाहीक देश के लिए प्रस्थान कर रहे हो ?'

'तुम्हे कसे ज्ञात हुआ ?'

मैंने सब सुन लिया है। दीवारों के भी कान होते हैं। मैं भी तो आचाय पतञ्जलि के आश्रम म रहकर दण्डनीति की शिक्षा प्राप्त कर चुकी हूँ। औशनस नीति म भी मैं प्रवीण हूँ। मैं भी तो एक गूढ़पुरुष हूँ जानते हो ? तुम्हारी गतिविधि मुझसे छिपी नही रह सकती।

मुझे जाना ही होगा प्रिय ? यह समय घर पर बैठकर विश्राम करने का नही है।

मैं तुम्हे जाने से कब रोकती हूँ। पर तुम अकेले नही जा सकोगे। मैं भी साथ चलूगी। सुना है, वाहीक देश की युवतिया बहुत सुन्दर होती हैं। कहीं किसी के प्रेमपाश म न फँस जाओ। एक प्रहरी तुम्हारे साथ रहना ही चाहिए।'

यात्रा म तुम्हे बहुत कष्ट होगा प्रिये ! बहुत दूर जाना है। जानती हो माग म चम्बल नदी की घाटी भी पडती है। बडी भयकर है वह दस्युओं से परिपूण। चम्बल के दस्युओं से बचकर यात्रियों के लिए आगे बढ़ना बहुत कठिन होता है। आजकल सवत्र दस्युओं का प्रकोप बढ गया है। सेना से अवकाश प्राप्त सनिक भी लूटमार म तत्पर हैं।'

'अरे तुम तो दस्युओं से डरने लग गए। यवन सेना का सामना कैसे कर सकोगे ?'

मेरी बात और है। पर तुम सदश कोमलाङ्गी के लिए यह यात्रा निरापद नही होगी। मेरे साथ चलने का आग्रह न करो प्रिय !

वापस लौट आऊँगा।

'मैं तुम्हें कभी अकेले नहीं जाने दूँगी प्रियतम ! मुझे न दस्युओं का भय है और न सैनिकों का। गानद आश्रम में रहकर मैंने भी धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की है। मैं भी तुम्हारी सेना में भरती होऊँगी और यवनों का संहार करूँगी। कठशालिका करभिका की कथा तुम मुझे कितनी बार सुना चुके हो। उसे सुनकर मुझे उससे ईर्ष्या होने लगती है। मैं सिद्ध कर दूँगी कि दशार्ण देश की बालिकाएँ कठ युवतियों से वीरता और साहस में किसी भी प्रकार कम नहीं होतीं। मैं तुम्हारे लिए भार नहीं बनूँगी। मुझसे तुम्हें शक्ति ही प्राप्त होगी बलाय नहीं।'

पितृचरण से पूछ देखो प्रिय ! वह क्या कहते हैं?'

तुम उनकी चिन्ता न करो प्रियतम ! पिताजी की अनुमति मैं अवश्य प्राप्त कर लूँगी। उन्हें तो इससे प्रसन्नता ही होगी।

पुष्यमित्र और दिव्या देर तक इसी प्रकार वार्तालाप करते रहे। सारी रात बीत गई उन्हें नींद ही नहीं आई। दिन भर घोड़े पर सवार रहने के कारण पुष्यमित्र बहुत थक गए थे। पर दिव्या से मिलकर उनकी सारी थकावट दूर हो गई। सुबह होने पर उन्होंने दिव्या से पूछा—

अच्छा, तुम मेरे साथ चलोगी तो सही पर किस वेश में? स्त्रीवेश में यात्रा करना निरापद नहीं होगा।'

'तुम इसकी चिन्ता न करो प्रियतम ! नये नये भेस भरकर गुप्तपुरुष बनना मुझे खूब आता है। कहो तो अभी बुढ़िया बन जाऊँ, लाठी टेककर चलने लगूँ। लोग समझें कोई बुढ़िया तीर्थयात्रा को जा रही है। या कहो तो दासी बन जाऊँ काली-कलूटी अधपके बाल और झुकी हुई कमर। लोग समझें किसी गृहस्थ के घर रोटी पकाने का काम करने वाली है। कोई मेरी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखेगा।'

तुम तो परिहास करती हो प्रिय !'

नहीं मैं परिहास नहीं करती। अच्छा सैनिक का वेश बना लूँगी। पीठ पर तूणीर शरीर पर कवच, सिर पर शिरस्त्राण और हाथ में तलवार। घोड़े पर चढ़कर तुम्हारे आगे-आगे चलूँगी। लोग देखकर कहेंगे, *कैसा वीर* वीर है। दस्यु मुख देखते ही डरकर भाग खड़े होंगे। कोई आगे बढ़ेगा, तो

उसके टुवडे-टुवडे वर दूगी।'

प्रात वाल जब श्रोत्रिय इद्रन्त्त सध्या वदन और पूजा मे निवृत्त होकर अपनी पुष्पवाटिका म टहलन गए, तो दिव्या उनके पास आवर खडी हो गई। कुछ सवाच वे साथ उमन वहा—

'पिताजी, आपमे कुछ वान करनी थी।

'कहो वेटी, क्या वहना है ?

'मैं भी इनके साथ वाहीक देश जाऊँगी। मैंन तो दुनिया देखी ही नही है। वस विन्शिा स गोनद और गोनद से विदिशा। यही मेरा ससार है। कभी उज्जन तक नही गई।'

पर पुष्यमित्र तो एक अत्यन्त महत्त्वपूण काय से वाहीक जा रहा है। उस वहाँ जाकर सेना सगठित करनी है यवनो से युद्ध करना है। तुम वहाँ जाकर क्या करोगी ?'

आप ही न तो मुझे उपदेश दिया था नि स्त्री पुरुष की अर्धाङ्गिनी होती है, उसके सुख और दुख दोना म हाथ बँटाती है। मैं उनके महान् काय म सहायक ही होऊँगी पिताजी वाधक नही।

तुम्हारा यदि यही निश्चय है ता मैं तुम्हें रोकूगा नही। सच्चे अर्थों मे पनि की सहधर्मिणी वना, वेटी! आय महिलाओ की यही परम्परा है। पर तुमन पुष्यमित्र से बात कर ली है ?'

वह तो अभी पडे सो रहे हैं। यात्रा से थक गए थे। अभी उठे नही हैं।'

सूर्योदय के एक घडी बाद पुष्यमित्र की नीद खुली। कुशल मगल पूछने के अनन्तर इद्रदत्त ने उनस वहा—

भलीभाति विश्राम कर लिया है न ? तुम गहरी नींद मे थे, मैंने जगाना उचित नही समझा। अव नित्य कर्मों से निवत्त होकर मध्या वदन कर ला। प्रात कालीन आहार तयार है। तुमसे बहुत-सी बातें करनी हैं। रात को तो वार्तालाप के लिए समय ही नही था।

सध्या पूजन आदि से निवृत्त होकर पुष्यमित्र इद्रदत्त के पास आए। वह उनकी प्रतीक्षा ही कर रहे थे। उन्होंने कहा— कहो, वत्स! गोनद आश्रम के क्या समाचार हैं ? पतन्जलि सकुशल स्वस्थ और प्रसन्न तो

जब उन्ह यवनो के आक्रमण का समाचार मिला वह तुरत कुमार सुभागसेन के पास गए। मौर्य साम्राज्य के उत्तर पश्चिमी चक्र के शासक सुभागसेन उस समय अपनी मन्त्रिपरिषद म यवना के आक्रमण की समस्या पर ही विचार विमश कर रहे थे। अन्तपाल नायक धम महामात्य पौर प्रशास्ता धमस्थ आदि सब अमात्य मन्त्रिपरिषद म उपस्थित थे। मारिपुत्र के आगमन पर सब उठकर खडे हो गए। सिर झुकाकर सबने उनका अभिवादन किया और उन्ह उच्च आसन पर बिठाया।

'यवनो के आक्रमण का समाचार तो आपने सुन ही लिया होगा स्थविर! कहिए क्या आदेश है? इस समय आप ही हम माग प्रदर्शित कर सकते हैं।' सुभागसेन न सारिपुत्र को सम्बोधन करके कहा।

'मैं इसीलिए तो यहा आया हूँ। कहा तुम कोई अनुचित निणय न कर लो।'

यवनो के आक्रमण के समाचार से पुष्कलावती के नागरिक बहुत उद्विग्न है स्थविर!'

इसम उद्वेग की क्या बात है? क्या तुम तथागत की इस शिक्षा को भूल गए कि अहिंसा द्वारा हिंसा पर विजय प्राप्त करो, अक्रोध से क्रोध को जीतो और अपनी साधुता से असाधुता को वश म लाओ। तुम्ह युद्ध करने की आवश्यकता नही है। पुष्कलावती के महाद्वारो को खुल रखो रात्रि क समय भी। जब यवन सेनाए समीप आ जाएँ तो प्रमपूवक उनका स्वागत करन क लिए आगे बढो। करुणा अहिंसा और मत्रीभावना स तो सिंह जसे हिंस्र पशु भी सिर झुकाकर परो म लोटने लगते हैं फिर मनुष्यो की तो बात ही क्या है? यवन लोग भी मनुष्य हैं व पशु नही है। यवन सनिक तभी तुम पर अस्त्र उठाएँगे जब तुम उनके माग को अवरुद्ध करने का प्रयत्न करोग। ताली एक हाथ से कभी नही बजती। तुम्हारी अहिंसा के सम्मुख यवना की हिंस्र वत्ति स्वय विनष्ट हो जाएगी। जस इधन न पाकर अग्नि स्वय बुझ जाती है वस ही यवना की युद्ध की प्रवत्ति तुम्ह नि शस्त्र देखकर स्वय शान्त हो जाएगी। तथागत का यही उपदेश है। तुम सब तो बुद्ध धम और सघ म आस्था रखत हो। यवना को परास्त करन क लिए अहिंसा क अमाघ अस्त्र का प्रयाग करो।

"क्या आक्रान्ता के सम्मुख हथियार डाल देना उचित होगा, स्थविर ! क्या हमारे शासनतन्त्र म क्षत्रशक्ति के लिए कोई भी स्थान नही है ? क्या शत्रु का सामना करना हमारा कतव्य नही है ? हम यहा प्रजाजन की रक्षा के लिए ही नियुक्त हैं। सेनानायक चन्द्रकीर्ति ने कहा।

'कौन किसका शत्रु है श्रावक ! हमारी हिंस्रवृत्ति ही हमारी सबस बडी शत्रु है। क्या यवन राज्यो म तथागत के धर्मानुशासन का पालन नही हो रहा है ? क्या वहा विहारो, चत्यो और सघारामो की सत्ता नही है ? क्या वहा श्रमण और भिक्षु निवास नही करते ? तुम क्या यवनो का अपना शत्रु समझते हो ?"

' तो वे क्यो हम पर आक्रमण कर रहे हैं ?"

' यह उनकी मूखता है, श्रावक ! पर उनके अनुकरण म तुम भी क्या मूखता करने लगो ? इधन के अभाव म अग्नि स्वय शात हो जाती है। यदि तुमने सैन्य शक्ति का प्रयोग कर यवनो के सहार का प्रयत्न किया तो उनकी क्रोधाग्नि दुगने वेग से भडक उठेगी। क्रोध स पागल होकर वे इस देश के नगरो को भूमिसात कर देंगे बस्तियो को उजाड देंगे और खून की नदियाँ बहा देंगे। चत्य और विहार भी उनकी क्रोधाग्नि स बचे नही रह सकेंगे। क्या तुम प्रियदर्शी राजा अशोक की उस ग्लानि को भूल गए जिसकी अनुभूति उन्हे कलिङ्ग के युद्ध मे हुई थी ? युद्ध कसा भयकर और अशोभन होता है, श्रावक ? युद्ध का विचार तक भी मन म न लाओ।

'तो फिर क्या हम कपिश-गान्धार पर यवनो का आधिपत्य स्थापित हो लेने द ।" सुभागसेन ने प्रश्न किया।

कपिश गान्धार अब भी तो स्वतन्त्र नही हैं, श्रावक ! पहले कभी ये अवश्य स्वतन्त्र थ। पर मौर्यों ने इन्हें जीतकर अपने अधीन कर लिया। तुम उन्ही की ओर से इनका शासन करने के लिए नियुक्त हो। तुम मगध क निवासी हो, मौय राजकुल के हो। कपिश-गान्धार क लिए तो तुम विदेशी ही हो। कोई सौ साल हुए जब कपिश और गान्धार वस्तुत स्वतन्त्र थ। इनके अपने राजा थे, अपनी सनाएँ थी और अपनी पौर जानपद सभाएँ थी। यदि अब इन्हे यवनो ने मौर्यों स जीत लिया तो इनकी स्थिति म क्या अन्तर आएगा श्रावक ! तुम भी तो मौय सम्राट के आदेशो के

इस जनपद का शासन कर रहे हो। तुम पूर्णरूप से स्वतन्त्र तो हो नहीं। यदि तुमने अन्तियोक की अधीनता स्वीकार कर ली तो उससे क्या बिगड़ेगा। यवनराज भी सद्धर्म के प्रति आदर रखता है। तुम मौर्यों के अधीन रहे तो क्या और अन्तियोक के अधीन हुए तो क्या ?

पर हिमालय से समुद्र पर्यन्त सहस्र योजन विस्तीर्ण जो यह विशाल देश है वह आर्यों की भूमि है स्थविर ! चाणक्य ने इस आर्य भूमि को इसी प्रयोजन से एक शासनसूत्र में संगठित किया था ताकि कोई विदेशी शत्रु इस पर आक्रमण करने का साहस न कर सके। इसकी स्वतन्त्रता अक्षुण्ण रहनी ही चाहिए, तभी आर्यों के धर्म और संस्कृति का उत्कर्ष सम्भव है। चन्द्रकीर्ति ने कहा।

तुम उस ब्राह्मण की बात कह रहे हो जो सद्धर्म का विरोधी था। उसने आर्यों के शासन को हिमालय से समुद्र पर्यन्त विस्तीर्ण इस भूखण्ड तक ही सीमित कर देने की बात सोची थी। पर हमारा धर्म-साम्राज्य तो आज सम्पूर्ण सभ्य संसार में विस्तीर्ण है। कौन-सा देश है जहाँ हमारे चैत्यों और विहारों की सत्ता न हो, जहाँ श्रमण और भिक्षु निश्चिन्तता के साथ सद्धर्म के पालन में तत्पर न हों, जहाँ प्रतिदिन उपोसथ न होता हो। यवनों को तुम क्यों पराया समझते हो, श्रावक ! यह सही है कि अभी उन्होंने तथागत की मध्यमा प्रतिपदा को अविकल रूप से नहीं अपनाया है। पर भारत में भी तो ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो मिथ्या सम्प्रदायों और पाषण्डों के अनुयायी हैं। यवनों को भारत में आने दो। इससे सद्धर्म को लाभ ही होगा। वे हमारे निकट सम्पर्क में आएँगे तथागत के उपदेशों का श्रवण करेंगे और धीरे धीरे बुद्ध धर्म और संघ में आस्था रखने लगेंगे। धर्म विजय में इससे सहायता ही मिलेगी।

'पर यवनों के सम्मुख घुटने टेक देना क्या क्षत्रियों की मर्यादा के विरुद्ध नहीं होगा स्थविर !

'यह मत भूलो श्रावक तथागत बुद्ध क्षत्रिय कुल में ही उत्पन्न हुए थे। यदि तुम हिंसा को ही क्षात्रधर्म समझते हो तो यह तुम्हारी भूल है। धर्म की बात तुम नहीं समझ सकोगे। अच्छा यह विचार करो कि क्या तुम्हारे पास इतनी सेना है जो यवनों को परास्त कर सके ?

"हमारी सैय शक्ति तो अब क्षीण हो चुकी है स्थविर !"

"तो फिर किस भरोसे तुम यवनो से युद्ध करना चाहते हो ? व्यथ जन-सहार से क्या लाभ होगा ? जा थोडे-बहुत सनिक तुम्हारे पास हैं वे बात की बात म मौत के घाट उतार दिए जाएग। पर उन से युद्ध करते हुए यवन लोग क्रोध म पागल हो जाएँगे। उनकी क्रोधाग्नि जब एक बार भडक उठेगा, ता उसे शात कर सकना कठिन हा जाएगा। यह सारा देश उनकी क्रोधाग्नि म भस्म हो जाएगा।"

'ता फिर आपका क्या आदश है स्थविर !" सुभागसेन ने प्रश्न किया।

"तुम अभी से यवन सना का स्वागत करने की तयारी प्रारम्भ कर दो। अपने राजदूत आज ही पश्चिम की ओर भेज दो। व शीघ्र से शीघ्र यवनराज स भेंट करें और उनसे यह निवेदन कर दें कि तुम यवनराज की अधीनता स्वीकार करन का उद्यत हा। तुम्हारा हित इसी म है, श्रावक ! केवल तुम्हारा ही नही, अपितु कपिश-गाधार का भी।'

आपकी आना शिराधाय है स्थविर !

'चिरायु हा श्रावक ! तथागत तुम्हारा कल्याण करें ! बुद्ध, धम और सघ म तुम्हारी आस्था सदा अक्षुण्ण रहे। तुमने जिस माग का अनुसरण करन का निणय किया है, वही सद्धम के अनुरूप है। हिंसा अत्यन्त गह्य होती है श्रावक ! धम द्वारा यवनो को जीतन का प्रयत्न करो शस्त्रो द्वारा नही।"

कुमार सुभागसेन न युद्ध के बिना ही यवनराज अतियोक की अधीनता स्वीकार कर ली। यवन सेनाआ ने बडा धूम धाम के साथ पुष्कलावती म प्रवश किया। उनके स्वागत के लिए राजमार्गों पर तोरण बनाए गए, मगलघट स्थापित किए गए और पुष्पमालाआ से सारी नगरी को सजाया गया। अतियोक और एवुथिदिम के स्वागत के लिए एक विशाल सभा का आयोजन किया गया। स्थविर सारिपुत्र भी उसमे उपस्थित हुए। यवन-राजाआ का स्वागत करत हुए गम्भीर वाणी म उन्होंने कहा—

यह तथागत बुद्ध का दश है यवनराज ! इस देश के निवासी युद्ध से घणा करते है शाति और अहिंसा को जीवन का मूल मत्र मानत हैं, किसी के प्रति द्वेष नही रखते सबसे प्रेम करते है और धम म विश्वास

थे, न सुरापान और न हिंस्र पशुओं की लड़ाई। पर अनेक प्रकार की प्रेक्षाएँ अब भी इन समाजो म प्रदर्शित की जाती थी। यवन सैनिक दिन भर प्रेक्षाएँ देखते और सायं होते ही नृत्यशालाओं मे जा बैठते। रात भर सुरापान करते, संगीत सुनते नृत्य करते और गणिकाओं से आमोद प्रमोद करते। पुष्कलावती के निवासी उनके सम्पर्क म आने से बचने का प्रयत्न करते, और उनसे भय अनुभव करते। कोई कोई यवन संघाराम म जाकर तथागत बुद्ध और बोधिसत्वों की मूर्तियों का दर्शन भी करते। स्थविर सारिपुत्र को इससे परम संतुष्टि होती।

पुष्कलावती म विश्राम करते हुए जब दस दिन बीत गए, तो सम्राट् अंतियोक ने बाल्हीकराज एवुथिदिम और यवन सेना के प्रधान सेनानायकों को अपने पटमण्डप म बुलाया। सबके उपस्थित हो जाने पर उन्होंने कहा—

सिकन्दर और सल्युकस भारत की विजय के जिस कार्य को अधूरा छोड़ गए थे, उसे अब हम पूरा करना है। अब हमें शीघ्र सिंधु नदी की ओर प्रस्थान कर देना चाहिए। क्या हमारी सेना तैयार है?

'इस देश की विजय के लिए सेना की क्या आवश्यकता है यवनराज! केकय अभिसार वाहीक आदि सवत्र सारिपुत्र जैसे स्थविर विद्यमान हैं। वे हमारा स्वागत करने के लिए उद्यत हैं। धर्म भी कैसी उत्कृष्ट मदिरा है जिसका पान कर मनुष्यों को अपने कर्तव्य-अकर्तव्य का बोध ही नहीं रह जाता। पुष्कलावती म कुछ दिन और रहकर बौद्धधर्म के प्रति सम्मान प्रदर्शित कर दीजिए। संघाराम को कुछ दान-दक्षिणा दे दीजिए और एक नया चैत्य बनवा दीजिए। स्थविर, श्रमण और भिक्षु इससे कृतकृत्य हो जाएँगे। समझने लगेंगे कि धर्म द्वारा यवनों को जीत लिया गया है। केकय, अभिसार, वाहीक—सवत्र हमारे दान-पुण्य की कीर्ति फैल जाएगी। वहां के स्थविर भी अपने-अपने प्रदेशों के शासकों को हमारी अधीनता स्वीकार कर लेने के लिए उसी प्रकार प्रेरित करने लगेंगे जैसे यहां पुष्कलावती म स्थविर सारिपुत्र ने किया था। एवुथिदिम ने मन्द हास्य के साथ कहा।

यदि अनुमति हो, तो मैं भी कुछ निवेदन करूँ, सम्राट्! सेनापति होरोअस ने कहा।

'कहो, तुम्हें क्या कहना है?'

"मुझे अपने गूढ़ पुरुषों से ज्ञात हुआ है कि पुष्यमित्र नाम का एक सैनिक वाहीक देश के गणराज्यों को यवन सेना का सामना करने के लिए उकसा रहा है। उसने एक अच्छी बड़ी सेना भी संगठित कर ली है। मालव, क्षुद्रक, कठ, आग्रेय, रोहितक आदि जिन गणों ने सिकन्दर से डटकर युद्ध किया था, वे अब भी अपनी-अपनी सेनाओं के पुनः संगठन में तत्पर हो गए हैं। युद्ध के बिना वाहीक देश को जीत सकना असम्भव है सम्राट! युद्ध की पूरी तैयारी करके ही हमें सिंधु नदी को पार करना चाहिए।

क्या वाहीक देश की जनता पर स्थविरों का प्रभाव नहीं है सेनापति!' एवुथिदेम ने प्रश्न किया।

है क्यों नहीं? पर वाहीक के निवासी अब तक भी अपने प्राचीन सनातन धर्म के प्रति आस्था रखते हैं। शिव, चण्डी और दुर्गा की उपासना उनमें अब तक भी प्रचलित है। उनकी सैनिक परम्परा अभी नष्ट नहीं हुई है। श्रमणों और भिक्षुओं का आदर वे अवश्य करते हैं, उन्हें दान-दक्षिणा द्वारा संतुष्ट भी करते रहते हैं। पर अपनी पुरानी परम्पराओं को उन्होंने त्याग नहीं किया है। पुष्यमित्र ने उन्हें युद्ध के लिए तैयार कर लिया है।

तो फिर युद्ध ही सही। तुरन्त यवन सेना को तैयार होने का आदेश दे दो। शीघ्र सिंधु नदी की ओर प्रस्थान कर दिया जाए। देखें पुष्यमित्र की सेना में कितनी शक्ति है।' अ[illegible]यार ने आवेश में कहा।

विशाल यवन सेना निरन्तर पूर्व की ओर बढ़ती गई। मार्ग के नगरों, ग्रामों और बस्तियों का ध्वंस करती हुई जब वह सिंधु-तट पर पहुँची, तो उसने देखा कि नदी के परले पार एक सेना उसका मार्ग रोकने के लिए खड़ी है और नदी के पार उतरने के सब मार्ग अवरुद्ध हैं।

सिन्धुतट का युद्ध

[illegible] और उसके साथी उसके [illegible] ओर निरन्तर [illegible] [illegible] मार्ग में

दिखाई पड जाता, रात्रि के विश्राम के लिए वे वही पर ठहर जाते। दिव्या तव अपना सनिक वेश उतारकर रख देती, और पत्तन की वीथिया मे एक गीत गाती हुई घूमना प्रारम्भ कर देती। इस गीत का भावाथ इस प्रकार था—

हिमालय की उत्तुग शिखाएँ तुम्हारा आह्वान कर रही हैं, आयभूमि सकट मे है।

कुभा और क्रमु नदिया तुम्हें बुला रही है आर्यों के रक्त स उनका जल लाल हो गया है।

वक्षु क तट स एक भयकर आँधी उठी है जो वडे वेग स दक्षिण-पूव की ओर वढ रही है, आयभूमि सक्ट म है।

म्लेच्छ हमारे देवमदिरा का अपवित्र कर रहे हैं। हमारा धम सक्ट म है। शिव विष्णु जयन्त और अपराजित तुम्हें बुला रहे हैं।

वीरो नीद से उठो। अब सोने का समय नही है। धनुप-वाण लेकर हमारे साथ चल पडो।

यवनो न हिन्दूकुश को पार कर लिया है आयभूमि सक्ट म है।

चन्द्रगुप्त को स्मरण करो यवन जिसके नाम से थर थर कापा करते थे।

सिन्धु और वितस्ता तुम्ह बुला रही है, कही म्लेच्छ उन्ह भी अपवित्र न कर दें।

वीरो नीद से उठो। वरछे तलवार लकर हमार साथ चल पडो।

दिव्या के इस गीत को सुनकर युवका का खून खौलने लगता, सकडो वीर पुष्यमित्र की सेना मे सम्मिलित हो जाते। माताए पुत्रा के, वहनें भाइया के और पत्नियाँ पतिया के माथे पर अपने रक्त से तिलक लगाकर कहती— पीठ दिखाकर न लौटना घर तभी आना जव शत्रुआ का सहार हो जाए। हमारी मान मर्यादा तुम्हार हाथा म है। अपन कुल का कलकित न करना। चम्बल की घाटी म दस्युओ के कितने ही समूह दिव्या के गीत का सुनकर पुष्यमित्र के साथ हो गए और कितनी ही सनिक श्रेणिया ने

यवनो का सामना करने के लिए उसके साथ चलना स्वीकार कर लिया। सेना के व्यय के लिए पुष्यमित्र को धन की भी काइ कमी नही रही। वह जहाँ भी जाते जनता उत्साहपूवक उनका स्वागत करती और धन धाय के ढेर लगा दती। भारत के लोगो म न देशभक्ति की कमी थी और न वीरता की। उ है केवल एक सुयोग्य नता की आवश्यकता थी। पुष्यमित्र के रूप मे अब उ हे एक ऐसा नेता प्राप्त हो गया था जिसपर उनका अगाध विश्वास था।

मथुरा और इ द्रप्रस्थ होती हुई पुष्यमित्र की सेना जब अग्रादक नगरी पहुँची, तो उसके सनिको की सख्या पचास हजार तक पहुँच गई थी। आग्रेय जनपद की यह नगरी अपने धन वभव के लिए भारत भर म प्रसिद्ध थी। उसके वणिक देश विदेश म दूर-दूर तक यापार के लिए आया-जाया करते थे। अग्रादक के समीप ही भद्र और रोहितक नाम के नगर थे। वे भी अत्य त सम्प न और समृद्ध थे। आचाय दण्डपाणि ने पुष्यमित्र को परामश दिया कि इनम कुछ दिन विश्राम करके फिर आग बढा जाए। उ होने कहा—

दखो वत्स ? स यबल के समान कोष बल का भी बहुत महत्त्व है। अग्रोदक रुककर हमे कोष बल के सचय के लिए प्रयत्न करना चाहिए।

पर हम तो शीघ्र ही सि धुतट पहुँचना है आचाय ! यवन सेनाएँ बाल्हीक नगरी से प्रस्थान कर चुकी हैं। शीघ्र ही व हि दूकुश को पार कर लेंगी। सुभागसेन स मुझे कोई भी आशा नही है। देर करने से क्या लाभ होगा आचाय !

नीतिकारो के इस म त य को स्मरण करो कि राजाओ की शक्ति कोषबल पर ही आश्रित होती है। वाहीक देश म वीरो की कोई कमी नही है। कठ क्षुद्रक मालव मद्रक आदि जनपदो की सनिक-परम्परा अभी भलीभाँति सुरक्षित है। पर वहाँ धन प्राप्त कर सकना सम्भव नही होगा। यवन सेना को परास्त करने क लिए हमारी सना म भी कम स कम दो लाख सनिक होने चाहिएँ। इन सनिको के लिए अस्त्र शस्त्र चाहिएँ, कवच चाहिएँ शिरस्त्राण चाहिएँ घोडे और हाथी चाहिए और साथ ही भोजन तथा वस्त्र भी। ये सब धन द्वारा ही प्राप्त हो सकेंगे। अग्रादक के वणिक न

केवल धनी हैं अपितु आयभूमि और आयधम के प्रति आस्था भी रखत हैं। देश और धम की रक्षा के लिए धन प्रदान करने मे वे कभी सकोच नही करते। हमे कुछ दिन यहा ठहरना चाहिए, और अपने कापबल म वद्धि करनी चाहिए।'

आप ठीक कहते हैं, आचाय ! पर अग्रोदक स धन प्राप्त कर सकना किस प्रकार सम्भव होगा ?'

देखो वत्स ! आग्रेय जनपद की कुलसभा अभी नष्ट नही हुई है। आग्रेया के कुलमुख्य अव तक भी सभा मे एकत्र होते हैं और परस्पर मिल कर सब बाता का निणय करते हैं। हम उनकी सभा म उपस्थित होकर उन्हे देश पर आए हुए सकट का बोध कराएँगे।'

अगले दिन प्रात आचाय दण्डपाणि और पुष्यमित्र आग्रेय जनपद की कुलसभा म उपस्थित हुए। श्रेष्ठी धनदत्त ने आसन ग्रहण करने के लिए उनसे सादर अनुरोध किया, और हाथ जोडकर कहा—

"आपके दशन स हम कृताथ हुए आचाय ! कहिए, क्या आज्ञा है ?

देश पर जो घोर सकट उपस्थित हुआ है उसे तो आप जानते ही होग श्रेष्ठि !'

"हा, आचाय ! हमारे कुछ साथ कपिश-गान्धार और वाहीक से वापस आए हैं। उनके साथवाहो स सब समाचार हम ज्ञात हो चुके है। पर शत्रु से देश की रक्षा करना तो शासन-तत्र का काय है आचाय ! जब हमारा जनपद स्वतन्त्र था, तब हमारे नागरिकों ने भी सिकन्दर की सेना क विरुद्ध युद्ध किया था। अपनी स्वतन्त्रता के लिए उन्होने प्राणो की बाजी लगा दी थी। पर अब तो स्थिति बदल चुकी है। हम मौर्यों के अधीन हैं। यह सही है कि हमारे धम, चरित्र और व्यवहार मे मौय शासक कोई हस्तक्षेप नही करते। पर चिरकाल स हमार युवकों को शस्त्र धारण करने का अवसर नही मिला है। उनकी सनिक परम्परा अब नष्ट हो चुकी है।'

'हम आपस सनिक नही चाहिएँ, श्रेष्ठि ! सहस्रो युवक हमारी सना म सम्मिलित हो चुके हैं। वाहीक देश म हम यथेष्ट सनिक मिल जाएँगे। पर धन के बिना हमारा काम चल सकना असम्भव है। अग्रोदक के वणिक हम धन अवश्य प्रदान कर सकते है। आयभूमि पर जो घोर सकट उपस्थित

हुआ है, उसका निवारण करने के लिए हम धन की भी उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि सैनिकों की। यवनों के आक्रमण के कारण न हमारा धर्म सुरक्षित है, न धन और न जीवन। यदि यवनों की बाढ़ को मार्ग में ही न रोक दिया गया तो इस आर्यभूमि की कोई भी नारी इस्मत हुए बिना नहीं रहेगी। अग्रोदक की ये विशाल अट्टालिकाएँ, ये भव्य प्रासाद, ये समृद्ध पण्यशालाएँ और ये देव मन्दिर सब भूमिगत हो जाएँगे। यवन लोग बड़े क्रूर हैं श्रेष्ठि! न वे स्त्रियों की मान मर्यादा का महत्त्व देते हैं और न बच्चों के जीवन को। वे जहाँ भी जाते हैं सहनहात सेना को उजाड़ देते हैं नगरों को आग लगा देते हैं बच्चों और स्त्रियों का अपहरण कर उन्हें दास दासियों के रूप में बेच देते हैं और सब धन-सम्पत्ति लूट लेते हैं। यवन लोग लाखों आर्य महिलाओं को बाल्हीक पार्थिव और सीरिया ले जाएँगे और पथचत्वरों पर खड़ा करके उन्हें नीलाम करेंगे—मूक पशुओं के समान। क्या यह सब आप सहन कर सकेंगे श्रेष्ठि! इस घोर संकट में भारतभूमि की रक्षा कर सकना तभी सम्भव है जब हम अपना तन मन और धन—सर्वस्व को न्यौछावर करने के लिए उद्यत हो जाएँ। क्या धन द्वारा आप हमारी सहायता नहीं करेंगे?

आपको कितना धन चाहिए आचार्य!'

'यह समय हिसाब करने का नहीं है, श्रेष्ठि! आपके जनपद में जो अपार धनराशि संचित है उस सबको भारत की पुण्यभूमि की रक्षा के लिए आर्य महिलाओं की मान मर्यादा को सुरक्षित रखने के लिए और देवमन्दिरों को म्लेच्छों द्वारा अपवित्र होने से बचाने के लिए अर्पित कर दो।'

श्रेष्ठी धनदत्त ने सब कुलमुख्यों के साथ मिलकर विचार विमर्श किया। कुछ समय के अनन्तर वह आचार्य दण्डपाणि के पास आए और हाथ जोड़ कर बोले—

एक कोटि सुवर्ण निष्क और दस कोटि कार्षापण आपके चरणों में समर्पित है आचार्य! स्वीकार करें। आवश्यकता पड़ने पर हम और भी अधिक सेवा करने को उद्यत हैं।

साधु साधु! आग्रेय गण से मुझे यही आशा थी। देश और धर्म पर

सक्ट आने पर अग्रोदक के ,वणिक अपने कनव्य का पालन करने के लिए सदा उद्यत रहत हैं ।'

दिव्या भी इस समय निष्क्रिय नहीं थी । श्रेष्ठियो के प्रासादो मे जाकर वह आग्रेय महिलाओ को आस न सक्ट क सम्ब ध म सचेत करने म तत्पर थी । उसकी प्रेरणा से स्त्रिया ने अपने आभूपण उतारकर सनिका की महा यता के लिए प्रदान किए और वहुत-सी युवतिया सेना म परिचारिका के रूप मे काय करने को उद्यत हो गइ । रोहितक और भद्र के श्रेष्ठियो ने भी आग्रेया का अनुसरण किया, और इन वार्तोपजीवी जनपदा से पुष्यमित्र को इतनी धन सम्पदा प्राप्त हो गई जिसके द्वारा वाहीक देश से नई सेना को सुगमता से सगठित किया जा सकता था ।

अग्रोदक म अपने काय को समाप्त कर दण्डपाणि, पुष्यमित्र और दिव्या ने अपनी सना के साथ वाहीक देश की आर प्रस्थान कर दिया । अब उनके सम्मुख प्रधान काय भारत की स यशक्ति का पुनरुद्धार करना था । वाहीक देश म वीरा की कोई कमी नही थी । च द्रगुप्त मौय ने जिस सेना की सहायता से न दकुल का विनाश कर मगध पर अपना आधिपत्य स्थापित किया था और सल्युक्स जसे यवन आक्रा ता को परास्त कर हि दू कुश पवतमाला तक विस्तीण विशाल मौय साम्राज्य की स्थापना की थी, उसके वहुसख्यक सनिक वाहीक देश के ही थे । पुष्यमित्र अग्रोदक से मालव जनपद मे गए । मालव लोग वीरता, साहस और शौय मे अद्वितीय थे । मौर्यों की अधीनता व स्वीकार कर चुके थे पर उनकी गणसभा अब भी विद्यमान थी । अपने जनपद के चरित्र और व्यवहार का वे स्वय निर्धारण करते और सनातन परम्परा के अनुसार अपने देवी-देवताआ का पूजन किया करते । मालवा ने बौद्ध धम को स्वीकार नही किया था । न वहा कोई सघाराम था और न कोई चत्य । कुछ श्रमण और भिक्षु वहाँ अवश्य विद्यमान थे पर सवसाधारण जनता अभी ब्राह्मण पुरोहिता क ही प्रभाव म थी ।

आचाय दण्डपाणि मालव जनपद के गणमुख्य विश्वभूति से जाकर मिले । आचाय का अभिन दन करत हुए विश्वभूति ने कहा— हमारा अहोभाग्य है जो गोनद आश्रम के प्रसिद्ध आचाय हमारे जनपद म पधारे

'दशाण देश के गोनद नामक स्थान पर आचाय पतञ्जलि का जो आश्रम है उसका नाम आप सबने अवश्य सुना होगा। हमारे वाहीक देश से भी बहुत से छात्र वहाँ विद्याध्ययन के लिए जाते हैं। पुरातन भारतीय शास्त्रा विद्याओ और शिल्पा के अध्ययन का इससे बडा केन्द्र इस समय भारतभूमि म अन्य कोई नही है। हमारा सौभाग्य है कि इस आश्रम के अन्यतम आचाय श्री दण्डपाणि आज हमारे बीच मे विद्यमान है। ये दण्ड नीति के प्रकाण्ड पण्डित है और राजशास्त्र के प्रसिद्ध प्रवक्ता हैं। आप उनके प्रवचन को सुनने के लिए उत्सुक होगे। मैं आचायपाद से प्राथना करता हूँ, कि मालवगण का माग प्रदर्शित करें।'

आचाय दण्डपाणि न कहा—'मैं आज किसी व्याख्यान, उपदेश या प्रवचन के लिए आपके सम्मुख उपस्थित नही हुआ हूँ। आप यह सुन ही चुके होंगे कि यवन राज्यो की सम्मिलित सैन्यशक्ति भारतभूमि की ओर वायुवेग स अग्रसर हो रही है। शीघ्र ही हमारी यह आयभूमि यवनो द्वारा आक्रान्त हो जाएगी। हम सोचना है कि इस सकट से किस प्रकार स्वदेश की रक्षा की जाए। यवनो का सामना हम अपनी सेना द्वारा ही कर सकते हैं। पर मौय शासनतन्त्र न सैन्यशक्ति की पूणरूप से उपेक्षा कर दी है। हम उस पर भरोसा नही कर सकते। पर साथ ही हमारे लिए यह भी सम्भव नही है कि अपने देश को शत्रुओ द्वारा आक्रान्त हो लेने दें। यवनो से आय भूमि की रक्षा करने के लिए मेरा शिष्य पुष्यमित्र जो महान् आयोजन कर रहा है, मेरा अनुराध है कि आप सब उसमे सहायक हो। मुझे ज्ञात है कि प्रत्यक मालव स्वभाव से ही वीर और साहसी होता है। बचपन म ही वह सनिक शिक्षा प्राप्त करता है। इसी कारण यहा पथक् रूप स सैन्य-सगठन की कभी आवश्यकता अनुभव नही की गई। जब भी मालव जनपद पर कोई आपत्ति आई किसी शत्रु न उसकी ओर क्रूर दृष्टि से देखा, मालव युवक अस्त्र शस्त्र ग्रहण कर आत्मरक्षा के लिए रणक्षेत्र म उतर आते हैं। मालवो की यह पुरातन सनिक परम्परा अभी नष्ट नही हुई है। मैं चाहता हूँ कि आज भी मालव लोग यवनो का सामना करने के लिए सन्नद्ध हो जाएँ।'

दण्डपाणि का निवेदन समाप्त हो जाने पर गणमुख्य विश्वभूति ने कहा, 'मालवगण की सदा से यह परम्परा रही है कि **कुलवृद्ध** ग्रामणी और

अन्य सम्भ्रान्त नागरिक परस्पर मिलकर सब समस्याओं पर विचार विमर्श करें और बहुसम्मति से जो निर्णय हो, सब उसे स्वीकार करें। आचार्य दण्डपाणि ने जो विचार आपके सम्मुख प्रस्तुत किया है, उस पर आप निस्संकोच भाव से अपनी सम्मति प्रगट करें।

गणमुख्य की अनुमति प्राप्त कर कुलमुख्य इन्द्रवज्र अपने आसन से उठ कर खडे हुए और उन्होंने कहा मालवगण मेरी बात का श्रवण करें उस पर ध्यान दें, उस पर विचार करें। आचार्य दण्डपाणि के दर्शन कर हम अत्यन्त अनुगृहीत हुए हैं। पर प्रश्न यह है कि यवन आक्रमण से देश की रक्षा करने का उत्तरदायित्व किस का है, मौर्य सम्राट का या मालवगण का? एक सदी से भी अधिक हो गया जब से हमारा यह जनपद मौर्यों के अधीन है। हम मौर्य सम्राट को कर प्रदान करते हैं उसके राजशासन का पालन करते है। पर मौर्यों के शासनतन्त्र की आज क्या दशा है? राज्यकोष को स्थविरों, भिक्षुओं और मुनियों पर पानी की तरह बहाया जा रहा है। सैन्यशक्ति की उपेक्षा की जा रही है। मैं तो पहले भी अनेक बार आपके सम्मुख यह विचार प्रगट कर चुका हूँ कि मालवगण को तुरन्त अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा कर देनी चाहिए। मौर्य साम्राज्य के अन्तर्गत रहने से हम लाभ ही क्या है? कलिङ्ग और आन्ध्र मौर्यों के जुए को अपने कन्धे से उतारकर परे फेंक चुके हैं। वाहीक देश के जनपद उनका अनुसरण क्या न करें? यवनों के आक्रमण से हमे लाभ ही होगा। मौर्यों की रही-सही शक्ति भी अब नष्ट हो जाएगी और वाहीक देश के सब जनपद पहले के समान स्वतन्त्र हो जाएँगे। अपनी स्वतन्त्रता को पुनःस्थापित करना और उसकी रक्षा करना हमारा कर्तव्य है। यदि यवनों ने स्वतन्त्र मालवगण पर आक्रमण किया तो हम अवश्य उनका सामना करेंगे। पर मौर्यों के विकृत और निर्वीर्य शासनतन्त्र की रक्षा के लिए अपना रक्त हम क्या बहाएँ?

इन्द्रवज्र यह कहकर अपने आसन पर बैठ गए। अब ग्रामणी मातृविष्णु खडे हुए। उन्होंने कहा हमारा जनपद मौर्य साम्राज्य के अन्तर्गत अवश्य है। पर इसका क्या यह अभिप्राय है कि हम स्वतन्त्र नहीं हैं? क्या हम पहले के समान ही अपने धर्म चरित्र और व्यवहार का स्वयं निर्धारण नहीं करते? क्या हम गण-सभा में एकत्र होकर अपने जनपद के साथ सम्बन्ध

रखने वाले विषयों का पूर्ववत ही निर्णय नहीं करते ? क्या हम स्वयं अपने गणमुख्य का निर्वाचन नहीं करते ? मालव जनपद का शासन अब भी हमारे ही हाथों में है। आचार्य चाणक्य ने आर्यभूमि के अन्तर्गत सब जनपदों को एक सूत्र में केवल इस प्रयोजन से संगठित किया था, ताकि कोई विदेशी शत्रु इस पवित्र भारतभूमि को पदाक्रान्त न कर सके। क्या आप वह दिन भूल गए जब यवनराज सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया था ? कपिश, गान्धार, कैकय, अभिसार, कठ, मद्रक, आग्नेय—कोई भी जनपद उसके सम्मुख नहीं टिक सका था। तब हमने यह आवश्यकता अनुभव की थी कि अपने पड़ोसी क्षुद्रकगण के साथ मिलकर यवनों का सामना करें। परिणाम क्या हुआ ? क्षुद्रकों और मालवों की सम्मिलित शक्ति के सम्मुख सिकन्दर की एक न चली। यदि दो जनपद संगठित होकर यवनों को परास्त करने में समर्थ हो सके, तो भारत के सब जनपदों के संगठन का यह परिणाम अवश्यम्भावी है कि उसकी शक्ति अजेय हो जाए। आचार्य चाणक्य महान राजनीतिज्ञ थे। उन्होंने इस तथ्य को भलीभांति समझ लिया था कि जब तक भारत की राजशक्ति छोटे छोटे जनपदों में विभक्त रहेगी, विदेशी शत्रुओं के आक्रमण का भय भी बना रहेगा। मौर्य साम्राज्य के अन्तर्गत होते हुए भी भारत के प्राचीन जनपदों की स्वतन्त्रता अक्षुण्ण है। एक विशाल शासनतन्त्र के अंग हो जाने से इन जनपदों के लिए आत्मरक्षा कर सकना अब बहुत सुगम हो गया है। यह सही है कि मौर्य साम्राज्य में अब वह शक्ति नहीं रही है जो चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार के समय में थी। उसके सम्राट अब अकर्मण्य और पथभ्रष्ट हो गए हैं। पर क्या हम इस कारण अपने कर्तव्यों की उपेक्षा करने लग जाएँ ? यदि हम परस्पर मिलकर यवनों का प्रतिरोध करने के लिए तत्पर हो जाएं, तभी हमारी स्वतन्त्रता सुरक्षित रह सकती है। आचार्य दण्डपाणि ने जो विचार प्रस्तुत किए हैं मैं उनका समर्थन करता हूँ। मेरा प्रस्ताव है कि मालवगण सब सम्भव उपायों से पुष्यमित्र की सहायता करें।' देर तक इसी प्रकार विचार विमर्श होता रहा। अन्त में गणमुख्य विश्वभूति ने प्रस्ताव पर मत लिए। गणसभा के निर्णय की घोषणा करते हुए विश्वभूति ने कहा—

'मालव जनपद की गणसभा का यह निर्णय है कि यवनों से आर्यभूमि

की रक्षा करने के लिए आचार्य दण्डपाणि और पुष्यमित्र जो महान आयोजन कर रहे हैं उसमें हम पूर्ण रूप से सहयोग प्रदान करें। यद्यपि बहुमत द्वारा यह प्रस्ताव स्वीकृत हो चुका है अतः प्रत्येक मालव नागरिक का यह पुनीत कर्तव्य है कि वह तन मन धन से यवनों का प्रतिरोध करने में सहायक हो। मेरा आदेश है कि सब मालव युवक अस्त्र धारण कर पुष्यमित्र की सेना में सम्मिलित हो जाएँ। वृद्ध बालक और स्त्रियाँ भी इस सम्बन्ध में जो कार्य कर सकें उसका आदेश मैं समय समय पर देता रहूँगा।

दण्डपाणि को सम्बोधन कर विश्वभूति ने कहा आप निश्चिन्त रहें आचार्य ! मालव लोग अपनी गण सभा में जो भी निर्णय करते हैं प्रत्येक नागरिक अविकल रूप से उसका पालन करता है। कोई भी उसका उल्लंघन नहीं करता। कुलमुख्य सिंहविष्णु शीघ्र आपको यह सूचना दे देंगे कि कितने मालव युवक सेना में सम्मिलित होने की स्थिति में हैं। पर हमारे सैनिकों को तैयार होने में कुछ समय तो लग ही जाएगा। अस्त्र शस्त्र शिरस्त्राण और कवच आदि की सब व्यवस्था हम स्वयं करनी है। इसकी उत्तरदायिता आप पर नहीं होगी। आप हमें यह बता दीजिए कि मालव सेना को कहाँ पहुँचना है। शीघ्र से शीघ्र मालव सैनिक निर्दिष्ट स्थान पर आपकी प्रतीक्षा करेंगे।'

पुष्यमित्र से परामर्श कर दण्डपाणि ने कहा 'सिन्धु नदी के तट पर अम्बुलिम नामक जो पल्ली है उसी के घाट से भारत के साथ सिन्धु नदी को पार किया करते हैं। उसके सम्मुख परले पार क्रमसर है। वहीं हमें यवन सेना के मार्ग को अवरुद्ध करना है। मालव सेना को शीघ्र ही अम्बुलिम पहुँच जाना चाहिए।

आप निश्चिन्त रहें आचार्य ! मालव सेना आप से पहले ही अम्बुलिम पहुँच जाएगी।

मैं कृतकृत्य हुआ गणमुख्य ! मालवों से मुझे यही आशा थी। शत्रुओं से आर्यभूमि की रक्षा करने के पुनीत कार्य में मालव जनपद के वीर कभी किसी से पीछे नहीं रहे हैं।

सिंहविष्णु ने आचार्य दण्डपाणि को सूचित किया कि कम से कम तीस सहस्र मालव सैनिक यवनों से युद्ध करने को उद्यत हैं। दण्डपाणि इससे

सतुष्ट हुए। अब उन्होने क्षुद्रक जनपद की ओर प्रस्थान किया। क्षुद्रकों से सहायता का आश्वासन प्राप्त कर वह कठ मद्रक, शिवि, ग्लुचुकायन आदि अन्य जनपदों में गए। सर्वत्र उन्हें सफलता प्राप्त हुई। उनकी ओजस्वी वाणी से प्रेरणा प्राप्त कर वाहीक देश के सब गणराज्य तन मन धन से उनकी सहायता करने को उद्यत हो गए। अब पुष्यमित्र के पास न धन की कमी थी और न सैनिकों की। वाहीक देश के जो वीर उनकी सेना मे सम्मिलित हो गए थे उनकी सख्या दो लाख से भी अधिक थी। सिन्धु नदी के अम्बुलिम घाट पहुँचने पर पुष्यमित्र को यह सूचना मिली कि मौर्य साम्राज्य के उत्तर-पश्चिमी चक्र के शासक कुमार सुभागसेन ने यवनराज के सम्मुख आत्मसमर्पण कर दिया है। इससे उन्हें कोई आश्चर्य नहीं हुआ। सुभागसेन के पास न सैन्यशक्ति थी और न नीति बल। अब प्रश्न यह था कि सिन्धु नदी को पार कर कपिश गान्धार में यवनो से युद्ध किया जाए, या अम्बुलिम मे व्यूह रचना कर उनके आक्रमण की प्रतीक्षा की जाए। आचार्य दण्डपाणि के परामर्श से एक युद्ध समिति का निर्माण किया गया, जिसमें क्षुद्रक मालव मद्रक कठ आदि सब जनपदों के सेनानायकों को स्थान दिया गया। विचार विमर्श प्रारम्भ होने पर क्षुद्रक सेनापति व्याघ्रपाद ने कहा—

यहा प्रतीक्षा करने से कोई लाभ नही है। हम सिन्धु नदी पार कर तुरन्त पुष्कलावती पर आक्रमण कर देना चाहिए। यवन सैनिक अभी आमोद प्रमोद में व्यस्त है सुरा सुन्दरी के सेवन द्वारा अपनी थकान मिटाने में लगे हैं। हमारे अकस्मात आक्रमण से वे स्तब्ध रह जाएँगे। पुष्कलावती यहा से अधिक दूर नहीं है हमारी सेनाएँ शीघ्र वहा पहुँच जाएँगी।

मालवों के सेनानायक सिंहविष्णु ने इस विचार का समर्थन करते हुए कहा— गान्धार देश में ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो यवनों के विरुद्ध हमारी सहायता के लिए उठ खडे होंगे। कपिश-गान्धार के निवासी भी आर्य हैं। भारत की स्वतन्त्रता को वे भी महत्त्व देते हैं।

पर पुष्यमित्र इस प्रस्ताव के विरुद्ध थे। उन्होंने कहा—'आप यवनों की शक्ति को नहीं जानते, सेनापति! मैं कुछ समय वाल्हीक देश मे रह आया हूँ। यवन जहाँ कुशल योद्धा हैं, वहा साथ ही कूटनीतिज्ञ भी हैं।

उनक सत्री और गूढ़पुरुष सवत्र छाए हुए हैं। हमारी गतिविधि उनस छिपी नही रह सकती। ज्यो ही हम सिधु नदी का पार करेंगे इसकी सूचना यवनराज का मिल जाएगी। यवन सेनाए तुरन्त पुष्करावती स प्रस्थान कर देंगी। माग म कोई ऐसा स्थान नही है जहाँ उनकी गति का अवरुद्ध किया जा सके। अम्बुलिम क घाट पर व्यूह रचना करक यवनो का सुगमता से सामना किया जा सकता है। हमारे लिए यही माग प्रशस्त होगा।

मद्रक कठ और ग्लुचुकायन आदि क सनानायकों ने पुष्यमित्र का समथन किया। अन्त म यही निश्चय हुआ कि अम्बुलिम पत्तों के समीप स्कन्धावार डाल दिया जाए और सिधु क घाट क उत्तर दक्षिण और पश्चिम मे दो-दो योजन तक अपने गूढ़पुरुष नियुक्त कर दिए जाएँ जो मल्लाह कृषक वदहक मछियार और भिक्षु आदि क भेष बनाकर यवनो की गति विधि पर दृष्टि रखें। यह भी निर्धारित कर दिया गया कि धूम्र अग्नि शृगाल ध्वनि आदि के सकेतो द्वारा य गूढ़पुरुष सब सूचनाए स्कन्धावार को भेजते रह।

अम्बुलिम के घाट पर पुष्यमित्र की सेना क एकत्र होने का समाचार यवनराज अतियोक स छिपा नही रहा। उसे सुनकर वह बहुत उद्विग्न हुए। उन्होंने तुरन्त सघ स्थविर सारिपुत्त को अपने पट मण्डप म बुलाया। अति-योक की मुख मुद्रा देखकर सारिपुत्त ने कहा—

'कहिए कसे स्मरण किया यवनराज। सब कुशल तो है? आपके स्वागत-सत्कार म कोई कमी तो नही है?

आप तो कहते थे, स्थविर भारत के लोग अहिंसा म विश्वास रखत है युद्ध को गह्य और पाप मानते है। पर मैं यह क्या सुन रहा हू? सिधु नदी के तट पर भारतीय सेना युद्ध के लिए तयार खडी है।

सुना तो मैंने भी है यवनराज! वाहीक देश म तथागत के धम का अभी भलीभाँति प्रचार नही हुआ है। वहाँ बहुत स छोटे छोटे जनपद है जिनके निवासी अब तक भी मिथ्या देवी-देवताओ की पूजा करते हैं बुद्ध धम और सघ मे आस्था नही रखते, और हिंसामय याज्ञिक कमकाण्ड का अनुष्ठान करत हैं। वे अब भी ब्राह्मणो के प्रभाव मे हैं। पर उनकी क्या शक्ति है जो आपका सामना कर सकें!

'आप तो हमे उन पवित्र स्थाना का दशन कराने के लिए ले जाना चाहते थे जहा बुद्ध ने जम लिया, बोध प्राप्त किया धम चक्र का प्रवतन किया और अत में निवाण पाया। हम भी सोचते थे कि स्वय अपनी आँखा से देखें कि भारत के लोग किस प्रकार बुद्ध के अहिंसा माग का अनुसरण करने में तत्पर हैं। पर अब तो हम रणभेरी बजानी ही होगी।'

'तथागत की यही इच्छा है यवनराज ! आप से परास्त होकर बाहीक देश के सब मिथ्या सम्प्रदाय और पाषण्ड नष्ट हो जाएँगे। सद्धम की स्थापना का इससे उत्तम अवसर क्या हो सकता है ?

'क्या आप इन लोगा को समझा नही सकते ?'

'मैं दण्डपाणि को जानता हूँ। मरे साथ वह तक्षशिला मे रह चुका है। बडा धूत ब्राह्मण है। उसी न यह सब झझट खडा किया है। वहा करता है, कि लोहे को लोहा काटता है विष के प्रभाव को दूर करने के लिए विष का ही प्रयोग किया जाता है, शठ के प्रति शठता का ही बरताव करना चाहिए। अब उसे ज्ञात हो जाएगा कि युद्ध स कोई लाभ नही। आप कोइ चिन्ता न करें, यवनराज ! सद्धम के प्रभाव से भारत के लोगो मे युद्ध की परम्परा अब रही ही कहा है ? सौ साल बीत गए, इस देश मे लडाई हुई ही नही। कोई यह जानता तक नही कि युद्ध क्या होता है। आपके माग को रोक सकने की क्षमता भारत म अब है ही कहा ?

यवनराज का आदेश पाकर यवन-सना ने सिधु नदी की ओर प्रस्थान कर दिया। सिधु के तटवर्ती गाधार देश के सब नाविको को यह आज्ञा दे दी गई कि जो भी सयात्य नौकाएँ, प्रवहण, हिस्रिका, काष्ठ-सघात, वणु-सघात गण्डिका, प्लव आदि उपलब्ध हो, सब को अम्बुलिम घाट के सामने एकत्र किया जाए। गाधार देश मे जो भी हाथी अश्व, अस्त्र शस्त्र आदि मिल सके, उन सबको भी सिधु नदी के पश्चिमी तट पर ले जाया गया। अमावस्या की रात मे जब सवत्र अधकार छाया हुआ था यवन सना ने सिधु नदी को पार करने का प्रयत्न किया। पर उसे सफलता प्राप्त नही हो सकी। पुष्यमित्र की सेना अम्बुलिम घाट पर व्यूह रचना कर सनद्ध खडी थी। यवना की जो नौका आगे बढती, शतघ्नियो द्वारा बडे बडे पत्थर फेंककर उसे डुबो दिया जाता। जो यवन सनिक तर कर तट पर पहुँचने म समथ हो—

जाते, उन्हे भालो और बरछा से छेद दिया जाता। जो किसी प्रकार जीवित रहकर आगे बढते, उन्हे तलवार द्वारा टुकडे-टुकडे कर दिया जाता। दस दिन तक यह लडाई जारी रही। अन्त मे अन्तियोक को यह समझ मे आ गया कि पुष्यमित्र की सेना के सम्मुख सिन्धु नदी के पार उतर सकना किसी भी प्रकार सम्भव नही है। अम्बुलिम घाट के इस युद्ध मे पुष्यमित्र को अनुपम सफलता प्राप्त हुई। यवन सेनाएँ वाहीक देश में पदार्पण नही कर सकी, और वे वापस लौट जाने को विवश हो गई। यद्यपि कपिश गान्धार यवनो के आधिपत्य मे आ चुके थे, पर वाहीक देश की स्वतन्त्रता अक्षुण्ण रही। इसी युद्ध मे विजयी होने के कारण पुष्यमित्र को सेनानी का गौरवमय पद प्राप्त हुआ।

आचार्य दण्डपाणि का चिन्तन

जिस महान उद्देश्य को सम्मुख रखकर आचार्य दण्डपाणि और पुष्यमित्र ने गोनर्द आश्रम से प्रस्थान किया था वह अब पूर्ण हो चुका था। यवन सेनाएँ सिन्धु नदी के पार नही उतर सकी थी और आर्यभूमि यवनो से पदाक्रान्त होने से बच गई थी। अब दण्डपाणि को अपना भावी कार्यक्रम निर्धारित करना था। वह भलीभाति समझते थे कि यवन लोग शीघ्र ही पुन भारत पर आक्रमण करेंगे और आर्यभूमि को तब तक निरापद नही समझा जा सकता जब तक कि मौर्य शासनतन्त्र की सैन्यशक्ति का पुनरुद्धार न हो जाए।

अब हम क्या करना चाहिए आचार्य ! पुष्यमित्र ने प्रश्न किया।

हमारा कार्य अभी पूर्ण नही हुआ है वत्स ! शीघ्र ही हमे पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान करना होगा। मौर्य साम्राज्य की शक्ति क्षीण हो चुकी है उसमे नव जीवन के सञ्चार का कार्य अभी शेष है। मौर्य राजकुल के कुमार परस्पर युद्ध मे व्यापृत हैं। बौद्ध स्थविर शालिशुक जसे अकर्मण्य और निर्वीर्य कुमार को पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आसीन रखने के लिए कटिबद्ध हैं। यदि वे सफल हो गए तो भारत की शक्ति और भी अधिक

क्षीण हो जाएगी। सिन्धु-तट के युद्ध मे यवन लोग परास्त अवश्य हो गए हैं, पर उनकी शक्ति अभी नष्ट नही हुई है। शीघ्र ही वे एक बार फिर भारत पर आक्रमण करेंगे।'

'तो क्या हम इसी सीमान्त पर उनके नए आक्रमण की प्रतीक्षा करनी चाहिए?'

'नही, इससे कोई लाभ नही होगा। शासनतन्त्र का सञ्चालन हमारे हाथो म नही है। सेना का व्यय चलाने के लिए बहुत अधिक धन की आवश्यकता हाती है। यह धन हम वणिको से दान द्वारा प्राप्त नही कर सकते। जब तक भारत का शासनतन्त्र शक्तिसम्पन्न न हो जाए और उसे शत्रुओ को ध्वस करने के अपने कतव्य का बोध न हो जाए, आय भूमि की रक्षा कर सकना सम्भव नही होगा। जड को सीचे बिना पत्ता और शाखाआ का सिचन करने से कोई लाभ नही है वत्स! हम पाटलिपुत्र के शासन म शक्ति के सञ्चार का प्रयत्न करना चाहिए। यह तभी सम्भव है, जब कि मोग्गलान के षड्यन्त्र को सफल न होने दिया जाए। मौय कुमारा मे भववमा न केवल ज्येष्ठ होने के कारण राजसिहासन का अधिकारी है अपितु वह सुयोग्य और साहसी भी है। शालिशुक को पदच्युत कर भववमा को सम्राट बनाने म ही आय भूमि का हित है। यवना के आक्रमण का जो भय अकस्मात उपस्थित हो गया था, उसका अब अन्त हो चुका है। पर भविष्य म भी वे आयभूमि को आक्रान्त करन का साहस न करें इसके लिए यह आवश्यक है कि मौय साम्राज्य की शक्ति को सुदढ बनाया जाए।'

'क्यो न हम तुरन्त कपिश-गान्धार पर आक्रमण कर दें, आचाय! ये प्रदेश भी तो आय भूमि के ही अग है। क्या न अपनी सेना का उपयोग इनकी स्वतन्त्रता के लिए किया जाए?

अभी इसका समय नही आया है वत्स! कपिश गान्धार का शासन अब भी सुभागसेन के हाथो म है यद्यपि उसने यवनराज का आधिपत्य स्वीकार कर लिया है। यदि हम मौय साम्राज्य मे शक्ति का सञ्चार करने मे समथ हो गए तो सुभागसेन स्वयमेव उसके सम्मुख सिर झुका देगा। उसे पदच्युत कर किसी अन्य कुमार को उत्तर-पश्चिमी चक्र का शासक नियत कर सकना भी कठिन नही होगा। हमारे सम्मुख मुख्य काय

हुई है, आचाय !'

'इसमे निराशा की कोई बात नही है, वत्स ! राज्य की सेना म प्रधानतया तीन प्रकार के सनिक हुआ करते हैं, मौल भृत और आटविक। छोटे राज्यो मे मौल सनिको की सख्या अधिक रहती है। क्योकि जिस राज कुल का वहा शासन हो, वह अपनी सत्ता के लिए प्राय सजातीय और कुलीन सनिको के साहाय्य पर ही निभर करता है। पर ज्यो-ज्या राज्या का आकार अधिक विशाल होता जाता है, वे साम्राज्य का रूप धारण करने लगते हैं, तो वे केवल मौल सनिको पर ही निभर नही रह सकते। अपने कोपबल द्वारा तब वे भृत सनिको की बडी सेना सगठित करते हैं और आटविक सनिको की श्रेणिया का साहाय्य भी धन द्वारा प्राप्त कर लेते हैं। साम्राज्या की शक्ति का आधार ये भृत और आटविक सेनाएँ ही होती हैं। वाहीक देश के य गणराज्य वार्ताशस्त्रोपजीवि हैं। कृषि, पशुपालन और वाणिज्य इनके निवासियो के स्वधम हैं। इन्ही स ये अपना निर्वाह करते है। शत्रु से अपने जनपद की रक्षा करन के लिए ये शस्त्रधारण अवश्य कर लेते हैं पर सनिक सवा इनका स्वधम नही है। आयभूमि अब एक विशाल साम्राज्य के रूप में सगठित हो चुकी है। उसकी रक्षा के लिए अब न मौल सनिको पर निभर रहा जा सकता है और न ऐसे व्यक्तिया पर जिनका स्वधम सनिक सेवा न होकर कृपक वदेहक आदि के काय हो। साम्राज्य की अपनी स्थायी सेना होनी चाहिए जिसके सनिको का स्वधम ही शत्रुआ से देश की रक्षा करना हो। ऐसी सेना भृत और आटविक ही हो सकती है। चाणक्य और चन्द्रगुप्त न कोटि-कोटि धन एकत्र कर जो भृत सेना सगठित की थी उसी की सहायता से उन्होने पहले नन्दराज को परास्त किया और फिर सेल्युकस का। अशोक और उसके उत्तराधिकारियो ने धमविजय की धुन मे भृत सेना की उपेक्षा कर भारी भूल की है। हम अब फिर से मौय साम्राज्य की सन्यशक्ति का सगठन करना है और किसी ऐसे कुमार को सम्राट पद पर अभिपिक्त करना है जो सन्यबल म विश्वास रखता हो। आयभूमि की रक्षा का यही एकमात्र उपाय है।

'मौय राजकुल म ऐसा कुमार तो भववमा ही है आचाय !'

'हा, वत्स ! पर मगध से जो समाचार आ रहे हैं वे अत्यन्त चिन्ता

जनक हैं। पाटलिपुत्र के राजसिंहासन के लिए गृहयुद्ध प्रारम्भ हो चुका है। बौद्ध संघ शालिशुक के पक्ष मे है। चातुरत संघ की शक्ति उपेक्षणीय नही है, तात! उसके पास अनत धन है। जनता भी स्थविरो और श्रमणो का आदर करती है। शासनतन्त्र की तुलना म सघ का सगठन बहुत सुदृढ है। वह जिसके पक्ष म होगा, उसकी शक्ति अवश्य बढ जाएगी।'

'पर बौद्ध स्थविर और भिक्षु अहिंसा मे विश्वास रखते हैं आचाय! क्या वे शालिशुक की सहायता के लिए हिंसा के प्रयोग म सकोच नही करेंगे?'

'मैं बौद्ध स्थविरो को भलीभाँति जानता हू वत्स! अनेक स्थविर मेरे सहपाठी रहे हैं। कुछ वष मैं तक्षशिला म भी अध्ययन कर चुका हूँ। पुष्कलावती का सघ-स्थविर सारिपुत्त मेरा सहपाठी है। ये बौद्ध स्थविर बुद्ध, धम और सघ क उत्कष के लिए हीन से हीन उपायो का प्रयोग कर सकते है। मुख से य चाहे कुछ भी क्या न कह, पर क्रिया म ये उचित अनुचित या कतव्य अकतव्य का विवक नही करत। भोजन म विष मिलाना, रूपाजीवाओ द्वारा हत्या, विषकन्याओ का प्रयोग चण्डपुरुषो की नियुक्ति आदि सब औशनस उपाय इन्हें स्वीकाय हैं यदि उनके द्वारा तथागत के धम क उत्कष म सहायता मिलने की सम्भावना हो। अहिंसा इनके लिए आवरणमात्र है। क्या तुम्ह ज्ञात नही कि बौद्ध विहारो म सब प्रकार के षडयन्त्र होते रहत हैं।'

तो क्या बौद्ध सघ शालिशुक की सहायता के लिए सैन्यशक्ति का भी प्रयोग करेगा?'

'हाँ वत्स! अवश्य करगा। मुझे यह समाचार प्राप्त हुआ है कि श्रावस्ती के जेतवन विहार के सघ-स्थविर मज्झिम एक सेना का सगठन प्रारम्भ भी कर चुके हैं। सघ के पास कोष-बल की कोई कमी नही है, वत्स! गृहस्थो और श्रावको ने धम के प्रति श्रद्धा के कारण जो अपार दान दक्षिणा सघ को प्रदान की है उसका उपयोग अब सैन्यशक्ति के लिए किया जाएगा और इस भृत सेना की सहायता स शालिशुक को सम्राट बनाया जाएगा। बौद्ध स्थविरो को न देश की रक्षा की चिन्ता है और न शत्रुओ को परास्त करने की। आयभूमि चाह विदेशियो स पदाक्रान्त हो जाए,

साम्राज्य चाहे खण्ड-खण्ड हो जाए, स्थविरों को इसका कोई उद्वेग नहीं होगा। ये तो केवल यह चाहते हैं कि संघ का उत्कर्ष हो और गाँव गाँव में उनका धर्म-साम्राज्य स्थापित हो जाए। भववर्मा के व यवन इसी कारण विरोधी हैं क्योंकि वह धर्मविजय की नीति में विश्वास नहीं रखता। उसका विरोध करने के लिए वे यवनों तक की सहायता प्राप्त करने में संकोच नहीं करेंगे। उनकी मनोवृत्ति को मैं भलीभाँति समझता हूँ वत्स !

तो फिर इस दशा में हमारा क्या कर्तव्य है आचार्य !

हम भी भृत सेना का संगठन करना चाहिए। दक्षिणापथ में मौर्यों की जो सेना है वह देवभूति के प्रति अनुरक्त है। देवभूति भववर्मा के पक्ष में है। पर यह सेना अधिक नहीं है। हम कम-से-कम एक लाख नये सैनिक अपनी सेना में भरती करने चाहिएँ।

पर इसके लिए तो बहुत धन की आवश्यकता होगी आचार्य !

यही तो समस्या है वत्स ! अग्रोदक के श्रेष्ठियों से जो धनराशि हमें प्राप्त हुई थी वह अब समाप्त हो चुकी है। यवनों के आक्रमण से आर्यभूमि की रक्षा के नाम पर इन श्रेष्ठियों से धन प्राप्त कर सकना कठिन नहीं था। पर मौर्य राजकुल के गृहकलह में ये भाग लेंगे इसमें मुझे सन्देह है। शान्ति शुक के विरुद्ध भववर्मा की सहायता के लिए ये धन प्रदान नहीं करेंगे।

पर अग्रोदक के श्रेष्ठी तो बौद्ध धर्म के अनुयायी नहीं हैं आचार्य ! आग्नेय जनपद में मैंने देखा था सर्वत्र देवी-देवताओं के कोष्ठ और मन्दिर विद्यमान हैं। उनमें गृहस्थों की भीड़ लगी रहती है। आर्यों के सनातन धर्म में आग्नेय लोगों की अगाध श्रद्धा है। क्या उन्हें यह नहीं समझाया जा सकता कि बौद्ध स्थविरों के कुचक्र के कारण आर्यभूमि को हानि पहुँच रही है ?'

देखो वत्स ! भारत के सर्वसाधारण गृहस्थ ब्राह्मणों और श्रमणों का समान रूप से आदर करते हैं सब धर्मों सम्प्रदायों और पाषण्डों के उपदेशों का श्रद्धापूर्वक श्रवण करते हैं और सबके धार्मिक अनुष्ठानों तथा पूजा पाठ के लिए उदारतापूर्वक दान-पुण्य करते हैं। इस देश की यही परम्परा है वत्स ! बौद्ध स्थविरों के मन में अन्य धर्मों के प्रति जो विद्वेष पाया जाता है गृहस्थों में उसका अभाव है। अग्रोदक के श्रेष्ठियों को बौद्धों के विरुद्ध उकसा सकना सम्भव नहीं होगा।

तो फिर क्या उपाय है, आचार्य !'

हम तुरत पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान कर देना चाहिए। पचास हजार सनिक हमारे साथ हैं ही। य सब विकट योद्धा हैं। माग म और सनिको को भी अपनी सेना म भरती करने का प्रयत्न किया जा सकता है। इन्द्रप्रस्थ अहिच्छत्र अयोध्या, काशी आदि नगरियो मे बहुत-से मन्दिर हैं। इनम भी बहुत धन-सम्पत्ति सचित है। पुरान समय के राजाओ ने समय-समय पर जो दान-दक्षिणा इन्हें प्रदान की थी वह अभी वहाँ सुरक्षित है। श्रेष्ठिया से भी इन्ह धन प्राप्त होता रहता है। हम इस धन का उपयोग करेंगे। शालिशुक और भववर्मा के युद्ध ने एक साम्प्रदायिक सघष का रूप प्राप्त कर लिया है। शव वष्णव और शाक्त मन्दिरो के पुरोहित और पुजारी अवश्य हमारी सहायता करेंगे। हम शीघ्र स शीघ्र पाटलिपुत्र पहुँच जाना चाहिए ताकि हमारी सेना भववर्मा के काम आ सके। कल प्रात ही सेना को मिघुनट से प्रस्थान करन का आदश दे दो।'

आपकी आज्ञा शिरोधाय ह आचाय !

युवराज भववर्मा की हत्या

कुक्कुट विहार के गभगह म सघ-स्थविर मोग्गलान गूढ मन्त्रणा मे निमग्न थ। जतवन विहार क स्थविर मज्झिम भी पाटलिपुत्र पहुँच चुके थे और मोग्गलान के साथ एक उच्च आसन पर विराजमान थे। अनेक सत्री और गूढपुरुष भी वहा उपस्थित थे।

यह युद्ध तो शीघ्र समाप्त होता दिखाई नही देता, स्थविर !' मज्झिम न कहा।

'श्रावस्ती म जो सेना आपने सगठित की थी, वह सोण नदी को पार कर चुकी है। पर देवभूति के सनिक विकट योद्धा हैं। वे उसे आगे नही बढ़ने दे रहे है। पाटलिपुत्र की आ तवशिक सेना को चिरकाल से लडाई का अवसर ही नही मिला है। उसके सनिको का युद्ध का अभ्यास नहीं रहा है। श्रावस्ती से जो नई सेना आई है उसके सैनिको म भी युद्ध की परम्परा का

अभाव है। देवभूति को परास्त कर सकना उनकी शक्ति म नही है।' मोग्गलान ने कहा।

'यदि आज्ञा हा, ता मैं भी कुछ निवेदन करू स्थविर ' सत्रियो के आचाय निपुणक ने कहा।

'हाँ, हाँ, क्या कोई नया समाचार है ?'

मेरे एक सत्री ने सूचना दी है कि पुष्यमित्र एक बहुत बडी सेना के साथ वायुवग स पाटलिपुत्र की ओर चला आ रहा है। उसकी सेना म पचास हजार से भी अधिक सनिक हैं।

यह पुष्यमित्र कौन है ?

'वही जिसने सि धु नदी क तट पर यवन सेनाओ को परास्त किया था। सद्धम का वह कट्टर शत्रु है स्थविर ' वह पुराने याज्ञिक धम का अनुयायी है। उसक साथ दण्डपाणि नाम का एक ब्राह्मण भी है। सुना है कूटनीति म वह अत्य त कुशल है।

यदि यह सेना भी पाटलिपुत्र पहुच गई, ता हमारा काय बहुत कठिन हो जाएगा। एक अ य सत्री ने कहा।

'कूटनीति मे मैं किससे कम हूँ ? यदि स यशक्ति द्वारा भववर्मा का परास्त नही किया जा सकता तो कूटनीति से ही सही। मोग्गलान ने आक्रोश के साथ कहा।

'हाँ, स्थविर ' कोई ऐसा उपाय कीजिए जिसस भववर्मा रूपी कण्टक माग से दूर हा जाए। न रहगा बास और न बजेगी बासुरी। निपुणक ने कहा।

'पर केवल भववर्मा की हत्या स ही हमारा उद्देश्य पूण नही होगा। देवभूति भी तो राजकुमार है। सद्धम म वह भी श्रद्धा नही रखता। शालिशुक के विरोधी उसी को सम्राट घोषित कर देंगे।

'तो क्या न इन दोना की ही हत्या कर दी जाए ?

'हाँ, यही उचित होगा। सना के भरोसे हम कब तक बठ रह सकते है ? युद्ध मे विजय पाने के लिए कूटनीति का भी उतना ही महत्त्व है जितना कि सै य बल का। अच्छा निपुणक ' यह बताओ भववर्मा के स्क धावार म तुम्हारे सत्री और गूढपुरुष किन किन रूपा म काय कर रहे हैं ?' मोग्गलान

न प्रश्न किया।

सव रूपा म, स्थविर ! वदेहक बने हुए मेरे सत्री वहाँ खाद्य सामग्री पहुँचाते है औदनिक और पक्वमासिक क रूप म मेरे अनेक गूढपुरुष सेना के महानस के काय कर रहे है, और कुछ सत्री सनिक बनकर भी भववर्मा की सना मे भरती हो गए है।'

'क्या तुम्हारे पास कोई ऐसी विपकन्या नही है जिसके स्पशमात्र से भववमा पञ्चत्व को प्राप्त हो जाए ?'

है क्या नही, स्थविर ! पर भववमा वडा नीरस है। मनोरजन और भागविलास का उसके जीवन म कोई भी स्थान नही है। कोई रूपाजीवा उसके समीप तक नही जा सकती।

वह मदिरा तो अवश्य ही पीता होगा। क्यो न किसी दासी द्वारा उसकी मदिरा म विप मिलवा दिया जाए ? यह उपाय कैसा रहेगा ?'

'भववर्मा तो मदिरा का भी सवन नही करता स्थविर !'

पर क्या वह भोजन भी नही खाता ? तुम्हारे जो गूढपुरुप औदनिक और पक्वमासिक के रूप म भववमा के महानस म काम कर रह हैं, उनक द्वारा भोजन म विप क्यो नही मिलवा देते ?

यह भी सुगम नही है, स्थविर ! जो भोजन भववर्मा के लिए भेजा जाना है पहले उस कुत्ते बिल्लियो और शुक-सारिकाओ को खिलाया जाता है, फिर परिचारको को और फिर राजवद्य को। सब प्रकार से परीक्षा कर चुकने के अन तर ही भोजन भववर्मा के पास भेजा जाता है।'

अच्छा, उस धूत ब्राह्मण चाणक्य द्वारा प्रतिपादिन यह परिपाटी अब तक भी भववर्मा के महानस मे प्रयुक्त की जा रही है ?'

हाँ, स्थविर ! भोजन मे विप मिला सकना कदापि सम्भव नही होगा।'

'तो फिर अ य उपाय ही क्या है ? तुम्हारे जो सत्री सनिक के रूप म भववर्मा के स्क धावार मे नियुक्त हैं, क्या अवसर पाकर वे उसकी हत्या नही कर सकते ?

'यह भी कठिन है स्थविर ! भववर्मा के अगरक्षक केवल ऐस ही सनिक हैं जो राजकुल के साथ सम्ब ध रखते हैं। ये सब भववमा के

अनुरक्त हैं, और उसी को राजसिंहासन का अधिकारी मानते हैं। मौल सनिको को भय दिखाकर या धन का लालच देकर अपने पक्ष म कर सकना सुगम नही होता स्थविर! राजकुल के प्रति उनकी अगाध आस्था होती है।

पर शालिशुक भी तो राजकुल का है। वह सम्राट सम्प्रति का पुत्र है। क्या यह सम्भव नही है कि धन आदि द्वारा भववर्मा की अगरक्षक सेना के सनिको को शालिशुक के पक्ष मे किया जा सके? व केवल कतव्यपालन म शिथिल हो जाए शेष सब काय तुम्हारे तीक्ष्ण सत्री कर देंगे। मैं यह कब कहता हूँ कि अगरक्षको मे स कोई भववर्मा की हत्या करे। राजकुमारो के प्रति उनका अनुराग सराहनीय है। पर क्या धन और सुरा सुन्दरी आदि द्वारा उन्ह भववर्मा की रक्षा के प्रति शिथिल नहीं किया जा सकता?

'यह भी सम्भव नही है स्थविर! सनिधाता देवगुप्त अत्यन्त जागरूक है। उसने चुन चुनकर केवल ऐसे सनिको को भववर्मा की अगरक्षक सेना म नियुक्त किया है जो बहुत कतव्यनिष्ठ है।

तुम तो एसी बातें कर रहे हो निपुणक मानो भववर्मा अमर होकर इस ससार म आया है। मेरी कूटनीति किसलिए है?'

आपका नीतिबल अजेय है स्थविर! आप ही कोई उपाय सुझाइए।

स्थविर मोग्गलान कुछ क्षण चुप रहकर सोचते रहे। फिर चुटकी बजाकर बोले—

'अच्छा यह बताओ निपुणक! भववर्मा कभी मन्दिर तो जाता ही होगा। पूजा-पाठ और यात्रिक कमकाण्ड म उसका विश्वास है न? देव पूजा तो वह प्रतिदिन करता ही होगा!

हाँ स्थविर! स्कन्धावार म ही एक कोष्ठ बना लिया गया है जिसम शिव की मूर्ति प्रतिष्ठित कर दी गई है। प्रात साय दोनो समय वह वहाँ जाकर पूजा-पाठ करता है।

पाटलिपुत्र से काशी जानेवाल माग पर शिव का जो पुराना मन्दिर है क्या भववमा वहाँ कभी नहा जाता? मिथ्या पापण्ड के अनुयायी तो इस कल्पनाथ शिव को बहुत मानते हैं।

देवगुप्त उसे कभी स्कन्धावार से बाहर नहा जाने देता स्थविर!'

शिवरात्रि का पव समीप है, निपुणक! उस दिन कल्पनाथ शिव के

मन्दिर मे बहुत बडा मेला लगा करता है। शिव का कोई भी उपासक उस दिन कल्पनाथ का दशन किए विना नही रहता। इस अवसर पर भववर्मा अवश्य ही शिव मन्दिर म पूजा के लिए जाएगा।'

'मैं कह नही सकता स्थविर।'

'तुम तो न कुछ जानत हो और न कुछ कह सकते हो। सत्रिया का आचाय तुम्हें किसने बना दिया? तुम तो महानस म औदनिक के काय के ही योग्य हो। चावल पकाते-पकाते तुम्हारे मस्तिष्क मे भी चावल ही भर गए हैं। अच्छा, एक काम करो। अपने किमी विश्वस्त सत्री को शिव के पुजारी का भेस बनाने के लिए कह दो। तुम स्वय ही यह काम क्यो न करो। अच्छा मोटा स्थूल शरीर है तुम्हारा। पुजारी के भेस मे खूब फबोगे। सस्कृत का भी तुम्ह अच्छा ज्ञान है। शिव की स्तुति के कुछ श्लोक कठस्थ कर लो और पूजा की विधि भी सीख लो।

यह काय तो मैं भलीभाति कर सकूगा, स्थविर।'

'पहले मेरी पूरी बात सुन लो। पुजारी का भेस बनाकर कल्पनाथ के मन्दिर मे चले जाओ। कोइ पूछे तो कह देना काशी से आ रहा हूँ। भगवान् कल्पनाथ की बहुत महिमा सुनी थी। सारा जीवन विश्वनाथजी की पूजा मे बीत गया है। सोचा, कुछ दिन कल्पनाथ जी की भी सेवा कर लू। स्थविरो और श्रमणो की खूब बुराई करना। कल्पनाथ की मूर्ति पर चढाने के लिए सुवण निष्क साथ लेते जाना, और बिल्वपत्रो के बीच म रखकर उन्ह शिव मन्दिर को अर्पित कर देना। इस प्रकार वहा के पुजारियो का विश्वास तुम्ह प्राप्त हो जाएगा। सब समझ गए न?

'हाँ स्थविर।'

'तुम्ही को हमारा काय सिद्ध करना है निपुणक।'

'काय सिद्धि मेरे द्वारा कसे हो सकेगी स्थविर।'

शिवरात्रि के अवसर पर भववर्मा कल्पनाथ शिव के मन्दिर मे अवश्य जाएगा। उस पर सकट जो पडा है न? मूर्ति के सम्मुख बठकर मनौती मानेगा शालिशुक की पराजय और अपनी विजय के लिए प्राथना करेगा। तुम अभी स वहाँ आसन जमाकर बठ जाओ। तुम्हारे तीक्ष्ण सत्री मन्दिर के पिछवाडे के उद्यान मे छिपे रह। अवसर पाते ही भववर्मा पर आक्रमण

कर दो। उसकी हत्या के बिना सद्धम का उत्कर्ष असम्भव है।'

'पर प्रश्न यह है स्थविर देवगुप्त भववमा को कल्पनाथ के मंदिर मे जाने भी देगा या नही ?'

'तुम इसकी चिन्ता न करो, निपुणक! यह मेरा काम है। शिवरात्रि के अवसर पर भवत्रर्मा अवश्य ही कल्पनाथ के मन्दिर मे पूजा के लिए जाएगा। वहाँ का काय तुम्हारे हाथ म है।'

'यदि भववमा मन्दिर चला आया तो वह वहा से जीवित न लौट सकेगा।

साधु साधु! तथागत म तुम्हारी श्रद्धा सदा अम्ल रहे! बहुत महत्त्व का काम तुम्हे सौंप रहा हूँ, निपुणक! कही कोई चूक न हो जाए। सद्धम का भविष्य इसी पर निभर है।

कुछ क्षण सोचकर निपुणक ने कहा 'मैंने अपनी योजना तयार कर ली है स्थविर! पाँच सत्री शिव के भक्तो का भेस बनाकर कल प्रात से ही मन्दिर के प्रागण म डेरा जमा लेंगे हाथा म बडे-बडे चिमटे लिए हुए और भभूत रमाए हुए। शिवरात्रि के अवसर पर हजारो साधु और गृहस्थ दूर दूर से इस मन्दिर म शिव की पूजा के लिए आते हैं। किसी को उन पर सदेह नही होगा।

पर भववर्मा अकेला तो आएगा नही। यदि उसके साथ अगरक्षक भी हुए तो तुम क्या करोगे ?

'शिव मन्दिर म राजा और रक का भेद नही किया जाता स्थविर! हजारा नर-नारी वहाँ एकत्र हागे बडी भीड होगी। मैं और मेरे सत्री भी भीड म मिल जाएँगे, और भगवान् कल्पनाथ शिव का जय-जयकार करते हुए भववर्मा के समीप पहुँच जाएँगे। अवसर पाते ही हम भववर्मा पर आक्रमण कर देंगे। हमारे चिमटे तीक्ष्ण विष स बुझे हुए होंगे स्थविर! उनका शरीर स छू जाना ही पर्याप्त होगा क्षण भर म भववमा भूमि पर लोटता हुआ दिखाई देगा।

'तुम्हारी योजना बहुत उत्तम है निपुणक! बस यह काय सम्पन्न कर दो। फिर तुम्हें महानस म औग्निक का काय करने की आवश्यकता नहीं रहेगी। शाक्लिपुर से कहकर तुम्हें आतवशिक का पद दिलवा दूँगा।'

'सघ स्थविर की चरण सेवा करते हुए मुझे किसी भी बात की कमी नही है। पर यदि आप मुझे सनिधाता के पद पर नियुक्त करा दें, तो बडी कृपा होगी।'

'यह बाद मे देखा जायगा, अब तुम जाओ और अपने काय की तयारी प्रारम्भ कर दो। बुद्ध, धम और सघ म तुम्हारी श्रद्धा अटल रहे! भगवान् तथागत तुम्हारा कल्याण करें!'

निपुणक के चले जाने पर मोग्गलान ने आन्तवशिक गुणसेन को बुलाया। प्रणाम निवेदन कर गुणसेन ने कहा, मेरे लिए क्या आज्ञा है, स्थविर!'

'सुना है, पुष्यमित्र के नेतृत्व मे एक बडी सेना भववमा की सहायता के लिए पाटलिपुत्र आ रही है। सन्यशक्ति द्वारा भववर्मा और देवभूति को परास्त कर सकना बहुत कठिन है। अत मैंने कूटनीति के प्रयोग का निश्चय किया है। जो काय तुम्हारी सेना नही कर सकी, उसे अब मेरे गूढ पुरुष सम्पन्न करेंगे।'

'पर युद्ध म अभी तक तो हमारा पलडा भारी है स्थविर!'

'धय के साथ मेरी बात सुनते जाओ बीच मे न बोलो। कल से तुम्ह यह प्रदर्शित करना है कि तुम्हारे सनिक युद्ध करते करते थक गए है और अब वे देर तक पाटलिपुत्र की रक्षा नही कर सकते। युद्ध तुम्ह जारी रखना है पर धीरे धीरे पीछे हटते हुए। यदि देवभूति के सनिक दुग के महाद्वार मे प्रविष्ट हो जाएँ, तो भी चिन्ता न करना। बस, उन्हे राजप्रासाद मे न घुसने देना। राजप्रासाद भी तो एक दुग के समान है। उसकी प्राचीर पर डटकर शत्रुसेना का सामना करना। श्रावस्ती से जो सेना आई है, उसे भी धीरे धीरे पीछे हटते जाने का आदेश दे दो। एक सप्ताह म वह सना सोण नदी के परले पार चली जाए।'

पर यह सब किसलिए स्थविर! हमारी सन्यशक्ति तो अभी क्षीण नही हुई है।'

'नीति युद्ध को तुम नही समझ सकोगे, गुणसेन! मेरे आदेश का अविकल रूप से पालन करो।'

कुक्कुट विहार के सघ-स्थविर की आज्ञा का अतिक्रमण कर सकना

मेरे लिए कदापि सम्भव नही है।'

गुणसेन के चले जाने पर मोग्गलान ने स्थविर मज्झिम से कहा, 'औशनस नीति अत्यन्त गूढ़ है, स्थविर! नन्दराज का महामात्य वक्रनास इसके प्रयोग म बहुत कुशल था। ब्राह्मण चाणक्य ने भी इसी का प्रयोग कर चन्द्रगुप्त को राजा बनाया था। मैं भी इसके प्रयोग म पारगत हूँ। देखते रहिए, कुछ ही दिनो म भववर्मा और देवभूति दोनो पञ्चत्व को प्राप्त हो जाएँगे।'

शालिशुक और भववर्मा की सेनाओ म घनघोर युद्ध हो रहा था। पर दो दिन पश्चात पाटलिपुत्र के नागरिको ने आश्चय के साथ देखा कि नदी के समान चौडी दुग की परिखा को पार कर देवभूति के सनिक पाटलिपुत्र के दक्षिणी महाद्वार तक पहुँच गए हैं महाद्वार के कपाट टूटने प्रारम्भ हो गए हैं और कुछ सनिको ने दुग म भी प्रवेश कर लिया है। अब पाटलिपुत्र के राजमार्गों और पण्यवीथियो म लडाई प्रारम्भ हो गई है और आन्तवशिक सेना निरन्तर पीछे हटती जा रही है। कुछ ही दिनो के युद्ध के अनन्तर पाटलिपुत्र नगरी पर भववर्मा का अधिकार हो गया। युद्ध अब भी जारी था, पर राजप्रासाद की प्राचीर पर। श्रावस्ती से जो सेना शालिशुक की सहायता के लिए आई थी वह भी निरन्तर मार खा रही थी। धीरे धीरे पीछे हटती हुई वह सोण नदी के तट तक पहुँच गई और नदी को पार कर गई।

भववर्मा के स्कन्धावार म इससे उल्लास छा गया और सनिक लोग उत्साह मे भरकर युवराज का जय-जयकार करने लगे। पाटलिपुत्र पर अब देवभूति की सेना का अधिकार हो गया था। बडी धूमधाम के साथ भववर्मा ने मौय साम्राज्य की राजधानी म प्रवेश किया। राजप्रासाद अब तक भी शालिशुक के अधिकार म था पर श्रेष्ठी चन्द्रकीर्ति का प्रासाद राजमहल से किसी भी प्रकार कम नही था। वहाँ भववर्मा के निवास की व्यवस्था कर दी गई। वह पूणरूप से आश्वस्त था कि शीघ्र ही आन्तवशिक सेना परास्त हो जाएगी और राजप्रासाद भी उसके हाथो मे आ जाएगा।

शिवरात्रि का पव अब बहुत निकट आ गया था। भववर्मा ने अमात्य देवगुप्त को बुलाकर कहा—

'पाटलिपुत्र अब हमारे अधिकार मे है, अमात्य ! हमारी यह विजय भगवान शिव की कृपा का परिणाम है। शिवरात्रि का उत्सव हमे बड़े समारोह के साथ मनाना चाहिए।

'इसम क्या सदेह है, युवराज ! हम सब भगवान शिव के उपासक हैं।'

'पाटलिपुत्र के दक्षिण म भगवान् कल्पनाथ शिव का जो प्राचीन मदिर है, उसकी बडी महिमा है। भारत भर से शिव के उपासक शिवरात्रि के अवसर पर वहाँ पूजा के लिए आते हैं। मेरी इच्छा है कि मैं भी वहाँ जाकर शिव की उपासना करूँ।'

भगवान की पूजा तो हम करनी ही चाहिए, युवराज ! पर पाटलिपुत्र म भी तो शिव के अनेक मदिर हैं। आप कहाँ बाहर क्या जाएँ ? मैं अभी पूर्णतया निश्चिन्त नही हुआ हूँ। मोग्गलान बडा धूर्त कूटनीतिज्ञ है। उसके सत्री और गूढपुरुष सवत्र छाए हुए हैं। हमारे मत्रियों ने सूचना दी है कि कुछ दिन हुए कुक्कुट विहार के गर्भगृह म मोग्गलान ने अपने गूढ पुरुषो को बुलाकर विचार विमर्श किया था। पता नही वह कौन-सा नया जाल बिछा रहा है। कहीं एसा न हो कि कल्पनाथ शिव के मदिर की भीड म आप पर कोई विपत्ति आ जाए।

'ऐसा क्या होगा अमात्य ! अगरक्षक तो मेरे साथ रहेंगे ही। और अब भय किसका है ? गुणसेन की आतवशिक सेना राजप्रासाद म घिरी हुई है, और श्रावस्ती की सना सोण नदी के परले पार चली गई है। अपने ही राज्य म भयभीत होकर रहने से कैसे काम चल सकता है, अमात्य !

'भय की तो कोई बात नही है युवराज पर अभी सतक रहना बहुत आवश्यक है। अनेक बार मेरे मन म आया है कि शालिशुक की सनाएँ जो इस प्रकार अकस्मात पीछे हटने लग गई हैं, इसम भी मोग्गलान की कोई चाल है। पर आप भगवान कल्पनाथ की पूजा म अवश्य सम्मिलित हों। भगवान की कृपा से ही हमारी विजय हो रही है। उनकी पूजा हम करनी ही चाहिए। मैं एसा प्रबन्ध कर दूगा कि दस अगरक्षक सदा आपके साथ रहगे एक क्षण भी आपको अकेला नही छोडेंगे। हाँ, एक काम करें। मन्दिर में आप छद्म वेश म जाएँ श्रेष्ठी या वदेहक के रूप मे। अगरक्षक

भी छद्म वेश म ही रह। यदि देवभूति भी आपके साथ जाएँ तो अच्छा होगा। वह विकट योद्धा हैं अकले दस का सामना कर सकते हैं।

शिवरात्रि के पव पर कल्पनाथ शिव के मन्दिर म बहुत धूमधाम थी। हजारो गहस्थ और साधु वहाँ एकत्र थे। अग, बग काशी कौशल कुरु आदि सुदूर प्रदेशा तक के शिवभक्त इस पव के अवसर पर भगवान कल्पनाथ के दशन के लिए आए थे। मन्दिर के विशाल प्रागण म एक मेला-सा लगा हुआ था। स्थान-स्थान पर जटिल और तापस धूनि रमाये हुए बैठे थे। निपुणक भी एक जटिल साधु के भेस म था और उसके सत्री तापसो का वेश बनाये हुए धूनि के चारो ओर बठे हुए थे। गृहस्थ लोग जटिल तापसो के चरण स्पश कर उनस आशीर्वाद प्राप्त कर रहे थे। युवराज भववर्मा और देवभूति भी वदेहको के वेश म साधु महात्माओ के दशन करते हुए मन्दिर की ओर अग्रसर हो रहे थे। यद्यपि वे छद्म वेश म थ, पर निपुणक उन्हें देखते ही पहचान गया। वह तो उनकी प्रतीक्षा म ही था। पूर्वनिश्चित योजना के अनुसार उसने उच्च स्वर स भगवान कल्पनाथ का जयजयकार किया। सकेत पाते ही उसके गूढपुरुषो ने विष के बुझे हुए चिमटे भववर्मा की ओर फेंके। उनका निशाना अचूक था। वे सब सधे हुए सनिक जो थे। एक चिमटा युवराज को लग गया, और वह तुरत धराशायी हो गए। हलाहल विष के प्रभाव स क्षण भर मे उनकी मृत्यु हो गई। भववर्मा को भूमि पर गिरता देखकर उनके अगरक्षको ने चारो ओर अस्त्र चलाने प्रारम्भ कर दिए। सब ओर भगदड मच गई। अवसर पाकर निपुणक ने विषाक्त अस्त्र से देवभूति पर भी आक्रमण किया, और वह भी उससे नही बच सके। मोग्गालान की गूढयोजना अब अविकल रूप से सफल हो गई थी। शालिशुक का माग अब निष्कण्टक हो गया था। अमात्य देवगुप्त ने जब यह समाचार सुने तो उन्होने अपना सिर पीट लिया। पर अब क्या हो सकता था?

सूर्योदय से पूर्व ही आतवशिक सेना के सनिको ने श्रेष्ठी चन्द्रकीर्ति के प्रासाद को घेर लिया। अमात्य देवगुप्त और उसके साथी वहीं पर निवास कर रहे थे। उन सबको बन्दी बना लिया गया। श्रेष्ठी चन्द्रकीर्ति भी गुण सेन के प्रकोप से नही बच। कुक्कुट विहार के जिस गभ-गृह म स्थविर

मोग्गलान गूढमन्त्रणा किया करते थे उनके भी नीचे एक विशाल गुप्त भवन था जिसम बहुत-स छोटे छोटे कक्ष बने हुए थे। देवगुप्त, चन्द्रकीर्ति और उनके सब साथियों को वहाँ ले जाकर बन्द कर दिया गया। मोग्गलान अब परम प्रसन्न थे। सद्धर्म के सब शत्रु उनके वश में आ गए थे। पर उन्हें इतने से संतोष नहीं हुआ। उन्होंने मज्झिम बुद्धघोष और अन्य प्रमुख स्थविरों को एकत्र किया, और देवगुप्त चन्द्रकीर्ति आदि को एक पंक्ति में खड़ा करने का आदेश दिया। मोग्गलान का संकेत पाकर निपुणक ने उन सबके गला की नसें काट दीं। रक्त धाराएँ बह निकलीं, और सबने तड़प-तड़पकर अपनी जीवन-लीला समाप्त कर दी। मोग्गलान और मज्झिम सद्धर्म के विरोधियों को तड़पते देखकर अट्टहास कर रहे थे। जब उनके शरीर ठंडे हो गए तो उनके शवों को कुक्कुट विहार के बाहर ले जाकर एक वट वृक्ष के नीचे डाल दिया गया। शीघ्र ही गिद्ध और शृगाल वहाँ एकत्र हो गए और नोच नोचकर उन्हें खा गए। विशाल मौर्य साम्राज्य के सन्निधाता और महान राजनीतिज्ञ देवगुप्त श्रेष्ठी चन्द्रकीर्ति और उनके साथियों का यह अन्त कैसा वीभत्स था! मोग्गलान अब परम प्रसन्न थे। भगवान तथागत द्वारा प्रतिपादित मध्यमा प्रतिपदा के उत्कर्ष का मार्ग अब निष्कण्टक हो गया था।

वायुवेग से पाटलिपुत्र की ओर बढ़ते हुए सेनानी पुष्यमित्र जब अहिच्छत्र पहुंचे, तो उन्हें ये समाचार ज्ञात हुए। इन्हें सुनकर वह किंकर्तव्यविमूढ़ हो गए। दण्डपाणि के पास जाकर उन्होंने कहा—

पाटलिपुत्र के समाचारों से मैं अत्यन्त उद्विग्न हूँ आचार्य! अब हमें क्या करना चाहिए?'

'अब पाटलिपुत्र जाना व्यर्थ है वत्स! भववर्मा और देवभूति की हत्या हो चुकी है। अब हम किसका पक्ष लेकर युद्ध करेंगे?'

पर मौर्य-कुल अभी पूर्णतया नष्ट नहीं हुआ है आचार्य! भववर्मा का पुत्र देववर्मा अभी जीवित है। राजसिंहासन का वास्तविक अधिकारी अब वही है। हम उसे सम्राट बनाने का प्रयत्न कर सकते हैं।'

'यह सही है पर देववर्मा अन्तःपुर के बन्दीगृह में कैद है। हमारे आक्रमण का समाचार सुनते ही मोग्गलान उसकी भी हत्या करा देगा। इस समय वह धार्मिक उन्माद में अन्धा हो रहा है।

उचित-अनुचित का उसे जरा भी विवेक नहीं रह गया है। शालिशुक के मार्ग को निष्कण्टक करने के लिए वह किसी की भी हत्या कर सकता है। अभी हमें उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करनी होगी वत्स !

'तो क्या शालिशुक जैसे अकर्मण्य और निर्वीर्य व्यक्ति का मौर्य साम्राज्य के सिंहासन पर आसीन रहना हम सहन कर लेना चाहिए ?

भावनाओं के वशीभूत होकर कर्तव्य अकर्तव्य में विवेक न करने का यह समय नहीं है वत्स ! हमारी यह सेना मौग्गलान को परास्त नहीं कर सकेगी। हमारे आक्रमण का केवल यह परिणाम होगा कि मौर्य कुल के जो कुमार इस समय अन्तःपुर में कैद हैं उन सबको मौत के घाट उतार दिया जाएगा। फिर हम किसका पक्ष लेकर शालिशुक के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा कर सकेंगे ? तुम धैर्य से काम लो वत्स ! शीघ्रता न करो।

'मौर्य शासनतन्त्र का भविष्य मुझे बहुत अन्धकारमय प्रतीत होता है आचार्य ! शालिशुक के शासनकाल में मागध साम्राज्य की रही-सही सैन्य शक्ति भी नष्ट हो जाएगी। राज्यकोष में जो धन अवशिष्ट है, उसे या तो भोग विलास में उड़ा दिया जाएगा या स्थविरों और श्रमणों की दान पूजा में। भारत की क्षात्र शक्ति के पुनरुद्धार के जिस महान उद्देश्य को सम्मुख रखकर हमने गोनर्द आश्रम से प्रस्थान किया था वह कैसे पूर्ण होगा आचार्य ! वाहीक देश के जनपदों से मुझे बहुत आशा थी। उन्हीं की सहायता से हम सिन्धु तट के युद्ध में यवनों को परास्त कर सके थे। पर उन्होंने भी हमारा साथ छोड़ दिया।

सब कार्य अपने समय पर ही हुआ करते हैं वत्स ! तुम चिन्ता न करो। आर्य भूमि का भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल है। वह समय दूर नहीं है जब इस देश के शासनतन्त्र में फिर शक्ति का संचार होगा। शीघ्रता करने से काम बिगड़ा ही करते हैं वत्स ! अभी प्रतीक्षा करना ही उचित है। हाँ एक बात मेरे ध्यान में आई है। दिव्या में दोहद के लक्षण प्रगट होने प्रारम्भ हो गए हैं। उसे शीघ्र ही विदिशा ले जाओ।

पर वह तो गोनर्द आश्रम में रहना चाहती है आचार्य ! उसे वे दिन स्मरण आते हैं जब वह आश्रम की पुष्पवाटिका को सींचा करती थी आम्र वृक्षों की छाया में बैठकर गाया करती थी, और मृगशावकों के साथ क्रीडा

किया करती थी। आश्रम का रूखा-सूखा भोजन उसे बहुत याद आता है, आचार्य!'

'ये सब शुभ लक्षण हैं। तो फिर दिव्या को गोनर्द आश्रम में ही छोड़ आओ। तुम्हारी गुरु-पत्नी वहां पर हैं ही। मैं अहिच्छत्र में ही तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा। पाञ्चाल देश के लोग बड़े वीर होते हैं वत्स! उन्हें हम अपनी सेना में भरती करेंगे, और जब तक तुम वापस आओगे, हमारे सैनिकों की संख्या कम-से-कम दुगुनी अवश्य हो जाएगी।

'धर्मवादी एवं अधार्मिक' शालिशुक

शालिशुक को सम्राट् तो पहले ही घोषित कर दिया गया था, पर अभी उसका राज्याभिषेक नहीं हुआ था। ज्योतिषियों और मौहूर्तिकों को बुलाकर इसके लिए एक शुभ तिथि निकलवाई गई। वैशाख पूर्णिमा का दिन राज्याभिषेक के लिए नियत किया गया। उस दिन पाटलिपुत्र में बड़ी धूमधाम थी। पुष्कलावती, श्रावस्ती, अहिच्छत्र, सारनाथ, कौशाम्बी, उज्जैन आदि सब नगरों के संघ-स्थविरों को इस समारोह में सम्मिलित होने के लिए विशेष रूप से निमन्त्रित किया गया था। बहुत से श्रेष्ठी, सार्थवाह, वैदेहक और श्रेणिमुख्य भी राज्याभिषेक को देखने के लिए दूर-दूर से पाटलिपुत्र आए थे। विशाल मौर्य साम्राज्य की इस राजधानी की उस दिन अनुपम शोभा थी। राजमार्गों पर ऊँचे-ऊँचे तोरण बनाए गए थे, जो आम्रपत्रों, लताओं और पुष्पमालाओं से सुशोभित थे। स्थान-स्थान पर मंगलघट स्थापित किए गए थे। भीड़ के कारण पण्यवीथियों में चलना कठिन हो गया था। उत्तम कौशेय वस्त्र धारण किए हुए लोग इधर-उधर फिर रहे थे और पण्यशालाओं की शोभा देख रहे थे। श्रमणों और भिक्षुओं के झुण्ड के झुण्ड सर्वत्र प्रसन्न हुए घूम रहे थे। स्त्रियाँ अट्टालिकाओं से उन्हें देखती और एक दूसरे से कहती—'श्रमणों के बीच में वह जो स्थूलकाय वृद्ध स्थविर हैं, वह मज्झिम हैं, श्रावस्ती के संघ-स्थविर। छोटे बच्चे आतंक और उत्सुकता से उन्हें देखते और माताओं के आँचल में मुँह छिपा लेते।

यद्यपि शालिशुक बौद्ध धर्म का अनुयायी था और स्थविरों के कुचक्र द्वारा ही राजसिंहासन प्राप्त करने में समर्थ हुआ था, पर राज्याभिषेक के लिए प्राचीन आर्य पद्धति का ही अनुसरण किया गया। उसका परित्याग करना न राजकुल को सह्य था और न जनता को। प्राचीन परम्परा के अनुसार राज्याभिषेक से पूर्व राजसूय यज्ञ करना आवश्यक है। शास्त्रों का वचन है कि राजसूय के अनन्तर ही कोई राजा का पद प्राप्त कर सकता है। पर स्थविर मोग्गलान याज्ञिक अनुष्ठान के लिए किसी भी प्रकार सहमत नहीं हुए। उनका कहना था कि तथागत के धर्म में यज्ञ के लिए कोई भी स्थान नहीं है। पर राजमाता तारादेवी के अनुरोध पर उन्होंने यह स्वीकार कर लिया कि हवि प्रदान करने के लिए यज्ञकुण्ड में अग्नि का आधान किया जा सके। राज्य के प्रधान पुरुषों को हवि प्रदान करना राज्याभिषेक की प्राचीन पद्धति का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। इसे सम्पन्न कर चुकने पर अभिषेचन प्रारम्भ हुआ। गंगा यमुना सरस्वती नर्मदा गोदावरी सिन्धु और कावेरी नदियों, राज्य के ह्रदों, जलाशयों और कुओं, समुद्र और वर्षा के जल इसी प्रयोजन से विभिन्न घटों में लाए गए थे। इन सबसे शालिशुक का अभिषेक किया गया। अभिषेक करते हुए शालिशुक से यह वाक्य कहलवाया गया— मैं प्रजा का पालन और भरण-पोषण करनेवाला होऊँ, सर्व राष्ट्र प्रदान करनेवाले जलो! इस प्रयोजन से मुझे राष्ट्र प्रदान करो। अभिषेक के अनन्तर शालिशुक को व्याघ्रचर्म पर बिठाया गया और नये उष्णीष तथा वस्त्र पहनने को दिए गए। फिर उसके हाथ में धनुष और बाण दिए गए ताकि वह तीनों लोकों के शत्रुओं से प्रजाजन की रक्षा कर सके। जब शालिशुक नए वस्त्र धारण कर और धनुषबाण हाथ में लेकर तैयार हो गया तो उसे यह शपथ दिलाई गई— जिस रात्रि में मेरा जन्म हुआ और जिस रात्रि में मेरी मृत्यु होगी उनके मध्य में (अपने सम्पूर्ण जीवन काल में) जो भी सुकृत मैंने किए हों वे सब नष्ट हो जाएँ और मैं शुभ कर्मों से वंचित हो जाऊँ यदि मैं किसी भी प्रकार से प्रजाजन के प्रति विद्रोह करूँ किसी भी तरह उनका अपकार करूँ। प्रजापालन की प्रतिज्ञा कर चुकने के अनन्तर एक दण्ड द्वारा शालिशुक की पीठ पर तीन बार आघात किया गया ताकि वह यह न भूलने पाए कि वह भी दण्ड से

अधीन है। प्रजापालन के कर्तव्य से विमुख होने पर उसे भी दण्ड दिया जा सकता है।

प्राचीन परिपाटी के अनुसार राज्याभिषेक की विधि के सम्पन्न हो जाने पर स्थविर मोग्गलान अपने आसन से उठकर खड़े हुए और शालिशुक को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा—'तुमने अभी प्रजापालन की शपथ ग्रहण की है। पर प्रजापालन के साधन क्या हैं, यह भी भलीभांति समझ लो। *सद्धर्म के अनुसरण द्वारा ही प्रजा का यथावत पालन सम्भव है।* प्रजा को सद्धर्म में स्थित रखना तुम्हारा मुख्य कर्तव्य है। इसीसे जनता का हित और कल्याण सम्पादित हो सकता है। तुम्हारे पूर्वज देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा अशोक ने जिस मार्ग को अपनाया था, तुम भी उसी का अनुसरण करो। बुद्ध, धर्म और संघ में श्रद्धा रखो और सद्धर्म के उत्कर्ष के लिए सदा प्रयत्नशील रहो। कर के रूप में जो बलि तुम प्रजा से ग्रहण करो, स्थविरों, श्रमणों और भिक्षुओं की सेवा में उसे व्यय करो। यह कभी मत भूलो कि *हिंसा गर्ह्य और हेय है। राज्य को शत्रुओं का भी सामना करना होता है।* पर तुम कदापि हिंसा का प्रयोग न करो। अहिंसा द्वारा ही शत्रुओं पर विजय प्राप्त करो। अहिंसा एक ऐसा अमोघ शस्त्र है, जिसके सम्मुख बड़े से-बड़ा शत्रु भी टिक नहीं पाता। तथागत तुम्हारा कल्याण करें! तुम्हारे द्वारा बुद्ध, धर्म और संघ का उत्कर्ष हो!

मोग्गलान का प्रवचन समाप्त होने पर शालिशुक सिंहासन से उठकर खड़े हुए और स्थविरों के सम्मुख सिर झुकाकर उन्होंने कहा—मैं सद्धर्म का तुच्छ अनुयायी हूँ। आप मुझे मार्ग प्रदर्शित करते रहिए मैं सदा उसी का अनुसरण करूँगा।' नए सम्राट के जय-जयकार के साथ राज्याभिषेक का समारोह समाप्त हुआ। पुरानी परिपाटी का अनुसरण कर सहस्र राज बन्दी भी इस अवसर पर कारागार से मुक्त किए गए। राजमाता तारादेवी के अनुरोध पर मौर्यकुल के कुमारों को भी अन्तःपुर के कारागार से छोड़ दिया गया। तारादेवी अपने पुत्र को राजसिंहासन पर बैठे देखकर आनन्द विभोर हो गई थी और तथागत के चरणों में मन ही मन उसके कुशल मंगल की प्रार्थना कर रही थी। उन्हें यह अशुभ प्रतीत होता था कि शालि शुक के बन्धु-बान्धव इस मंगल अवसर पर कारागार में बन्द रहें।

शालिशुक के सम्राट पद पर अभिसिक्त हो जाने पर मौर्य शासनतन्त्र का पुन सगठन किया गया। गुणसेन को सन्निधाता का पद दिया गया और निपुणक को आन्तवशिक का। मन्त्री प्रन्ध्टा धमस्थीय समाहर्ता आदि अन्य महत्त्वपूर्ण पदो पर भी ऐसे व्यक्तियो को नियुक्त किया गया, जिन्होने गृहयुद्ध म शालिशुक का साथ दिया था और जिन्हे स्थविर मोग लान का विश्वास प्राप्त था। यद्यपि नाम को शालिशुक सम्राट था पर शासनतन्त्र का वास्तविक सञ्चालन मोग्गलान के हाथो म था। उन्ही के आदेश से राज्याभिषेक के तुरन्त पश्चात कुछ नए राजशासन जारी किए गए। एक राजाज्ञा द्वारा यह घोपित किया गया कि सीमान्त के नगरो म जो स्कन्धावार अब तक भी विद्यमान हैं उन्हे तुरन्त भग कर दिया जाए। सद्धम के शासन म न सनिको की आवश्यकता है और न अस्त्र शस्त्रो की। मौर्य शासनतन्त्र के अठारह तीर्थों म सनापति नायक दुगपाल और अन्त पाल ऐसे तीथ थे जिनका सम्बन्ध सेना से था। अब इन तीर्थों के पदो पर कोई व्यक्ति नियुक्त नही किए गए। मोग्गलान का कहना था कि सद्धम के शासन मे इन तीर्थों की आवश्यकता ही क्या है। जब हम धम द्वारा देश का शासन करना है और धम से ही दूसरे देशो की विजय करनी है तो सना पति नायक आदि के पद सवथा निरथक है। राजप्रासाद की रक्षा के लिए आन्तवशिक सेना अब भी रखी गइ पर उसके सनिको की सख्या कम कर दी गई।

एक अन्य राजशासन द्वारा यह व्यवस्था की गई कि भविष्य म केवल स्थविर और श्रमण ही धम महामात्य के पद पर नियुक्त किए जा सकेगे। सम्प्रति के शासनकाल म जिन जन मुनियो को इस पद पर नियुक्त किया गया था उन सबको अपदस्थ कर दिया गया। एक अन्य राजशासन द्वारा राजकमचारियो को यह आदेश दिया गया कि उनका प्रधान काय जनता को सद्धम का उपदेश दना है। व अपन अपने प्रदेशो म इस प्रयोजन से निरन्तर धमयात्राए करते रहे और श्रमणो तथा भिक्षुओ को किसी प्रकार का कोई कष्ट न होने दें।

राज्याभिषेक के समाप्त होन ही शालिशुक अपने अन्तपुर म चला गया। वहा राजमाता ताराक्षी उत्सुकता से उसकी प्रतीक्षा कर रही थी।

वह उसे कुछ कहना चाहती थी, पर शालिशुक ने उन्हें परे हटाकर कहा—'मा, मैं बहुत थक गया हूँ। सुबह से न जाने कितनी बार उठक-बैठक करनी पड़ी है। अब मैं विश्राम करना चाहता हूँ।' राजमाता चाहती थी कि अपने पुत्र को अक में भर लें, आशीर्वाद दें और कुछ उपदेश भी दें। पर शालिशुक को इनके लिए अवकाश ही कहाँ था? वह तुरत अपने शयनकक्ष में जाकर आमोद प्रमोद में व्यस्त हो जाने के लिए उत्सुक था। उसने ताली बजाई, और तत्क्षण एक दासी हाथ जोड़कर सम्मुख आ उपस्थित हुई। शालिशुक ने आदेश दिया—देखती क्या हो चन्द्रलेखा को शयनकक्ष में भेज दो। ठहरो, अभी जाती कहा हो! सब प्रकार की सुराएँ भी साथ ही भिजवा दो। राज्याभिषेक भी एक भारी विपत्ति है। दिन भर न जाने कैसे कैसे कष्ट उठाने पड़े हैं? बहुत थक गया हूँ अब आराम करना है।

चन्द्रलेखा शालिशुक की मुँह-लगी गणिका थी, रूप यौवन से सम्पन्न और बड़ी चुलबुली। वह हँसती हुई आई और मैरेय का चषक भरती हुई बोली—इस गले से नीचे उतार लीजिए सम्राट! सारी थकावट क्षण भर में दूर हो जाएगी। अभिषेक मण्डप में आपकी छटा भी कैसी निराली थी! व्याघ्रचर्म का आसन सिर पर सुवर्ण उष्णीष, और हाथ में धनुष बाण। साक्षात कामदेव प्रतीत हो रहे थे। मैं तो देखती ही रह गई! अब तो आप मौर्य साम्राज्य के सम्राट बन गए हैं। कहिए मुझे क्या देंगे?'

'यह सारा साम्राज्य ही तुम्हारा है, चन्द्रलेखा! जब मैं ही तुम्हारा हूँ, तो तुम्हें और क्या चाहिए?'

सुरा के चषक को शालिशुक के मुँह से लगाकर चन्द्रलेखा ने कहा—बातें बनाना तो कोई हमारे महाराज से सीखे। बस बातों ही बातों में खुश कर देते हैं। राज्य तो उस स्थूलकाय स्थविर का है। क्या नाम है उसका? हाँ याद आया, मोग्गलान। अभिषेक-मण्डप में कैसी शान से बैठा हुआ था, मानो उसी का राज्याभिषेक हो रहा हो। मुझे तो उसकी शक्ल से ही डर लगता है। कुछ दिनों में हम सबको राजप्रासाद से बाहर निकाल देगा। कहेगा श्वेत-वस्त्र पहनकर भिक्षुणी-संघ में जाकर रहो। उसके डर के मारे मैंने अभी से जाप करना प्रारम्भ कर दिया है—बुद्धं शरणं गच्छामि, धम्मं शरणं गच्छामि, संघं शरणं गच्छामि। डर लगता है, कहीं वह मेरा मुण्डन

देने को भी न कहने लगे।'

सुरा का चषक गले से नीचे उतारकर शालिशुक प्रसन्न हो गए। चन्द्रलेखा को अक मे भरकर बोले—

तुम उस बुड्ढे स्थविर से डरती हो चन्द्रलेखा ! वह तुम्हारा कुछ नही बिगाड सकता, सम्राट मैं हूँ या मोग्गलान ? तुम राज करोगी राज ! लाओ एक चषक और दो। इस बार माध्वीका देना। मरेय कुछ कडवी सी लगती है।

चन्द्रलेखा ने माध्वीका का एक चषक भर कर शालिशुक के मुह से लगा दिया। एक ही घूट म शालिशुक उसे पी गए। प्रसन्न होकर हसते हुए उन्होने कहा— अच्छा तुम चाहती क्या हो चन्द्रलेखा ? आज मैं बहुत प्रसन्न हूँ। मुह मागा इनाम पाओगी। अरे तुम तो पी ही नही रही हो। तुम भी एक चषक भरो और तुरत उसे पी जाओ। अकेले पीने म कुछ आनन्द नही आता।

मरेय का चषक भरकर चन्द्रलेखा बोली— मरे भाइ का तो आप जानते ही हैं, सम्राट ! वही जो मृदङ्ग बजाया करता है। कसा बाँका जवान है वह ! उसे भी कोई अमात्य क्या नही बना देते ? सदा आपकी सेवा म रहेगा। आपकी मुख मुद्रा को देखकर ही वह आपके मन की बात समझ जाता है।

पर इसके लिए तो मुझे मोग्गलान से पूछना पडेगा चन्द्रलेखा ! कही वह न माने तो ?

म्लान मुख से चन्द्रलेखा ने कहा तो फिर रहने दीजिए। मैं तो पहले ही कहती थी वास्तविक राजा तो मोग्गलान ही है। आप तो नाम का ही सम्राट हैं ! अच्छा यह होगा कि मैं भी भिक्षुणी बनकर उस स्थूलकाय स्थविर की चरणसेवा म लग जाऊँ।

एसा न कहो चन्द्रलेखा ! तुम्हारे बिना मैं कसे जीवित रह सकूगा ? अच्छा बताओ तुम्हारे भाई के लिए कौन सा अमात्य पद उपयुक्त होगा।'

चन्द्रलेखा ने माध्वीका का एक और चषक भरा और उसे शालिशुक के मुख से लगाते हुए कहा 'अब आप आए ठीक रास्ते पर। मेरे भाई मयूर ध्वज को सेनापति बना दीजिए।

'अरे, सेनापति बनकर वह क्या करेगा ? सिर पर लोहे का शिरस्त्राण रखेगा और शरीर पर भारी कवच। इनके बोझ से बेचारा जीते जी मर जाएगा। नये शासनतन्त्र म सेनापति का पद अब रह भी कहा गया है ? क्यो न उस समाहर्ता का पद दे दू ?'

'यह नाम तो मैंने पहले कभी नही सुना। समाहता के क्या काय होते हैं, सम्राट !

राज्य क करा को एकत्र करना। सुनो, टकसाल भी उसी के हाथा मे रहती है, जितनी चाहे मुद्राएँ ढलवा ल। साथ ही, सुराध्यक्ष और गणिका ध्यक्ष भी उसीके अधीन काम करत हैं। तुम्हारा भाई सब गणिकाआ रुपाजीवाआ नत्यशालाआ और पानगहा का सबसे बडा अधिकारी हो जाएगा।

समाहता के कार्यों को सुनकर चन्द्रलेखा खुशी से फूल उठी। सुरा का एक और चषक भरकर उसन शालिशुक के मुख स लगा दिया, और मन्द मन्द मुसकाते हुए कहा 'तो फिर यही सही, सम्राट् की आज्ञा शिरोधाय है। मैं अभी राजशासन लिख लाती हूँ आप अपनी दन्तमुद्रा उस पर लगा दीजिए।

'इसम शीघ्रता की क्या आवश्यकता है ? मैंन तुम्ह वचन दे ही दिया है। आओ मेरे पास बठो। तुम्हारा काम सूर्योन्य होते ही कर दिया जाएगा।

पर चन्द्रलखा सूर्योदय की प्रतीक्षा करन को उद्यत नही थी। वह जानती थी कि ब्राह्ममुहूत तक तो शालिशुक का सुरापान ही चलता रहेगा। फिर जब पडकर सोएँगे तो दोपहर होने तक सोन ही रहेंग। वह तुरन्त उठी और समाहता के पद पर मयूरध्वज की नियुक्ति का राजशासन लिख कर तयार करन म लग गई। दन्तमुद्रा भी उस पर लगा दी और शालिशुक क हस्ताक्षर भी करा लिए। इस काम स निवटकर वह शालिशुक के अक स जा लगी।

सूर्योन्य होते ही मयूरध्वज की समाहर्ता के पद पर नियुक्ति का समाचार सारे पाटलिपुत्र मे फैल गया। राजमार्गों पथचत्वरा और पण्यवीथिया म सवत्र इसी की चर्चा होने लगी। लोग आपस म बात कर

मागध साम्राज्य में गणिकाओं और रूपाजीवाओं का शासन स्थापित होगा। सम्राट चन्द्रलेखा के हाथों में कठपुतली के समान हैं। वह जिसे चाहेगी मन्त्री और अमात्य बनवा देगी, जिसे चाहेगी धूल में मिला देगी। अभी हुआ ही क्या है ? देख लेना शासन के सब महत्त्वपूर्ण पदों पर अब वादक, गायक और नर्तक ही नियुक्त किए जाएँगे। कोई कहता— अब समय ही बदल गया है भाई ! तुमने निपुणक को नहीं देखा ? कल तक अन्तःपुर के महानस में चावल पकाने का काम किया करता था। आज वह आन्तर्वंशिक बन गया है। सेनापति का वेश पहनकर सब पर शान जमाता फिरता है। एक अन्य नागरिक कहता— अब तो धर्म का शासन है भाई ! स्थविर मोग्गलान मौर्य शासनतन्त्र के कर्ताधर्ता हैं। सर्वत्र अमन-चैन है प्रजा सुखी है और भगवान् तथागत के धर्मानुशासन का पालन करने में तत्पर है। अब योद्धाओं और वीरों की आवश्यकता ही क्या है ? फिर क्यों न ऐसे व्यक्तियों को अमात्य नियत किया जाए जो जनता का मनोरंजन कर सकें। प्रजा का रंजन करना ही तो राजा का काम है। तुम मयूरध्वज को नहीं जानते मृदंग बजाने में अद्वितीय है। वह सबका मनोरंजन ही तो करेगा। कोई अन्य कहता—राजा को कर देते देते हम तंग आ गए थे। कोई हमारी बात नहीं सुनता था। अब क्या है ? किसी रूपाजीवा को दस-बीस कार्षापण देकर अपनी सिफारिश करा लेंगे। करों से छुट्टी मिल जाएगी। हम तो लाभ ही लाभ है।' सारे पाटलिपुत्र में इसी प्रकार की बातें हो रही थीं। समझदार लोग आश्चर्यचकित थे, मौर्य शासनतन्त्र की यह कैसी दुर्दशा हो गई है ! आचार्य चाणक्य और राधागुप्त जैसे मन्त्रियों का स्थान अब निपुणक और मयूरध्वज जैसे लोग ले रहे हैं। चाणक्य ने प्रतिपादित किया था कि केवल ऐसे व्यक्तियों को ही मन्त्री पद दिया जाए, जो सर्वोपधाशुद्ध हों, त्रिविध परखों द्वारा जिनके विषय में यह जान लिया जाए कि वे भय लालच या काम के वशीभूत नहीं हो सकते। मयूरध्वज तो किसी एक परख में भी खरा नहीं उतरेगा।

मयूरध्वज के समाहर्ता पद पर नियुक्त होने के समाचार से स्थविर मोग्गलान को भी उद्वेग हुआ। वह तुरन्त शालिशुक से मिलने के लिए राजप्रासाद में गए। दिन के दो प्रहर बीत चुके थे, पर सम्राट अभी अपने शयन

कक्ष मे ही थे। चिरकाल तक प्रतीक्षा करने के अनन्तर शालिशुक से उनकी भेंट हुई। माग्गलान ने प्रश्न किया— मैं यह क्या सुन रहा हूँ ? क्या वस्तुत मयूरध्वज को समाहर्ता के पद पर नियुक्त कर दिया गया है ?'

'हाँ, यह सही है।'

'देखो, शालिशुक ! समाहर्ता का पद बडे महत्त्व का है। राज्य की शक्ति कोपबल पर ही निर्भर होती है। समाहर्ता के पद पर ऐसे व्यक्ति को ही नियुक्त करना चाहिए जो शासन कार्य मे अत्यन्त प्रवीण हो और जो काम, क्रोध और लोभ के वशीभूत न हो सके।'

शालिशुक पर से सुरा का प्रभाव अभी दूर नहा हुआ था। मोग्गलान की स्थिति और शक्ति की उपेक्षा कर उसने आवेश म आकर कहा, 'सम्राट् मैं हूँ या आप ? शासनकार्य मुझ पर छोड दीजिए और आप धर्मविजय के महत्त्वपूर्ण कार्य म तत्पर रहिए। श्रमणो और भिक्षुओ के लिए जितने भी धन की आवश्यकता होगी मयूरध्वज वह आपको प्रदान करता रहेगा।'

पर मयूरध्वज को राज्यकार्य का कोई भी अनुभव नहीं है।

'आप मयूरध्वज को नहीं जानते स्थविर ! वह न केवल मृदग बजाने मे निपुण है, अपितु शासन म भी किसी से कम नहीं है। मैंने उसे सब बातें समझा दी हैं। आप देख लेना शीघ्र ही राज्य की आय दुगुनी हो जाएगी, और राज्यकोप धन सम्पदा से परिपूर्ण हो जाएगा। हा स्थविर ! मुझे एक बात और कहनी है। अब तक स्त्रियो का समुचित सख्या मे धर्म महामात्या के पद पर नियुक्त नहीं किया गया। धर्मविजय जो अब तक भी पूर्णरूप से सम्पन्न नहीं हो सकी है उसका यही कारण है। अब आप स्त्री महामात्या की नियुक्ति पर विशेष ध्यान दें। पर इस कार्य को तो चन्द्रलेखा अधिक अच्छी तरह कर सकती है। मैं उसे अभी बुलाता हूँ।

सकेत पाते ही चन्द्रलेखा उपस्थित हो गई। उसने दण्डवत् होकर मोग्गलान को प्रणाम किया और हाथ जोडकर मन्द मन्द मुसकाते हुए बोली मेरा अहोभाग्य है, जो आज प्रात ही सघ-स्थविर के दर्शन प्राप्त हुए हैं। कई बार मन मे आता है मैं भी भिक्षुणीव्रत ग्रहण कर कुक्कुट विहार मे रहने लगू। सासारिक सुखो से तग आ गई हूँ। यदि मेरा जीवन बुद्ध धर्म और सघ की सेवा मे व्यतीत हो सके, तो मैं कृतकृत्य हो जाऊँगी।

मुझे भिक्षुणी-संघ मे स्थान दे सकेंगे स्थविर !

चन्द्रलेखा के नाट्य को देखकर शालिशुक भी अपनी हँसी को नही रोक सके। हँसते हुए उन्होने कहा आपने देख लिया स्थविर ! चन्द्रलेखा की सद्धम मे कसी आस्था है। रात भर—बुद्ध शरण गच्छामि धम शरण गच्छामि सघ शरण गच्छामि का जाप करती रही है। नाच रग मे अब इसका मन नही लगता। यदि स्त्री महामात्यो की नियुक्ति का काय इसे सौंप दिया जाए तो कितना अच्छा हो। क्या चन्द्रलेखा ! तुम यह काय कर सकोगी न ?

क्यो नही सम्राट ! पाटलिपुत्र की बहुत-सी गणिकाएँ और रूपा जीवाएँ लौकिक सुख वभव को अब तुच्छ समझने लगी हैं। यह सब स्थविर के उपदेशो का प्रभाव है। मैं उनसे कहूगी नत्य और गायन छोडकर अब बुद्ध धम और सघ की सेवा म अपना तन मन धन न्यौछावर कर दें। भगवान तथागत का उपदेश सुनकर वेश्या अम्बपाली ने सासारिक सुखो का परित्याग कर दिया था और भिक्षुणीव्रत ग्रहण कर लिया था। हम सब भी स्थविर की चरण सेवा के लिए उद्यत हैं। अम्बपाली स हम किस प्रकार कम हैं ? कहिए स्थविर ! आपकी अनुमति है न ?

स्थविर मोग्गलान अब देर तक वहाँ नही टिके। वह एक अनुभवी व्यक्ति थे। उन्होंने समझ लिया कि मौय शासनतन्त्र का सचालन अब गणिकाओ रूपाजीवाओ गायको वादको और नतको के हाथो म रहेगा। पर जिस विपवक्ष का बीजारोपण उन्होने स्वय अपने हाथो से किया था उसे उखाडकर फेंक सकना अब उनके बस की बात नही थी। चलते हुए उन्होने गम्भीर मुद्रा म कहा—

अच्छा अब मैं चलता हूँ शालिशुक ! इस बात का ध्यान रखना कि धमविजय क काय म किसी भी प्रकार शिथिलता न आने पाए। मयूरध्वज स कह देना कि राजकीय करो के सग्रह म प्रमाद न करे और समय-समय पर मुझसे भेंट करता रहे।

मोग्गलान क चले जाने पर चन्द्रलेखा और शालिशुक खिलखिलाकर हस पडे। हसते हुए चन्द्रलेखा ने कहा बुड्ढे स बातें करते हुए थक गए होंगे सम्राट ! मृद्वीका का चषक ले आऊँ ?

'क्या कहूँ चन्द्रलेखा ! यह स्थविर न दिन मे चैन लेने देता है और न रात मे। हर समय इसे धर्मविजय की पडी रहती है। राजाओ का काम सुख भोग करना है या दूसरो की विजय करना। विजय चाहे अस्त्र शस्त्रो से की जाए और चाहे धर्म से, बात एक ही है। हम दूसरो से क्या लेना देना ?'

सुरा का चषक शालिशुक के मुख से लगाते हुए चन्द्रलेखा ने कहा 'मेरी बात मानिए। धर्मविजय का कार्य इस बुड्ढे पर छोड दीजिए। जितना धन चाहे देते रहिए। राज्यकोष मे धन की क्या कमी है ? पर ऊपर से यह दिखाते रहिए कि आपको सदा सद्धर्म के उत्कर्ष की चिन्ता रहती है और आप दिन रात बुद्ध, धर्म और संघ की सेवा मे तत्पर रहते हैं। यदि यह बुड्ढा रुष्ट हो गया, तो आपकी भी वही गति कर देगा जो भववर्मा की हुई है। बडा भयंकर आदमी है यह ! मुझे तो इसके स्मरणमात्र से डर लगने लगता है।'

'पर तुम तो भिक्षुणी बनने की बात कर रही थी और उसकी चरण सेवा करने की ?

अरे, आप समझते क्यो नही सम्राट ! इस बुड्ढे को प्रसन्न रखने मे ही हमारा कल्याण है।'

शालिशुक फिर शय्या पर लेट गए और चन्द्रलेखा को अक मे भरकर सुरापान करने लगे। मौर्य सम्राट की अब यही दिनचर्या थी। रातभर वह नाच रग मे मस्त रहते, और दोपहर तक सोते रहते। शासन का सब कार्य मयूरध्वज और निपुणक जसे अशक्त और निर्वीय अमात्यो के हाथो मे था जिन्हे राज्यकार्य का कोई भी अनुभव नही था। राज्यकोष मे जो भी धन था उसे श्रमणो और भिक्षुओ पर पानी की तरह बहाया जा रहा था। स्थविर मोग्गलान अब प्रसन्न और सतुष्ट थे क्योकि साम्राज्य मे सवत्र चातुरन्त संघ का बोलबाला था। स्थविर और भिक्षु जो चाहते करते। उनकी उपेक्षा कर सकना किसी के लिए भी सम्भव नही था।

मौर्य शासनतन्त्र की अब यह दुर्दशा हो गई थी कि नृत्यशालाओ और पानगृहो मे राजकीय नीति का निर्धारण किया जाता और पण्यवीथियो मे खडे होकर राजशासन प्रचारित किए जाते। श्रमणो और भिक्षुओं को

के लिए वह उतावला हो रहा था।

दिमित्र की सैनिक तैयारी का समाचार देवी सुभगा ने तुरन्त गोनर्द आश्रम भेज दिया। उसे प्राप्त कर आचार्य दण्डपाणि बहुत चिंतित हुए। उन्होंने पुष्यमित्र को बुलाकर कहा—

'वाह्लीक देश के समाचार तो तुमने सुन ही लिए होंगे, वत्स ! हमारे भाग्य में चैन से बैठना नहीं लिखा है। एक बार फिर हमें वाहीक देश जाकर यवनों का सामना करना होगा।

मैं उद्यत हूं, आचार्य ! केवल आपके आदेश की देर है।

अब विलम्ब करने का समय नहीं है। तुम तुरन्त अहिच्छत्र के लिए प्रस्थान कर दो। वहां से अपनी सेना को साथ लेकर शीघ्र से शीघ्र वाहीक पहुँच जाओ। मार्ग में नये सैनिक भी भरती करते जाओ। पर केवल भृत सैनिकों से काम नहीं चलेगा। क्षुद्रक मालव कठ आदि गणराज्यों को हमें एक बार फिर यवनों के विरुद्ध युद्ध के लिए तैयार करना होगा। यह बहुत आवश्यक है। मैं भी वाहीक जा रहा हूँ। यवनों के आक्रमण से उत्पन्न संकट से वहाँ के गणराज्यों को सावधान करने का प्रयत्न करूंगा।

दिव्या भी पुष्यमित्र के साथ चलने के लिए उत्सुक थी। पर उनका पुत्र अग्निमित्र अभी एक वर्ष का भी नहीं हुआ था। पुष्यमित्र ने यह उचित नहीं समझा कि उसे अकेला छोड़कर दिव्या भी साथ चले। शीघ्र ही वह अहिच्छत्र पहुँच गए। वहां भृत सेना उनकी प्रतीक्षा ही कर रही थी।

मथुरा और इन्द्रप्रस्थ होते हुए दण्डपाणि ने जब वाहीक देश में प्रवेश किया तो उन्हें ज्ञात हुआ कि दिमित्र की यवन सेना हिन्दूकुश पर्वतमाला को पार कर चुकी है और वायुवेग से सिंधु नदी की ओर अग्रसर हो रही है। दण्डपाणि सीधे मद्रक गए। यह जनपद असिक्नी (चिनाव) नदी के पूर्व से लगाकर पश्चिम में वितस्ता (जेहलम) नदी तक विस्तीर्ण था। दण्डपाणि यह भली भाँति समझ गए थे कि यवन सेना जिस वेग से भारत की ओर बढ़ रही है उसके कारण सिंधु तट पर उसके मार्ग को अवरुद्ध कर सकना कदापि सम्भव नहीं होगा। अब उन्हें यही क्रिया मार्ग प्रतीत होता था कि वितस्ता नदी के पूर्वी तट पर व्यूह रचना कर यवनों का सामना किया जाए। उन्हें ज्ञात था कि राजा पुरु ने इसी नदी के तट पर सिकन्दर से युद्ध

किया था। मद्रक जनपद की स्थिति वितस्ता के समीप थी अत उसकी सेनाएँ शीघ्र ही वहा पहुँच सकती थी। दण्डपाणि चाहते थे कि मद्रक जाकर वहाँ के गणमुख्य से भेंट करे और उन्हे यवनो के माग को अवरुद्ध करने के लिए प्रेरित करें। वह शीघ्र ही मद्रक जनपद की राजधानी शाकल नगरी पहुँच गए और सीधे गणमुख्य के घर गए। मद्रक के गणमुख्य सोमदेव एक सम्पन्न श्रेष्ठी थे, और शाकल के प्रधान राजमाग पर उनकी विशाल पण्यशाला थी। जब दण्डपाणि उनके प्रासाद के द्वार पर पहुँचे तो द्वारपाल ने उन्हे रोककर प्रश्न किया—

'कहिए आप किससे मिलना चाहते हैं ?

'गणमुख्य सोमदेव से। उनसे कहिए गोनद आश्रम से दण्डपाणि आए हैं। बहुत आवश्यक काय है, तुरन्त भेंट करना चाहते हैं।'

पर इस समय गणमुख्य किसी से भेंट नहीं कर सकते। स्थविर कश्यप आए हुए हैं और गणमुख्य उनसे महापरिनिर्वाण सूत्र का प्रवचन सुन रहे हैं।'

'आप केवल मेरे आने की सूचना उन्हें दे दीजिए।'

'यह असम्भव है आचाय ! इस समय किसी को भी गणमुख्य के पास जाने देने की अनुमति नही है।

विवश होकर दण्डपाणि को एक प्रहर प्रतीक्षा करनी पडी। जब प्रवचन समाप्त हो गया तो द्वारपाल ने आचाय के आगमन से गणमुख्य को सूचित कर दिया। स्थविर कश्यप अभी सोमदेव के पास ही बठे हुए थे। दण्डपाणि का नाम सुनकर उन्होने प्रश्न किया—

'क्या कहा ? कौन आया है ?'

गोनद आश्रम के आचाय दण्डपाणि। द्वारपाल ने सिर झुकाकर कहा।

'मैं इसे भली भाँति जानता हूँ श्रावक ! यह ब्राह्मण अत्यन्त धूत है सद्धम का कट्टर शत्रु है। हिंसा मे विश्वास रखता है। पुराने याज्ञिक कम काण्ड का अनुष्ठान करने म तत्पर रहता है। इससे सावधान रहना, श्रावक ! अच्छा, अब मैं चलता हूँ।

नही स्थविर ! आप भी अभी बठिए। आपके सामने ही मैं उनसे

बातचीत करूँगा।'

श्रेष्ठी सोमदेव से अनुमति प्राप्त कर दारपाल आचार्य दगन्धाग्नि को प्रासाद में ले गया। उन्हें देखकर सोमदेव अपने आसन से उठकर खड़ा हो गया और हाथ जोड़कर बोला—

कहिए आचार्य! शाकल से इतनी दूर यहाँ आने का कष्ट आपने कैसे स्वीकार किया? आप बड़ी दूर से आ रहे हैं। थक गए होंगे। कुछ देर विश्राम कर लीजिए। हाँ, आप ठहरे कहाँ हैं?

आप मेरे निवास और विश्राम की चिन्ता न कीजिए गणमुख्य! मेरा कार्य बहुत आवश्यक है। मैं चाहता हूँ कि आप तुरन्त मद्रक जनपद की गणसभा की बैठक बुलवाइए। मैं उसके सम्मुख कुछ निवेदन करना चाहता हूँ।'

'पर पहले आप अपना निवेदन मेरे सम्मुख प्रस्तुत कीजिए, आचार्य! उसे सुनकर यदि मैं उचित समझूँगा तो गणसभा की बैठक भी बुलवा लूँगा, और आपके निवेदन को उसके सम्मुख प्रस्तुत भी कर दूँगा।

मेरा निवेदन उचित या विचारणीय है या नहीं, इसका निर्णय अकेले आपको तो नहीं करना है गणमुख्य! गणराज्यों की सदा से यह परम्परा रही है कि जो भी निवेदन या प्रस्ताव उनके सम्मुख प्रस्तुत किए जाएँ गणसभा उनपर विचार करे, और बहुमत द्वारा जो निर्णय हो उसे सब स्वीकार करें।'

आप गणराज्यों की परम्पराओं को कैसे जानते हैं, आचार्य! आपके दशार्ण देश में तो गणों की सत्ता ही नहीं है'।

'मैं वाहीक देश में रह चुका हूँ गणमुख्य! कितनी ही गणसभाओं में अपने निवेदन भी प्रस्तुत कर चुका हूँ।

स्थविर कश्यप से अब नहीं रहा गया। कुछ आवेश के साथ उन्होंने कहा—

मैं जानता हूँ तुम क्या कहना चाहते हो, ब्राह्मण! यही न कि आर्य भूमि पर भयंकर संकट उपस्थित हो रहा है। यवन सेनाएँ शीघ्र ही इस पवित्र भूमि को आक्रान्त कर लेंगी। मद्रकों का कर्तव्य है कि अस्त्र शस्त्र धारण कर रणक्षेत्र में उतर आएँ और यवनों का संहार करने के लिए

तुम्हारे साथ चल पड़ें।'

'हाँ, स्थविर ! सन्निकट संकट का आपको भली भांति ज्ञान है।'

पर ब्राह्मण ! मद्रक लोग अब तुम्हारे बहकावे म नही आएँगे। अब उन्ह धर्म अधर्म का ज्ञान हो गया है। वे समझ गए है कि हिंसा घोर पाप है। मनुष्य को कीट पतंग तक की हत्या तो करनी नही चाहिए, और तुम उन्हे नर हत्या के लिए कहते हो।'

पर युद्ध-क्षेत्र म शत्रु के संहार को आप नर-हत्या कैसे कह सकते हैं स्थविर !'

'कौन किसका शत्रु है, और कौन किसका मित्र है ? मनुष्य स्वयं ही अपना शत्रु होता है। जब वह मन, इन्द्रिय, वासना और विषयों के वशीभूत हो जाता है तो अपने प्रति ही शत्रुता करने लगता है। मन के क्षणिक उद्वेग ही मनुष्य के सबसे बड़े शत्रु है। उन पर विजय प्राप्त करने का प्रयत्न करो ब्राह्मण ! यवन हमारे शत्रु नही हैं। उनके देशों मे भी श्रमण और भिक्षु निरापद होकर निवास करते हैं, और निश्चिन्त होकर तथागत द्वारा प्रतिपादित अष्टांगिक आर्यधर्म का पालन करते हैं। तुम यवनो को अपना शत्रु क्यों समझते हो, ब्राह्मण ! वे भी हमारे ही समान मनुष्य हैं।

'यवनो के अपने देश हैं, अपने राज्य हैं स्थविर ! वे उनमे संतुष्ट क्यों नहीं रहते ? अन्य देशों पर आक्रमण कर उन्हें जीतने का प्रयत्न वे क्यों करते हैं ? भारत पर आक्रमण कर उसे अपने अधीन करने का उन्हें क्या अधिकार है ? क्या उनके इस कार्य को आप उचित समझते हैं ?'

'राजाओं की सदा से यह परम्परा रही है कि अपने राज्यक्षेत्र के विस्तार के लिए प्रयत्नशील रहें। इस भारत भूमि का ही लो। मगध के राजाओं ने वत्स, अवन्ति कोशल और काशी आदि राज्यों को जीतकर अपने विशाल साम्राज्य का निर्माण किया। शाक्य वज्जि आदि गणराज्यों की स्वतन्त्रता का भी उन्होंने अपहरण किया। मौर्यों का शासन इस वाहीक देश पर भी स्थापित है। क्या यह उनकी साम्राज्य विस्तार की प्रवृत्ति का ही परिणाम नही है ? तुम यवनों को ही क्या दोष देते हो, ब्राह्मण !'

देखिए स्थविर ! सम्पूर्ण आर्यभूमि की सभ्यता और संस्कृति एक है। यहाँ के निवासियों के धर्म चरित्र और व्यवहार भी एकसदृश हैं।

मगध के राजाओ ने इसे जो एक शासन-सूत्र म सगठित किया है, उससे इसकी शक्ति बढी ही है। यदि वाहीक देश मौर्य साम्राज्य के अन्तगत है तो इससे आप यह नही कह सकते कि यह किसी विदेशी राजा के अधीन है। पर यवन लोग आर्यों से बहुत भिन्न हैं। उनकी भाषा सस्कृति, धम रहन-सहन —सब आर्यों से पृथक हैं। यदि वे भारत पर अपना आधिपत्य स्थापित करने मे समथ हो गए, तो उनका शासन परायो का शासन होगा अपनो का नही।

'तुम इस तथ्य का भूल जाते हो ब्राह्मण कि उदार चरित मनुष्या के लिए सम्पूण पृथ्वी ही एक कुटुम्ब के समान है। तुम यवनो को क्यो पराया समझते हो ? उनके शासन का क्या विदेशी कहते हो ? कुछ वष हुए अन्तियोक और एवुथिदिम ने हिन्दूकुश पवतमाला को लाघकर कपिश गान्धार म प्रवेश किया था। इन जनपदो के शासक सुभागसेन ने उस समय बडी बुद्धिमत्ता प्रदर्शित की। उसने चुपचाप यवना की अधीनता स्वीकार कर ली। परिणाम क्या हुआ ? यवनराज ने सुभागसेन को ही इन जनपदो का शासक नियुक्त कर दिया। तुम विचार करके देखा ब्राह्मण ! यदि सुभागसेन यवनो का सामना करता उनके विरुद्ध शस्त्र उठाता तो क्या परिणाम होता ? फलती फूलती नगरिया ध्वस हो जाती लाखा स्त्रिया विधवा हो जाती अनगिनत बच्चे अनाथ हो जाते ! कपिश गान्धार के ये समृद्ध जनपद एक विशाल श्मशान का रूप प्राप्त कर लेते। क्या यह उचित होता ? युद्ध अत्यन्त भयकर होता है ब्राह्मण !

'क्या आपकी दृष्टि म देशभक्ति और राष्ट्रीय गौरव का कोई महत्त्व नही है स्थविर !'

य सब मानसिक भावनाएँ हैं ब्राह्मण ! इस नदी या इस पवत तक का देश मेरा है इसस पर का देश पराया है य विचार सकुचित मनोवृत्ति के परिणाम हैं। सारी पृथ्वी को तुम अपना समझो उसके सब निवासियो को तुम अपना मानो। यवन और आय सब एक हैं। यदि यवन सेना सिन्धु नदी को पार कर वाहीक देश म प्रविष्ट हो जाती है तो इसस क्या हानि है ? हम क्या उसके माग को रोकने का प्रयत्न करें ? हम चाहिए हम स्नेहपूवक यवना का स्वागत करें अन्न जल और धन-सम्मान द्वारा उन्ह सतुष्ट करें।

हमारे प्रेम और विनय के सम्मुख उनका सिर झुक जाएगा, उनकी हिंस्रवृत्ति नष्ट हो जाएगी और वे हमे अपना मित्र मानने लगेंगे। शत्रु का परास्त करने का यही उपाय है ब्राह्मण! भगवान् तथागत ने यही प्रतिपादित किया था। सद्धम को स्वीकार करन म ही तुम्हारा कल्याण है।'

'तो क्या आप यह चाहगे कि सम्पूण भारत भूमि पर यवना का आधिपत्य स्थापित हो जाए?'

'इसम हानि ही क्या है? राजा का काय देश म शान्ति और व्यवस्था स्थापित रखना ही तो है। तुम्हारा यह आग्रह क्यो है कि हमार देश म यह काय केवल ऐसा ही व्यक्ति करे जो इसी देश म उत्पन्न हुआ हो, इसी देश की भाषा बोलता हो और इस देश के अन्य निवासियो के जसे ही वस्त्र पहनता हो? यदि यह काय यवन राजा करने लगें, तो हमे क्यो विप्रतिपत्ति होनी चाहिए? जनता के हित और सुख को सम्पादित करना केवल राजा का ही काय तो नही है। देखो, ब्राह्मण! हमारा बौद्ध सघ प्राणिमात्र के कल्याण के लिए प्रयत्नशील है। मनुष्य के हित और सुख के लिए वह कस-कस काय कर रहा है। यवनो का शासन स्थापित हो जाने पर य काय बन्द तो नही हो जाएँगे। य काय तो हम यवनो के देशा म भी कर रहे हैं। वे हमारे माग मे कोई बाधा उपस्थित नही करते।

'पर बौद्ध सघ जनकल्याण के लिए जो काय कर रहा है उसके लिए धन तो वह राज्यकोप से ही प्राप्त करता है। यवन राजा बौद्ध नही हैं। क्या आप समझते हैं कि भारत पर अपना शासन स्थापित कर लेन पर वे आपको राज्यकोष स यथेष्ट धन प्रदान करते रहेग?

बौद्ध धम के अनुयायी तो तुम भी नही हो ब्राह्मण! यदि तुम धर्म या सम्प्रदाय का प्रश्न उठाते हो, तो भारत के बौद्ध तुम्हारी सहायता क्या करें?

पर हम सब भारतीय और आय तो हैं स्थविर! सम्प्रदाय भेद होते हुए भी हम सबकी भाषा एक है, सस्कृति एक है, सभ्यता एक है परम्परा एक है और चरित्र व्यवहार एक हैं। इस देश के गृहस्थ ब्राह्मणा और श्रमणा का समान रूप से आदर करते हैं, सबको दान-दक्षिणा द्वारा सतुष्ट रखते हैं, और सब धर्मों व सम्प्रदायो के मूल तत्वा को ग्रहण करने में तत्पर रहते

हैं। मुझम और आपम उतना भेद नही है, जितना कि हमम और यवना म है।

'हम इस भेद को भी दूर करना होगा ब्राह्मण ! हमारी धमविजय की नीति का यही उद्देश्य है। हम सम्पूर्ण विश्व म एक धम और एक सस्कृति का प्रसार करना चाहते हैं। हम मनुष्यमात्र की एकता के पक्षपाती हैं। चातुरन्त सघ का यही प्रयत्न है कि सब देशा के लोग वण, भाषा जाति आदि के भेदभाव को भुलाकर अपने को एक समझने लगें। हमारे विहार और चत्य सवत्र स्थापित हैं। अग बग कलिङ्ग आन्ध्र, तमिल पाण्ड्य वाल्हीक, यवन पार्थिव—कौन-सा ऐसा देश है जहाँ हमारे सघाराम और चत्य न हा, और जहाँ श्रमण और भिक्षु निवास न करते हो। क्या इन देशो की भाषा एक है ? क्या इनके निवासी जातीय दृष्टि स एक हैं ? पर भाषा जाति आदि के भेद होते हुए भी इन सबमे एक प्रकार की एकता विद्यमान है जिसका आधार धम है। जरा विचार तो करो, ब्राह्मण ! हमारा यह धम साम्राज्य कितन महत्त्व का है। पाटलिपुत्र का कोई स्थविर या श्रमण यदि आज वाल्हीक के नगरा म जाए, तो क्या उसे वहाँ परायापन अनुभव होगा ? इसी प्रकार यदि कोई यवन स्थविर श्रावस्ती या चम्पा मे जाए, तो क्या वह अपने को वहाँ विदेशी समझेगा ? किसलिए ? क्योकि सवत्र एकसदृश विहारा की सत्ता है सवत्र भिक्षुआ का रहन-सहन एकसमान है सर्वत्र एक ही धर्मानुशासन का पालन किया जा रहा है। यवन और आय के भेद को महत्त्व देकर तुम इस एकता को नष्ट कर देना चाहते हो ब्राह्मण ! इस धम साम्राज्य की तुलना मे तुम उस राजनीतिक साम्राज्य को क्या महत्त्व देते हो जिसका आधार पशुबल है ?

'आधी सदी के लगभग हो गया जब स भारत के धम महामात्य यवन देशा मे काय कर रहे है। स्थविर और भिक्षु भी वहाँ जनकल्याण म तत्पर हैं। भारत का कोटि-कोटि धन इन देशो मे व्यय किया जा चुका है। पर अब तक भी यवना ने आपके इस उपदेश को नहा माना कि शस्त्र विजय निरथक और गह्य है। आपकी नीति के कारण भारत की सन्य शक्ति क्षाण हो चुकी है और मौर्यों का शासनतन्त्र अस्त्र शस्त्रो को जरा भी महत्त्व नही देता। पर दिमित्र कितनी बडी सेना को साथ लेकर भारतभूमि म प्रवेश कर

रहा है ? यह सेना क्या भारतीयो की सेवा के लिए आ रही है ? यह आर्य भूमि को पदाक्रान्त कर हमारी नगरियो को ध्वस करेगी खून की नदियाँ बहाएगी, स्त्रियो और बच्चो को दास बनाकर यवन देशो मे ले जाएगी, और यहाँ की सब धन-सम्पत्ति को लूट लेगी। क्या आपकी सम्मति म यह सब उचित होगा स्थविर !'

यह सब तब होगा, जब कि हम भी यवनो के विरुद्ध शस्त्र लेकर उठ खडे होगे। पर यदि हम उनके सम्मुख सिर झुका दें, उनका प्रेमपूर्वक स्वागत करें और स्नेह के साथ उन्हे गले लगा लें, तो वे क्यो हमारी नगरियो को ध्वस करेंगे और क्या किसी को दास बनाएँगे ?'

'राजा अपने जीते हुए प्रदेशो म अपने धर्म भाषा और व्यवहार को प्रचलित करने का प्रयत्न किया करते हैं स्थविर ! वे अपने विजित से जो कर और बलि ग्रहण करते हैं उसका उपयोग अपने सुखभोग और अपने देश की समृद्धि क लिए करते हैं। व परास्त जनता के प्रति ऐसा बरताव करते हैं, जिसे कभी सम्मानास्पद नही माना जा सकता। आर्य यवनों के दास होकर रहे यह मुझे कदापि सह्य नही है।

पर यवनराज अतियोक तो सुभागसेन से अधीनता स्वीकार कराके ही सतुष्ट हो गया था। उसने यह प्रयत्न तो नही किया कि कपिश गान्धार पर अपना शासन स्थापित करे।'

'यह सही है, पर इसका कारण यह था कि सिन्धुतट के युद्ध म उसे हमारी सेना से मुह की खानी पडी थी। वह वापस लौट गया था, क्योकि उसे भय था कि हमारी सेना कही कपिश-गान्धार पर भी आक्रमण न कर दे। बाल्हीक देश का युवराज दिमित्र जिस विशाल सेना के साथ भारत पर आक्रमण करने के लिए अग्रसर हो रहा है, वह वाहीक देश के जनपदो से केवल अधीनता स्वीकार कराके ही सतुष्ट नही हो जाएगी। दिमित्र यहाँ अपना स्थायी शासन स्थापित करने का प्रयत्न करेगा। वाहीक जनपदो की जो स्वतन्त्रता मौर्यों के शासन मे अक्षुण्ण रही है दिमित्र के शासन म वह नष्ट हुए बिना नही रहेगी।'

'यवन क्या करेंगे और क्या नही, यह तो समय ही बताएगा।'

मैं आपसे एक प्रश्न पूछता हूँ, स्थविर ! यदि दस्युओ का दल श्रेष्ठी

सोमदेव की पण्यशाला पर आक्रमण कर और उसके पण्य को लूटने लगें तो श्रेष्ठी को क्या करना चाहिए ?

मानव जीवन की चरम साधना यह है कि अपने सर्वस्व को दूसरों के लिए उत्सर्ग कर दिया जाए। वही मनुष्य बोधिसत्त्व के पद को प्राप्त कर सकता है जो भूखे सिंह की क्षुधा को शान्त करने के लिए अपने शरीर को उसे सौंप दे अंधे को दृष्टि प्रदान करने के लिए अपनी आँखें निकालकर दे दे और दूसरों के लिए अपने घर धन-सम्पत्ति और देश तक का परित्याग कर दे। श्रेष्ठी सोमदेव अभी श्रावक मात्र हैं बोधिसत्त्व का आदर्श इनके लिए अभी दूर की बात है।'

'दस्युओं द्वारा अपनी पण्यशाला को लुटते हुए देखकर इन्हें क्या करना चाहिए, मेरे इस प्रश्न का उत्तर आपने नहीं दिया स्थविर ! जब यह बोधिसत्त्व के आदर्श के समीप पहुंच जाएँगे तब इनका क्या कर्तव्य होगा, यह मुझे ज्ञात हो गया। पर अभी तो यह श्रावक हैं। इस समय इनका क्या कर्तव्य है ?

देखो ब्राह्मण ! प्रश्न यह था कि यवनसेना के वाहीक देश में प्रविष्ट होने पर मद्रकों का क्या कर्तव्य है। उसका उत्तर मैंने दे दिया।'

अच्छा स्थविर ! श्रेष्ठी सोमदेव का यह प्रासाद अत्यन्त विशाल है। यदि सौ दो सौ व्यक्ति इसमें प्रविष्ट होकर इसे अपने अधिकार में ले लें और श्रेष्ठी के लिए केवल एक छोटा-सा कक्ष छोड़ दें तो इनका क्या कर्तव्य होगा ? क्या यह अपने प्रासाद पर दूसरों का अधिकार हो लेने दें ?

'तुम तो एक ही बात को घुमा फिराकर बार-बार कह रहे हो, ब्राह्मण !

यह सही है, स्थविर ! जैसे व्यक्ति के लिए अपना घर है अपनी पण्यशाला है अपनी कर्मशाला है वैसे ही जनता के लिए अपना देश है। जो नीति किसी श्रावक को—बोधिसत्त्व को नहीं—अपने घर या पण्यशाला के सम्बन्ध में बरतनी उचित है जनता उसी को अपने देश के लिए प्रयोग क्यों न करे ?'

कश्यप ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। वह उठकर खड़े हो गए। चलते हुए उन्होंने सोमदेव से कहा—

'मद्रक जनपद मे तथागत के धम का अनुशीलन अभी प्रारम्भ ही हुआ है। यह ब्राह्मण चाहता है कि मद्रक लोग अहिंसा के माग का परित्याग कर फिर हिंसा को अपना ल। ध्यान रखना, यह उन्हें कही पथभ्रष्ट न कर दे। अच्छा अब मैं चलता हूँ। भगवान् तथागत तुम्हारा कल्याण करें।'

कश्यप के चले जाने पर आचाय दण्डपाणि ने मद्रक-गणमुख्य सोमदेव से कहा—

मेरे निवदन को आपने सुन लिया है। कहिए, आपका क्या निणय है?'

'मेरा निणय वही है जो आपन अभी स्थविर के श्रीमुख से सुना है।'

पर क्या आप मुझे गणसभा के सम्मुख अपना निवदन प्रस्तुत करन का अवसर प्रदान नही करेंगे?

'जब निणय आपको ज्ञात हो ही चुका है तो गणसभा का समय व्यर्थ नष्ट करने से क्या लाभ होगा?

सब निणय बहुमत द्वारा किए जाएँ, गणराज्यो की इस परम्परा का क्या आप अनुसरण नही करेंगे।

'मद्रक जनपद की परम्पराओ का मुझे आपसे अधिक ज्ञान है, आचाय।'

सोमदेव की बात से आचाय दण्डपाणि को घोर निराशा हुई। अब वहाँ और अधिक बठे रहना व्यथ था। वह उठ खडे हुए और सोमदेव क प्रासाद से बाहर निकल आए। शाकल नगरी के उत्तरी भाग म भगवान अपराजित शिव का एक पुराना मन्दिर था। उन्होंने सोचा, रात को वही जाकर विश्राम किया जाए। एक शिखा-सूत्रधारी तेजस्वी आचाय को सम्मुख देख कर मन्दिर का पुजारी सोमश्रवा उनके अभिनन्दन के लिए उठ कर खडा हो गया, और हाथ जोडकर बोला—

कहाँ से पधारे रहे हैं आचाय!'

'गोनद आश्रम से आ रहा हूँ। दण्डपाणि मेरा नाम है। एक रात मन्दिर म विश्राम करना चाहता हूँ।'

'दण्डनीति के विश्वविख्यात आचाय मेरा सादर प्रणाम स्वीकार करें। मेरा सौभाग्य है जो गोनद आश्रम के महान् आचाय मेरे मन्दिर म

के कारण न इनमे गणसभाएँ थी और न जानपद सभाएँ। तक्षशिला और राजगृह (केकय की राजधानी) के पुराने दुग अब भी विद्यमान थे पर वहाँ सेना और अस्त्र शस्त्रो का सवथा अभाव था। इनके शासन के लिए मौय सम्राट की ओर से वपसेन नाम का कुमार नियुक्त था, जो कपिश गान्धार के शासक सुभागसेन के समान राजकुल के साथ सम्बध रखता था। जब उसके पास सन्य शक्ति थी ही नही तो वह दिमित्र का सामना कस करता? बिना युद्ध के ही उसने आत्मसमपण कर दिया। तक्षशिला और राजगृह म दिमित्र न यवन क्षत्रपो की नियुक्ति की, और वपसेन स शासन के सब अधिकार ले लिए। पूर्वी गान्धार और केकय को पदाक्रान्त करती हुई यवन सनाए असिक्नी (चिनाब) नदी क समीप तक पहुच गइ और अब वे मद्रक जनपद म प्रविष्ट होने लगी। जब यह समाचार शाकल नगरी म पहुँचा तो तुरन्त मद्रक जनपद की गणसभा की बठक बुलाई गई। स्थविर कश्यप भी उसमे उपस्थित हुए। उन्होने प्रस्ताव किया कि मद्रका के सब कुलमुख्य गणमुख्य सोमदेव ने साथ शाकल नगरी से चार योजन बाहर जाकर दिमित्र का स्वागत करें। सारी नगरी को तोरणा और बन्दनवारा से सजाया जाए पथ चत्वरा पर मगल घट स्थापित किए जाएँ और यवन सेना के स्वागत म एक महोत्सव का आयाजन किया जाए। मद्रक लोग इस समय स्थविरो के इतने प्रभाव म आ चुके थे कि उन्होने सवसम्मति से इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया।

दिमित्र का स्वागत करते हुए गणमुख्य सोमदेव ने कहा 'शाकल नगरी मे आपका स्वागत है यवनराज! हम मद्रक लोग बुद्ध धम और सघ की शरण म आ चुके है युद्ध म हमारा विश्वास नही है हिंसा को हम पाप मानते हैं। आपने हजारो योजन की यात्रा कर हमारी इस नगरी म पधारने का कष्ट किया है। आप यहा सुखपूवक निवास कीजिए। हमारी केवल यह इच्छा है कि हम तथागत द्वारा प्रतिपादित अष्टागिक आयमाग का शान्ति पूवक अनुसरण करते रह सकें। हमारी सब धन सम्पत्ति आपके चरणा म समर्पित है। स्थविर कश्यप ने हमारी आखें खोल दी हैं। उनके उपदेशा के कारण लौकिक सुख भोग का हमारी दष्टि मे कुछ भी महत्त्व नहीं रह गया है।

सोमदेव का स्वागत भाषण सुनकर दिमित्र अत्यन्त प्रसन्न हुए। उसका उत्तर देते हुए उन्होंने कहा, 'धर्म के प्रति मद्रक लोगों की जो प्रगाढ़ श्रद्धा है, उसे जानकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। मैंने सुन रखा था कि भारत के निवासी धन-सम्पत्ति को तृणवत समझते हैं, और परलोक में सुख की प्राप्ति को ही जीवन का ध्येय मानते हैं। आज इसे स्वयं यथार्थ रूप में देखकर मेरा चित्त प्रसन्न हो गया है। आप निश्चिन्त होकर सद्धर्म का अनुसरण करते रहिए। हम उसमें किसी भी प्रकार से कोई बाधा नहीं डालेंगे। आपके उद्देश्य अत्यन्त महान् हैं। लौकिक सुखभोग को तुच्छ मानकर आप निर्वाण की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील हैं। अध्यात्म चिन्तन की जिस ऊँचाई पर आप लोग पहुँच गए हैं हम यवन उससे बहुत पीछे हैं। पर हमारे सम्मुख भी एक महान् उद्देश्य विद्यमान है। सम्पूर्ण पृथ्वी को एक शासन में ले आना हमारा लक्ष्य है। बहुत से राज्यों की सत्ता ही युद्ध का कारण है। युद्ध कैसा भयंकर और गर्ह्य होता है यह आप भलीभाँति जानते हैं। इस तथ्य की साक्षात अनुभूति सबसे पूर्व आपके देश के ही एक राजा को हुई थी। मैं प्रियदर्शी राजा अशोक का आदर करता हूँ क्योंकि उन्होंने युद्ध की भयंकरता और बर्बरता को अनुभव कर शस्त्र शक्ति के परित्याग कर देने का निश्चय किया था। पर युद्ध तो अशोक के पश्चात भी होते रहे। इसका कारण यही है कि अभी पृथ्वी पर बहुत से राज्यों की सत्ता है। यदि सब देश एक ही राजा के शासन में आ जाएँ, तो कौन किससे युद्ध करेगा? विश्व विजय के जिस लक्ष्य को सम्मुख रखकर मैंने वाल्हीक नगरी से प्रस्थान किया है उसके सफल हो जाने पर संसार से युद्धों का सदा के लिए अन्त हो जाएगा। जब युद्ध नहीं होंगे, तो हिंसा भी नहीं होगी। आप लोग अहिंसा में विश्वास रखते हैं मेरी दृष्टि में भी हिंसा उचित नहीं है। जब सारी पृथ्वी यवनों के एकच्छत्र शासन में आ जाएगी तो युद्धों की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। मुझे विश्वास है कि मद्रक जनपद के नागरिक मेरी योजना का स्वागत करेंगे और हमारे इस पुनीत कार्य में पूर्ण सहयोग प्रदान करेंगे। आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि हमने शाकल नगरी में एक यवन स्कन्धावार को स्थापित करने का निश्चय किया है। इसमें बीस सहस्र यवन सैनिक रहेंगे। आपके जनपद की रक्षा का भार इन सैनिकों पर होगा।

शत्रुओं और आभ्यन्तर उपद्रवों से सर्वथा निश्चिन्त होकर अब आप शान्ति पूर्वक सद्धर्म का पालन करने में तत्पर रह सकेंगे। पर इस यवन स्कन्धावार का सब व्यय आपको उठाना होगा। मद्रक जनपद में धन सम्पत्ति की कोई कमी नहीं है। यहाँ की भूमि उपजाऊ है। अन्न यहाँ प्रभूत मात्रा में उत्पन्न होता है। यहाँ के पशु बहुत पुष्ट हैं। उनका मांस अत्यन्त सुस्वादु है। यवन सेना को जिस अन्न दूध मांस आदि खाद्य पदार्थों की आवश्यकता हो, वे सब आपको प्रदान करने होंगे और साथ ही वस्त्र, अस्त्र शस्त्र और सुरा आदि भी। उनके आमोद प्रमोद के लिए गणिकाओं और रूपाजीवाओं की व्यवस्था भी आप करेंगे। मुझे विश्वास है, यह आपको स्वीकार्य होगा। आप लोग तो इन सांसारिक पदार्थों को तुच्छ मानते हैं। वस्तुतः ये हैं भी तुच्छ ही। आपको इनकी आवश्यकता ही क्या है? इनका भोग यवन सैनिकों को करने दीजिए। हाँ, एक बात और है। मैंने निश्चय किया है कि शाकल नगरी का नाम बदलकर एवुथिदिमिया कर दिया जाए। आर्यों के समान हम यवन भी अपने गुरुजनों का आदर करते हैं। मेरे पितृचरण सम्राट एवुथिदिम आपके धर्म को आदर की दृष्टि से देखते हैं। वाह्लीक नगरी में भी संघाराम और चैत्य विद्यमान हैं। सम्राट अनेक बार उनके दर्शन भी कर चुके हैं। उनके नाम पर आज से यह नगरी एवुथिदिमिया कहाएगी। यवन और आर्य यहाँ साथ साथ निवास करेंगे भाई भाई के समान। यह नगरी आर्यों और यवनों की चिरमैत्री की प्रतीक होगी। यवनों और मद्रकों की मैत्री अमर रहे।'

यवनराज दिमित्र के जय-जयकार और 'यवन मद्रक मैत्री अमर रहे' के घोष के साथ स्वागत-समारोह समाप्त हुआ। स्थविर कश्यप के प्रभाव के कारण मद्रक कुलमुख्यों ने दिमित्र के सम्मुख सिर झुका देना स्वीकार कर लिया पर सर्वसाधारण मद्रक गृहस्थ इससे प्रसन्न नहीं थे। वे एक प्रकार का उद्वेग और आक्रोश अनुभव कर रहे थे। जब बीस हजार यवन सैनिक स्थायी रूप से शाकल नगरी में स्कन्धावार डालकर निवास करने लगे, तो उनका यह आक्रोश और भी अधिक बढ़ गया। यवन सैनिक नागरिकों से उद्दण्डता का व्यवहार करते, मार्ग चलती युवतियों से छेड़छाड़ करते, पण्यशालाओं से जिस वस्तु को चाहते उठा ले जाते सुपुष्ट गौओं को

कृषको के घरो से पकड ले जाते और राजमार्गों पर उनका वध करते। यह सब देखकर मद्रक युवक आक्रोश से परिपूर्ण हो जाते, पर यवनो के सम्मुख वे असहाय थे। एक दिन कुछ कुलमुख्य स्थविर कश्यप के पास गए, और हाथ जोडकर उनसे बोले—

'यवन सैनिको की गतिविधि को आप देख ही रहे हैं, स्थविर ! उनका व्यवहार अब हमसे अधिक सहा नही जाता। वे हमारी भावनाओ को जरा भी महत्त्व नही देते। क्या इसका कोई उपाय नही है ?'

सहिष्णुता ही इसका एकमात्र उपाय है श्रावक ! भावनाओ के वशीभूत हो जाना मनुष्य की सबसे बडी निबलता होती है। क्षणिक मानसिक उद्वेग पाप के मूल हैं।'

'पर यवनो का व्यवहार तो असह्य है, स्थविर ! वे हमारी आखो के सम्मुख गोवध करते हैं हमारी युवतियो से छेडछाड करते हैं और हमारी पण्यशालाओ को लूटते हैं।'

देखो श्रावक ! इस देश म शाक्त लोग भी निवास करते हैं। पशुओ की बलि देना उनके धार्मिक अनुष्ठान का अग है। तुम इसे सहन करते हो या नही ? पशुबलि द्वारा य शाक्त अपना ही परलोक बिगाडते हैं तुम्हारा तो नहीं। यदि यवन गोवध करते हैं तो उन्हे करने दो। तुम्हारी इसमे क्या हानि है ? परलोक म वही कष्ट उठाएँगे, तुम तो नहीं।

'पर गौएँ तो हमारी हैं, स्थविर ! बल का प्रयोग कर उन्हे पकड ले जाने का यवनो को क्या अधिकार है ?

'इस बलप्रयोग का फल उन्हें स्वय भुगतना होगा, श्रावक !'

'क्या हम अपनी बालिकाओ के अपहरण को भी सहते रहे, स्थविर !'

यवनो को अभी सद्धर्म का ज्ञान नही हुआ है। हमारे सम्पर्क म आकर वे धीरे धीरे कामवासना को वश म करना सीख जाएँगे। हमे उन्हे धर्म द्वारा जीतना है, हिंसा से नहीं।

मद्रक कुलमुख्यो को कश्यप की बातो से सतोष नही हुआ। पर वे कर ही क्या सकते थे ? उनके जनपद पर अब यवनो का आधिपत्य स्थापित हो चुका था। वे अब पूर्णतया असहाय थे।

मद्रक जनपद को विजय कर दिमित्र पूर्व म और आगे बढा। इरावती

(रावी) नदी के पूव मे कठ जनपद की स्थिति थी। कठ लोग वीरता के लिए भारत भर म प्रसिद्ध थे। उन्होंने यवन सेना का वीरतापूवक सामना किया, पर वे अकेले उसे कसे परास्त कर सकते थे ? दिमित्र की सेना ने कठो की राजधानी साकल नगरी का घेर लिया। प्रत्येक पथचत्वर माग और वीथि पर घनघोर युद्ध हुआ। जब तक एक भी कठ युवक जीवित रहा लडाई चलती रही। पर अन्त म कठो की पराजय हुई। कोई एक सदी पूव सिकन्दर ने साकल नगरी का बुरी तरह विध्वस किया था। कठो की शक्ति उससे बहुत क्षीण हो गई थी। उनमे जो बल शेष था दिमित्र से लडते लडते उसका भी अन्त हो गया। इसके पश्चात कठ लोग इतिहास से प्राय लुप्त हो गए।

दिमित्र के आक्रमण का समाचार जब मालव गण के कुलमुख्यो को ज्ञात हुआ तो वे बहुत चिन्तित हुए। उन्होंने तुरन्त अपनी गणसभा की बैठक बुलाई। गणमुख्य देववर्मा ने अध्यक्ष का आसन ग्रहण किया। मालव कुल मुख्यो को सम्बोधन करते हुए उन्होंने कहा—

यवन आक्रमण के समाचार आपको ज्ञात ही हैं। दिमित्र इरावती नदी को पार कर कठो के विरुद्ध युद्ध म व्यापृत है। वहाँ से निबटकर वह तुरन्त मालव गण पर आक्रमण करेगा। हमे अब परस्पर विचार विमश कर अपने कर्तव्य और नीति का निर्धारण कर लेना चाहिए।

ग्रामणी मातृविष्णु सिन्धु तट के युद्ध मे भाग ले चुके थे। अब वह खडे हुए और उन्होंने कहा—

मालवों म वीरता की जो परम्परा अनादि काल स चली आ रही है, अभी उसका अन्त नहीं हुआ है। प्रत्येक मालव युवक युद्धविद्या म निष्णात है, बचपन स ही वह शस्त्र सचालन का अभ्यास करता है। सिन्धु तट के युद्ध म हम यवनो को परास्त करन म समथ हुए थे। पुष्यमित्र ने वहाँ जिस सेना को साथ लेकर यवनो स लोहा लिया था उसम मालव वीर सवप्रधान थ। एक बार फिर हम यवनो का सामना करना होगा। मेरा प्रस्ताव है कि तुरन्त मालव सेना का सगठन प्रारम्भ कर दिया जाए। यदि सम्भव हो तो क्षुद्रक गण का भी सहयोग लेन के लिए आमन्त्रित किया जाए। क्षुद्रक हमारे पडोसी हैं और वीरता की परम्परा भी उनम अक्षुण्ण है। सिकन्दर के विरुद्ध

मालव और क्षुद्रक सेनाएँ एक साथ मिलकर लड भी चुकी हैं।'

पर गणमुख्य देवभूति इससे सहमत नही थे। उन्होंने कहा—

'यवनराज दिमित्र की सैन्य शक्ति बहुत अधिक है। यवनो के अतिरिक्त शक, तुखार और युइशि सैनिक भी उसकी सेना मे है। इस बार पश्चिम की ओर से जो यह आधी उठी है, वह अत्यन्त भयकर है। उसे रोक सकना न हमारी शक्ति मे है और न क्षुद्रको की। जसे आधी के वेग से बडे बडे वक्ष लडखडाकर गिर पडते हैं वसे ही यवन सेना के सम्मुख वाहीक देश के सब जनपद एक एक करके धराशायी होते जा रहे है। केकय अभिसार और मद्रक—सब दिमित्र की अधीनता मे आ चुके है। कठ लोग जी जान से लडाई मे तत्पर हैं, पर वे देर तक यवनो के सम्मुख नही टिक सकेंगे। आचाय चाणक्य ने ठीक कहा था कि गणो की शक्ति उनके सहत पर ही निभर रहती है। पर अब इतना समय नहीं रहा है कि हम क्षुद्रक, शिवि आग्रेय आदि गणो को एक सघ मे सहत होने के लिए प्रेरित कर सकें। मौर्य साम्राज्य कें अन्तगत हो जाने पर हम आत्मरक्षा की समस्या से निश्चिन्त हो गए थे। पर मौर्यों की सैन्यशक्ति अब पूर्णतया क्षीण हो चुकी है। हम अकेले कदापि यवनो का सामना नही कर सकते।

'तो क्या आप यह प्रस्ताव प्रस्तुत करना चाहते हैं कि हम भी मद्रको के समान यवनो के सम्मुख आत्म-समपण कर दें ?' ग्रामणी मातृविष्णु ने गणमुख्य को बीच म ही टोककर कहा।

नही ग्रामणी ! आप पहले मेरे वक्तव्य को ध्यानपूवक सुन लें, फिर अपनी सम्मति प्रगट करें। मेरा प्रस्ताव यह है कि हमारे जनपद के दक्षिण म जो विशाल मरुभूमि है मालव गण वहाँ प्रवास कर ले। गणो के लिए यह कोई नई बात नही है यह उनकी पुरानी परम्परा है। जरासन्ध के निरन्तर आक्रमणो के कारण जब अन्धक-वृष्णि सघ के लिए आत्मरक्षा कर सकना सम्भव नही रहा था, तो सघमुख्य केशव ने यही प्रस्ताव अन्धक वृष्णियो की सघ-सभा के सम्मुख प्रस्तुत किया था। सघ-सभा ने केशव के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और अन्धक-वृष्णि सघ मथुरा-वृन्दावन के अपने पुरान जनपद का चिरकाल के लिए परित्याग कर द्वारिका म जा बसा। जो घोर सकट उस समय मगधराज जरासन्ध के आक्रमणो के

अंधक-वृष्णियों के सम्मुख उपस्थित हुआ था, वही आज यवनों के आक्रमण से हमारे सामने है। हमारे सम्मुख तीन मार्ग हैं, या तो मद्रकों के समान आत्मसमर्पण कर दें, या कठों के समान अपना सर्वस्व स्वाहा करने को उद्यत हो जाएँ, और या प्राचीन काल के अंधक-वृष्णियों के समान किसी सुरक्षित प्रदेश में प्रवास कर लें। पहला मार्ग मालव गण कभी भी स्वीकार नहीं करेगा। वह हमारे आत्मसम्मान के विरुद्ध है। दूसरे मार्ग को मैं आत्महत्या समझता हूँ। अपने बल अबल को दृष्टि में रखकर ही शत्रु के प्रति नीति का निर्धारण करना चाहिए, यह नीति ग्रंथों का वचन है। मैं प्रस्ताव करता हूँ कि मालव गण तीसरे मार्ग का अनुसरण करे। इसीमें हमारा हित है।'

ग्रामणी मातृविष्णु फिर खड़े हुए। गणमुख्य के प्रस्ताव का विरोध करते हुए उन्होंने कहा, 'संघमुख्य केशव ने अपने जनपद का परित्याग कर द्वारिका में प्रवास का प्रस्ताव संघ सभा के सम्मुख तब प्रस्तुत किया था जब अंधक-वृष्णि लोग अठारह बार जरासंध से परास्त हो चुके थे। पर अभी कुछ ही वर्ष हुए सिंधुतट के युद्ध में हम यवनों के दाँत खट्टे कर चुके हैं। हमारा यह जनपद कैसा शस्य श्यामल है, यहाँ की भूमि कैसी उपजाऊ है! यहाँ का जल दूध की शक्ति रखता है और दूध घी की। हमारे युवक वीर हैं, युद्ध से वे नहीं डरते। गणमुख्य ने यह कैसे समझ लिया कि हम यवनों को परास्त नहीं कर सकेंगे। मरुभूमि में न कृषि की सुविधा है, न पशुपालन की और न शिल्प की। उस प्रदेश में जाकर बसने से तो यह कहीं अधिक अच्छा है कि हम अपनी इसी पावन भूमि में शत्रु से युद्ध करते हुए अपने प्राणों की बलि दे दें।'

कतिपय अन्य कुलमुख्यों और ग्रामणियों ने भी प्रस्तुत समस्या के सम्बन्ध में अपने-अपने विचार प्रगट किए। सम्मति लेने पर गणमुख्य का प्रस्ताव बहुमत से स्वीकृत हो गया। भारी मन से मालवों ने अपने उस जनपद का परित्याग करने का निश्चय किया जहाँ वे सदियों से निवास कर रहे थे, जहाँ उनके कुल-देवताओं के मंदिर थे और जिसे वे अपनी धर्मभूमि मानते थे। जो भी अन्न, धन-सम्पत्ति और साज-सामान साथ ले जाया जा सकता था, उस सबको बैलगाड़ियों, घोड़ों और खच्चरों पर लाद लिया गया। बच्चों और वृद्धों के लिए रथों की व्यवस्था की गई। देव मन्दिरों में

अन्तिम बार पूजा कर पुरुषो, स्त्रियो, बच्चो, पशुओ और रथो का एक बहुत बडा साथ दक्षिण की ओर चल पडा, एक ऐसे नये प्रदेश मे बस जाने के लिए जो एक विस्तीण मरुभूमि के रूप मे था। वहा न कोई राजमाग थे, न कोई सारिणियाँ और न कोई वीथिया। पगडडियो पर चलता हुआ यह साथ निरतर आगे बढता गया। मालव युवको का एक दल साथ के आगे-आगे चल रहा था, ताकि माग को साफ करता जाए झाडियो को उखाडकर रथो और गाडियो के लिए रास्ता बनाता जाए गड्ढो को भर दे और नाला को पाट दे। मालवो के साथ को माग म बहुत कष्ट उठाने पडे। मरुभूमि मे विश्राम के लिए न कही पान्थशालाएँ थी, और न जल के लिए कुएँ। छ मास की यात्रा के अनन्तर यह साथ मरुभूमि के एक ऐसे प्रदेश म पहुँच गया, चम्बल नदी के जल से सिंचित होने के कारण जहा हरियाली थी, पशुओ के चरने की जहाँ सुविधा थी और जहा की भूमि भी खेती के लिए उपयुक्त थी। कुलमुख्यो ने वही पर बस जाने का निश्चय किया, और वहाँ अपना पडाव डाल दिया। मालव लोग बडे साहसी और कमण्य थे। देखत-देखते उनका छोटा-सा पडाव एक समृद्ध नगरी के रूप म परिवर्तित हो गया।

शिवि गण ने भी मालवा का अनुसरण किया। शिवि जनपद की स्थिति मालव जनपद के दक्षिण-पश्चिम म थी। मरुभूमि मे भी शिवि गण मालवा के दक्षिण म जा बसा और वहा उसने माध्यमिका के नाम से अपनी नई नगरी की स्थापना की।

कठ गण का विध्वस कर दिमित्र ने जब दक्षिणी वाहीक म प्रवेश किया तो उसन देखा कि मालव और शिवि जनपद उजडे पडे हैं। न वहाँ कोई मनुष्य है और न कोई पशु। उनके नगर और ग्राम अब भी विद्यमान हैं, उनके प्रासाद भवन पण्यशालाएँ पानगह आदि सब अक्षुण्ण हैं पर सवत्र श्मशान की-सी शान्ति विराज रही है। पक्षिया का कलरव तक कही सुनाई नही देता। यवन सनिका ने सब प्रासादो और पण्यशालाओ को खोल डाला, पर उन्ह न कही अन्न मिला और न कोई धन-सम्पत्ति। क्रोध म आकर उन्होंने सब नगरा और ग्रामा को आग लगा दी। मालव और शिवि गणो के जो भौतिक अवशेष इस प्रदेश मे अब तक भी अवशिष्ट थे वे सब अब राख क ढेर म परिवर्तित हो गए। अब दिमित्र की सेना ने पूव की **ओर**

प्रस्थान किया। पुष्यमित्र की सेना भी अब तक यमुना नदी को पार कर कुरु जांगल के प्रदेश में पहुँच गई थी। वाहीक देश से कुरु-पाञ्चाल आने वाला मार्ग तब कुरुक्षेत्र होकर ही आता था। पुष्यमित्र की सेना यहीं व्यूह रचना कर यवनों की प्रतीक्षा में तत्पर थी। पर जो यवन सेना मध्य देश की ओर बढ़ती हुई जब कुरुक्षेत्र के समीप पहुँची तो उसने आश्चर्य के साथ देखा कि एक विशाल भारतीय सेना उसका मार्ग अवरुद्ध करने के लिए सन्नद्ध है। इसी समय दिमित्र को यह समाचार मिला कि यवनराज एवुथिदिम की मृत्यु हो गई है। अब उसके लिए भारत में टिक सकना सम्भव नहीं रहा। उसने तुरंत पश्चिम की ओर प्रस्थान कर दिया। शाकल पहुँचने पर उसे ज्ञात हुआ कि बाल्हीक नगरी में एवुक्रतिद ने अपने को राजा घोषित कर दिया है। यद्यपि एवुक्रतिद भी राजकुल का था पर बाल्हीक के राजसिंहासन का वास्तविक और न्याय्य अधिकारी दिमित्र ही था। जो भी यवन सेनाएँ भारत में थीं सबको साथ लेकर दिमित्र ने सिन्धु नदी पार कर ली और कपिश-गान्धार होता हुआ वह बाल्हीक चला गया।

आचार्य दण्डपाणि की नई योजना

यवन सेनाएँ पश्चिम की ओर प्रस्थान कर चुकी थीं। पुष्यमित्र के स्कन्धावार में सर्वत्र उल्लास छाया हुआ था। सैनिक निश्चिन्तता के साथ कुरुक्षेत्र के पवित्र कुण्डों में स्नान करने और मंदिरों में देवदर्शन करने में अपना समय बिता रहे थे। पर दण्डपाणि और पुष्यमित्र अब भी निश्चिन्त नहीं थे। वे जानते थे कि दिमित्र शीघ्र ही फिर भारत पर आक्रमण करेगा। वे अपने पट मण्डप में बैठे हुए विचार विमर्श में निमग्न थे कि एक दण्डधर उनकी सेवा में उपस्थित हुआ। प्रणाम निवेदन के अनन्तर उसने कहा 'कुछ तीर्थयात्री आपसे भेंट करना चाहते हैं आचार्य!'

'ये यात्री कौन हैं और कहाँ से आए हैं?'

'मैंने उनसे सब कुछ पूछ लिया है आचार्य! ये बहुधान्यक के निवासी हैं, और तीर्थयात्रा के लिए कुरुक्षेत्र आए हैं। कहते हैं आचार्य और सेनानी

क दशन करना चाहते है।

'क्या वे कुछ समय प्रतीक्षा नही कर सक्ते ? हम एक गम्भीर प्रश्न पर विचार विमश म तत्पर हैं।'

'मैंने उनसे कह दिया था, आचाय ! उनका कहना है, वे भी एक महत्त्वपूण काय से ही आचाय से भेंट करना चाहते हैं। केवल दशन करना ही उनका उद्देश्य नही है।'

अच्छा उन्हे उपस्थित करो। यह भली भाँति देख लेना, उनके पास कोई अस्त्र शस्त्र तो नही हैं। यवनो के गुप्तपुरुष कुरुजागल और वाहीक देश म सवत्र छाए हुए है।

दण्डपाणि से अनुमति प्राप्त कर दण्डपाल तीययात्रिया को अपने साथ ले आया। दण्डवत प्रणाम कर ये आचाय के सम्मुख खडे हो गए। उन्हे आसन ग्रहण करने का सकेत कर आचाय ने प्रश्न किया—

कहिए, आप लोगो ने क्से कष्ट किया ?'

हम बहुधायक के निवासी हैं। तीथयात्रा करते हुए कुरुक्षेत्र आए थे। यहाँ आने पर ज्ञात हुआ गोनद आश्रम के विश्वविख्यात आचाय इन दिना कुरुक्षेत्र म ही हैं। भारत भूमि मे कौन ऐसा व्यक्ति है जो आपकी विद्वत्ता और धर्माचरण से अपरिचित हो ! सेनानी के वीर कृत्यो के गीत तो वाहीक देश के घर घर म गाए जाते हैं। यह हमारा सौभाग्य है, जो आज आपके दशन प्राप्त हुए।

'बहुधायक तो यौधेय जनपद म है न ?

'हाँ, आचाय !

'मैं यौधेयो के कुलमुख्यो से मिलना चाहता था। पश्चिम खण्ड म यौधेय ही हैं जिनम वीरता और शौय की परम्परा अब तक भी सुरक्षित है। मद्रको से मुझे बहुत निराशा हुई। स्थविरो के प्रभाव म आकर उन्होंने यवनो के सम्मुख आत्मसमपण कर देने म ही अपना हित समझा। मालव और शिवि गणो ने अपने जनपदो का सदा के लिए परित्याग करके मरु भूमि म प्रवास करने का निणय किया। उनका यह काय वीरो के अनुरूप नही हुआ। कठो के लिए मेरे हृदय म अपार आदर है। सांकल नगरी ध्वस हो गई पर क ो ने यवनो की अधीनता स्वीकार नही की। मुझे

बहुत आशा है। यवनराज सिकन्दर उन्हीं की शक्ति से भयभीत होकर व्यास नदी को पार करने का साहस नहीं कर सका था।

'यौधेयों के विषय में आपकी सम्मति सुनकर हम गौरवान्वित हुए, आचार्य! हमारी प्रार्थना है, आप बहुधान्यक पधारने का कष्ट स्वीकार करें। हम यौधेय लोग कार्तिकेय स्कन्द के उपासक हैं। कार्तिकेय ब्रह्मण्य देव हमारे कुल-देवता हैं। बहुधान्यक में उनका एक विशाल मंदिर है, जहाँ कार्तिकी पूर्णिमा के दिन एक महोत्सव हुआ करता है। सब यौधेय नर नारी उसमें सम्मिलित होते हैं। इस उत्सव में अब केवल दस दिन रह गए हैं। यौधेय लोग आपके दर्शन प्राप्त कर अपार तृप्ति अनुभव करेंगे आचार्य!'

'क्या यौधेयों में गण शासन की परम्परा अब तक भी सुरक्षित है?'

'आचार्य चाणक्य की नीति की उपयोगिता को स्वीकार कर यौधेयों ने भी मौर्य साम्राज्य के अन्तर्गत होकर रहना स्वीकार कर लिया था। चाणक्य का यह विचार निस्सन्देह सही था, कि हिमालय से समुद्र पर्यन्त सहस्र योजन विस्तीर्ण इस आर्यभूमि को एक शासन-सूत्र में संगठित होना चाहिए। पर अपने जनपद में हमारा अपना शासन अब भी पूर्ववत विद्यमान है। हम अपनी गणसभा में एकत्र होते हैं, अपनी परम्पराओं का अनुसरण करते हैं, और अपने चरित्र व व्यवहार को स्वयं निर्धारित करते हैं।'

'मौर्यों की धर्मविजय की नीति का यौधेयों पर क्या प्रभाव पड़ा है?'

'सम्राट अशोक के समय में बहुधान्यक में भी धर्ममहामात्य की नियुक्ति की गई थी। कुछ बौद्ध स्थविर भी उनके साथ धर्मप्रचार के लिए आ गए थे। पर उन्हें हमारे जनपद में सफलता प्राप्त नहीं हो सकी। हम कार्तिकेय स्कन्द के उपासक हैं, आचार्य! युद्ध और सैनिक जीवन को हम गौरव की दृष्टि से देखते हैं। भगवान स्कन्द के उपासक क्षात्रधर्म की उपेक्षा कैसे कर सकते हैं? हमारी जिस क्षात्र शक्ति से यवनराज सिकन्दर भयभीत हो गया था, उसका अभी ह्रास नहीं हुआ है आचार्य!'

'मुझे यह जानकर बहुत सन्ताप हुआ। मैं अवश्य बहुधान्यक जाऊँगा। यवनों से आर्यभूमि की रक्षा हम करनी ही है। मौर्य शासनतन्त्र अब सर्वथा निर्वीर्य हो गया है। धर्मविजय और अहिंसा की धुन में मौर्यों ने क्षात्र

धम की उपेक्षा कर दी है। यौधेया के बल-पराक्रम द्वारा ही अब भारत-भूमि की रक्षा कर सकना सम्भव है। क्या मैं आप लोगो का परिचय प्राप्त कर सकता हूँ ?'

मेरा नाम मयूरध्वज है, आचाय ! मैं यौधेयों के लगवीर कुल का कुलमुख्य हूँ। मेर ये साथी भी विभिन्न कुलो के कुलमुख्य हैं।'

'यौधेय गण के गण-पुरस्कृत पद पर आजकल कौन विराजमान हैं, कुलमुख्य !'

महासनापति स्कन्दवर्मा। वह मत्तमयूरक कुल के कुलमुख्य हैं, और गतवप ही गणपुरस्कृत के पद पर निवाचित हुए हैं। वह अत्यन्त साहसी और विकट योद्धा हैं।'

क्या यौधेय जनपद मे कोई स्थायी सेना भी विद्यमान है ?'

नही, आचाय ! प्रत्येक यौधेय कुमार बाल्यावस्था मे ही धनुर्विद्या की शिक्षा प्राप्त कर लेता है, और युवा होन तक विकट योद्धा बन जाता है। गणपुरस्कृत ही यौधेया का महासेनापति भी होता है।'

भगवान् ब्रह्मण्यदेव के मन्दिर मे जो महोत्सव कार्तिकी पूर्णिमा के दिन होनेवाला है क्या उसमे वाहीक देश के अन्य जनपदा के नर-नारी भी सम्मिलित होंगे ?'

हाँ आचाय ! कुलिन्द शाक्लायन वामरथ आग्रेय, राजन्य आदि जो जनपद यमुना और शतुद्रि (सतलज) नदिया के बीच मे या उनके समीप के प्रदेशा मे स्थित हैं उन सबसे बहुत-से नर-नारी इस अवसर पर बहुधान्यक आएगे। भगवान कार्तिकेय के प्रति इन जनपदा म अगाध श्रद्धा का भाव है। बौद्ध धम का प्रवेश इन जनपदो म अभी नही हुआ है आचाय ! इनके निवासी अब तक भी सत्य सनातन वदिक धर्म म विश्वास रखत हैं और प्राचीन देवी-देवताओ की उपासना करत हैं। इन जनपदो म भी कार्तिकेय स्कन्द के मन्दिर विद्यमान हैं पर जो महिमा बहुधान्यक के कार्तिकेय ब्रह्मण्यदेव की है वह किसी अन्य की नहीं है।'

आपसे मिलकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई कुलमुख्य मयूरध्वज ! मैं अवश्य बहुधान्यक आऊगा और भगवान् ब्रह्मण्यदेव की पूजा म सम्मिलित होऊँगा।'

यौधेयगण का यह परम सौभाग्य होगा, आचार्य !

मयूरध्वज और उनके साथियों ने आचार्य दण्डपाणि से विदा ली और प्रणाम निवेदन कर जब वे चले गए, तो दण्डपाणि ने पुष्यमित्र से कहा—

यमुना और शतुद्री के अन्तर्वेद में स्थित इन गणराज्यों से मुझे बहुत आशा है वत्स ! मद्रक, शिवि और मालव जैसे वाहीक देश के जनपद जो कार्य नहीं कर सके, सम्भवतः ये उसे सम्पन्न कर सकें। प्रयत्न तो हमें करना ही है।

'पर क्या ये गण अकेले अकेले रहते हुए यवन सेना का सामना कर सकेंगे, आचार्य ! यवनराज सिकन्दर ने जब भारत पर आक्रमण किया था तो वाहीक देश के जनपदों को परास्त करने में उसे विशेष कठिनाई नहीं हुई थी। कठ आग्नेय आदि जनपद क्या वीरता में किसी से कम थे ? जब मालवों और क्षुद्रकों की सेनाओं ने परस्पर मिलकर सिकन्दर से युद्ध किया तो वह उन्हें परास्त नहीं कर सका। यौधेय लोग अनुपम योद्धा हैं कुनिन्द भी वीरता में किसी से कम नहीं हैं। पर जब तक ये सब परस्पर संहत नहीं हो जाएँगे यवनों के मार्ग को अवरुद्ध कर सकना सम्भव नहीं होगा। हमें इन्हें एक शासन-सूत्र में संगठित करने का प्रयत्न करना चाहिए।

एक शासन-सूत्र में तो ये अब भी संगठित हैं वत्स ! सब मौर्य सम्राट की अधीनता स्वीकृत करते हैं सब मागध साम्राज्य के अन्तर्गत हैं। पर विशाल साम्राज्यों की यह निर्बलता होती है कि उनके शासन में सम्राट की स्थिति मूर्धन्य व सर्वोच्च रहती है। यदि सम्राट शक्तिशाली और उत्थानशील हो तो शासनतन्त्र भी शक्तिशाली और उत्थानशील रहता है। इसके विपरीत यदि वह प्रमादी हो जाए राज्यकार्य की उपेक्षा करने लगे भोग विलास में व्यस्त रहने लगे तो शासनतन्त्र में भी शिथिलता आ जाती है। मौर्यों का ही लो। चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार जैसे सम्राटों के समय में उनका शासन सशक्त था। चन्द्रगुप्त की सैन्य शक्ति के सम्मुख सैल्युकस को भी मुँह की खानी पड़ी थी। इन सम्राटों के शासन काल में किसी भी विदेशी राजा में यह साहस नहीं था कि वह भारत की ओर क्रूर दृष्टि से देख सके। पर अशोक और उसके उत्तराधिकारियों के शासनकाल में ? मौर्य साम्राज्य खण्ड-खण्ड होना प्रारम्भ हो गया उसकी शक्ति क्षीण हो गई और यवनों

के आक्रमण फिर स होने लग गए। साम्राज्य एक व्यक्ति व उत्थानशीलता और शक्ति पर निभर रहा करते हैं, वत्स! इसी कारण व चिरकाल तक स्थायी नही रह पाते। पर गणराज्या के सम्बन्ध म यह बात नही कही जा सकती। वहाँ राजा या गणमुख्य 'समाना म ज्येष्ठ' होता है। यदि वह अपन कतव्य म प्रमाद करने लग, उत्थानशील न रहे, तो उस पदच्युत कर दिया जाता है। गणराज्या के सभी नागरिक 'राजा' होत हैं, अपन जनपद को वे समान रूप से प्रेम करते हैं, और उसकी रक्षा के लिए सदा उद्यत रहते है।'

सम्पूण आयभूमि को एक शासन में सगठित करने की जिस नीति को आचाय चाणक्य ने प्रतिपादित किया था क्या वह सही नही है, आचाय!

'समय और परिस्थिति का देखत हुए वह नीति सवथा उपयुक्त थी। चन्द्रगुप्त जसे साहसी और वीर के नतृत्व में भारतभूमि को एक शासन मे लाकर चाणक्य ने वस्तुत अत्यन्त बुद्धिमत्ता का काय किया था। अपनी अनुपम प्रतिभा के कारण चाणक्य ने गण-जनपदा की स्वतन्त्रता को नष्ट नही होने दिया। मौय साम्राज्य क अन्तगत होत हुए भी वे अपनी स्वतन्त्र सत्ता रखते हैं। वीरता की जो परम्परा उनमें अत्यन्त प्राचीन काल स चली आ रही थी, वह भी अब तक नष्ट नहीं हुई है। पर कोई भी नीति सब समयो में और सब परिस्थितियो म उपयुक्त नही रह सकती। आज मौय शासनतन्त्र की जो दुदशा है उसे दृष्टि में रखने हुए हमें इस नीति में परिवतन करना होगा। आज मुझे यही उचित प्रतीत हाता है कि ये गण राज्य पूणरूप से स्वतन्त्र हो जाएँ, मौय साम्राज्य स इनका कोई सम्बन्ध न रह। तभी य यवनो का सामना करने का महत्त्वपूण काय भली भाति सम्पन्न कर सकेंगे। इन्हे यह अनुभव होना चाहिए कि हम पूण रूप से स्वतन्त्र हैं हमारी रक्षा की उत्तरदायिता अब मौर्यों पर नही रही है। यवनो से भारत की रक्षा का यही उपाय है वत्स!'

'क्या यह सम्भव नही है कि शालिशुक जसे अशक्त और निर्वीय व्यक्ति को पाटलिपुत्र के राजसिंहासन से च्युत करके किसी एसे राजकुमार को मौय सम्राट के पद पर अभिषिक्त कर दिया जाए जो चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार की वीर परम्परा मे आस्था रखता हो और जो स्वय भी पराक्रमी

और उत्पातशील हो ?'

यह असम्भव तो नहीं है वत्स ! पर पाटलिपुत्र का राजकुल अब सर्वथा निर्वीर्य हो चुका है। धन-सम्पदा और सुख-वैभव मनुष्य को निर्बल बना देते हैं। यह सही है कि मौर्य कुल के सब कुमार शालिशुक जैसे अशक्त और प्रमादी नहीं हैं। पर एक सदी से भी अधिक समय तक सुख भोग करते रहने के कारण मौर्य कुल में अब वह शक्ति नहीं रह गई है जो यवनों का सामना करने में समर्थ हो सके। आज पाटलिपुत्र का राजप्रासाद षडयन्त्रों का केन्द्र बना हुआ है। सब राजकुमार एक-दूसरे के शत्रु हैं। अमात्य और मन्त्रियों के महत्त्वपूर्ण पदों पर ऐसे व्यक्ति नियुक्त हैं जिन्हें राजधर्म का ज्ञान ही नहीं है। सब कोई स्वार्थ-साधन में तत्पर हैं। इस शासन में शक्ति का सञ्चार कर सकना बहुत कठिन है। मौर्यों से अब मुझे कोई भी आशा नहीं है।

'तो अब आपकी क्या योजना है आचार्य !'

'हम बहुधान्यक जाएँगे और भगवान् ब्रह्मण्यदेव के महोत्सव में सम्मिलित होंगे। इस अवसर पर समीपवर्ती गणों और जनपदों के बहुत-से कुलमुख्य और ग्रामणी वहाँ आएँगे। हम उनसे विचार विमर्श करेंगे और उन्हें सगठित होकर यवनों का सामना करने के लिए प्रेरित करेंगे।

पर ये जनपद स्वतन्त्र तो नहीं हैं, आचार्य ! एक सदी से भी अधिक समय हो गया जब से ये मौर्य सम्राटों के अधीन हैं। सुदीर्घ समय से इन्हें क्षात्रशक्ति के प्रयोग का अवसर भी नहीं मिला है। युद्ध की क्षमता को बनाए रखने के लिए निरन्तर अभ्यास की आवश्यकता होती है। यह अभ्यास रणक्षेत्र में ही हो सकता है। इन जनपदों में भृत और आटविक सैनिकों का भी अभाव है। इनमें जो भी सैनिक हैं सब मौल हैं और इनकी संख्या भी पर्याप्त नहीं हो सकती।'

यह सही है, वत्स ! भृत सेना के सगठन पर तो हमें ध्यान देना ही चाहिए। तुम्हारे साथ जो सेना इस समय है उसके बहुसख्यक सैनिक भृत ही हैं। हमें उनकी संख्या और अधिक बढ़ानी चाहिए। पर साथ ही यह भी आवश्यक है कि यमुना शतुद्रि के प्रदेश में जो ये अनेक जनपद हैं, इनकी सैनिक क्षमता का पूरा-पूरा उपयोग किया जाए। इनके नागरिक वीर और

साहसी हैं सनिक परम्परा भी अभी उनमें विद्यमान है। इह केवल यह अवगत करा देना है कि वाल्हीक देश का यवनराज सबका शत्रु है और यदि भारत का आक्रान्त करने मे वह सफल हो गया तो न किसी की स्वतन्त्रता रह पाएगी और न किसी का धम।'

'पर यदि इन गणराज्यो ने अपनी स यशक्ति का पुन सगठन कर लिया, तो क्या ये मौय साम्राज्य की अधीनता से स्वतन्त्र नही हो जाएँगे ? क्या इससे भारत की राजशक्ति खण्ड-खण्ड नही हो जाएगी ?'

'मौर्यों की राजशक्ति अब है ही कहाँ, वत्स! सीमा त के सब दुग उजडे पडे हैं। वहा न सेना है और न अस्त्र शस्त्र। पाटलिपुत्र के शासनतन्त्र की दशा जीवनमृत के समान है। उसमे शक्ति का सञ्चार कर सकना असम्भव है। अब,हमारे सम्मुख एक ही माग है। यदि ये गणराज्य फिर से अपनी खोई हुइ पूण स्वतन्त्रता को प्राप्त कर लें, इनका पुनरुत्थान हो जाए और इनमे अपनी पथक् स्थिति और स्वाधीनता की रक्षा के लिए उत्कट अभिलाषा जागत हो जाए, तो ये भारतभूमि पर यवनो को कभी अपने पर नही जमाने देंग। तुम्हे आयभूमि की एकता की चिन्ता है वत्स! चन्द्रगुप्त मौय जसा काई भी वीर भविष्य म कभी भी इस काय का सम्पन्न कर सकता है। पर इस समय हमारे सम्मुख मुख्य समस्या दिमित्र के आक्रमण से भारतभूमि की रक्षा करने की है। इसके लिए मागध साम्राज्य की बलि दे देने म भी मुझे काई विप्रतिपत्ति नहीं हागी। यौधेय कुलिन्द आजुनायन आदि गणराज्यो की शक्ति का यदि पुनरुत्थान हो जाए और य सब यवन सेना को भारत मे आगे न बढ्ने दें, तभी हमारी कार्यसिद्धि सम्भव है। बहुधान्यक जाकर मैं इसी के लिए प्रयत्न करना चाहता हूँ।

आपका विचार सवथा समुचित है, आचाय!'

हम कल प्रात ही बहुधान्यक के लिए प्रस्थान कर देंगे। तुम्हारी सेना अभी कुरुक्षेत्र म ही रहेगी। हाँ अपने कुछ सनिको को भी साथ लेते चलो। सुना है कार्तिकी पूर्णिमा के दिन ब्रह्मण्यदव के मन्दिर के प्राङ्गण म अनेक विध समाजो का भी आयोजन किया जाता है, जिनम वीर युवक अपने शौय और बल का प्रदशन करते हैं। तुम्हारी सेना में दशाण, कुरु और पाञ्चाल जनपदो के जो सनिक हैं वीरता मे व किससे कम हैं। मल्लयुद्ध दौड

आदि म जो युवक अनुपम कौशल प्रदर्शित करते हैं उन्हें पणमणिया द्वारा सम्मानित भी किया जाता है। हमारे सैनिकों को भी अपनी वीरता और शौर्य प्रदर्शित करने का जो यह अनुपम अवसर मिल रहा है उसे हाथ से नही जाने देना चाहिए।

'आपकी आज्ञा शिरोधार्य है आचार्य !'

बहुधान्यक मे कार्तिकी पूर्णिमा का महोत्सव

यौधेय गण की बहुधान्यक नगरी म कार्तिकी पूर्णिमा के दिन बडी धूमधाम थी। सब राजमार्गों और पण्यवीथियो को पुष्पमालाओ द्वारा भलीभाँति अलकृत किया गया था। नर-नारी और बालक-बालिकाएँ रग बिरगे सुदर वस्त्र पहनकर सवत्र घूम फिर रहे थे। दूर-दूर के जनपदो से हजारो यात्री इस दिन बहुधान्यक आए हुए थे और पान्थशालाओ मे कही तिल रखने का भी स्थान नही रहा था। बहुत से यात्री पट मण्डपो म निवास कर रहे थे और जिन्हे कही भी स्थान नही मिला वे आम्रवाटिकाओ म डेरा डाले पडे थे। भगवान ब्रह्मण्यदेव के मन्दिर के विशाल प्राङ्गण म भीड का कोई अन्त नही था। लोग पत्रपुष्प हाथ मे लेकर मन्दिर मे प्रवेश करते और देव-दर्शन कर ब्रह्मण्यदेव स्कन्द का जय-जयकार करते। आचार्य दण्डपाणि और सेनानी पुष्यमित्र भी अपने कुछ चुने हुए सैनिकों के साथ बहुधान्यक पहुच गए थे। यौधेय गण के वे सम्मान्य अतिथि थे और उनके निवास की व्यवस्था गण-सभा के अतिथि भवन म की गई थी।

मन्दिर के समीप ही एक सुविशाल रगशाला थी जिसम अनेक विध समाजो का आयोजन किया गया था। सबसे पूर्व रथो की दौड हुई और फिर मनुष्यो की। चार योजन की दौड म राजन्यगण के युवक चन्द्रमौलि प्रथम आए। केतकी के पुष्पो और पत्रो से निर्मित पणमणि को धारणकर जब चन्द्रमौलि रगशाला की वेदी पर [illegible] जय-जयकार से सारी रगशाला गूज उठी [illegible] चन्द्रमौलि साथ लेकर आचार्य दण्डप[illegible]

दष्टि मे इस दौड का बडा महत्त्व है, आचाय ! जो इसम विजयी हो जाए, उसका हम बहुत सम्मान करते हैं। गत अनेक वर्षों से यौधेय युवक ही इस दौड मे विजयी होते रहे थे। पर इस वष यह गौरव राजय गण को प्राप्त हुआ है।' आचाय दण्डपाणि ने चन्द्रमौलि को आशीर्वाद दत हुए कहा—'तुम्हारा सदा कल्याण हो, युवक ! तुम्हारा यह शौय भारत भूमि की रक्षा के लिए काम आए।'

अब पशुओ और मनुष्यो के युद्ध प्रारम्भ हुए। तीन सिंह पिंजरो से छोड दिए गए। उन्ह चार दिन भूखा रखा गया था। क्रोध से उन्मत्त हुए ये सिंह ज्यो ही रगशाला मे प्रविष्ट हुए तीन युवक खडग हाथ मे लेकर उनका सामना करने के लिए उतर आए। इनमे चम्बल नदी की घाटी का एक सनिक भी था, जिसका नाम वीरसेन था। वह पुष्यमित्र की सेना मे गुल्मपति था। देखते-देखते सिंहो और युवको म लडाई प्रारम्भ हो गई। रगशाला के चारो ओर जो अपार जनसमूह एकत्र था वह लडाई के इस दृश्य को दखकर चमत्कृत रह गया। रगशाला म पूण शान्ति छा गई। कितने ही युवको ने अपनी आखें बन्द कर ली, और बहुत सी स्त्रिया भय के कारण मूर्च्छित हो गइ। कुछ क्षणो के अनन्तर दशको म नई लहर का प्रादुर्भाव हुआ और उन्होने युवको की रणचातुरी और शौय को देखकर हृषनाद करना प्रारम्भ कर दिया। वे जय जयकार के साथ युवको को बढावा देन लगे। अपने नखो और दष्ट्रा से एक सिंह ने वीरसेन को लहूलुहान कर दिया पर उस वीर सनिक न हार नही मानी। वह निरन्तर लडता रहा और अन्त म उसने अपनी खड्ग स सिंह का काम तमाम कर दिया। सिंह के भूमिसात होते ही सारी रगशाला वीरसन के जय जयकार मे गूज उठी। अन्य दो युवको म से एक को सिंह न बुरी तरह क्षत विक्षत कर दिया और उस रगशाला से उठाकर बाहर ले जाया गया। तीसरे युवक ने देर तक सिंह से युद्ध किया और अन्त म वह भी अपने प्रतिद्वन्द्वी को परास्त करने म समथ हुआ। वह युवक यौधेय जनपद का निवासी था और उसका नाम चण्डवर्मा था। वीरसेन और चण्डवर्मा को पणमणियो से पुरस्कृत किया गया। मल्लयुद्ध म आजुनायन गण के रविगुप्त ने सवप्रथम स्थान प्राप्त किया और लक्ष्यभेद म यौधेयगण के शान्ति वर्मा ने। इन्हे भी पणमणियाँ प्रदान की गइ।

सात दिन तक इसी प्रकार समाज होते रहे। मल्लयुद्ध, दौड और हिंस्र पशुओ से युद्ध आदि के पश्चात अनेक प्रकार की प्रेक्षाएँ प्रदर्शित की गइ, नाटक खेले गए अभिनय किए गए और सगीत और नृत्य के आयोजन हुए। अत म एक सहभोज हुआ जिसम उन सब यात्रियो को आमन्त्रित किया गया जो भगवान ब्रह्मण्यदेव के दशन के लिए अय जनपदो से बहुधायक आए थे। आचाय दण्डपाणि इस महोत्सव मे सम्मिलित हो कर बहुत प्रसन्न हुए। विशेषतया समाजो ने उन्हे बहुत प्रभावित किया। उन्हे देखकर वह अनुभव कर रहे थे कि भारत के मध्य देश से वीरता और शौय की जिस परम्परा का लोप हो गया है यमुना पार के इन जनपदो म वह अब भी भलीभाँति सुरक्षित है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि उसका उपयोग देश की रक्षा के लिए किया जा सके।

जब महोत्सव समाप्त हो गया तो आचाय दण्डपाणि ने यौधेय जनपद की गणसभा के सम्मुख अपना निवेदन प्रस्तुत करने की इच्छा प्रकट की। उन्होने यह प्रस्ताव भी किया कि जो कुलमुख्य, ग्रामणी और सेनानायक अय जनपदो से बहुधायक आए हुए हैं, वे भी दशक रूप म इस सभा म सम्मिलित हो सकें। यौधेयगणपुरस्कृत स्कदवर्मा ने आचाय के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। शीघ्र ही गणसभा की बठक बुलाई गई। दण्डपाणि का स्वागत करते हुए स्कदवर्मा न कहा—

'हमारा अहोभाग्य है, जो गोनद आश्रम क महान आचाय श्री दण्डपाणि आज हमारे बीच म उपस्थित हैं। दण्डनीति और धनुर्वेद के आप प्रकाण्ड पण्डित हैं और वेदशास्त्रो म आपकी अबाध गति है। आप केवल दण्डनीति के प्रवक्ता ही नही हैं, अपितु साथ ही उसके प्रयोक्ता भी हैं। यह आपके नीतिबल का ही परिणाम था, जो यवनराज अतियोक और एवुथिदिम को सिधुतट के युद्ध म मुह की खानी पड़ी थी। यह आपका ही कतृत्व था जो एक विशाल आय सेना कुरुक्षेत्र के रणक्षेत्र म मिनिन्द्र का सामना करने के लिए सनद्ध हो सकी थी। मैं आचायपाद का स्वागत करता हूँ और उनसे अपना निवेदन प्रस्तुत करने की प्राथना करता हू।

जयघोष क बीच म आचाय दण्डपाणि अपने आसन स उठकर खड़े हो गए और धीर-गम्भीर वाणी म उन्होने अपना प्रवचन प्रारम्भ किया—

'मुझे यह देखकर अत्यन्त हर्ष हुआ है कि आपके इस जनपद मे भारत की प्राचीन परम्पराए अब तक भी भलीभांति सुरक्षित हैं। आप लोग अब भी भगवान् कार्तिकेय स्कन्द के उपासक हैं। बौद्ध स्थविरो, श्रमणो और भिक्षुओ ने प्राचीन सत्य सनातन आर्यधर्म के विरुद्ध जो आन्दोलन प्रारम्भ किए हुए हैं, आप उनके प्रभाव मे नही आए हैं। स्कन्द देवताओ के सेनानी हैं। सेनानी स्कन्द के उपासक यदि स्वय भी वीर हो, तो इसमे आश्चर्य की कोई बात नही है। आपके इन गण जनपदो के साहाय्य से ही आचार्य चाणक्य और चन्द्रगुप्त मौर्य ने हमारी आर्यभूमि को एक शासन-सूत्र मे सगठित किया था। निर्वीय नन्दकुल का विनाश कर चन्द्रगुप्त जो सम्पूर्ण भारत मे एक चक्रवर्ती शासन स्थापित करने मे समर्थ हुआ, उसमे वाहीक जनपदो का सहयोग ही प्रधान कारण था। पर आज मागध साम्राज्य की सैन्यशक्ति का ह्रास हो चुका है। उसने सम्राट क्षात्रधर्म को भूल गए हैं। राजाओ का कार्य काषाय वस्त्र पहनकर और सिर मुडाकर परलोक की चिन्ता करना या निर्वाण के लिए प्रयत्न करना नही है। उनका कार्य खड्ग हाथ मे लेकर दस्युओ का सहार करना और शत्रुओ से स्वदेश की रक्षा करना है। आपको ज्ञात ही है कि गत वर्षों मे दो बार यवन सेनाएँ हमारी पवित्र आर्यभूमि को आक्रान्त कर चुकी हैं। उनके आक्रमण का भय आज भी दूर नही हुआ है। विदेशी आक्रान्ताओ से भारत भूमि की रक्षा के प्रयोजन से ही चाणक्य और चन्द्रगुप्त ने इस देश मे एक चक्रवर्ती साम्राज्य की स्थापना की थी, और इसीलिए आपके सब गण-जनपदो ने मौर्य साम्राज्य के अन्तर्गत होकर रहना स्वीकार कर लिया था। वीर ही वीर का सम्मान करना जानते हैं। चन्द्रगुप्त सचमुच वीर था। यही कारण है जो यमुना के पश्चिम के वीर जनपदो ने उसे न केवल अपना नेता ही अपितु अधिपति भी स्वीकार कर लिया था। पर चन्द्रगुप्त के जो वशज आज पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आरूढ हैं वे अशक्त और नपुसक है। धर्मानुशासन के आवरण मे वे भोग विलास का जीवन बिता रहे हैं। अन्तियोक और एवुथिदिम की सेनाओ ने जब भारत भूमि को आक्रान्त किया, तो मौर्य साम्राज्य की सेनाएँ कहाँ थी ? जिन अन्तपालो और दुर्गपालो को उस समय शस्त्र लेकर रणक्षेत्र में उतर आना चाहिए था, वे तब जनता को न। पाठ

पड़ाने में व्यापृत थे। धर्म का यह कैसा उपहास है। दिमित्र की सेना जब सांकल नगरी का ध्वंस कर रही थी, शालिशुक रूपाजीवाओं के साथ क्रीड़ा में मत्त था। क्या सम्राटों का यही स्वधर्म है? क्या आप इसे सहन कर सकते हैं? यदि नहीं तो स्पष्ट रूप से घोषित कर दीजिए कि आपका मौर्य शासन-तन्त्र के साथ कोई भी सम्बन्ध नहीं है। आप पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हैं। आचार्य चाणक्य सचमुच ऋषि थे। वह भ्रान्तदर्शी थे। उन्होंने जब विशाल मागध साम्राज्य का निर्माण किया, सम्पूर्ण आर्यभूमि को एक शासन-सूत्र में संगठित किया, तो उसके अन्तर्गत विविध जनपदों और गणों की स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण रखा। उनकी यह नीति वस्तुतः अद्भुत थी। इसी का यह परिणाम है कि मौर्य सम्राटों की निर्वीर्य नीति का आपके जनपदों पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ा है। आप में वीरता की परम्परा अब भी पूर्ववत् सुरक्षित है। पर प्रश्न यह है कि आप अपनी शक्ति का भारत भूमि की रक्षा के लिए किस प्रकार उपयोग कर सकते हैं? आत्मरक्षा के लिए अब आप मौर्य साम्राज्य पर निर्भर नहीं रह सकते। आपको अपनी रक्षा स्वयं करनी होगी। पर क्या आप अकेले अकेले रहकर अपने जनपदों की, अपने धर्म मन्दिरों की, अपने कुल-देवताओं की, अपनी सन्तान की और अपनी धन सम्पदा की रक्षा कर सकेंगे? कठ लोग वीरता में किससे कम थे? पर वे अकेले दिमित्र को परास्त करने में असमर्थ रहे। परस्पर मिलकर संहत हो जाने में ही आपका श्रेय है। पर किसके नेतृत्व में? क्या मौर्य सम्राट शालिशुक को अपना अधिपति मानकर? नहीं, कदापि नहीं। मौर्यों के विरुद्ध तो आपको विद्रोह करना ही होगा। पूर्ण स्वतन्त्र होकर अपने जनपदों और गणों की शक्ति का पुनरुत्थान करना तो आपके लिए अनिवार्य ही है। पर पुष्यमित्र के रूप में एक ऐसा वीर इस समय आपके सम्मुख उपस्थित है, जो आपका नेतृत्व करने के लिए सब प्रकार से योग्य है। यही वह वीर सेनानी है जिसने सिन्धु तट पर यवन सेना को परास्त किया था। आप सेनानी के नेतृत्व को स्वीकार कीजिए, उसके साथ मिलकर और परस्पर संहत होकर शत्रु का सामना करने के लिए कटिबद्ध हो जाइए। मेरा यही प्रस्ताव है। अब आप इस पर विचार विमर्श करें।'

दण्डपाणि के प्रवचन के अनन्तर कुलिन्दगण के कुलमुख्य श्रुतधर्मा

खडे हुए। उन्होंने कहा—

'मैं आचार्य के प्रस्ताव का समर्थन करता हूं। पर प्रश्न यह है कि हमारे परस्पर-सहयोग का स्वरूप क्या होगा? हम सबने मौर्यों को अपना नेता स्वीकार किया था। अब तक भी हम मौर्य सम्राट् की प्रजा हैं। क्या आचार्य यह चाहते हैं कि हम मौर्य साम्राज्य की अधीनता से मुक्त होकर पूर्णरूप से स्वतन्त्र हो जाए? भारत की राजशक्ति मौर्य साम्राज्य के रूप में संगठित है, क्या उसे खण्ड-खण्ड कर देना उचित होगा? क्या यह सम्भव नहीं है कि पाटलिपुत्र के शासनतन्त्र में शक्ति और नवजीवन का संचार किया जा सके और हम सब मौर्य सम्राट के झण्डे के नीचे एकत्र होकर शत्रु का सामना करें? पुष्यमित्र वीर हैं सब प्रकार से योग्य हैं। पर अभी उन्हें अपनी योग्यता और शौर्य प्रदर्शित करने का पर्याप्त अवसर नहीं मिला है। मुझे सन्देह है कि गणराज्यों के महासेनापति उन्हें अपना नेता स्वीकार करने के लिए उद्यत होंगे।'

शालकायन और वामरथ जनपदों के कुलमुख्यों ने भी इसी प्रकार के विचार प्रगट किए। अन्त में यौधेय गण के लगवीर कुल के कुलमुख्य मयूरध्वज ने खडे होकर कहा—'यह सही है कि मौर्यकुल अब निर्वीर्य हो चुका है। उससे किसी भी प्रकार की आशा करना निरर्थक है। पर गणराज्यों की सबसे बडी निर्बलता यह होती है कि वे परस्पर सहयोग नहीं कर पाते। आचार्य चाणक्य का कथन है कि गणों की स्थिति और सत्ता संघात पर निर्भर करती है। यदि वे संहत होकर रहें तो अजेय होते हैं अन्यथा नष्ट हो जाते हैं। परस्पर संहत हो सकना तभी सम्भव है जबकि सब कोई किसी एक को अपनी तुलना में ज्येष्ठ मान लें सब उसका नेतृत्त्व स्वीकार कर लें और उसकी अधीनता में रहते हुए कार्य करें। गणों में अपनी श्रेष्ठता का विचार इतना प्रबल होता है कि वे स्वयं स्वेच्छापूर्वक किसी को अपने से ज्येष्ठ स्वीकार नहीं कर पाते। हां, कोई अनुपम वीर अपनी शक्ति का प्रयोग कर उनसे अपना नेतृत्त्व स्वीकार करा ले तो दूसरी बात है। चन्द्रगुप्त मौर्य ने यही तो किया था। चाणक्य के नीतिबल और चन्द्रगुप्त के शौर्य के सम्मुख सब गणराज्यों ने सिर झुका लिया था और उन्होंने मौर्य साम्राज्य के अन्तर्गत होकर रहना स्वीकार कर लिया था। एक सदी से भी

अधिक हो गया, जब से हम मौर्य सम्राटों को अपना नेता मानते हैं। उनके प्रति आदर की भावना हम में अब तक भी विद्यमान है। आज के मौर्य सम्राट चाहे कितने ही निर्वीर्य क्यों न हो गए हों, हम अब तक भी उनका आदर करते हैं। किसी के प्रति सम्मान की भावना विकसित भी धीरे धीरे होती है और उसके नष्ट होने में भी समय लगता है। क्या यह आदर भावना किसी अन्य व्यक्ति या गणमुख्य के प्रति तत्काल उत्पन्न की जा सकती है। क्या यह सम्भव नहीं है कि मौर्य शासनतन्त्र में फिर से शक्ति का संचार किया जा सके या किसी ऐसे मौर्यकुमार को पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर बिठाया जा सके जो वस्तुतः योग्य और साहसी हो। यवनों का सामना तो हम करना ही है। पर मैंने जो समस्या आपके सामने प्रस्तुत की है, आचार्य दण्डपाणि उस पर विचार करें।

विविध कुलमुख्यों के विचारों को सुनकर दण्डपाणि एक बार फिर खड़े हुए। उन्होंने कहा—

'मौर्य शासनतन्त्र में यदि शक्ति और क्षमता होती, तो समस्या ही क्या थी ? चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार द्वारा स्थापित विशाल मागध साम्राज्य अब खण्ड-खण्ड हो चुका है। काश्मीर आन्ध्र और कलिङ्ग उसकी अधीनता से स्वतन्त्र हो गए हैं। कपिशा-गान्धार अब यवनों के अधीन है। मद्र

मयूरध्वज ने जो कुछ कहा है वह सर्वांश म स‍य है। गणो की शक्ति सघात पर ही निभर होती है। सघ बनाना गणराज्या की परम्परा के अनुरूप है। यदि आपके निए स्थायी रूप से सहत हो सकना सम्भव नही है, तो कम से कम इस सकट के समय म तो आपको अवश्य ही परस्पर मिलकर काय करना चाहिए। बहुत-से गणराज्या के कुलमुख्य आज यहाँ उपस्थित हैं। सहत होकर काय करने का निश्चय करने का यह अनुपम अवसर है। आप इस प्रश्न पर विचार कीजिए। यदि आप परस्पर मिलकर एक न हो गए, तो आपके सम्मुख तीन ही माग रह जाएँगे, या तो आप यवना के सम्मुख आत्मसमपण कर दें, या उनसे युद्ध करते-करते नष्ट हो जाए और या मालवा के समान अपनी मातृभूमि को सदा के लिए प्रणाम कर किसी सुदूरवर्ती अज्ञात प्रदेश मे प्रवास कर जाए। क्या आपको इनमे स काई भी माग स्वीकाय होगा ? यदि नही तो अ‍य उपाय ही क्या है, सिवाय इसके कि आप परस्पर सहत होकर यवना का सामना करें। मौय शासनत त्र से आप कोई आशा न रखें। उसमे शक्ति का सचार कर सकना असम्भव है।'

आचाय दण्डपाणि के अपना वक्तव्य समाप्त कर चुकने पर यौधेयगण पुरस्कृत स्क दवमा ने कहा—मैं आप सबकी ओर से आचाय दण्डपाणि को ध‍यवाद देता हू। उ‍हाने जो माग हम प्रदर्शित किया है वह वस्तुत प्रशस्त है। कुणि द राजय, शालकायन वामरथ आदि गणा के जो कुलमुख्य यहाँ उपस्थित है वे शीघ्र ही अपने-अपने जनपदा का वापस लौट जाएँगे। मेरा अनुरोध है कि वे अपनी-अपनी गणसभाआ म आचाय के निवेदन को प्रस्तुत कर। जहाँ तक यौधेय गण का सम्ब‍ध है, मैं आचाय को विश्वास दिलाता हूँ कि हम उनके प्रस्ताव पर गम्भीरतापूवक विचार करेंगे। हम अ‍य गणो के साथ सहयोग करने को उद्यत हैं। यदि दिमित्र की यवन सेना ने फिर भारत भूमि पर आक्रमण किया तो यौधेय उसका सामना करने मे किसी स पीछे नही रहेगे।'

गणसभा की बठक के समाप्त हा जाने पर दण्डपाणि और पुष्यमित्र अपने निवासस्थान को लौट आए। आचाय की मुखमुद्रा अत्य‍त गम्भीर थी। उ‍ह चिंतित देखकर पुष्यमित्र ने कहा—

कहिए आचाय ! आप क्या सोच रहे हैं ? अब आपका क्या विचार है ?'

अधिक हो गया, जब से हम मौर्य सम्राटों को अपना नेता मानते हैं। उनके प्रति आदर की भावना हम में अब तक भी विद्यमान है। आज के मौर्य सम्राट चाहे कितने ही निर्वीर्य क्यों न हो गए हों, हम अब तक भी उनका आदर करते हैं। किसी के प्रति सम्मान की भावना विकसित भी धीरे धीरे होती है, और उसके नष्ट होने में भी समय लगता है। क्या यह आदर भावना किसी अन्य व्यक्ति या गणमुख्य के प्रति तत्काल उत्पन्न की जा सकती है। क्या यह सम्भव नहीं है कि मौर्य शासनतन्त्र में फिर से शक्ति का संचार किया जा सके या किसी ऐसे मौर्यकुमार को पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर बिठाया जा सके जो वस्तुतः योग्य और साहसी हो। यवनों का सामना तो हम करना ही है। पर मैंने जो समस्या आपके सामने प्रस्तुत की है आचार्य दण्डपाणि उस पर विचार करें।'

विविध कुलमुख्यों के विचारों को सुनकर दण्डपाणि एक बार फिर खड़े हुए। उन्होंने कहा—

'मौर्य शासनतन्त्र में यदि शक्ति और क्षमता होती, तो समस्या ही क्या थी? चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार द्वारा स्थापित विशाल मागध साम्राज्य अब खण्ड-खण्ड हो चुका है। काश्मीर, आन्ध्र और कलिङ्ग उसकी अधीनता से स्वतन्त्र हो गए हैं। कपिश-गान्धार अब यवनों के अधीन हैं। मद्र जनपद ने भी यवनों के सम्मुख घुटने टेक दिए हैं। मालव और शिवि गणों ने मरुभूमि में प्रवास कर लिया है। वाहीक के जनपदों को ही देखिए। मौर्यों का शासन अब इन पर रह ही कहाँ गया है? क्या यहाँ उनकी कोई सेना है? क्या यहाँ उनके कोई ऐसे अमात्य हैं जो प्रजा की रक्षा या हितसुख की चिन्ता करें। अभी दिमित्र की सेनाएँ वाहीक देश को पदाक्रान्त करती हुई [illegible] तक चली आई थीं। मौर्यों ने उनके मार्ग को अवरुद्ध करने के लिए क्या प्रयत्न किया? आपके जनपदों में जो शान्ति है, क्या वह मौर्य शासन तन्त्र के कारण है? नहीं, आप अपना शासन स्वयं करते हैं। इसी कारण आपके जनपदों में सुख और चैन है। परम्परा के अनुसार जो धन आप बलिरूप में मौर्य सम्राट् को प्रदान करते हैं, क्या आपको ज्ञात है कि उसका व्यय किस काम में किया जाता है? उसे रूपाजीवाओं और नटनर्तकों पर व्यय किया जा रहा है, शत्रुओं से आपकी रक्षा के लिए नहीं। कुलमुख्य

मयूरध्वज ने जो कुछ कहा है वह सवांश म सत्य है। गणा की शक्ति सघात पर ही निभर होती है। सघ बनाना गणराज्यो की परम्परा के अनुरूप है। यदि आपके लिए स्थायी रूप से सहत हा सकना सम्भव नही है, तो कम से कम इस सकट के समय मे तो आपको अवश्य ही परस्पर मिलकर काय करना चाहिए। बहुत-से गणराज्या के कुलमुख्य आज यहाँ उपस्थित हैं। सहत होकर काय करने का निश्चय करने का यह अनुपम अवसर है। आप इस प्रश्न पर विचार कीजिए। यदि आप परस्पर मिलकर एक न हो गए ता आपके सम्मुख तीन ही माग रह जाएँगे, या तो आप यवनो के सम्मुख आत्मसमपण कर दें, या उनसे युद्ध करते-करते नष्ट हो जाए और या मालवा के समान अपनी मातृभूमि को सदा के लिए प्रणाम कर किसी सुदूरवर्ती अज्ञात प्रदेश म प्रवास कर जाए। क्या आपको इनमे से कोई भी माग स्वीकाय होगा ? यदि नही, ता अ य उपाय ही क्या है, सिवाय इसके कि आप परस्पर सहत हाकर यवना का सामना करें। मौय शासनत त्र से आप काई आशा न रखें। उसम शक्ति का सचार कर सकना असम्भव है।'

आचाय दण्डपाणि के अपना वक्त य समाप्त कर चुकने पर यौधेयगण पुरस्कृत स्कदवमा ने कहा— मैं आप सबकी ओर स आचाय दण्डपाणि को ध यवाद देता हू। उ होने जो माग हम प्रदर्शित किया है वह वस्तुत प्रशस्त है। कुणि द राज य शालकायन, वामरथ आदि गणा के जो कुलमुख्य यहाँ उपस्थित हैं व शीघ्र ही अपने-अपने जनपदो का वापस लौट जाएँगे। मेरा अनुरोध है कि वे अपनी-अपनी गणसभाओ म आचाय के निवेदन को प्रस्तुत करें। जहाँ तक यौधेय गण का सम्ब ध है, मैं आचाय को विश्वास दिलाता हूँ कि हम उनके प्रस्ताव पर गम्भीरतापूवक विचार करेंगे। हम अ य गणा के साथ सहयोग करने को उद्यत हैं। यदि दिमित्र की यवन सेना ने फिर भारत भूमि पर आक्रमण किया, तो यौधेय उसका सामना करने मे किसी से पीछे नही रहेंगे।

गणसभा की बठक के समाप्त हो जाने पर दण्डपाणि और पुष्यमित्र अपने निवासस्थान को लौट आए। आचाय की मुखमुद्रा अत्यन्त गम्भीर थी। उ ह चि तित देखकर पुष्यमित्र ने कहा—

'कहिए, आचाय ! आप क्या सोच रहे हैं ? अब आपका

मयूरध्वज ने ठीक कहा था, वत्स ! गणराज्यो के लिए सहन हाकर काय कर सकना बहुत कठिन है। यदि ये सब गणराज्य सहल हो सकने, तो हमारा काय कितना सुगम हो जाता।

'मैं आपसे पहले ही कहता था, आचाय ! मौय साम्राज्य अभी विद्यमान है, उसके रूप मे भारत की राजशक्ति अब तक भी एक केन्द्र म सगठित है। क्या हम उसका उपयोग अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए नही कर सकते ? उसमे केवल शक्ति सचार की आवश्यकता है। भारत म न मौल सनिको की कमी है, न भृत सनिको की और न आटविको की। धन सम्पदा का भी हमारे देश म अभी अभाव नही हुआ है। अभाव है तो केवल एक सुयोग्य नेतृत्व का है। क्या मौय राजकुल म एक भी ऐसा कुमार नही है, जो चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार की परम्परा मे आस्था रखता हो ? यदि युवराज भववर्मा कुक्कुट विहार के स्थविरो के षड्यन्त्र के शिकार न हो जाते, तो क्या उनके नेतृत्व मे मौय शासनतन्त्र म शक्ति का सचार नही किया जा सकता था ? वह अब नही रहे पर मौय राजकुल म अन्य कुमार भी तो हैं। क्या शालिशुक को राज्यच्युत कर किसी अन्य कुमार को सम्राट पद पर अभिषिक्त नही किया जा सकता ? आप औशनस नीति के प्रयोग म निष्णात हैं, आचाय ! क्या हम मोग्गलान को औशनस नीति से परास्त नही कर सकते ? मौर्यों के नेतृत्व म भारत की शक्ति का पुनरुत्थान असम्भव नही है, आचाय ! आपने देख ही लिया है गणराज्यो म अब तक भी मौय राजकुल के प्रति अगाध श्रद्धा है।

'तुम ठीक कहते हो, वत्स ! पर मौय कुल म कौन ऐसा राजकुमार है जो इस विशाल साम्राज्य म शक्ति का सचार कर सके ? कुक्कुट विहार के स्थविरो ने पाटलिपुत्र मे जिस घोर कुचक्र का प्रवतन किया हुआ है उससे बच सकना किसी के लिए भी सम्भव नही है। क्या कोई ऐसा राजकुमार तुम्हारी दृष्टि म है जो मोग्गलान के विरुद्ध खडा हो सके ?'

भववर्मा का पुत्र देववर्मा अब वयस्क हो गया है। उसकी माता देवयानी को आप जानते ही हैं। विदर्भ देश के प्राचीन राजकुल की कुमारी है। बाल्यावस्था म कुछ समय गोनर्द आश्रम म भी रह चुकी है।

हाँ, देवयानी का मुझे स्मरण है। सनातन आय धम म उसकी अगाध

श्रद्धा थी।'

'वह श्रद्धा अब और भी अधिक प्रगाढ हो गई है, आचाय ! देवयानी के प्रभाव के कारण ही युवराज भववर्मा स्थविरो के कुचक्र म फँसने से बचे रह सके थे। मोगलान ने उसे निर्वीय करने के लिए कितनी ही रूपाजीवाएँ उसके पास भेजी थी। पर वह जो अपने चरित्र को निमल रख सका, उसका सब श्रेय देवयानी का ही है। देववर्मा अपनी माता का सुयोग्य पुत्र है। उसे यह भी ज्ञात है कि मोगलान ने ही उसके पिता की हत्या करायी थी। कुक्कुट विहार के प्रति उसके मन मे अपार घृणा है। सम्राट पद के लिए वह सवथा उपयुक्त है आचाय !'

'तुम्हारी क्या योजना है ?'

मेरी सम्मति मे आपको तुरन्त पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान कर देना चाहिए। शालिशुक को राज्यच्युत किए बिना हमारी कायसिद्धि असम्भव है। इसके लिए आपको औशनस नीति का प्रयोग करना होगा। 'विषस्य विषमौषधम और शठे शाठय समाचरेत' की नीति शास्त्र-सम्मत है। पाटलिपुत्र मे अब भी ऐसे लोगो की कमी नही है जो क्षात्रधर्म म विश्वास रखते हैं और चन्द्रगुप्त के वीर कृत्यो का गव के साथ स्मरण करते है। वे सब आपकी सहायता करेंगे।'

क्या तुम मेरे साथ नही चलोगे वत्स !'

'मुझे अभी यही रहने दीजिए, आचाय ! यहा मेरा काय अभी पूण नही हुआ है। मुझे अपनी सेना के सनिको मे वद्धि करनी है। कुरु-पाञ्चाल मे भृत सनिको की कोई कमी नही है। मैं उन्हे अपनी सेना म सम्मिलित करने का प्रयत्न करना चाहता हू। दिमित्र के आक्रमण की भी मुझे आशका है। वह देर तक वाल्हीक मे नही रहेगा। उसका सामना करने के लिए मेरा यहाँ रहना आवश्यक है।

सम्भवत तुम विदिशा भी जाना चाहोगे। तुम्हे दिव्या स मिले बहुत दिन हो गए हैं। कुमार अग्निमित्र की शिक्षा की भी तुम्ह चिन्ता करनी चाहिए। अच्छा है एक बार विदिशा हो आओ।

'अग्निमित्र अब बडा हो गया है आचार्य ! गोनद आश्रम म प्रविष्ट होकर शिक्षा प्राप्त कर रहा है। दिव्या मेरे पास यहीं आने के लिए उत्सुक

है, मेरे काय मे सहयोग देना चाहती है। गगा यमुना और शतुद्रि नदिया से सिंचित यह प्रदेश मेरे काय के लिए उपयुक्त क्षत्र है। मैं यहाँ सेना का सगठन करूँगा और दिमित्र के आक्रमण की प्रतीक्षा म रहूँगा।

'यौधेय राजय कुणिन्द आदि गणराज्य क्या तुम्हारे काम म सहायक नही हो सकते ?

'हो क्या नही सकते आचाय ! इन राज्या के कुलमुख्य आपके प्रवचन से बहुत प्रभावित हुए हैं। यहाँ जिस अग्नि का आपने आधान कर दिया है शीघ्र ही वह प्रचण्ड दावानल का रूप धारण कर लेगी। इन गणो को अब अपन कतय का बोध हो गया है। यवना के आक्रमण के सम्मुख न वे आत्म समपण करेंगे और न अपने जनपदा का परित्याग कर प्रवास ही करेंगे। वे डटकर शत्रु से युद्ध करेंगे पर अकेले अकेले। सहत होकर नही। सहत हो सकना उनके लिए कठिन है। पर हमारे लिए यही पर्याप्त है। गणराज्यो से युद्ध करते हुए यवना की शक्ति जब क्षीण हो जाएगी, तब हमारी सेना के लिए उन्हे पराजित कर सकना कठिन नही रहेगा। बहुधान्यक मे जो काय आपने किया है वह अत्यन्त महत्त्व का है। वह एक दिन अवश्य फल लाएगा। पर भारत की राजशक्ति का वास्तविक केन्द्र पाटलिपुत्र म ही है। वहाँ का काय आपको सभालना है आचाय !'

'तुम ठीक कहते हो, वत्स ! मैं आज ही पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान कर रहा हूँ।'

पर क्या आप इसी वेश म यात्रा करेंगे आचाय ! श्रावस्ती के जेतवन विहार का सघ-स्थविर मज्झिम आपको भली भाति पहचानता है। उसके सत्री और गूढ़पुरुष मध्य देश मे सवत्र नियुक्त हैं। हमारी गतिविधि उनसे छिपी हुई नही है। वे सब सूचनाए मज्झिम के पास भेजते रहते हैं। आपकी यात्रा भी उनसे छिपी नही रह सकेगी।

'तो मुझे क्या करना चाहिए वत्स !

आपको छद्म वश मे पाटलिपुत्र जाना होगा आचाय ! पाटलिपुत्र म भगवान जयन्त का जो मन्दिर है उस आप जानते ही हैं। वसन्त पचमी के अवसर पर वहाँ रथयात्रा का उत्सव बडी धूमधाम से मनाया जाता है। हजारों यात्री दूर दूर के जनपदा स इस उत्सव म सम्मिलित होने के लिए

पाटलिपुत्र जाते हैं। आप कुछ चुने हुए सनिको को अपने साथ ले जाइए। सब साधुआ और तीथयात्रियो के वश म हो। इससे किसीको आप पर स देह नही होगा। जटिल तापस के भेस म रहने पर कोई आपको पहचान नही पाएगा। स्थविरा के कुचक्र से बचने का यही उपाय है।

'औशनस नीति म भी तुम पारगत हो गए हो, वत्स !'

'यह सब आपकी ही शिक्षा का तो फल है, आचाय !'

शालिशुक का अन्त

भगवान जयन्त की रथयात्रा का उत्सव अब समीप आ गया था। दूर दूर के जनपदो से हजारो साधु महात्मा और तीथयात्री प्रतिदिन पाटलिपुत्र पहुच रहे थे। मदिर का प्राङ्गण साधुआ, तापसा और कातातिका (ज्योतिषिया) से परिपूण हो गया था। सबन वहा अपने आसन जमा लिए थे। श्रद्धालु तीथयात्री जब देवदशन के लिए मदिर म जाते, तो इन साधु-महात्माआ को भी पत्रपुष्प भेंट करते। जयत के मदिर के प्रधान पुजारी श्रुतश्रवा इन दिनो बहुत व्यग्र थे। उह क्षण भर का भी अवकाश नही था। दिन भर के काय से श्रात होकर वह अपने शयनकक्ष म गए ही थे, कि एक बटुक उनकी सेवा म उपस्थित हुआ। हाथ जोडकर उसन कहा—

'कोई जटिल तापस आपसे भेंट करना चाहते है, श्रोत्रिय !

क्या उनके निवास और भोजन की व्यवस्था नही हुई है ?'

मैंने सब व्यवस्था कर दी है। पर उनका आग्रह है कि तुरत आपसे भेंट करें।'

वह कौन हैं और कहा से पधारे हैं ?

'मैंने पूछा था, श्रोत्रिय ! पर वे बतान को उद्यत नही हुए। उन्होने केवल यह कहा कि बहुत दूर कुरुक्षेत्र से आ रहा हूँ एक आत्ययिक काय से श्रोत्रिय से मिलना चाहता हूँ।'

क्या वह कल प्रात तक प्रतीक्षा नही कर सकते ? इस समय मैं बहुत थका हुआ हूँ।

'मैंने उनसे कहा था श्रोत्रिय ! पर वह इसी क्षण आपसे भेंट करने का आग्रह कर रहे हैं। कोई अत्यन्त तेजस्वी महात्मा हैं। उनके सम्मुख आँख ही नही टिकती।

अच्छा उन्हे यहीं बुला लाओ।

जटिल तापस ने श्रुतश्रवा के शयनकक्ष म प्रवेश कर बहुत धीमे से कहा, 'गोनद आश्रम का दण्डपाणि श्रोत्रिय श्रुतश्रवा की सवा म सस्नेह अभिनन्दन निवेदन करता है।

दण्डपाणि का नाम सुनते ही श्रुतश्रवा उठकर खडे हो गए। सम्मान के साथ आसन अर्पित कर श्रुतश्रवा बोले 'अरे, आचाय ! आप ! तापस का व्रत आपने कब से ग्रहण कर लिया ! इस वेश म मैं आपको पहचान ही नही सका।

द्वार को भलीभाँति बन्द कर दो भाई ! मैं एकान्त म आपसे कुछ बातें करना चाहता हूँ। एक अत्यन्त महत्वपूण काय से पाटलिपुत्र आया हूँ। क्षमा करना, असमय म आपको कष्ट दिया।

आप भी कसी बातें कर रहे हैं, आचाय ! मेरा अहोभाग्य है जो विश्व विख्यात आचाय ने अपनी चरणरज से मेरी कुटी को पवित्र किया। पूव जन्म में न जाने कौन से सुकृत किए थे जो आज अकस्मात ही आपके दशन हो गए। पर पहले यह तो बताइए आप ठहरे कहाँ हैं, और क्या आपने भोजन कर लिया है ?'

इस सब की चिन्ता न करो भाई ! मैं अकेला नही हूँ। बहुत से साधु और तापस मेरे साथ हैं। हम सबने मन्दिर के प्राङ्गण म ही आसन जमा लिए हैं और श्रद्धालु भक्त भोजन भी दे गए हैं।

पर आपको तो मैं खुले प्राङ्गण मे नही रहने दूगा, आचाय ! आप मेरी इस कुटी मे आ जाइए। यहाँ आपको कोई कष्ट नही होगा। ब्राह्मणी आपकी सेवा कर परम सतोष प्राप्त करेगी।

नहा भाई ! मुझे मन्दिर के प्राङ्गण म ही रहने दो। वहाँ मुझे कोई कष्ट नही है। तुम जानते ही हो मोग्गलान के सत्री और गूढ पुरुष सवत्र छाए हुए हैं। उनकी दृष्टि स बचने के लिए ही मैंने जटिल तापस का वेश बनाया है। तुम्हारे पास रहने से उन्हें सन्देह हो जाएगा। मैं नही चाहता

यहा मेरा आगमन किसी को भी ज्ञात हो। मोग्गलान मेरे खून का प्यासा है। मुझे सद्धम का कट्टर शत्रु समझता है।'

'जैसी आपकी इच्छा, आचाय ! आपके सम्मुख मैं क्या कह सकता हूँ।

'अब मेरी बात ध्यान से सुनो, श्रुतश्रवा ! स्थविरो के कुचक्र के कारण मौय शासनतन्त्र की जो दुदशा हो गई है वह तुमसे छिपी नही है। धमविजय के आवरण मे शालिशुक जिस ढग से राष्ट्र का मदन कर रहा है, उसे तुम भली भाँति जानते हो। देश की रक्षा का उसे जरा भी ध्यान नही है। उसी की निर्वीय नीति का यह परिणाम है जो सिन्धु नदी के पश्चिम के सब प्रदेश यवनो के अधीन हो चुके हैं। मद्रक जनपद ने भी उनकी अधीनता स्वीकार कर ली है। कुछ समय पूव यवन सेनाएँ वाहीक देश को आक्रान्त करती हुइ कुरुक्षेत्र तक पहुँच गई थी। दिमित्र शीघ्र ही फिर भारत पर आक्रमण करेगा। शालिशुक जसा अकमण्य और अशक्त सम्राट शत्रुओ से भारत भूमि की रक्षा नही कर सकता। हमे उसे राज्यच्युत करना होगा। आय भूमि का इसी मे हित है। मुझे किसी सम्प्रदाय से विरोध नही है, तथागत बुद्ध का मैं आदर करता हूँ। पर स्थविरो के प्रभाव मे आकर शालिशुक जिस ढग से क्षात्रधम की उपेक्षा कर रहा है उसे सह सकना मेरे लिए असम्भव है। हमे मौय शासनतन्त्र को स्थविरो के प्रभाव से मुक्त करना ही होगा। मैं इसी उद्देश्य से पाटलिपुत्र आया हूँ और इस पुनीत काय मे तुम्हारी सहायता चाहता हू।'

'मैं आपका अभिप्राय समझ गया हूँ, आचाय ! पर आपकी योजना क्या है ?'

'शालिशुक को राजसिंहासन से च्युत कर देववमा को सम्राट बनाने से ही आयभूमि की रक्षा कर सकना सम्भव है। देववमा अब वयस्क हो चुका है। वह वीर है और आय मर्यादा मे आस्था रखता है।

पर यह काय किस प्रकार सम्पन्न हो सकेगा, आचाय !'

औशनस नीति के प्रयोग द्वारा। उच्च उद्देश्य की पूर्ति के लिए हीन साधनो का प्रयोग आचाय शुक्र को स्वीकाय था। हमे शालिशुक की हत्या कराके देववर्मा को सम्राट् बनाना होगा।'

पर इसके लिए आपने क्या उपाय सोचा है ?

'यही तो हमे परस्पर विचारविमर्श द्वारा निर्धारित करना है। अच्छा, यह बताओ क्या शालिशुक भगवान् जयन्त की रथयात्रा म सम्मिलित हुआ करता है ?

होता है आचार्य ! यद्यपि मौर्य सम्राट सत्य सनातन आर्यधर्म से विमुख हो बौद्धधर्म को अपना चुके हैं, पर चिरकाल से चली आई परम्पराओ का पूर्ण रूप से परित्याग उन्होंने अभी नही किया है। मगध की जनता की दृष्टि मे भगवान जयन्त की रथयात्रा का बहुत महत्त्व है। इसी कारण तथागत बुद्ध और जिन महावीर के अनुयायी मौर्य राजा भी उसमे सम्मिलित होते रहे हैं।

पर सुना है कि शालिशुक तो अपने राजप्रासाद से बाहर नही आता जाता ही नही है। रात दिन रूपाजीवाओ के साथ केलिक्रीडा करने और सुरापान मे मस्त रहता है।

गत वर्ष तो वह रथयात्रा के उत्सव म सम्मिलित हुआ था, आचार्य ! इस बार वह इस अवसर पर जयन्त के मन्दिर म आएगा या नही इसकी सूचना हम दो दिनो म प्राप्त हो जाएगी। पर सम्राट् यहाँ अकेले नही आते। एक पूरी सेना उनके साथ रहती है। अगरक्षक उन्हे चारो ओर से घेरे रहते हैं। मन्दिर का प्राङ्गण उस समय खाली करा दिया जाता है। साधु और तापस भी वहाँ नही रहने पाते। सम्राट आते हैं भगवान के रथ के पहिए पर हाथ लगाकर कुछ दान पुण्य करते हैं, और प्रजाजन को दर्शन देकर राजप्रासाद को लौट जाते हैं। मोग्गलान पौराणिक देवी देवताओ की पूजा का घोर विरोधी है। उसने अनेक बार प्रयत्न किया कि बुद्ध धर्म और सघ के प्रति आस्था रखनेवाले मौर्य राजा रथयात्रा के उत्सव म सम्मिलित न हुआ करे। पर सदियो पुरानी परम्पराओ की उपेक्षा कर सकना उनके लिये सुगम नही हुआ।

सम्राट की सुरक्षा का उत्तरदायित्व किस पर रहता है ?

आन्तवशिक पर।

'इस पद पर आजकल कौन काम कर रहा है।

निपुणक जो पहले अन्त पुर के महानस म औदनिक का कार्य करता था, और मोग्गलान के सत्रियो का आचार्य था। निपुणक बडा धूर्त और

चालाक है दूसरो के गुप्तभेदो का पता लगाने मे वह अत्यन्त चतुर है। युवराज भववमा की हत्या की योजना उसी ने बनाई थी। उसके सत्री अभी से जयन्त के मदिर म आ गए है। प्राङ्गण मे जो साधु और कार्तान्तिक आसन जमाए बठे हैं, उनम से कितने ही निपुणक के गूढपुरुष हैं। मदिर म आने-जाने वाले सब स्त्री-पुरुषो पर वे दृष्टि रखते है।'

'जब शालिशुक रथ पर हाथ लगाने के लिए मदिर म आएगा तो पुजारी तो वहा रहगे न ?'

'हा, आचाय ! पर उनकी भली भाँति परीक्षा कर ली जाएगी। यह देख लिया जाएगा कि किसी के पास कोई अस्त्र, शस्त्र और विष आदि तो नहा है। उनके नखो और केशो तक की जाच कर ली जाएगी। केवल वे पुजारी ही मदिर मे रह सकेंगे जिनपर निपुणक को कोई सदेह न हो।'

यह सुनकर आचाय दण्डपाणि गम्भीर हो गए। उनकी मुखमुद्रा को दखकर श्रुतश्रवा ने कहा—

आप क्या सोच रहे हैं आचाय !

'तुम्हारे पुजारियो मे क्या कोई ऐसा भी है जो पवित्र आयभूमि और सत्य सनातन वदिक धम की रक्षा के लिए अपनी बलि देने को उद्यत हो ?

है क्या नही ? सोमधर्मा देश और धम के लिए अपने तन की बलि दे देने म जरा भी सकोच नही करेगा।'

'सोमधर्मा कौन है ?

'वही वटुक जो आपको साथ लेकर मेरे पास आया था। बडा साहसी युवक है देश और धम के प्रति अगाध अनुराग रखता है। पर नरहत्या क लिए जो उद्दण्ड साहस और तीक्ष्ण वत्ति चाहिए वह उसम है या नही— यह सदिग्ध है।

'शालिशुक के घात को तुम नरहत्या क्या कहते हो श्रुतश्रवा ! सनिक लोग युद्धक्षेत्र म शत्रुओं का जो सहार करते हैं क्या तुम उसे नरहत्या कहोगे ? उच्च उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए हीन साधनो का अवलम्बन शास्त्रसम्मत है। हमारा धम हिंसा का निषेध करता है, पर विशेष परिस्थितियो म हिंसा धर्मानुकूल भी होती है। अन्यथा क्षात्र धम का कोई अथ ही नही रह जाता। 'वदिकी हिंसा हिंसा न भवति' यह शास्त्रवचन है।

यदि तुम सोमधर्मा को काय सिद्धि के लिए उपयुक्त समझते हो, तो मैं तुरत उससे बात करना चाहूँगा।'

'वह उपयुक्त तो अवश्य है पर इस काय को सम्पादित कसे कर सकेगा ? मदिर म शस्त्र को साथ ले जा सकना सवथा असम्भव है, आचाय !'

क्या मदिर म त्रिशूलधारी शिव की कोई मूर्ति नही है ?

है आचाय ! भगवान जयत की प्रतिमा के साथ-साथ अय दवी देवताओ की मूर्तिया भी मदिर म है।'

फिर तो खडगवाहिनी भगवती दुर्गा की मूर्ति भी वहाँ होगी। शालिशुक के मदिर प्रवेश के समय इन मूर्तिया को या इनके त्रिशूल और खड ग को हटा तो नही दिया जाएगा ?

यह कदापि सम्भव नही है आचाय ! किसकी शक्ति है जो देवमूर्तिया या उनके अलकरणा को छू भी सके ?

तो फिर कायसिद्धि मे क्या बाधा है ? सोमधर्मा त्रिशूल या खड्ग द्वारा शालिशुक पर सुगमता स आक्रमण कर सकता है।'

सोमधर्मा को बुलाकर सारी योजना समझा दी गई। इस युवक मे उद्दण्ड साहस था और साथ ही देश और धम के प्रति अगाध प्रेम भी। वह जानता था कि शालिशुक पर शस्त्र चलाते ही अगरक्षक सेना के सनिक उसके टुकडे टुकडे कर देंगे। पर आचाय दण्डपाणि से प्रेरणा प्राप्त कर वह आयभूमि के उत्कष क लिए अपने जीवन की बलि देने को उद्यत हो गया। मदिर मे जाकर उसने श्रद्धापूवक भगवान जयत की पूजा की और उत्सुकतापूवक उस क्षण की प्रतीक्षा करने लगा जबकि देश और धम की बलि वेदी पर उसे अपने जीवन का उत्सग कर देना होगा।

रथयात्रा के दिन मदिर के प्राङ्गण को साधुओ, तापसो और कार्तान्तिको से खाली करा दिया गया। उनका स्थान ले लिया दण्डधरो गुल्मपतियो और गूढपुरुषा ने, जो सब प्रकार के अस्त्र शस्त्रो से सुसज्जित थे। मदिर म केवल उन पुजारियो को रहने दिया गया जिनपर निपुणक म सनिया को पूण विश्वास था। रथयात्रा का मुहूत अब समीप आ गया था। मदिर के समीप की पण्यवीथियो म हजारा नर-नारी एकत्र थे। वे उस समय

की प्रतीक्षा कर रहे थे जबकि सम्राट शालिशुक राजप्रासाद से बाहर निक लेंगे, और भेरीनिनाद तथा मगलध्वनि से पाटलिपुत्र का क्षितिज गूज उठेगा, सम्राट भगवान के रथ के पहिए को हाथ लगाकर रथयात्रा के महोत्सव का प्रारम्भ करेंगे, और राजप्रासाद को लौटने से पूव प्रजानन को दशन भी प्रदान करेंगे। पर मुहूत टलता गया, न कही मगलध्वनि सुनाई दी और न भेरीनिनाद। जनता की उत्सुकता बढती गई, और अनेक प्रकार की चर्चाएँ होने लगी। श्रद्धालु जनों ने कहा—यह घोर अपशकुन है। आज तक कभी ऐसा नही हुआ कि मगध के राजा ठीक समय पर भगवान जयन्त के मन्दिर म न पधारे हो और रथयात्रा के उत्सव का मुहूत टल गया हो। पता नही, इस देश पर कौन-सी नई विपत्ति आनेवाली है।'

शीघ्र ही कुछ तूयधर पाटलिपुत्र के दुग की प्राचीर पर प्रगट हुए। उन्होंने सूचना दी, कि रथयात्रा का उत्सव इस वष नही मनाया जाएगा। सम्राट शालिशुक का स्वगवास हो गया है। शोभायात्रा के स्थान पर अब उनकी शवयात्रा निकलेगी। एक सप्ताह तक सम्पूण साम्राज्य मे शोक मनाया जाएगा। सब लोग चुपचाप अपने-अपने घरो को चले जाएँ। कही कोई भीड एकत्र न होने पाए।

शालिशुक किस प्रकार अकस्मात ही स्वग को सिधार गए इस सम्बन्ध मे अनेक प्रकार की चर्चाएँ होने लगी। किसी का कहना था—'अत्यधिक सुरापान के कारण सम्राट् का हृदय अत्यन्त निबल हो गया था। उन्हें दिल के दौरे पडने लगे थे। कष्ट स छुटकारा पाने के लिए कल रात उन्होने बहुत अधिक मात्रा मे मद्य पी ली। एक बार जो नीद आई, वह फिर नही खुली। एक अन्य नागरिक ने कहा—'यह बात नही है। शालिशुक की हत्या की गई है। राजप्रासाद म उनके विरुद्ध अनेक षड्यन्त्र चल रहे थे। भववर्मा की माता चाम्पती और पत्नी देवयानी उनके खून की प्यासी थी। आन्तवशिव सेना के अनेक गुल्मपतियो और सनिको को उन्होंने अपने साथ मिला लिया कुछ को धन का लालच देकर और कुछ को पदोन्नति का आश्वासन देकर। यह हत्या उन्होंने ही कराई है। राजप्रासाद पर अब निपुणक का अधिकार नहीं रहा है, वह तो अन्तःपुर के बन्धनागार मे पडा सड रहा है। देख लेना, अब भववर्मा का पुत्र देववमा सम्राट् पद पर

अभिषिक्त होगा। कुछ लोग एक सर्वथा भिन्न बात कह रहे थे। उनका मत था कि शालिशुक की हत्या में मोग्गलान का हाथ है। गत तीन मास से सम्राट और स्थविर के सम्बन्ध निरन्तर कटु होते जा रहे थे। अत्यधिक सुरापान के कारण शालिशुक को उचित अनुचित और कर्तव्य-अकर्तव्य का विवेक रह ही नहीं गया था। वह स्थविरों और श्रमणों की न केवल उपेक्षा करने लगा था अपितु उनके प्रति उसका व्यवहार भी उद्दण्डतापूर्ण हो गया था। इसीसे क्रुद्ध होकर मोग्गलान ने शालिशुक की हत्या करवा दी है। कुक्कुट विहार के इस संघ-स्थविर की शक्ति असीम है। मौर्य शासन तन्त्र का वास्तविक कर्ताधर्ता वही है। उसकी इच्छा के विरुद्ध मागध साम्राज्य में एक पत्ता तक नहीं हिल सकता। अब वह शतधनुष को सम्राट पद पर अभिषिक्त करेगा। लोग उत्सुकतापूर्वक प्रश्न करते—'यह शतधनुष कौन है? यह नाम तो पहले कभी नहीं सुना। वे उत्तर देते— अरे तुम शतधनुष को नहीं जानते? शालिशुक का पुत्र है राजप्रासाद में न रहकर कुक्कुट विहार में निवास करता है। उसकी आयु तो अभी बहुत कम है पर सद्धर्म के प्रति उसके हृदय में अनन्त उत्साह है। मोग्गलान के कथन को वह ब्रह्मवाक्य समझता है। देख लेना अब वही सम्राट बनेगा।

पाटलिपुत्र के राजमार्गों, पथ चत्वरों और पण्यवीथियों में सर्वत्र इसी प्रकार की चर्चाएँ हो रही थीं। तथ्य का किसी को भी ज्ञान नहीं था। सब कोई उत्सुकतापूर्वक भावी घटनाओं की प्रतीक्षा कर रहे थे।

शालिशुक के देहावसान के समाचार से आचार्य दण्डपाणि बहुत प्रसन्न हुए। सोमधर्मा को अपने पास बुलाकर उन्होंने कहा— भगवान जयन्त तुम से कोई और भी अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य लेना चाहते हैं वत्स! आर्यभूमि और सत्य सनातन धर्म की रक्षा और उत्कर्ष के लिए अपने जीवन का उत्सर्ग कर देने का जो संकल्प तुमने किया था उस पर दृढ़ रहो। हमारा कार्य अभी समाप्त नहीं हुआ है। मोग्गलान के कुचक्र का अन्त करने के लिए तुम्हारे जैसे कितने ही युवकों को अपने जीवन की बलि देनी होगी वत्स!

देवी दिव्या का अपहरण

विदर्भ देश से एक सार्थ विदिशा आया हुआ था। उसका सार्थवाह धनदत्त नाम का एक श्रेष्ठी था, जो अमरावती नगरी का निवासी था। विदर्भ की कार्पास बहुत प्रसिद्ध थी, और उत्तरापथ में उसकी अत्यधिक माग थी। धनदत्त के साथ में सकडो वाहन और ऊँट थे जो सब कपास से लदे हुए थे। अपने इस पण्य को लेकर धनदत्त कुरु पाञ्चाल और कोशल जा रहा था। साथ के व्यापारियो, पशुओ और पण्य की रक्षा के लिए बहुत से सशस्त्र सैनिक भी उसके साथ थे।

दिव्या को पुष्यमित्र से अलग रहते हुए बहुत समय हो चुका था। अग्निमित्र अब बडा हो गया था, और शिक्षा के लिए गानद आश्रम मे निवास करने लगा था। विदिशा मे अकेले रहते हुए दिव्या का मन नही लगता था। वह चाहती थी कि शीघ्र पुष्यमित्र के पास चली जाए और उनके कार्य मे सहायता करे। उसे वे दिन रह रहकर स्मरण आते थे जबकि उसने भी अपने पतिदेव के साथ वाहीक देश की यात्रा की थी और सिन्धु-तट के युद्ध में हाथ भी बटाया था। यह जानकर कि विदर्भ देश का एक सार्थ उत्तरापथ जा रहा है उसे बहुत प्रसन्नता हुई। वह तुरन्त धनदत्त से मिलने गई और अपना परिचय देकर कहा—

'मैं भी उत्तरापथ जाना चाहती हू श्रेष्ठी! मुझे अपने साथ ले चलिए। सार्थों की परम्परा के अनुसार जो भी शुल्क प्रदेय होगा मैं सहर्ष प्रदान करूंगी।'

'पर उत्तरापथ की यात्रा निरापद नही है भद्रे! उसका मार्ग अत्यन्त विकट है। चम्बल की घाटी में दस्युओ की बहुत-सी श्रेणियाँ विद्यमान हैं जो केवल लूटमार से ही सन्तुष्ट नही हो जाती, अपितु यात्रियो की हत्या मे भी सकोच नही करती। इस घाटी से जाते हुए हम न जाने कितने सकटो का सामना करना पडेगा। किसी स्त्री को साथ ले जाने की उत्तरदायिता स्वीकार कर सकना मेरे लिए सम्भव नही है।'

'मैं दस्युओ से नही डरती श्रेष्ठी! एक बार पहले भी इस मार्ग से यात्रा कर चुकी हूँ।'

पर तब पुष्यमित्र आपके साथ थे। वह एक विकट योद्धा हैं और उन जसा वीर इस समय भारत भूमि मे अन्य कोई नही है।

मैं उन्ही की सहधर्मिणी हूँ श्रेष्ठी ! दस्यु मेरा कुछ नहीं बिगाड सकते। मैं पुरुष वेश म आपके साथ रहूँगी। आप स्वय देख सेंगे कि वीरता में मैं किसी भी सनिक से कम नही हूँ।

परम प्रतापी सेनानी पुष्यमित्र की जीवन-सगिनी के सम्मुख मैं क्या कह सकता हूँ। आपकी आज्ञा मुझे शिरोधाय है। हम कल प्रात ही विदिशा से प्रस्थान कर रहे हैं। आप यात्रा की सब तयारी कर लीजिए।

यात्रा के लिए मुझे तयारी ही क्या करनी है श्रेष्ठी ! आज रात ही मैं आपके साथ म सम्मलित हो जाऊँगी एव सनिक क वेश म कवच पहने हुए और अस्त्र शस्त्र धारण किए हुए। पर एक बात का ध्यान रखें किसी को यह ज्ञात न होने पाए कि मैं स्त्री हूँ। सब कोइ यही समझें कि विदिशा से आपने एक नया सनिक साथ की रक्षा के लिए अपनी रक्षक-सेना म भरती कर लिया है। पर हाँ यह तो बताइए साथ के साथ चलने के लिए मुझे क्या शुल्क देना हागा। इस धनराशि की भी ता मुझे व्यवस्था करनी होगी।'

शुल्क तो मुझे देना होगा भद्र ! जब आप एक सनिक के रूप म मेरे साथ रहगी तो मैं आपको वही शुल्क प्रदान करूँगा जो अय सनिको को देता हू। मेर इन सनिको की भृति एक सुवण निष्क प्रतिदिन है। सौ दिना की भृति मैं अग्रिम रूप म प्रदान किया करता हूँ। सार्थों की यही परम्परा है। मैं जानता हू कि सेनानी पुष्यमित्र की सहधर्मिणी को अपना एक भृत सनिक समझने और उन्हे भृति प्रदान करने का साहस यह तुच्छ श्रेष्ठी नही कर सकता। पर हम सार्थवाहो के भी कतिपय चरित्र और व्यवहार हैं जिनका पालन करना मेरे लिए अनिवाय है। जब आप सनिक के रूप मे मेरे साथ के साथ रहेंगी तब उसकी भृति भी आपको स्वीकार करनी ही होगी।

पर भृति स्वीकार करना सेनानी पुष्यमित्र की जीवनसगिनी की मान मर्यादा के अनुरूप नही होगा श्रेष्ठी !

आप उसे भृति के रूप मे न लें भद्रे ! मेरी तुच्छ भेंट समझकर स्वीकार कर लें। मुझे ज्ञात है कि सेनानी पुष्यमित्र आयभूमि की रक्षा के

लिए एक शक्तिशाली सेना के सगठन म तत्पर हैं। मैंने यह भी सुना है कि आग्नेय, रोहितक आदि जनपदो के श्रेष्ठिया न इस पुनीत काय के लिए कोटि-कोटि धनराशि प्रदान की है। उन श्रेष्ठिया के सम्मुख मेरी स्थिति ही क्या है ? मैं ता एक तुच्छ वन्हक हैं। कपास का मेरा कारोबार है। इस पण्य को लेकर देश विदेश भटकता फिरता हूँ। जो द्रव्य मिल जाए उससे बाल-बच्चा का निर्वाह करता हूँ। पर सेनानी पुष्यमित्र न यवना के आक्रमणा स भारत भूमि की रक्षा करने के लिए जिस महान यज्ञ का अनुष्ठान किया है उसमे मैं भी अपनी ओर से आहुति देना चाहता हूँ। ये एक शत सुवण मुद्राएँ स्वीकार कर मुझे अनुगहीत करें।'

सूर्योदय मे पूव ही श्रेष्ठी धनदत्त के साथ ने विदिशा नगरी से प्रस्थान कर दिया। विदिशा से चार योजन दूर देवपत्तन नाम की एक छोटी-सी पल्ली थी। वहा पहुँचते पहुँचते साझ हा गई, और साथ ने वही पडाव डाल दिया। देवपत्तन एक छोटी-सी पहाडी की उपत्यका मे स्थित था, और वहा केवल पाच-सात सौ घरो की बस्ती थी। विदिशा के समीप होने के कारण धनदत्त को यहा किसी सकट की आशका नही थी। चम्बल की घाटी अभी बहुत दूर थी, और इस प्रदश म दस्युआ का काई भय नही था। अँधेरा होन से पूव ही साथ ने एक विशाल शिविर का रूप धारण कर लिया। सकडो पट वक्ष खडे कर दिए गए और साथ मे सम्मिलित सब वदेहक विश्राम क लिए चल गए। शिविर की रक्षा के लिए सनिक पहरे पर नियुक्त कर दिये गए। किसी का सन्देह न हो इसलिए दिव्या को भी पहरे पर खडा कर दिया गया। जब आकाश म तारे निकल आए और शिविर मे सवत्र शाति छा गई, तो सात भिक्षु उत्तर की ओर से आए और उन्होने प्रहरियो से कहा—

क्या हम आज रात यहा विश्राम कर सकते हैं नायक ।

'आप कौन हैं कहा से आए हैं और कहाँ जा रहे हैं ? गुल्मपति पद्म वर्मा ने प्रश्न किया।

'हम भिक्षु हैं मथुरा मे आए हैं और साञ्ची जा रह हैं। कोई छ मास हुए तीर्थयात्रा के लिए चले थे। कपिलवस्तु सारनाथ लुम्बिनी वन, बोध-गया पाटलिपुत्र राजगह, काशी श्रावस्ती आदि के सब तीर्थों की या

कर चुके हैं। अब मथुरा होते हुए साञ्ची जा रहे हैं। जहाँ जहा भगवान् तथागत की अस्थियाँ विद्यमान है उन सब चैत्यो का दशन और पूजन करने का सकल्प किया है। साञ्ची भी इसी प्रयोजन से जा रहे हैं।

तो आप हमस क्या चाहत है ?

केवल रात्रिभर के लिए विश्राम और यदि असुविधा न हो तो भोजन भी।

पर इसकी अनुमति तो कवल साथवाह धनदत्त प्रदान कर सकते हैं भन्ते।'

हमारी ओर से उनकी सेवा म विनम्र निवेदन करने की दया करें सेनापति ! भगवान तथागत आप सबका कल्याण करेंगे ! दिन भर की यात्रा से हम बहुत थक गए हैं। आज कही भोजन भी प्राप्त नही हुआ, भूख के कारण भी व्याकुलता अनुभव हो रही है।

पर धनदत्त अपने शयन-कक्ष म चले गए हैं। उनका आदेश है कि रात्रि के समय किसी भी व्यक्ति का शिविर म न प्रविष्ट होने दिया जाए। उनकी आज्ञा का उल्लघन हम कसे कर सकते हैं ? महानस भी अब बन्द हो चुका है। सब औग्निक और आपूपिक काय समाप्त कर सोने के लिए चले गए हैं।

भगवान तथागत की जो इच्छा आज रात भूखे ही सो जाएँगे। यात्रा म कष्ट ता उठाने ही पड़ते हैं। यदि हम शिविर के बाहर उस वटवक्ष के नीचे आसन जमा लें तो कोई मना तो नही करेगा ? सनिका से हम बहुत डर लगता है भाई ! खडग और धनुषबाण देखकर शरीर म कपकपी-सी चढ़ने लगती है।

स्त्रिया इस वार्तालाप को सुन रही थी। उसके हृदय म भूखे-प्यासे थके मांदे भिक्षुओ को देखकर दया उमड आई। उसने गुल्मपति स कहा—

अभी बहुत रात नही हुई है नायक ! ये भिक्षु बहुत थक हुए हैं। साथ ही भूखे भी हैं। इनकी सहायता हम करनी ही चाहिए। यदि आपकी अनुमति हो तो मैं महानस जाकर कुछ खाद्य सामग्री ले आऊँ। भोजन खाकर ये वटवक्ष के नीचे सो रहेंगे। इसम हमारी क्या हानि है ?'

भगवान तथागत तुम्हारा कल्याण करेंगे तरुण सनिक ! तुम्हार

हृदय म दया है, तुम दूसरो का दु ख समझते हो। तुम्हारी कृपा से हम अकिञ्चन भिक्षुओ को आज भिक्षा अवश्य मिलेगी।'

गुल्मपति पद्मवर्मा ने यह सुनकर दिव्या से कहा—'साथ के नियमो का उल्लघन कर सकना बहुत कठिन है। मैं स्वय सार्थवाह धनदत्त के पास जाता हूँ। यदि उनकी अनुमति हुई तो मैं स्वय ही महानस म खाद्य-सामग्री लेता आऊँगा। तीन सनिक मेरे साथ चलें, शेष सब यही पहरा देते रह।'

गुल्मपति का जाना था कि सातो भिक्षु प्रहरियो पर टूट पडे। प्रहरी उनके आक्रमण के लिए तैयार नही थे। अकस्मात आक्रमण स व किंकर्तव्य विमूढ हो गए। बात की बात म दस सनिक घायल होकर धराशायी हो गए। कोई दो घडी बाद जब गुल्मपति पद्मवर्मा भोजन लेकर वापस लौटा, तो उसने देखा भिक्षुओ का कही पता नही है और प्रहरी भूमि पर पडे कराह रहे हैं। ध्यानपूवक देखने पर उसे ज्ञात हुआ कि दिव्या इन घायल सनिको म नही है। भिक्षु उसे बन्दी बनाकर अपने साथ ले गए थे।

सम्राट् देववर्मा

शतुद्रि और यमुना की अन्तर्वेदी मे अपने काय को समाप्त कर सेनानी पुष्यमित्र अब पाञ्चाल जनपद आ गए थे और अहिच्छत्र को केन्द्र बनाकर सैन्य-सगठन म तत्पर थ। मध्यदेश के बहुत से युवक भारत भूमि की रक्षा के लिए बडे उत्साह के साथ उनकी सेना मे सम्मिलित हो रहे थे। शालिशुक की मृत्यु का समाचार जब पुष्यमित्र को ज्ञात हुआ, तो उनके लिए अहिच्छत्र मे रह सकना सम्भव नही रहा। जिस अवसर की वह चिरकाल से उत्सुकता-पूवक प्रतीक्षा कर रहे थे, वह अब उपस्थित हो गया था। उन्होंने तुरन्त पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान कर दिया, और वायुवेग से पूव दिशा की ओर बढती हुई उनकी सेना शीघ्र ही सोण नदी के तट पर पहुँच गई।

पाटलिपुत्र म इस समय अराजकता छाई हुई थी। राजप्रासाद, अन्त पुर और कुक्कुट विहार—सब षडयन्त्रो के केन्द्र बन हुए थे। मोग्गलान शतधनुष को सम्राट बनाना चाहता था, पर अन्त पुर मे चारुमती और देवयानी

का पक्ष प्रबल था। शासनतन्त्र के मन्त्री अमात्य आयुक्त और सेनानायक सब दुविधा में थे कि किसका पक्ष लें और किसका विरोध करें। आतविशक सेना अभी विद्यमान थी और उसकी सहायता से ही कोई राजकुमार राजप्रासाद पर अपना अधिकार स्थापित कर सकता था। पर निपुणक जैसे अयोग्य और अशक्त सेनानायक के कारण उसमें भी अनुशासन नहीं रह गया था। शतधनुष के विरोधियों ने वीरवर्मा नाम के एक गुल्मपति को अपना नेता चुन लिया, और उसे आतवशिक घोषित कर दिया। पाटलिपुत्र में जो थोड़ी-बहुत सेना अब तक भी विद्यमान थी वह भी अब दो वर्गों में विभक्त हो गई। और ये दोनों वर्ग एक दूसरे से युद्ध करने में लग गए। परिणाम यह हुआ कि राजप्रासाद ने एक रणक्षेत्र का रूप धारण कर लिया। प्रासाद की सब वीथियों और अट्टालिकाओं में सैनिकों ने मोरचे बना लिए और लड़ाई प्रारम्भ हो गई। जो दशा राजप्रासाद की थी, वही पाटलिपुत्र की भी थी। सर्वत्र बाण-वर्षा हो रही थी और सैनिकों की टोलियाँ अपने विरोधियों की खोज में इधर उधर फिर रही थीं। पण्यशालाएँ पानगृह और नृत्यशालाओं ने अपने कपाट बन्द कर दिए थे और गृहस्थ अपने घरों से बाहर नहीं निकलते थे।

यह दशा थी जब पुष्यमित्र सोण नदी को पार कर पाटलिपुत्र के पश्चिमी महाद्वार पर आ पहुँचे। राज्यसंस्था का मूल 'दण्ड' होता है। दण्डशक्ति जिसके हाथों में हो वही शासन-सूत्र का संचालन कर सकता है। मौर्य शासनतन्त्र के पास न सैन्य शक्ति थी, और न देश में व्यवस्था रख सकने की क्षमता। मयूरध्वज और निपुणक जैसे विलासी और निर्वीर्य व्यक्ति जिस शासन के कर्णधार हों पुष्यमित्र की सुसंगठित सेना के सम्मुख वह कब तक टिक सकता था? बिना किसी युद्ध के पुष्यमित्र की सेना ने पाटलिपुत्र में प्रवेश कर लिया। जनता ने उत्साह के साथ उसका स्वागत किया। महीनों की अराजकता और अशान्ति के पश्चात अब पाटलिपुत्र में व्यवस्था स्थापित हुई। मयूरध्वज निपुणक और उनके साथियों के सम्मुख अब केवल यह मार्ग रह गया कि कुक्कुट विहार जाकर आश्रय ग्रहण करें। शतधनुष तो वहां था ही।

देववर्मा का मार्ग अब निष्कण्टक हो गया था। उसे सम्राट घोषित कर

दिया गया। नई मन्त्रिपरिषद् म वीरखर्मा को आतवंशिर का पद दिया गया और शिवगुप्त को मनिधाता का। शिवगुप्त देवगुप्त का पुत्र था, और अपने पिता के समान ही योग्य और सर्वोपधाशुद्ध था। सेनानी पुष्यमित्र को प्रधान सेनापति का पद प्रदान किया गया और विशाल मौर्य साम्राज्य की रक्षा का भार उन्हीं को सौंप दिया गया। आचाय दण्डपाणि अब बहुत प्रसन्न थ। जिस महान् उद्देश्य को सम्मुख रखकर उन्होंने गानद आश्रम से प्रस्थान किया था वह अब पूर्ण हो चुका था। मौर साम्राज्य क राजसिंहासन पर अब एक एसा कुमार आरूढ़ था, जिसकी क्षात्रधर्म म आस्था थी। दण्डपाणि चाहते थे कि अब अपने आश्रम को लौट जाएँ और दण्डनीति के अध्यापन काय को प्रारम्भ कर दें। पुष्यमित्र को बुलाकर उन्होंने कहा—'मेरा काय अब पूर्ण हो गया है वत्स ! अब मैं अपने आश्रम को लौट जाना चाहता हूँ। बटुकगण वहाँ मेरी प्रतीक्षा कर रहे होंग।'

'पर अभी देववर्मा की स्थिति सुरक्षित नहीं है आचाय ! मोग्गलान के कुचक्र का अभी अन्त नही हुआ है। शतधनुष, निपुणक और मयूरध्वज आदि कुक्कुट विहार म रहकर देववर्मा के विरुद्ध षड्यन्त्रों म तत्पर हैं। वहाँ के हजारों भिक्षु शतधनुष के पक्षपाती हैं। जब तक कुक्कुट विहार के कुचक्रों का अन्त नहीं किया जाएगा हमारा काय पूर्ण नहीं होगा।

पर इसके लिए मेरी क्या आवश्यकता है वत्स ! तुम्हारी जिस सेना ने सिन्धु तट के युद्ध म यवनों को परास्त किया था, क्या वह कुक्कुट विहार को भूमिसात नहीं कर सकती ?'

'कर क्या नहीं सकती, आचाय ! सैन्य शक्ति का प्रयोग कर एक क्षण म कुक्कुट विहार के सब षड्यन्त्रों का अन्त किया जा सकता है। पर एक विहार के विरुद्ध शस्त्र शक्ति का प्रयोग क्या उचित होगा, आचाय ! भारत की प्रजा ब्राह्मणों और श्रमणों का समान रूप म आदर करती है, सबको दान-दक्षिणा द्वारा सन्तुष्ट रखती है, सबके उपदेशों का सम्मानपूर्वक श्रवण करती है और सबके प्रति श्रद्धाभाव रखती है। काषाय वस्त्र धारी स्थविरों श्रमणों और भिक्षुओं के विरुद्ध शस्त्रों के प्रयोग को वह कभी सहन नहीं करेगी। इससे प्रजा हमारे विरुद्ध हो जाएगी। कोई शासन तब तक स्थिर नहीं रह सकता जब तक कि जनता की सद्भावना उसे प्राप्त न

हो। आचार्य चाणक्य के इस सिद्धान्त को आप ही ने तो मुझे सिखाया था कि प्रजा का कोप राजा के अन्य सब कोपों की तुलना में अधिक भयंकर होता है (प्रकृतिकोपो हि सर्वकोपेभ्यो गरीयान्)।

'तो तुम क्या चाहते हो, वत्स!'

'मोग्गलान के कुचक्र का अन्त करने के लिए औशनस नीति का प्रयोग किया जाए। इस नीति के आप न केवल प्रवक्ता हैं, अपितु प्रणेता भी हैं। आप ही इस नीति का भलीभाँति प्रयोग कर सकते हैं।'

पर औशनस नीति में भी हत्या के उपाय का आश्रय लेना पड़ता है वत्स! जिन असंख्य और निर्दोष व्यक्तियों के हाथों में मौर्य साम्राज्य का सूत्र देकर मोग्गलान अपने जघन्य उद्देश्यों को पूर्ण करना चाहता है, उनका अंत करने के लिए हमें हत्या का ही आश्रय लेना होगा। यह हत्या चाहे युद्ध में शस्त्र प्रयोग द्वारा की जाए और चाहे औशनस नीति द्वारा। देववर्मा के जिन विरोधियों ने अब कुक्कुट विहार में आश्रय ग्रहण किया हुआ है सब भिक्षुवेश में हैं। यदि औशनस नीति द्वारा उनकी हत्या की गई तो क्या जनता उद्विग्न नहीं होगी?

'वह औशनस नीति ही क्या है आचार्य जिससे घटना का यथार्थ रूप प्रगट हो जाए? पाटलिपुत्र में जो कोई भी व्यक्ति देववर्मा के विरोधी और शतधनुष के पक्षपाती हैं वे सब आज काषाय वस्त्र धारण कर कुक्कुट विहार में निवास कर रहे हैं। हम भी अपने कुछ सैनिकों को वहाँ भेज देंगे। वे भिक्षुवेश धारण कर लेंगे और तथागत के धर्म में अत्यधिक श्रद्धा प्रदर्शित करेंगे। शीघ्र ही उन्हें मोग्गलान का विश्वास प्राप्त हो जाएगा। भिक्षुवेशधारी हमारे ये सैनिक अवसर पाते ही शतधनुष निपुणक आदि का घात कर देंगे। जनता समझेगी पारस्परिक कलह के कारण ही कुछ भिक्षुओं की मृत्यु हुई है।

औशनस नीति के प्रयोग में तुम मुझसे भी अधिक कुशल हो गए हो वत्स! तुम्हारे जैसे शिष्य पर मुझे गर्व है। तुम्हें मार्ग प्रदर्शित करने के लिए अब मेरी क्या आवश्यकता है?

मैं आपका विनम्र शिष्य हूँ, आचार्य! पर आपके बिना मोग्गलान को परास्त कर सकना कदापि सम्भव नहीं होगा। कूटनीति में वह पारंगत है।

मुझमें इतनी शक्ति नहीं है कि अकेले मागनान का सामना कर सकूं। आप उसी प्रकार मौर्य साम्राज्य का पौरोहित्य कीजिए जैसे आचार्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त के समय में किया था। देववर्मा की स्थिति को सुरक्षित रखने के लिए अभी हम आपके नेतृत्व की बहुत आवश्यकता है। मेरे इस अनुरोध को स्वीकार कीजिए आचार्य!

दण्डपाणि पुष्यमित्र की सानुराध प्रार्थना को अस्वीकार नहीं कर सके। वह पाटलिपुत्र रहने और मौर्य शासनतन्त्र का पौरोहित्य करने को उद्यत हो गए। अब उनके सम्मुख दो कार्य मुख्य थे—कुक्कुट विहार के षडयन्त्र का अन्त करना और मौर्य साम्राज्य में शक्ति का संचार करना। शासन के सब मन्त्रियों, अमात्यों, आयुक्तों और अन्य प्रधान पदाधिकारियों को उन्होंने एक सभा में एकत्र किया, और उसके सम्मुख अपने विचार इस प्रकार प्रगट किए—

'भारत भूमि का सौभाग्य है कि चिरकाल के अनन्तर आज एक ऐसा व्यक्ति पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आरूढ है, जो प्राचीन आर्य मर्यादा में आस्था रखता है। प्रियदर्शी राजा अशोक और उसके उत्तराधिकारियों ने क्षात्रधर्म की उपेक्षा करके भारी भूल की थी। धर्म के उत्कर्ष के लिए प्रयत्न करना सर्वथा उचित है। तथागत बुद्ध और जिन महावीर ने जिन धार्मिक मन्तव्यों का प्रतिपादन किया था, निस्सन्देह वे सत्य हैं। वस्तुत, सब धर्मों और सम्प्रदायों के मूल तत्त्व एक ही हैं। सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय और अपरिग्रह—ऐसे तथ्य हैं जिनको सब सम्प्रदाय समानरूप से महत्त्व देते हैं। इस दशा में साम्प्रदायिक विद्वेष और विरोधभाव का समाज में कोई भी स्थान नहीं होना चाहिए। यही कारण है जो भारत की जनता सब सम्प्रदायों का समान रूप में आदर करती रही है। यही उचित भी है। पर आर्य संस्कृति का मूल तत्त्व वर्णाश्रम व्यवस्था है। यदि सब वर्णों और आश्रमों के लोग अपने-अपने स्वधर्म में स्थिर रहें, तभी समाज का हित और कल्याण सम्भव है। समाज को ब्राह्मण और श्रमण भी चाहिएँ, सैनिक भी चाहिएँ, वैदेहक और कर्मकर भी चाहिएँ, कृषक और शिल्पी भी चाहिएँ। समाज एक शरीर के समान है, जिसके ये सब विविध अंग हैं। जैसे अंगों के पुष्ट हुए बिना शरीर पुष्ट नहीं हो सकता, वैसे ही विविध वर्णों या वर्गों के

पुष्ट हुए बिना समाज पुष्ट नहीं हो सकता। धर्म के प्रचार और उत्कर्ष के लिए प्रयत्न किया ही जाना चाहिए पर यह कार्य ब्राह्मणों श्रमणों और परिव्राजकों का है राजाओं और अमात्यों का नहीं। राजाओं का कार्य है प्रजा की रक्षा करना और शस्त्र ग्रहण कर शत्रुओं और दस्युओं का संहार करना। यदि राजा और अमात्य भी काषाय वस्त्र धारण कर धर्म प्रचार में प्रवृत्त हो जाएँ तो शत्रुओं से देश की रक्षा कौन करेगा? राजा अशोक की यह भारी भूल थी जो उन्होंने राजसिंहासन का परित्याग किए बिना ही भिक्षुव्रत ग्रहण कर लिया था। हम आश्रम व्यवस्था में विश्वास रखते हैं। हमारे देश की सदा से यह परम्परा रही है कि वृद्धावस्था में गृहस्थ आश्रम का परित्याग कर मुनि या वानप्रस्थ जीवन व्यतीत किया जाए। राजा भी यही किया करते थे पर अपने ज्येष्ठ पुत्र को राजा के पद पर अभिषिक्त करके। अशोक को भी यही करना चाहिए था। पर राजसिंहासन पर आसीन रहते हुए उन्होंने क्षात्रधर्म की जो उपेक्षा की उसे किसी भी प्रकार समुचित नहीं कहा जा सकता। यही कारण है जो जनता ने उनके इस कार्य की सराहना नहीं की। वह उन्हें मूर्ख समझने लगी। अशोक ने कितने गर्व के साथ 'देवानां प्रिय' और 'प्रियदर्शी' विरुदों को अपने नाम के साथ प्रयुक्त किया था। पर जनता की दृष्टि में इन विरुदों का अर्थ ही मूर्ख हो गया। मुझे सन्तोष है कि सम्राट देववर्मा क्षात्रधर्म में विश्वास रखते हैं और अपने कर्तव्य पालन के लिए प्रयत्नशील हैं।

'शासनतन्त्र में सम्राट का बहुत महत्त्व है उसकी स्थिति शासन में कूटस्थानीय होती है। पर अकेला राजा स्वयं कुछ नहीं कर सकता। चाणक्य ने 'राजत्व को सहायसाध्य कहा है। मन्त्रियों और अमात्यों की सहायता से ही राजा अपने कर्तव्यों के पालन में समर्थ हो सकता है। भारद्वाज जैसे महान आचार्य का यह मन्तव्य है कि शासनतन्त्र में अमात्यों का महत्त्व सम्राट से भी अधिक है। चाणक्य के इस सिद्धान्त को सदा स्मरण रखिए—अमात्यमूलास्सर्वारम्भा'। प्रजा के योग क्षेम का साधन आभ्यन्तर और बाह्य शत्रुओं से देश की रक्षा, सब प्रकार के संकटों का निवारण आदि सब राजकीय कार्य अमात्यों द्वारा ही सम्पन्न किए जाते हैं। राज्य में राजा की स्थिति तो ध्वजमात्र ही होती है। अत मौर्य शासनतन्त्र

मे शक्ति का सचार करने का जो महत्त्वपूर्ण काय सम्पन्न किया जाना है, उसकी मुख्य उत्तरदायिता आप सब पर ही है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप इस विषय म अपने-अपने कतव्यो का पालन करने मे प्रमाद नही करेंगे। जहाँ तक विदेशी शत्रुओ से आयभूमि की रक्षा का प्रश्न है, सेनानी पुष्यमित्र इसके लिए पूणतया योग्य और समथ हैं। अब तक यह काय वह अकेले करते रहे हैं। राजशक्ति का सहयोग उन्ह प्राप्त नही था। स्वय ही उन्होंने सेना का सगठन किया, और स्वय ही कोषबल का। पर अब वह मौय साम्राज्य के सेनानी हैं। मन्त्रिधाता शिवगुप्त का पूर्ण सहयोग उन्ह प्राप्त होना चाहिए। हम केवल मौलबल और श्रेणिबल से यवनो का सामना नही कर सकते। सैन्यशक्ति का प्रधान आधार भृत सेना होती है। हमे भी प्रधानतया इसी पर निभर करना होगा। भृत सेना के लिए जिस धन की आवश्यकता है वह राज्यकोष से ही प्राप्त हो सकेगा। हम शीघ्र ही प्रत्यन्त देशो के दुर्गों का जीर्णोद्धार करना है अस्त्र शस्त्रो के निर्माण के लिए कर्मान्तो को स्थापित करना है। देश मे ऐसे शिल्पियो और कमकरो की कमी नही है जो अस्त्र शस्त्रो के निमाण म कुशल हैं। पर आधी सदी मे उन्ह अपने शिल्प को कार्यान्वित करने का अवसर ही नही मिला है। हम उन्ह फिर अपने कर्मान्तो को चालू करने के लिए प्रेरित करना है। सत्रियो और गूढपुरुषो का भी हम नए सिरे से सगठन करना है। परपक्ष के गुप्त भेदो का परिज्ञान प्राप्त करने और स्वपक्ष के मन्त्र की गुप्ति के लिए चार-सस्थाओ का बहुत उपयोग है। राजा अशोक के समय से मौय साम्राज्य के शासन मे केवल सैन्यशक्ति की ही उपेक्षा नही की गई अपितु मन्त्रबल पर भी समुचित ध्यान नहीं दिया गया। गूढपुरुष आज भी देश मे सवत्र विद्यमान हैं पर या तो वे यवनो द्वारा नियुक्त हैं और या स्थविरो द्वारा। वे विदेशियो और स्थविरो के कुचक्रो और षडयन्त्रो के साधन बने हुए हैं। उनका सामना करने के लिए मौय शासनतन्त्र की चार-सस्थाओ की आज सत्ता ही कहा है? यह काय वीरवर्मा करेंगे, जो अत्यन्त चाणाक्ष और कुशल युवक हैं।

'मौय साम्राज्य का बाह्य और आभ्यन्तर दोनो प्रकार की विपत्तियो का सामना करना है। यह सवथा सुनिश्चित है कि यवन सेना शीघ्र ही

पुन भारतभूमि को आक्रान्त करेगी। उसे परास्त करने के लिए हमे अपनी सन्यशक्ति को बढाना होगा। पर अधिक महत्व का काय आभ्यन्तर शत्रुआ से देश की रक्षा करना है। तथागत बुद्ध ने कस उच्च आदर्शों को सम्मुख रखकर चातुरन्त सघ का स्थापना की थी। प्राणिमात्र के हित और सुख का सम्पादन करने के लिए ही उन्होंने भिक्षु सघ का सगठन किया था। पर राज्यसस्था का आश्रय पाकर बौद्ध सघ का स्वरूप आज कसा विकृत हो गया है। धमप्रचार का मुख्य साधन जनता की सेवा और हित सम्पादन है। पर स्थविर और श्रमण आज इस तथ्य को भूल गए हैं। सद्धम के उत्कष का एकमात्र साधन अब वे यह समझने लगे हैं कि राजशक्ति को अपने हाथा म रखें और उसके आश्रय स धम का प्रचार करें। इसीलिए व षडयन्त्रो म तत्पर रहते हैं और अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए हत्या तक म सकोच नही करते। हमारे लिए सभी धार्मिक नेता आदरणीय हैं चाहे वे ब्राह्मण हा श्रमण हा या मुनि हा पर यदि ये नेता स्वधम से विमुख होकर राजनीतिक षडयन्त्रा म व्यापृत हो जाएँ तो उनका प्रतिरोध करना हमारा कतव्य है। प्रत्यक व्यक्ति और समुदाय को स्वधम म स्थित रखना राज्यसस्था का प्रमुख काय है। अन्यथा समाज म अराजकता और अव्यवस्था उत्पन्न हो जाती है। भिक्षु और स्थविर भी इसके अपवाद नही हो सकते। हम यत्न करना होगा कि बौद्ध-सघ भी स्वधम का अतिक्रमण न करने पाए। यह कतव्य कटु अवश्य है पर साथ ही अनिवाय भी है। इसके पालन के लिए यदि हम दण्डशक्ति का भी प्रयोग करना पडे तो उसम हमे सकोच नही करेंगे।

आचाय दण्डपाणि का प्रवचन अभी समाप्त ही हुआ था कि एक दण्ड धर आन्तपाल वीरवमा के पास आया। प्रणाम निवेदन के अनन्तर उसने कहा—

एक श्रेष्ठी सनानी पुष्यमित्र स भेंट करना चाहते हैं सनापति।

सनानी इस समय मन्त्रि-परिषद म हैं और वह किसी स भेंट नही कर सकत। वीरवमा न कुछ आक्रोश स कहा।

मैंने उन्हें बहुत समझाया अमात्य! पर श्रेष्ठी का कहना है कि उनका काय अत्यन्त अनिवाय और महत्वपूण है। वह एक क्षण भी प्रतीक्षा करने

के लिए उद्यत नहा हैं।'

'यह श्रेष्ठी कौन है, कहाँ का निवासी है और किस काय से सेनानी से मिलना चाहता है ?'

'अपना नाम उन्होने धनदत्त बताया है। विदभ देश के निवासी हैं और व्यापार के लिए उत्तरापथ आए हैं। मैंने उनसे यह भी पूछा था कि सेनानी से क्या काय है। पर वह उन्होंन नही बताया। यही कहते रहे कि काय अत्यन्त गोपनीय है। उसे वह केवल सेनानी को ही बता सकते हैं।

अच्छा, श्रेष्ठी को यही ले आओ। आचाय दण्डपाणि ने आदेश दिया।

धनदत्त ने अन्दर आकर साष्टाग प्रणाम किया, और हाथ जोडकर खडा हो गया। वह बहुत घबराया हुआ था। आश्वस्त होने पर उसने कहा—

'मैं सेनानी पुष्यमित्र स एकान्त म मिलना चाहता हूँ।

'कहो, तुम क्या कहना चाहत हो ? मौय साम्राज्य के सब प्रमुख मन्त्री और अमात्य यहाँ उपस्थित हैं। तुम्ह जो कुछ कहना हो निश्चिन्त होकर कहो। यहाँ तुम्हें किसी का भय नही है।' दण्डपाणि ने कहा।

'पर मैं एक अत्यन्त गोपनीय समाचार सेनानी की सेवा मे निवेदन करना चाहता हूँ। मैं आज अभी पाटलिपुत्र पहुचा हूँ मेरा साथ पीछे रह गया है। सबको पीछे छोडकर भागा भागा यहाँ आया हूँ।

दण्डपाणि स अनुमति प्राप्त कर पुष्यमित्र एक एकान्त कक्ष मे चले गए। श्रेष्ठी धनदत्त ने देवी दिव्या के अपहरण का वृत्तान्त सुनाकर रोते हुए कहा, मैं बहुत लज्जित हूँ, सेनानी! पर मैं कर ही क्या सकता था। मरी शक्ति ही कितनी थी। सब यत्न कर लिए, अपने सनिको को चारा दिशाओ म देवी की खोज के लिए भेजा। पर कही दवी का पता नही लगा। हारकर आपकी सेवा म उपस्थित हुआ हूँ। मुझे क्षमा करें, सनानी! मैं एक तुच्छ वदेहक मात्र हूँ।'

दिव्या क अपहरण का समाचार सुनकर सेनानी पुष्यमित्र स्तब्ध रह गए। देर तक वह चुप बैठे रह। कुछ शान्त होने पर उन्होंने प्रश्न किया—

'तुम विदिशा स कब चले थे ?'

ढाई तीन मास के लगभग हो गए, सेनानी!'

इसस पूव यह समाचार मुझे क्यों नहीं भेजा?'

के समय वह किमी से भी नही मिलते।

'हम श्रावस्ती से आ रहे हैं। जेतवन विहार व सघ-स्थविर मज्झिम ने हम भेजा है। उनका एक अत्यन्त आवश्यक पत्र हम तुरन्त स्थविर दिवाकर मित्र की सेवा म पहुचाना है।

'तुम्हे एक बार कह तो दिया। रात्रि के समय स्थविर किसीस नही मिला करत। सूर्योदय म अब दर ही कितनी रही है। प्रतीक्षा कर लो।

जब भिक्षुओ न देखा कि प्रहरी किसी भी प्रकार उनके अनुरोध को स्वीकार नही करते तो एक स्थूलकाय प्रौढ भिक्षु आगे बढा। अपने चीवर मे छिपाए हुए एक पत्र को बाहर निकालकर आदेशभरे स्वर म उसने प्रहरी से कहा जाओ तुरत इस पत्र को सघ-स्थविर की सेवा म पहुचा दो। एक क्षण की भी दर न करो। पत्र पर अकित धम चक्र की मुद्रा को देखकर प्रहरी ने अपना सिर झुका दिया, और हाथ जोडकर कहा मुझ क्षमा करें भत ! अज्ञान म ही मुझसे यह घोर अपराध हो गया।

आधी घडी पश्चात वह प्रहरी वापस लौट आया। सिर झुकाकर उसने कहा— भत ! सघ-स्थविर चत्य के गभगह म आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। मेरे साथ चलिए। अन्य भिक्षु अभी यही ठहरेंगे। स्थविर का यही आदेश है।

चत्य के गभगह म स्थविर दिवाकरमित्र आगन्तुक की प्रतीक्षा मे आकुलता से भीतर बाहर आ जा रहे थे। पदचाप सुनकर वह बाहर आ गए और आदरपूवक बोले—

'जेतवन विहार के स्थविर अगुल का चत्यगिरि मे स्वागत है। आइए इस आसन पर विराजिए। जेतवन म सब कुशल मगल तो हैं ? सघ-स्थविर मज्झिम का शरीर तो नीरोग है ?

'कुशल मगल की बात फिर होगी स्थविर ! अपने बन्धनागार के एक सुरक्षित और गुप्त कक्ष को खुलवा दीजिए। एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बन्दी को वहाँ रखना है।

'यह बन्दी कौन है स्थविर !

पुष्यमित्र की पत्नी दिव्या।

दिव्या का नाम सुनत ही दिवाकर मित्र स्तब्ध रह गए। विदिशा के

निवासी महाप्रतापी सेनानी पुष्यमित्र के उद्दण्ड साहस और वीरता मे वह भलीभाति परिचित थे। कुछ देर चुप रहने के अनन्तर उन्होने घबराहट के साथ कहा—

यह आप क्या कह रहे हैं स्थविर ! क्या सेनानी की अर्धाङ्गिनी दिव्या यहा बन्दी होकर रहगी ? चत्यगिरि के इस सघाराम के लिए इससे बढकर विपत्ति की बात और क्या हो सकती है ? सिन्धु तट के युद्ध म यवनराज अन्तियोक तक जिस सेनानी का लोहा मान गया हम भिक्षुओ के लिए उसके कोप को सहन कर सकना कसे सम्भव होगा ?'

'चातुरन्त सघ के निणय के अनुसार ही दिव्या का अपहरण किया गया है, स्थविर ! सद्धर्म की रक्षा और उत्कप के महान् उद्देश्य को दृष्टि मे रखकर ही जेतवन विहार के सघ-स्थविर मज्झिम ने मुझे दिव्या का अपहरण करने और उसे चत्यगिरि के बन्धनागार म बदी बनाकर रखने का आदेश दिया है।'

'पर एक सती-साध्वी गहिणी को बन्धनागार म डाल देना क्या उचित होगा स्थविर !

उचित अनुचित के विषय मे हमे विचार नही करना है। चातुरन्त सघ इस पर गम्भीरतापूवक विचार विमश कर चुका है। पुष्यमित्र बुद्ध, धम और सघ का कट्टर शत्रु है। मौय शासनतन्त्र पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर वह पुराने याज्ञिक धम के पुनरुद्धार के लिए प्रयत्नशील है। धम विजय की नीति म उसका जरा भी विश्वास नही है। वह शस्त्र शक्ति के प्रयोग का पक्षपाती है। इस पुष्यमित्र को हमे अपने वश म लाना ही होगा, स्थविर ! उसका मद-मदन किए बिना सद्धम का उत्कप कदापि सम्भव नही है।

पर यदि पुष्यमित्र ने अपनी सेना के साथ चत्यगिरि पर आक्रमण कर दिया तो क्या होगा स्थविर !

इसीलिए तो दिव्या को बन्धनागार मे रखा जा रहा है। हमारी ओर से यह घोषणा कर दी जाएगी कि यदि सघाराम के विरुद्ध सन्यशक्ति का प्रयोग किया गया तो दिव्या जीवित नही रह पाएगी। पुष्यमित्र को दिव्या से अगाध प्रेम है। उसे जीवित देखने के लिए वह हमारे सम्मुख घुटने टेक देगा। अब विलम्ब करने का समय नही है स्थविर ! हमारी बातचीत फिर होती रहेगी। क्षितिज मे उषा की लाली प्रगट होने लग गई है। रात्रि के

अन्धकार मे ही यह काय सम्पन्न हो जाना चाहिए। किसी को भी यह बात न होने पाए कि दिव्या इस सघाराम म बन्दी है।'

पर क्या किसी अन्य सघाराम म उसे नही रखा जा सकता, स्थविर ! मुझे पुष्यमित्र स बहुत डर लगता है।

'चातुरन्त सघ ने इस पर भी विचार किया था। उत्तरापथ म पुष्यमित्र का बहुत प्रभाव है। अहिच्छत्र, कुरुक्षेत्र आदि अनेक नगरा म उसकी सेना के शिविर विद्यमान है। उसके गूढपुरुष भी सवत्र नियुक्त है। दण्डपाणि जसा धूत ब्राह्मण उसकी पीठ पर है। उत्तरापथ म कही भी दिव्या को ले जा सकना निरापद नही होगा। पुष्यमित्र विदिशा का निवासी अवश्य है पर चिरकाल से वह उत्तरापथ म रह रहा है। इधर के जनपदो म न उसकी कोई सेना है और न कोई प्रभाव। इसी कारण दिव्या को चत्यगिरि मे ही रखने का निणय किया गया है। यदि इसे निरापद न समझा गया तो उसे सुदूर दक्षिण म कही अन्यत्र भेज दिया जाएगा। पर अभी तो उसे यही बन्दी बनाकर रखना है। यदि दिव्या को बन्धन से मुक्त कराने के लिए पुष्यमित्र ने अपनी सेना क साथ दक्षिण की ओर प्रस्थान कर दिया, तो फिर कहना ही क्या ? यही तो हम चाहत हैं। हमे दिव्या का अहित अभीष्ट नही है स्थविर ! हम तो केवल यह चाहते हैं कि मौय शासनतन्त्र पर से पुष्यमित्र का प्रभाव दूर हो जाए।

चत्यगिरि के विशाल चत्य के कोई दस हाथ नीचे एक बन्धनागार बनाया गया था जिसमे आठ कक्ष थे। चत्य मे प्रतिष्ठापित तथागत बुद्ध की मूर्ति के पीछे एक गुप्त द्वार था जिसस होकर इस बन्धनागार म प्रवेश किया जाता था। चिरकाल से सघाराम में निवास करनेवाले भिक्षुओ तक को इस गुप्त द्वार और बन्धनागार के सम्बन्ध में कोई जानकारी नही थी। गुप्तद्वार में प्रवेश करने का उपाय या तो स्थविर दिवाकर मित्र को ज्ञात था और या उनके कतिपय अन्तरग श्रमणो को। जब एक बार किसी व्यक्ति को इस बन्धनागार में बन्द कर दिया जाए तो उसके लिए बाहर निकल सकना सम्भव ही नही था। इसी कारण वहाँ न प्रहरियो की आवश्यकता थी और न रक्षको की। बन्धनागार में कौन व्यक्ति बन्द है दिवाकरमित्र और उनके विश्वस्त साथियो के अतिरिक्त अन्य किसी को यह भी पता

नही लग सकता था। दिन में एक वार भोजन और जल बन्दिया के लिए भेज दिया जाता था। अपने कक्ष से बाहर निकल सकना उनके लिए असम्भव था।

दिव्या को भी इस बन्धनागार में भेज दिया गया। स्थविर अगुल अब सतुष्ट थे। जेतवन विहार के सघस्थविर मज्झिम ने मद्धम के उत्कर्ष के लिए जो महत्त्वपूर्ण काय उन्हे सौंपा था वह अब पूर्ण हो गया था। प्रातःकाल उपोसथ के समय वह दिवाकर मित्र के साथ सघाराम में गए। वहाँ उपस्थित अन्य स्थविरो, श्रमणो और भिक्षुओ से उनका परिचय कराते हुए दिवाकर मित्र ने कहा—

'जेतवन विहार के महाविद्वान स्थविर अगुल को आज अपने बीच में पाकर मुझे अपार हर्ष है। प्राणीमात्र का हित और सुख सम्पादित करना ही इनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य है। भगवान् तथागत ने करुणा, अहिंसा और भूतमात्र के प्रति दया के जिन उच्च आदर्शों का प्रतिपादन किया था, वे सब स्थविर अगुल के जीवन में अविकल रूप से चरितार्थ हो रहे हैं। लुम्बिनी कपिलवस्तु सारनाथ बोधगया आदि सब तीर्थों की यात्रा करते हुए स्थविर चर्यगिरि भी पधारे हैं। त्रिपिटक के ये प्रकाण्ड पण्डित हैं। आज ये ही आपके सम्मुख प्रवचन करेंगे। आप इनके उपदेश का ध्यानपूर्वक श्रवण करें।'

स्थविर अगुल ने प्रवचन करते हुए कहा—तथागत ने जिस अष्टाङ्गिक आर्य मार्ग का प्रतिपादन किया था, उसका मूल तत्त्व अहिंसा है। मन वचन और कर्म से पूर्णतया अहिंसक होकर ही हम मद्धम का पालन कर सकते हैं। कीट पतग तक को कष्ट देना हिंसा है। प्राणीमात्र के प्रति ममत्व की भावना रखो। सबको एक आत्मतत्त्व का अश मानो। किसी को दुख पहुँचाने का विचार भी मन में न लाओ। यही तथागत की शिक्षाओ का सार है।

स्थविर अगुल और उसके साथियो ने देवपत्तन में जब दिव्या का अपहरण किया तब वह सैनिक वेश में थी और साथ ही अस्त्र शस्त्र से सज्जित भी। पर अकस्मात आक्रमण हो जाने के कारण वह अगुल का सामना कर सकने में असमर्थ रही और उसके द्वारा बन्दी बना ली गई।

चत्यगिरि आनेवाला सीधा माग विदिशा होकर आता था। पर अर्जुन के लिए यह माग निरापद नही था। अत वह एक चक्करदार माग से चत्यगिरि आया। दिन के समय अर्जुन और उसके साथी सघन जगल में किसी वक्ष की छाया में विश्राम करते और रात्रि के अन्धकार में पगडण्डियो से होकर आगे बढते। दिव्या के लिए यह सम्भव नही था कि वह सशस्त्र भिक्षुओ का अकेली सामना कर सकती। वह चुपचाप उनके साथ चलती गई, और चत्यगिरि पहुच गई। बन्धनागार में बन्द होने पर वह घबराई नही। वह वीर महिला थी। वह निरन्तर यही सोचती रही कि इस सकट से मुक्ति पाने का क्या उपाय है।

जिस कक्ष में दिव्या को बन्द किया गया था उसमें केवल एक द्वार था जो पाच अगुल मोटे लोह से निर्मित था। उसे तोड सकना किसी भी प्रकार सम्भव नही था। रात दिन में यह द्वार केवल एक बार खुलता था, जबकि एक युवा और बलिष्ठ श्रमण भोजन और जल लेकर वहा आया करता था। शीघ्र ही दिव्या ने यह जान लिया कि बन्धनागार में कुल मिलाकर आठ कक्ष हैं जिनमें से पाच में एक एक व्यक्ति बन्द है। उन्हें भोजन और जल प्रदान करने के लिए पाच श्रमण प्रतिदिन एक साथ बन्धनागार में आया करते हैं। बन्दियो में परस्पर सम्पर्क स्थापित हो सकना असम्भव है। कक्षो की दीवारें इतनी मोटी हैं कि एक कक्ष के शब्द दूसरे कक्ष में या अन्यत्र कही भी सुनाई नही दे सकते। उसने यह भी देख लिया कि जो श्रमण भोजन लेकर बन्धनागार में आते हैं उनके पास कोई अस्त्र शस्त्र नही होते। वे केवल एक घडी वहा ठहरते हैं जिस काल में बन्दी अपना भोजन समाप्त कर लेते हैं। झूठे पात्र उठाकर पाचो श्रमण एक साथ ही चुपचाप बन्धनागार से वापस लौट जाते हैं।

दिव्या अब स्त्री वेश में थी। जो युवक श्रमण उसके लिए भोजन लेकर आया करता वह उसके रूप और यौवन को देखता रह जाता और उससे वार्तालाप करने के लोभ का सवरण न कर सकता। जब दिव्या भोजन कर रही होती तो वह उसके सम्मुख खडा रहता और उसे एकटक देखता रहता। एक दिन मन्द मुसकान से दिव्या ने उस श्रमण से कहा—

'इस किशोरावस्था में ही आपने भिक्षुव्रत क्यो ग्रहण कर लिया,

भन्ते ! आपकी आयु क्या काषाय वस्त्र धारण करने की है ? यदि आप सनिक वेश म होते तो कितने सुदर लगते। स्त्रिया आपको देखनी ही रह जाती। इस प्रदेश के ता आप प्रतीत नही होते। कहाँ क निवासी हैं ?'

'मैं वाहीक देश का निवासी हूँ, भद्रे ! पहले सनिक ही था। पर नियति के सम्मुख मनुष्य का क्या वश है ? भाग्यचक्र के कारण आज काषाय वस्त्र धारण करने पड रहे हैं।'

'ऐसी क्या बात हो गई, युवक ! क्या किसी प्रेयसी के प्रेम से निराश होकर भिक्षुव्रत स्वीकार किया है ?'

'नहा, भद्रे ! धम विजय के उत्साह मे जब सम्राट् शालिशुक ने हमारे गुल्म का भग करने की आज्ञा दे दी तो मैं बेकार हो गया। बचपन से सनिक की शिक्षा पाई थी। कोइ अन्य शिल्प सीखा ही नही था। विवश होकर दशाण देश चला आया। जब यहा भी कोई काम नही मिला, तो भिक्षु बन गया। करता भी क्या, इस तन का पोषण तो करना ही है।'

क्या तुम्हारा विवाह नही हुआ युवक ! किसी सुदरी के प्रेमपाश म नही फँसे ?

'विवाह मेरा हो चुका है, भद्रे ! मेरी पत्नी अपने गाँव म ही रह रही है। जब कभी उसकी याद आ जाती है तो चित्त उद्विग्न हो उठता है। पर करू क्या ? अब तो यही प्रयत्न कर रहा हू कि अपनी चित्त-वत्तियो का अवरोध कर मन को भगवान् तथागत के चरणो म लगा सकूँ।'

दिव्या और श्रमण म प्रतिदिन इसी प्रकार की बातें होती रहती। जब तक दिव्या भाजन स निबटती, श्रमण उनके पास ही खडा रहता। उस समय वह द्वार को बद कर लिया करता ताकि कोई अय श्रमण उसे दिव्या म वार्तालाप करते हुए देख न ले।

अब दिव्या न अपनी योजना तैयार कर ली थी। एक दिन वह युवक श्रमण उसके पास खडा हुआ निश्चितता के साथ बातचीत मे मग्न था कि दिव्या न अकस्मात् उस पर आक्रमण कर दिया। जिस भारी लौह पात्र म वह जल लेकर आया था, दिव्या ने उसे ऊपर उठा लिया और श्रमण के सिर पर दे मारा। श्रमण को इस प्रकार के अकस्मात् आक्रमण की कोई भी आशका नहीं थी। चोट खाकर वह मूर्छित हो गया और भूमि पर गिर

देववर्मा के शव को अपनी आँखों से देख लूंगी। देवयानी का दुःख मुझसे नहीं देखा जाता निपुणक ! स्थविर मोग्गलान अपना प्रयत्न करते रहें मैं उन्हें कब रोकती हूँ। पर मुझे भी कुछ करने दो। आथर्वण प्रयोगों का अनुष्ठान स्थविर के मार्ग में कोई बाधा उपस्थित नहीं करेगा।

मैं आपका अभिप्राय भलीभाँति समझ गया हूँ, राजमाता ! शीघ्र ही कोई ऐसा सिद्ध आपकी सेवा में उपस्थित कर दूंगा जो मायायोग में पारंगत हो।

तीन दिन पश्चात शतमाय नाम के सिद्ध को साथ लेकर निपुणक माधवी के पास आया। शतमाय ने लाल वस्त्र धारण किए हुए थे और उसकी आँखें रक्तवर्ण की थीं। उसकी जटाएँ एड़ी को छू रही थीं और दाढ़ी नाभि को। माधवी उसे देखते ही आसन से उठ खड़ी हुई और साष्टांग प्रणाम करके बोली सिद्ध महाराज मेरा प्रणाम स्वीकार करें।

'राजमाता की जय हो' कहकर शतमाय ने माधवी के अभिवादन का उत्तर दिया।

'मैं राजमाता कहाँ हूँ महाराज ! राजमाता तो देवयानी है। मेरे दोनों पुत्र काषाय वस्त्र पहनकर कुक्कुट विहार में निवास कर रहे हैं। राजमाता होना मेरे भाग्य में है ही कहाँ ?

'अपना दायाँ हाथ तो दिखाइए, माँ !

माधवी ने अपना हाथ आगे बढ़ा दिया। देर तक शतमाय उसे देखता रहा। धरती पर उँगली से कुछ गणनाएँ करके उसने कहा—

ये दो हस्त रेखाएँ देखती हो ? तुम्हारे कितने पुत्र हैं ? दो ही तो हैं न ? देख लेना ये दोनों ही राजसिंहासन पर आरूढ़ होंगे। दोनों के भाग्य में राजसुख लिखा है। भाग्य को टाल सकना किसी की भी शक्ति में नहीं है। जब आपके भाग्य में राजमाता होना लिखा है तो मैं क्या कर सकता हूँ। हाथ में जो कुछ देखा बता दिया।

पर देववर्मा ? सम्राट तो वह है।'

उसके भाग्य के विषय में मैं क्या कह सकता हूँ। उसकी हस्तरेखाएँ तो मैंने देखी नहीं।'

माधवी उठकर अपने ... सुवर्ण निष्कों से भरी

हुई एक थली शतमाय के चरणो म रखकर वोली मेरी यह तुच्छ भेंट स्वीकार करें महाराज !

सुवण को देखकर शतमाय प्रसन्न हो गया। थली को समालते हुए उसने कहा—

तुम्हारी क्या कामना है मा !

देववर्मा की मृत्यु। आप तो त्रिकालज्ञ हैं महाराज ! भूत भविष्य वतमान—सब जानते हैं। मेरी मनोकामना भी आपसे छिपी हुई नहा है। कोई एसा अनुष्ठान कीजिए जिसस देववर्मा शीघ्र पञ्चत्व को प्राप्त हो जाए।

इसके लिए वडा कठिन अनुष्ठान करना होगा माँ ! अपने प्राणा का भी भय है।

जिस प्रकार भी सम्भव हो दववमा को परलोक पहुँचाकर शतधनुप के माग को निष्कण्टक कर दीजिए महाराज ! यह दासी जीवन भर आपके चरणा की सेवा म रहेगी।

अच्छा मुझ कुछ क्षण सोच विचार कर लेने दो।

सिद्ध शतमाय दो घडी समाधिस्थ हाकर वठ रह। जव उनकी समाधि टूटी ता उन्होंने आखें वन्द किए हुए ही धीरे धीरे कहना प्रारम्भ किया सवसे पूव मुझे तुम्हारे दुष्ट ग्रहा को शान्त करना हागा। इस समय तुम पर रक्षो का प्रकोप है। रक्षो को सतुष्ट किए विना कुछ भी कर सकना असम्भव है। आज क्या दिन है ?

भाद्रपद पूणमासी है महाराज !

तो ठीक है। यह अनुष्ठान पूणमासी की रात को ही किया जा सकता है। कोई चत्य भी यहा के समीप है ?

कुक्कुट विहार का विशाल चैत्य यहा से अधिक दूर नहीं है महाराज !

उस चैत्य से काम नहीं चलेगा। कोई पुराना जीण शीण मदिर जो कहीं एकान्त सघन जगल म हो।

ऐसा एक मदिर यहा स दो योजन दूर पुराने पीपल के वक्ष के नीचे है। घोर जगल है वहाँ। निपुणक ने उत्तर दिया।

हाँ, वह ठीक रहेगा। अब तुम तुरन्त आवश्यक सभार का प्रबंध कर लो।'

'कौन-सा सभार चाहिए आज्ञा दीजिए महाराज!'

एक छत्र, बाहु का एक चित्र, एक पताका और एक बकरा।

'जाओ, निपुणक! तुरन्त इन सबकी व्यवस्था कर दो।' माधवी ने आदेश दिया।

'हा एक वस्तु रह गई। कुछ चरु भी चाहिए। नही समझी पके हुए चावल।

इसका प्रबन्ध तो मैं स्वय ही कर देती हूँ महाराज!

अब सब वस्तुएँ एकत्र हो गइ, तो निपुणक एक रथ ले आया। शतमाय ने उसे कहा अब तुम्हारी कोई आवश्यकता नही है तुम जाओ। राजमाता और मैं दो ही मदिर जाएगे। आधी रात बीतने से पूर्व ही वे सघन जगल मे स्थित उस जीर्ण मन्दिर में पहुँच गए। शतमाय ने तीन बार मन्दिर की परिक्रमा करके बकरे को ठडे जल से स्नान कराया, और फिर ये मन्त्र उच्चारण करते हुए उसकी बलि प्रदान कर दी—

बलि वरोचन वन्दे शतमाय च शम्बरम्।
निकुम्भ नरक कुम्भ ततुकच्छ महासुरम ॥
अमीलव प्रमील च मण्डोलूक घटोत्लम।
अभिमन्यम्य गह्णामि मिद्धाय शवसारिकाम ॥
जयतु जयति च नम शलकभूतम्य स्वाहा।
ओ३म फट फट स्वाहा ॥
उपमि शरण चाग्नि दवतानि दिशो दश।
अपयान्तु च सर्वाणि वशता यातु मे सना ॥
शलकभूतेभ्य स्वाहा। ओ३म् फट फट स्वाहा ॥

शतमाय को मूर्ति के सम्मुख अर्पित कर छत्र पताका और बाहु के चित्र को भी अर्पित किया गया। यह विधि सम्पन्न करने के अनन्तर शतमाय ने माधवी से कहा—

अब आप चरु को हाथ में ले लीजिए। मैं मन्त्रोच्चारण करता हूँ। जब जब मैं स्वाहा कहूँ, आप चरु का एक-एक भाग मूर्ति पर चढ़ाती जाएँ।

यह कहकर शतमाय ने मन्त्रों का उच्चारण प्रारम्भ किया, 'चरु वश्चराम स्वाहा। चरु वश्चराम स्वाहा। चरु वश्चराम स्वाहा।' चरु के समाप्त हो जाने पर शतमाय ने कहा—

मेरा अनुष्ठान अब पूर्ण हो गया है मां! अब तुम निर्भय हो। तुम्हारे सब दुष्ट ग्रह शान्त हो गए हैं। सब रक्ष वश में आ गए हैं। तुम्हारा मार्ग अब निष्कण्टक हो गया है।

'पर महाराज! देववर्मा की मृत्यु कब होगी?' माधवी ने प्रश्न किया।

उसका अन्तकाल अभी नहीं आया है मां! सब कार्य अपने समय पर ही सम्पन्न हुआ करते हैं। पर तुम चिन्ता न करो। तुम्हारे कार्य का मुझे ध्यान है।

पर क्या आप इसके लिए कोई अनुष्ठान नहीं कर सकते, महाराज!'

करूंगा, अवश्य करूंगा। कुछ समय प्रतीक्षा करो, मां!'

शतमाय और माधवी सूर्यास्त से पूर्व ही कुक्कुट विहार लौट आए। कुछ दिन पश्चात् शतमाय पुनः माधवी के पास आया। निपुणक भी तब वहां उपस्थित था। शतमाय ने कहा—

समय अब आ गया है मां! तुरन्त समुचित संभार की व्यवस्था करो।'

'आज्ञा की देर है महाराज!'

'अच्छा जो मैं कहता हूँ, उसे ध्यान से सुन लो। किसी ऐसे मनुष्य की खोपड़ी का प्रबन्ध करो शस्त्र द्वारा जिसकी मृत्यु हुई हो, या जिसे शूली पर चढ़ाया गया हो। ऐसे मनुष्य की खोपड़ी में मिट्टी भरकर उसमें गुञ्जाएँ बो दो। अंकुर निकल आने पर उन्हें जल से सींचते रहो। थोड़े ही दिनों में पौने पाँच-पाँच अंगुल के हो जाएँगे। समझ गई न?

'हाँ, महाराज! सुनो निपुणक! तुम भी महाराज के आदेशों को ध्यानपूर्वक सुनते और समझते जाओ। माधवी ने कहा।

और सुनो जिन वस्तुओं को मैं अब गिनाने लगा हूँ उन सबको भी एकत्र कर लो—दाएँ हाथ की सबसे छोटी उँगली का नाखून, नीम की पत्तियाँ, मधु, बन्दर के बाल, पुरुष की एक हड्डी, और किसी मृत पुरुष के

जानू ? तुम्हें किस बात की चिन्ता है माँ ? तुम राजमाता बनोगी और वह भी शीघ्र ही।'

'पर पुण्य नक्षत्र कब होगा महाराज !'

'उसका समय भी दूर नहीं है। मैं तुम्हें स्वय सूचित कर दूगा।'

माधवी ने दण्डवत होकर शतमाय को प्रणाम किया। अब उसका मन शान्त था। उसका उद्वेग दूर हो गया था। वह अब उस घड़ी की प्रतीक्षा करने लगी जब दववमा की मृत्यु हो जाएगी और उसका ज्येष्ठ पुत्र शत धनुप मौय साम्राज्य के राजसिंहासन पर आरूढ होगा।

मध्यदेश पर यवनों का आक्रमण

वाल्हीक देश का शासन अब दिमित्र के हाथो मे आ चुका था। एवुक्रतिद ने उसके सम्मुख घुटने टेक दिए थे। अपने पिता एवुथिदिम की मत्यु का समाचार सुनकर भारत विजय के जिस काय को अधूरा छोडकर दिमित्र अपने देश को वापस लौट गया था अब उसे पूरा करने का उसने निश्चय किया। आक्रमण की योजना बनाने के लिए उसने अपने प्रमुख सेनानायको और अमात्या को एकत्र किया। उन्हें सम्बोधन करते हुए दिमित्र ने कहा—

'वर्षा ऋतु के समाप्त होते ही हम तुरत भारत पर आक्रमण कर देना है। पर पहले हम यह जान लेना चाहिए कि इस समय भारत की राज नीतिक और सनिक दशा क्या है। सुना है, पुष्यमित्र मौय साम्राज्य का प्रधान सेनानी नियुक्त हो गया है और वह अपनी सन्यशक्ति को बढाने मे तत्पर है। कहो, अंतिअल्किद ! तुम्हे अपने सत्रियो और गूढपुरुषा से क्या सूचनाएँ मिली हैं ?

'पुष्यमित्र ने अपना काय अभी प्रारम्भ ही किया है, यवनराज ? अभी उसे अधिक सफलता प्राप्त नहीं हुई है। मौर्यों के पास कोपबल तो है ही नहीं। उसके अभाव म नई सेना कसे सगठित की जा सकती है ? धमविजय की धुन म मौय राजाओ ने राज्यकोप के धन को विदेशो की जनता के हित-सुख के लिए स्वाहा कर दिया था। जो कुछ शेप रहा था, उसे शालिशुक ने

रूपाजीवाओ और मद्यपान मे नष्ट कर दिया । जब देववर्मा पाटलिपुत्र के राजसिहासन पर आरूढ हुआ तो उसने राजकोष को सर्वथा रिक्त पाया । मौर्य शासनतन्त्र का नया सनिधाता शिवगुप्त अपने काय म अत्यन्त कुशल है । वह कोषबल की वृद्धि म तत्पर है । पर इसम अभी बहुत समय लगेगा यवनराज ।

तो क्या भारत की सन्यशक्ति अब भी पहले के समान अगण्य ही है ?'

'अगण्य तो नही है, यवनराज । पर हमारी सेनाओ का सामना करने का सामथ्य उसम नही है ।'

'वाहीक देश के गणराज्यो की अब क्या दशा है ? हमार पिछल आक्रमण के समय उन्होने पुष्यमित्र की बहुत सहायता की थी ।

ये गण अब भी विद्यमान है और पहले की तुलना मे अधिक शक्तिशाली भी हो गए हैं । नाम को तो वे अब भी मौर्यों की अधीनता स्वीकार करते हैं, पर वस्तुत उन्हे स्वतन्त्र ही समझना चाहिए। पाटलिपुत्र के राजाओ की निबलता से लाभ उठाकर कितने ही नये गणराज्य भी अब स्थापित हो गए हैं ।

यह समझो कि अब वाहीक देश की वही दशा है जो सिकन्दर के आक्रमण के समय म थी ।

हाँ यवनराज । सिकन्दर जो वाहीक देश पर अपना आधिपत्य स्थापित कर सका था उसका प्रधान कारण यही था कि वहा की राजशक्ति बहुत से छोटे-छोटे जनपदो मे विभक्त थी । चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार के प्रयत्न से जो राजनीतिक एकता भारत म स्थापित हुई थी वह अब नही रह गई है । दण्डपाणि ने वाहीक देश के गणराज्यो को परस्पर मिलकर सहत हो जाने के लिए बहुत प्रेरणा दी । पर वे उसकी बात का मानने के लिए उद्यत नही हुए ।

तब तो वाहीक देश को जीत सकना हमारे लिए कठिन नही होना चाहिए ।'

हाँ यवनराज । वाहीक देश के गणराज्य अब अधिक शक्तिशाली भी नही रहे हैं । मद्रक लोग बौद्ध धर्म के प्रभाव के कारण सन्यशक्ति को जरा भी महत्त्व नही देते । कठ लोगो का सवनाश आप कर चुके हैं । मालव और

शिवि अपने जनपदो को छोडकर मरुभूमि म प्रवास कर गए हैं। बात की बात म हम शतुद्रि नदी तक पहुँच जाएँग। पर शतुद्रि के पार कुणिन्द, यौधेय, राजन्य आदि जो बहुत-से गणराज्य हैं वे शक्तिशाली हैं। बौद्ध धम का भी उन पर अधिक प्रभाव नही है। मद्रका के समान वे हमारे सम्मुख आत्मसमपण नही कर देंग। वे डटकर हमारा सामना करेंगे, और उन्हे परास्त करने मे हमे कई वष लग जाएँग। सन्तोष की बात यही है कि वे परस्पर सहत होकर युद्ध नही कर सकते। समय का हमार लिए बहुत महत्त्व है, यवनराज! शिवगुप्त को इतना समय नही मिलना चाहिए कि वह मौय साम्राज्य के कोषवल को बढा सके। यदि उसने धन की व्यवस्था कर दी तो पुष्यमित्र एक विशाल सेना क सगठन म समथ हो जाएगा। लाखो भृत सनिक उसकी सेना मे सम्मिलित हो जाएँगे। भारत मे सनिको की कोई कमी नही है यवनराज!'

तो तुम्हारा क्या सुझाव है अन्तिअल्कि?'

'हम तुरन्त हिन्दुकुश पवतमाला को पार कर भारत पर आक्रमण कर देना चाहिए। जब तक हमारी सनाएँ भारत भूमि म प्रवेश करेंगी, वर्षा ऋतु भी समाप्त हो जाएगी। कपिश, गान्धार और मद्रक हमारी अधीनता म हैं ही। कठ गण का ध्वस हो चुका है। वाहीक देश के जनपदो स मुझे कोई आशका नही है यवनराज! शतुद्रि तक का हमारा माग निष्कण्टक है। पर उसक पार? वहा जो बहुत-से गणराज्य है उनकी शक्ति उपक्षणीय नही है।'

'पर तुमन कोई सुझाव तो दिया ही नहीं, अन्तिअल्किद! इन गणो को परास्त करने के लिए हम क्या कुछ करना होगा?'

'मेरा सुझाव यह है कि इन गणो स न उलझा जाए। इनसे युद्ध करते करते बहुत समय बीत जाएगा। इस बीच म पुष्यमित्र अपनी सेना को सगठित कर लगा।'

'पर यह कसे सम्भव है? भारत के मध्य देश तक पहुँचने के लिए हम इन गणराज्यो के प्रदेश से होकर ही तो जाना होगा। यदि इन्होंने हमारे मार्ग को अवरुद्ध करने का प्रयत्न किया तो हम इनस युद्ध करना ही पडेगा। इन्ह परास्त किए बिना हम कसे आगे बढ सकेंगे!

मुझे क्षमा करें यवनराज ! आक्रमण की योजना तयार करना सेना नायकों का काय है। पर मेरे सचिवों ने यह सूचना दी है कि दो माग ऐसे हैं जिनका अनुसरण कर इन गणराज्यों से बचा जा सकता है।'

ये माग कौन से हैं ?

'एक माग हिमालय की तराई के साथ साथ जाता है। मद्रक होकर यदि इस माग से जाया जाए तो कुछ गणराज्य अवश्य आएंगे। पर ये छोटे छोटे हैं और शक्तिशाली भी नहीं हैं। इनमें मुख्य औदुम्बर गण है। उसे हम सुगमता से परास्त कर देंगे। औदुम्बर जनपद से होती हुई हमारी सेना उस प्रदेश में पहुँच जाएगी जहां से राजन्य और कुणिन्द गणों के प्रदेश प्रारम्भ होते हैं। इनकी उत्तरी सीमा हिमालय से लगती है। यदि हमारी सेना तराई के माग से होकर आगे बढ़े और इनसे छेड़छाड़ न करे तो ये हमारे माग को रोकने का प्रयत्न नहीं करेंगे। इस प्रकार हम सुगमता से स्रुघ्न जनपद में पहुंच जाएँगे। यमुना के पूर्व में फिर किसी गणराज्य की स्थिति नहीं है। आगे के सब प्रदेश सीधे मौर्यों के शासन में हैं।

अच्छा दूसरा माग कौन-सा है ?

मरुभूमि से होकर यवनराज ! मद्रक जनपद की दक्षिणी सीमा से परे एक सुविस्तृत मरुभूमि का प्रारम्भ हो जाता है। यह वही मरुभूमि है जहाँ हमारे आक्रमण की आशंका से भयभीत होकर मालव और शिवि गणों ने आश्रय ग्रहण किया था। इस समय मरुभूमि में केवल इन्हीं दो गणों की स्थिति है। पर इनकी शक्ति अभी सवथा नगण्य है। इन्हें परास्त कर मरुभूमि के माग से भारत के मध्यदेश तक पहुंच सकना अधिक कठिन नहीं है। मेरा यही सुझाव है कि हम किसी ऐसे माग का अनुसरण करें जिससे यौधेय राजन्य कुणिन्द आजुनायन आदि शक्तिशाली गणराज्यों से युद्ध की संभावना न रहे। यदि हम एक बार मध्यदेश पहुँच जाएं तो आगे का माग हम पूर्णतया निष्कण्टक पाएंगे। मध्यदेश के शस्य श्यामल समतल प्रदेश में कोई भी ऐसा दुग नहीं है जहां से पुष्यमित्र हमारी गति को अवरुद्ध कर सके। मौर्यों ने अपने साम्राज्य की रक्षा के लिए जो भी दुग बनाए थे सब सीमान्त प्रदेशों में थे। पश्चिमी सीमान्त के सब दुग अब हमारे हाथों में हैं यवनराज !

'सुना है, कि अहिच्छत्र और कुरुक्षेत्र मे पुष्यमित्र के स्कन्धावार विद्यमान हैं।'

'कुरुक्षेत्र के स्कन्धावार से तो हमें कोई भय नही है, यवनराज ! उत्तरी या दक्षिणी किसी भी मार्ग से अग्रसर होने पर यह स्कन्धावार हमारे मार्ग मे नही पड़ेगा। पर अहिच्छत्र मे पुष्यमित्र की जो सेना है उसे हमे अवश्य परास्त करना होगा। इसीलिए तो मेरा यह सुझाव है कि अब हमें एक दिन की भी देरी नही करनी चाहिए। पुष्यमित्र अपनी सैन्यशक्ति को भली भांति सगठित नही कर सका है। देर करने पर उसे समय मिल जाएगा।'

'मौर्यों के केन्द्रीय शासन की अब क्या दशा है ?

उसे सतोषजनक नही कहा जा सकता, यवनराज ! शालिशुक का पुत्र शतधनुष पाटलिपुत्र के राजसिंहासन को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील है। कुक्कुट विहार का सघ-स्थविर मोग्गलान उसकी पीठ पर है। मयूरध्वज, निपुणक आदि पुराने अमात्य भी उसकी सहायता कर रहे हैं। इन सबने कुक्कुट विहार में आश्रय ग्रहण किया हुआ है। वहा ये सब देववर्मा के विरुद्ध षडयन्त्र रचने मे लगे हुए हैं।'

देववर्मा कुक्कुट विहार पर आक्रमण कर इन्हे बन्दी क्यों नही बना लेता ?

यह असम्भव है यवनराज ! भारत की जनता सब धर्मों और सम्प्रदायो के धर्मस्थानो के प्रति अगाध श्रद्धा रखती है। वह कभी यह सहन नही करेगी कि बौद्ध धर्म के इस प्रसिद्ध केन्द्र के विरुद्ध शस्त्र शक्ति का प्रयोग किया जाए। कुक्कुट विहार में ये लोग पूर्णतया सुरक्षित हैं, यवनराज !

अच्छा तुम क्या कह रहे थे ?'

हमारे आक्रमण का समाचार सुनते ही पुष्यमित्र अपनी सेना को साथ लेकर पाटलिपुत्र से प्रस्थान कर देगा। मोग्गलान और शतधनुष यही तो चाहते हैं। पुष्यमित्र के जाते ही शतधनुष को सम्राट घोषित कर दिया जाएगा जिसके कारण देववर्मा की स्थिति डॉवाडोल हो जाएगी। पाटलिपुत्र के राजमार्गों और पण्यवीथियों मे गृह युद्ध प्रारम्भ हो जाएगा और मौर्यों का शासनतन्त्र पारस्परिक कलह से अस्त-व्यस्त हुए बिना नही रहेगा। हमे और क्या चाहिए ?'

'तुम्हारे सत्रियों का क्या मोग्गलान के साथ भी सम्पर्क है ?

'है क्यों नहीं, यवनराज ! भारत में एक भी ऐसा विहार या संघाराम नहीं है जहाँ हमारे गूढपुरुष न हों। वे सब भिक्षुओं और श्रमणों के वेश में रहते हैं। बौद्धों में जाति, रंग, वर्ण, लिंग, भाषा आदि का कोई भी भेदभाव नहीं किया जाता। जो चाहे भिक्षुव्रत ग्रहण कर इन विहारों में प्रवेश पा सकता है। अशोक के समय से मौर्य राजा यवन देशों में धर्म प्रचार के लिए प्रयत्नशील रहे हैं। उनके यत्न से बहुत से यवनों ने तथागत बुद्ध के धर्म को स्वीकार कर लिया है। कितने ही यवन भिक्षुव्रत भी ग्रहण कर चुके हैं। ये भारत में सर्वत्र स्वतन्त्रतापूर्वक आ जा सकते हैं। भारत के लोग इन्हें सम्मान की दृष्टि से देखते हैं, और बौद्ध विहारों में इनका उत्साहपूर्वक स्वागत किया जाता है। हमारे बहुत से सत्री और गूढ पुरुष भी भिक्षु बनकर भारत चले गए हैं। भिक्षु वेश में होने के कारण कोई उन पर सदेह नहीं करता। वे बेरोक-टोक जहाँ चाहें आ-जा सकते हैं। उन्हीं से हमें मौर्य शासनतन्त्र की सब गतिविधि का परिचय प्राप्त होता रहता है।

'मोग्गलान के विषय में तुम्हारे सत्रियों ने क्या सूचनाएँ भेजी हैं ?

'वह बड़ा धूर्त और चाणाक्ष है, यवनराज ! कूटनीति में वह पारंगत है। उसे तो संघ-स्थविर न होकर किसी राज्य का मन्त्री होना चाहिए था। देववर्मा का वह कट्टर शत्रु है और दण्डपाणि और पुष्यमित्र के विनाश के लिए कटिबद्ध है। उसका दृढ विश्वास है कि बौद्ध धर्म की रक्षा और उत्कर्ष के लिए मौर्य साम्राज्य का शासनसूत्र केवल ऐसे ही व्यक्तियों के हाथों में रहना चाहिए जो बुद्ध के अनुयायी हों।

'क्या भारत में अब भी साम्प्रदायिक विद्वेष और भेदभाव की सत्ता है ?'

'जहाँ तक सर्वसाधारण जनता का प्रश्न है वह सब धर्मों और सम्प्रदायों का आदर करती है, ब्राह्मणों, श्रमणों और मुनियों को एक दृष्टि से देखती है, और सबके उपदेशों का श्रद्धापूर्वक श्रवण करती है। पर धार्मिक नेताओं के सम्बन्ध में यह बात नहीं कही जा सकती। वे एक दूसरे के प्रति विद्वेष रखते हैं। विशेषतया बौद्ध स्थविर भारत के पुराने सनातन वैदिक धर्म के कट्टर शत्रु हैं। उनका यही प्रयत्न रहता है कि सब लोग पुराने यज्ञ प्रधान धर्म का परित्याग कर बुद्ध, धर्म और संघ की शरण में आ जाएँ।

अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे जघन्य उपायों का अवलम्बन करने में भी सकोच नही करते। इसीलिए वे मौर्य शासनतन्त्र को अपने प्रभाव में लेने के लिए प्रयत्नशील हैं। ज्यों ही हमारी सेनाएँ मध्यदेश में प्रवेश पा लेंगी, श्रमण और भिक्षु देववर्मा के विरुद्ध विद्रोह कर देंगे, और उसके शासन का अन्त करने के लिए हमारा साथ देने लगेंगे।'

'क्या भारतीयों में देशप्रेम का सर्वथा अभाव है? क्या उन्हें यह सहन होगा कि एक विदेशी आक्रान्ता उनके देश को जीतकर अपने अधीन कर ले?'

'भारतीयों में देशप्रेम का अभाव नही है, यवनराज! दण्डपाणि और पुष्यमित्र जैसे लोग देशप्रेम की भावना से प्रेरित होकर ही मौर्य शासनतन्त्र में शक्ति का संचार करने और सैन्यबल की वृद्धि के लिए प्रयत्नशील हैं। पर भारत में ऐसे लोगों की भी कमी नही है जो देश की तुलना में अपने सम्प्रदाय व धर्म को अधिक महत्त्व देते हैं। बहुत से सम्प्रदायों और पाषण्डों की सत्ता ही भारत की सबसे बड़ी निर्बलता है। इसी से लाभ उठाकर हम भारत की विजय में समर्थ हो सकेंगे।

'मौर्य शासनतन्त्र को क्या हमारे गूढ़पुरुषों की सत्ता का परिज्ञान नही है?'

'है क्यों नही, यवनराज! दण्डपाणि के गूढ़पुरुष भी भिक्षु वेश में सब संघारामों में निवास कर रहे हैं। उसे ज्ञात है कि सब बौद्ध विहार देववर्मा के विरुद्ध षडयन्त्र के केन्द्र हैं। पर वह विवश है। स्थविरों के षडयन्त्रों का अन्त करने के लिए सैन्यशक्ति का प्रयोग तो भारत में किया ही नही जा सकता। दण्डपाणि करे तो क्या करे?

'तो फिर तुम्हारा सुझाव ही ठीक है। अब हमें क्षण भर की भी देर नही करनी चाहिए। कहो, मार्किएनस, तुम्हारा क्या विचार है? इस युद्ध का संचालन तुम्हें ही करना है।

अतिअल्कि‍द के सुझाव से मैं पूर्णतया सहमत हूँ यवनराज! पर प्रश्न यही है कि मध्यदेश में प्रवेश के लिए कौन-से मार्ग का अनुसरण किया जाए?'

'हाँ इस विषय में तुम्हारी क्या सम्मति है?'

'मेरी सम्मति में भी दक्षिणी मार्ग ही अधिक उपयुक्त होगा, यवनराज! उत्तर का मार्ग छोटा है और सुगम भी है, पर वह राजन्य और कुणिन्द जैसे शक्तिशाली गण राज्यों के प्रदेश में से होकर जाता है। यौधेय गण की उत्तरी सीमा भी उससे लगती है। ये गण हमारी गति को अवरुद्ध करने का प्रयत्न कर सकते हैं, यह आशंका निर्मूल नहीं है। जब हम शीघ्र से शीघ्र भारत के मध्यदेश में पहुँचना चाहते हैं, तो हमें ऐसे मार्ग से ही जाना चाहिए जो अधिक निरापद हो।'

'पर क्या दक्षिणी मार्ग निरापद है?'

'पूर्णतया निरापद तो नहीं है यवनराज! यह मार्ग मरुभूमि से होकर जाता है। मद्र जनपद के दक्षिण से ही एक मरुभूमि प्रारम्भ हो जाती है जो हजारों योजन विस्तीर्ण है। उसका मार्ग विकट अवश्य है, पर उसके समीप किसी ऐसे जनपद की स्थिति नहीं है जिसके निवासी विकट योद्धा हों। शिवि और मालव गणों को वहाँ प्रवास किए अभी अधिक समय नहीं हुआ है। उन्हें परास्त कर सकना कठिन नहीं होगा।'

अन्य सेनानायकों ने भी इसी विचार का समर्थन किया। दक्षिणी मार्ग से ही मध्यदेश में प्रवेश की योजना यवनराज ने स्वीकार कर ली। शरद् ऋतु प्रारम्भ होने से पूर्व ही यवन सेना हिन्दूकुश पर्वतमाला को पार कर कपिश-गान्धार पहुँच गई। वहाँ उसका धूमधाम के साथ स्वागत हुआ। पुष्कलावती में कुछ दिन ठहर कर यवन सेना ने सिन्धु नदी को पार कर लिया और फिर वितस्ता नदी को। अब वह मद्र जनपद में पहुँच गई थी जहाँ का गण पूर्णतया स्थविर कश्यप के प्रभाव में था। कश्यप की प्रेरणा से मद्रों ने शिविर के स्वागत के लिए एक भोज का आयोजन किया, जिसमें सब मद्र कुलमुख्य सम्मिलित हुए। यवनराज का अभिनन्दन करते हुए कश्यप ने कहा—

'मौर्यों का शासनतन्त्र अब सद्धर्म के पथ से भ्रष्ट हो गया है यवनराज! उसका सञ्चालन अब एक [illegible] के हाथों में है जो न अहिंसा में विश्वास रखता है और न बुद्ध द्वारा प्रतिपादित मध्यमा प्रतिपदा में। वह एक एक [illegible] सम्प्रदाय के पुनरुद्धार के लिए प्रयत्न कर रहा है जो शान्ति, सख्य और अन्य सबके विरुद्ध है। धर्मगुरु एवं परमधार्मिक राजा की कृपा

इन्ही लागो ने कराई थी। श्रावस्ती, सारनाथ, चैत्यगिरि, पाटलिपुत्र आदि के सघारामा के सब स्थविर इस अधार्मिक शासन का अत कर देने के लिए सचेष्ट हैं। आप इनके सहयोग और समथन का भरोसा कर सक्न हैं। हम अहिंसा म विश्वास रखते हैं पर माथ ही हम यह भी ज्ञात है कि विप के प्रभाव को नष्ट करने के लिए औपधि के रूप मे विप का भी प्रयोग करना पडता है। आपकी स यशक्नि से टकरा कर देववमा का सनिक-बल नष्ट हो जाएगा। भारत मे सद्धम की रक्षा का यही उपाय है। मद्रक गण की ओर स मैं आपका अभिनन्दन करता हूँ। आप जहा भी जाएँगे, सद्धम के अनुयायी आपका साथ देंगे। भगवान् तथागत आपका कल्याण करें। मद्रको के गणमुख्य मोमदेव यहा उपस्थित हैं। मुझे विश्वास है जन और धन दोना से वे आपकी महायता करेंगे। आपको उनका सहयोग अवश्य प्राप्त होगा।

स्थविर कश्यप के स्वागत वचन को सुनकर यवनराज दिमित्र बहुत प्रसन्न हुए। अपने स्वागत-सत्कार के लिए कृतज्ञता प्रकट करते हुए उन्होंने कहा—

भारतीय धम और सस्कृति का जो उदात्त आदश देवानाप्रिय प्रियदर्शी राजा अशोक ने ससार के सम्मुख प्रस्तुत किया था, वह वस्तुत अनुपम था। हम यवन लाग आपके धम का आदर करत हैं। यवन देशो म कितने ही नर नारी तथागत बुद्ध के अष्टागिक आयधम को अपना चुके हैं। मेरी अपनी राजधानी वाल्हीक नगरी मे नवविहार नाम का विशाल सघाराम विद्यमान है जहाँ हजारो श्रमण और भि ु निवास करते हैं। वहाँ प्रतिदिन उपासथ होता है, त्रिपिटक का पाठ किया जाता है च या की पूजा होती है, और सद्धम का प्रवचन किया जाता है। यवन युवक गौरव के साथ सस्कृत भापा का अध्ययन करते हैं। यह कमी अदभुत विजय है जो आप भारतीयो न हम यवनो पर प्राप्त की है। यह सब धमविजय की उस नीति का परिणाम है राजा अशाक ने जिसका सूत्रपात किया था और अशोक के उत्तराधिकारी जिसका अनुसरण करते रहे थे। पर दुर्भाग्य की बात है कि अब मौय शासन-तन्त्र ने इस नीति का परित्याग कर दिया है और वह पुन हिंसा के माग को ग्रहण करने मे तत्पर है। शालिशुक कस आदश राजा थे! न उन्हें सासारिक सुख भोग

थी और न राजकीय वैभव की। वह श्रमणों का-सा त्यागमय जीवन व्यतीत किया करते थे। पर दण्डपाणि और पुष्यमित्र ने उन्हें राजसिंहासन पर नहीं रहने दिया। भारत को जीतकर उस पर शासन करना मुझे अभिप्रेत नहीं है। मैं केवल यह चाहता हूँ, कि दशवर्मा को राजा के पद से च्युत कर किसी ऐसे कुमार को पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आरूढ़ किया जाए जो अशोक की पुनीत नीति में विश्वास रखता हो। आप सबकी भी यही इच्छा है। भारत की वास्तविक सम्पत्ति उसका धर्म ही है। धर्म के सम्मुख राज्य और लौकिक सुखों का कोई भी स्थान नहीं है। यदि यवनों और आर्यों में राजनीतिक एकता स्थापित हो जाए तो इससे सद्धर्म का उत्कर्ष ही होगा अपकर्ष नहीं।

शाकल नगरी में कुछ दिन विश्राम कर यवन सेना ने दक्षिण की ओर प्रस्थान कर दिया। असिक्नी नदी के पूर्वी तट के साथ-साथ चलती हुई यह सेना शीघ्र ही उस स्थान पर पहुँच गई, जहाँ से भारत की विशाल मरुभूमि का प्रारम्भ होता है। मार्ग प्रदर्शित करने के लिए कुछ मद्रक युवक इस सेना के साथ रहे। असिक्नी और वितस्ता के संगम पर पहुँचकर यवन सेना ने पूर्व दिशा की ओर रुख किया। मरुभूमि में दो मास तक निरन्तर चलते रहने के पश्चात् यह सेना उस प्रदेश में पहुँच गई, जहां शिविगण ने प्रवास किया हुआ था। विदेशी शत्रु के आक्रमण के भय से निश्चिन्त होकर शिवि लोग यहाँ कृषि और पशुपालन में तत्पर थे। माध्यमिका नाम से उन्होंने अपनी नई नगरी यहाँ अवश्य बसा ली थी, पर उसकी रक्षा के लिए किसी दुर्ग का निर्माण नहीं किया था। वे आत्मरक्षा के सम्बन्ध में सर्वथा निश्चिन्त थे और शान्तिपूर्वक अपना जीवन निर्वाह कर रहे थे। पर जब उन्होंने देखा कि मरुभूमि में भी यवनों ने उनका पीछा नहीं छोड़ा है तो वे युद्ध के लिए कटिबद्ध हो गए। जो भी अस्त्र शस्त्र उपलब्ध हो सके उन्हें संचित कर वे माध्यमिका से पश्चिम की ओर व्यूह रचना कर यवन सेना का सामना करने के लिए रण क्षेत्र में उतर आए। दिमित्र की सेना एक मास तक इस व्यूह को भंग करने के लिए युद्ध करती रही। अन्त में वह सफल हुई। शिवि लोग परास्त हो गए और माध्यमिका पर यवनों का अधिकार स्थापित हो गया।

यवन सना अव उत्तर-पूव की ओर अग्रसर हुई। माध्यमिका मे ही दिमित्र को यह ज्ञात हो गया था कि शिवि जनपद के आगे मालव गण की स्थिति है जिसके नागरिक शिवि लोगो के समान ही वीर हैं। माध्यमिका की विजय मे यवना को जो क्षति उठानी पडी थी, और उनका जो समय व्यतीत हुआ था, उसे दप्टि मे रखकर दिमित्र ने यह निश्चय किया कि मालवा के प्रदेश से बचकर आगे वढ जाया जाए। यवन सेना ने अव एक ऐसे माग का आश्रय लिया जो मालव गण के प्रदेश से दक्षिण की ओर होकर जाता था। वायुवेग से इस माग पर आगे बढती हुई यवन सेना शीघ्र ही मथुरा पहुँच गई। अव वह भारत के एक ऐसे प्रदेश म आ गई थी, जो मौय सम्राट देववमा के सीधे शासन मे था।

अग्निमित्र और धारिणी

यमुना नदी के पश्चिमी तट पर इ द्रप्रस्थ का प्राचीन दुग था, जो बहुत समय से उजडा हुआ पडा था। हिमालय से समुद्रपय त सहस्र योजन विस्तीण मौय साम्राज्य के स्थापित हो जाने के कारण अब इस दुग का विशेप महत्त्व नही रह गया था। च द्रगुप्त और वि दुसार जसे प्रतापी सम्राटा ने अपने साम्राज्य के पश्चिमी सीमान्त की रक्षा के लिए जो दुग बनवाए थे, वे सब कपिश और गा धार जनपदो मे थे। उनके शासनकाल म भी इ द्रप्रस्थ के दुग का कोई उपयोग नही था, पर तब वहा दुर्गाध्यक्ष रहा करता था और एक सना भी। पर अशोक और उसके उत्तराधिकारिया ने धर्मविजय की नीति को अपनाकर जब स यशक्ति की उपेक्षा प्रारम्भ कर दी, तो इस दुग की ओर ध्यान देने की उन्होने कोई आवश्यकता ही नही समझी। परिणाम यह हुआ कि इस दुग ने एक खण्डहर का रूप धारण कर लिया। सब ओर याड झखाड उग आए, और पडोस के आभीर लोगा ने वहाँ अपने पशु चराने प्रारम्भ कर दिए। इ द्रप्रस्थ नगरी क निवासी दुग के द्वार और गवाक्ष तर उखाड कर ल गए, और उसकी परिखा मे जल की एक बूद तक भी नही रह गई।

लिए चले गए थे। ऐसे समय कुछ अश्वारोही दुर्ग के महाद्वार पर आए। महाद्वार को बन्द देखकर उन्होंने प्रहरियों से कहा—

'हम दुर्गपाल से भेंट करना चाहते हैं नायक !'

'आपको दुर्गपाल से क्या काम है ?' एक प्रहरी ने प्रश्न किया।

'सुना है, दुर्गपाल अपनी सेना में नए सैनिकों को भरती कर रहे हैं। हम सुदूर दशार्ण देश से आ रहे हैं। सेना में प्रविष्ट होना चाहते हैं।'

आपको सूर्योदय तक प्रतीक्षा करनी होगी। रात के समय दुर्गपाल किसी से भी नहीं मिलते। पौ फटते ही आप दुर्ग के पश्चिमी मैदान में आ जाइए।

'पर रात को हम कहाँ रहेंगे नायक ! क्या यह रात हम खड़े-खड़े ही बितानी होगी ?'

'मैं क्या कर सकता हूँ भाई ! दुर्गपाल का आदेश है कि सूर्यास्त के पश्चात् किसी को भी दुर्ग में प्रविष्ट न होने दिया जाए।'

मनुष्यता के नाते कुछ तो कीजिए नायक ! हम परदेसी हैं इन्द्रप्रस्थ में कोई भी हमारा परिचित नहीं है। सर्दियों के दिन हैं। इस शीत में खुले मैदान में रह सकना भी सम्भव नहीं है।

'सैनिक अनुशासन का उल्लंघन कर सकना मेरे लिए असम्भव है। दुर्गपाल वीरसेन अनुशासन को बहुत महत्त्व देते हैं। फिर आजकल यवनों के गूढ़पुरुषों का भी भय है। अभी कुछ दिन हुए दो यवनों ने छद्मवेश में दुर्ग में प्रविष्ट होने का प्रयत्न किया था।

पर हम तो भारतीय हैं नायक ! सेना में प्रविष्ट होने के लिए सुदूर दक्षिण से चले आ रहे हैं। दिन भर के थके हुए हैं। हमारे विश्राम के लिए व्यवस्था कर दो। दुर्गपाल से कल प्रातः भेंट कर लेंगे।'

प्रहरियों के गुल्मपति को अश्वारोहियों पर दया आ गई। उनके रात्रि विश्राम की व्यवस्था करके उसने कहा—

'यह बात अनुशासन के तो विरुद्ध है। पर आपके लिए कुछ न कुछ तो हमें करना ही चाहिए। किसी को यह पता न होने पाए कि हमने आपको रात के लिए आश्रय दिया था। सूर्योदय से पूर्व ही पश्चिम की ओर के मैदान में चले जाना। वहाँ दुर्गपाल से भेंट हो जाएगी।

प्रात के समय इन्द्रप्रस्थ के दुग के पश्चिमी मदान म एक मना-सा लगा हुआ था। बहुत-से नवयुवक वहाँ एकत्र थे। दशाण देश के अश्वारोही भी उनम जाकर मिल गए। युवका की शारीरिक परीक्षा प्रारम्भ हुई। अश्वारोहियो को देखकर वीरसन ने प्रश्न किया—

इस देश के ता तुम प्रतीत नही होते। यहाँ कब आए? रात कहाँ रहे?

'हम दशाण देश के निवासी हैं सेनापति! रात ही इन्द्रप्रस्थ पहुँचे थे।'

तुमने मेरे प्रश्न का उत्तर नही दिया। मैंने पूछा था रात तुम कहाँ रहे।

अश्वारोही इसका क्या उत्तर देते। चुप खडे रहे। उन्हे चुप देखकर वीरसेन ने कहा—मुझ सब ज्ञात हो चुका है। गुल्मपति न सनिक अनुशासन को भग किया है। उसे सनिक नियमा के अनुसार दण्ड दिया जाएगा। अच्छा अब यह बताओ, तुम्हारा नाम क्या है और तुम्हारी आयु क्या है?

एक अश्वारोही ने सिर झुकाकर उत्तर दिया—मेरा नाम पर्णदत्त है सेनापति! और मेरी आयु चालीस वष की है।

पर बोली म तो तुम सुकुमार प्रतीत होते हो। स्त्रियो की सी बोली है। चालीस वष क कसे हो सकत हो? अच्छा अस्त्र शस्त्र चलाना जानते हो?

'परीक्षा करके देख लीजिए सेनापति!

इसकी कोई आवश्यकता नही है युवक? मैं देखते ही मनुष्य का पहचान लेता हू। तुम्हे सना म भरती किया जाता है। तुम अगरक्षक सना मे रहोगे। कहो स्वीकार है? मन्दस्मित स वीरसेन न कहा।

अच्छा अब तुम बताओ। तुम्हारा क्या नाम है और क्या आयु है? दूसरे अश्वारोही स प्रश्न किया गया।

मेरा नाम बन्धुमित्र है और आयु पच्चीस वष है।

अभी मसें तक तो भीगी नही और तुम पच्चीस वष के हो गए। अस्तु तुम्हे भी सेना म भरती किया जाता है। तुम भी अगरक्षक सेना म रहोगे।

सब अश्वारोहिया से इसी प्रकार के प्रश्न किए गए और उन सबको

सेना मे भरती कर लिया गया। तीसरे पहर दुगपाल ने दशाण देश के अश्वरोहियो को अपने कक्ष म बुलाया, और उनसे कहा—

'सनानी पुष्यमित्र की महधर्मिणी वीरागना देवी दिव्या का मैं अभिन दन करता हूँ। आप मेरा प्रणाम निवेदन स्वीकार करें और आप, कुमार अग्निमित्र ! तुम्ह मेरा आशीर्वाद है अपने पिता के समान ही वीर और तेजस्वी बनो।'

वीरसेन की बात सुनकर अश्वारोही स्तब्ध रह गए। उ ह चुप देखकर वीरसेन ने कहा—

'आपको आश्चय हो रहा है, मैंने आपको कसे पहचान लिया। यही बात है,न ? साम्राज्य के पश्चिमी सीमा त की रक्षा का भार सेनानी पुष्यमित्र ने कुछ सोच-समझकर ही मुझे सौंपा है। यदि मनुष्य को पहचानने की इतनी भी शक्ति मुझ मे न हो तो इस उत्तरदायित्व का निवाह मैं कसे कर सकूँगा ? मैं भी दक्षिणापथ का निवासी हूँ और कभी गोनद आश्रम म भी रह चुका हूँ। रात को ही मुझे ज्ञात हो गया था कि वीरागना दिव्या अपने पुत्र के साथ इ द्रप्रस्थ पधारी हैं। जबसे आप चत्यगिरि के स्थविरों के कुचक्र से मुक्त हुई हैं आपकी गतिविधि की सूचना मुझे प्राप्त होती रही है। मेरे गूढपुरुष आपकी रक्षा के लिए सदा आपके साथ-साथ रहे हैं। ये जो दो अश्वारोही इ द्रप्रस्थ तक आपके साथ आए हैं, मेरी सना के ही सनिक हैं। सनानी पुष्यमित्र मौय साम्रा य की रक्षा के काय म चाहे कितन ही व्यग्र क्यो न रहते हो पर आपकी चिन्ता को वह एक क्षण के लिए भी दूर नहीं कर सके। उनके आदेश पर ही आपकी रक्षा का भार मैंने अपन ऊपर लिया था। यह मेरा सौभाग्य है जो आप इतनी दूर की यात्रा कर सकुशल इ द्रप्रस्थ पहुँच गइ, अ यथा सेनानी मुझे कभी क्षमा न करत। पर अब तो आप सनिक सेवा के लिए यहाँ आई हैं। कहिए सनिक के रूप म काय करेंगी या स्त्री के रूप म ?'

यह निणय करना आपका काय है दुगपाल ! इस समय मैं एक सनिक हू, और आपकी आज्ञा क अधीन। मौय साम्रा य भाग्यशाली है जो उसे आप सदृश चाणाक्ष और कुशल सनाध्यक्ष प्राप्त हैं।

पहल आपके निवास और विश्राम की व्यवस्था तो कर दूँ। [illegible]

ओ धारिणी!

हाँ माता जी!

सुनो इधर आओ इन्हें प्रणाम करो।

प्रणाम कर धारिणी एक ओर खड़ी हो गई। उसे आश्चर्यचकित देख कर गौतमी ने कहा— इन्हें पहचाना नहीं? यह देवी दिव्या हैं सेनानी पुष्यमित्र की सहधर्मिणी। उन्हीं के समान वीर और साहसी। सैनिक वेश में तुम इन्हें पहचान भी कैसे सकती हो? और यह इन्हें भी नहीं जानती। यह हैं कुमार अग्निमित्र। सुयोग्य पिता के अनुरूप पुत्र।

धारिणी ने चरण स्पर्श कर एक बार फिर देवी दिव्या को प्रणाम किया और अग्निमित्र की ओर एकटक देखती रह गई। कुछ क्षण बाद संकोच के साथ उसने अग्निमित्र को भी प्रणाम किया।

यह मेरी बहन यहाँ अकेली है। हमारी माँ तभी परलोक सिधार गई थीं, जब यह दो वर्ष की थी। हमारे पितृचरण ने सिंधु तट के युद्ध में वीर गति प्राप्त की थी। सेनानी को उन पर अगाध विश्वास था। उन्हें सदा अपने साथ रखा करते थे। अब धारिणी मेरे साथ ही रहती है बेचारी जाए भी तो कहाँ। यहाँ अकेले इसका मन नहीं लगता। अब आप आ गई हैं आपके साथ रहकर इसका मन लग जाएगा और यह कुछ सीख भी जाएगी। देखो धारिणी! देवी के आतिथ्य-सत्कार का सब भार तुम पर है। इन्हें किसी प्रकार का कोई कष्ट न होने पाए।

दिव्या ने धारिणी को अपनी छाती से लगा लिया। उसे प्यार करते हुए उन्होंने कहा— अब तुम अकेली नहीं रहोगी, बेटी! मैं तुम्हारे साथ रहूँगी। मुझे अपनी माँ समझो। मैं तुम्हारी माँ हूँ न?

धारिणी की आँखों से टप-टप आँसू गिरने लगे। रोते रोते उसने कहा माँ मेरी माँ।

कुछ समय पश्चात जब धारिणी स्वस्थ हुई तो उसने आँसू पोंछते हुए कहा, 'चलो माँ मेरे साथ चलो। मैं तुम्हारे निवास और विश्राम की व्यवस्था कर दूँ। अब मुझे छोड़कर कहीं चली तो नहीं जाओगी माँ! सदा मुझे अपने साथ ही रखोगी न?

'हाँ, बेटी! सदा तुम्हें अपने साथ रखूँगा। तुम वीर कन्या हो, इस

प्रकार घबराओ नही। अपने भाई की ओर देखो, यह कसे वीर हैं। मौय साम्राज्य को इन पर गव है। अपने दिन को छोटा न करो।'

जब धारिणी देवी दिव्या को अपा साथ ले जाने लगी, तो वीरसेन ने उसे टोक्कर कहा, 'क्या कुमार अग्निमित्र को यहाँ अकेले ही छोड जाओगी? यह भी तुम्हारे मा य अतिथि हैं। इनके सवा-सत्कार का भार भी तुम पर ही है।'

'आइए कुमार!' धारिणी ने सकोच के साथ कहा। यह कहते हुए उसका मुखमण्डल आरक्त हो गया।

दिव्या और अग्निमित्र के चले जाने पर वीरसेन ने अ य अश्वारोहियो से कहा अब तुम भी जाकर विश्राम करो। अपने कतव्य का तुम दोनो ने सुचारुरूप से पालन किया है इसके लिए मैं तुम्हे साधुवाद देता हूँ। माग मे देवी को किसी प्रकार का कोई कष्ट तो नही हुआ?'

'नही, सेनापति! हमारी यात्रा सवथा निरापद रही। यवना के गूढ पुरुष हमे नही पहचान सक। पर दिमित्र की सेना अब मथुरा तक पहुँच गई है। शीघ्र ही वह पान्चाल देश की ओर प्रस्थान करनेवाली है।'

मुझे यह सूचना पहले ही प्राप्त हो चुकी है। अच्छा अब तुम जाओ और विश्राम करो।

दुगपाल वीरसेन यवनो के मध्यदेश मे प्रवेश से बहुत चिन्तित थे। पश्चिमी सीमा त की रक्षा की उत्तरदायिता उ ही पर थी। पर वह यह जानते थे कि यवन सेना इ द्रप्रस्थ पर आक्रमण नही करेगी। वह सीधी पाटलिपुत्र की ओर अग्रसर होगी, ताकि मौय साम्राज्य की जड पर कुठाराघात किया जा सके। पुष्यमित्र न साम्राज्य के पश्चिमी सीमा त की रक्षा के लिए जो नई सेनाएँ सगठित की थी, उनके प्रधान के द्र इ द्रप्रस्थ और अहिच्छत्र थे। यदि कोई विदेशी सेना वाहीक देश से होकर मध्य देश पर आक्रमण करती तो उसे अवश्य ही इन सेनाओ का सामना करना पडता। पर दिमित्र मरुभूमि से होकर मध्यदेश मे प्रवेश कर रहा था और उसकी योजना यह थी कि इ द्रप्रस्थ और अहिच्छत्र को बचाकर सीधे साकेत और काशी पहुँचा जाए और वहाँ स पाटलिपुत्र। इस दशा मे वीरसेन ने यह विचार किया कि जब यवन सेना साकेत पहुँच जाए, तो पीछे की

उस पर आक्रमण कर दिया जाए।

वीरसेन इसी योजना के निर्माण मे तत्पर थे कि दिव्या उनके पास आकर बोली कहिए किस चिन्ता में निमग्न हैं दुर्गपाल !

मुझे केवल यही चिन्ता है कि किस प्रकार यवनो के आक्रमण का प्रतिरोध किया जाए।

पर मुझे तो एक समस्या का सामना करना पड रहा है दुर्गपाल !'

'वह समस्या क्या है देवि।

'क्या आप देखते नही दुर्गपाल ! अग्निमित्र और धारिणी एक-दूसरे के प्रेम म डूबते जा रहे हैं। दिन भर साथ बठे-बठे न जाने क्या बातें करते रहते हैं। कभी खिलखिलाकर हसते हैं और कभी प्रहरो तक चुपचाप एक दूसरे के साथ बैठे रहते हैं। मैं अग्निमित्र को इसलिए अपने साथ लाई थी ताकि वह सेना मे भरती होकर एक सुयोग्य योद्धा बन सके। पर यहाँ आकर वह अपने कर्तव्य को भूल गया है और धारिणी के प्रेमपाश मे फँसता जा रहा है।'

'प्रणय कर्तव्य-पालन म कभी बाधक नही हुआ करता देवि ! धारिणी वीर कन्या है अपने कर्तव्य को भलीभाति समझती है। वह कभी अग्निमित्र के कर्तव्य पालन मे अपने को बाधक नही होने देगी।

'पर अग्निमित्र न कभी शिविर म जाता है और न कभी धनुर्विद्या का अभ्यास करता है। रात दिन धारिणी के साथ-साथ फिरता रहता है। क्या यह उचित है दुर्गपाल !

प्रणय का अनादर न कीजिए देवि ! हाँ यदि आप धारिणी को कुमार के योग्य न समझती हो तो दूसरी बात है। मैं उसे कुमार से मिलने से मना कर दूगा।

ऐसा न कहो दुर्गपाल ! धारिणी रूपवती है कुलीन है वीर कन्या है वीर भगिनी है अग्निमित्र के वह सवथा योग्य है। पर देश पर जब सकट आया हुआ हो तो प्रणय-व्यापार क्या समुचित है ?'

प्रणय अन्धा होता है देवि ! वह न समय देखता है और न स्थान। किसी स किसी को कब और क्यो प्रेम हो जाता है, इसका उत्तर दे सकना असम्भव है। प्रेम एक अनिर्वचनीय तत्त्व है। विवेक का उसम कोई स्थान

नही है। पर सच्चे प्रेम से मनुष्य न कर्तव्यविमुख होता है, और न शक्ति-हीन। उससे मनुष्य को शक्ति और स्फूर्ति की ही प्राप्ति होती है। पर क्या यह सत्य है कि कुमार और धारिणी प्रेमसूत्र में बँधते जा रहे हैं ?'

'मुझे इसमें जरा भी सन्देह नही है वीरसेन ! मैं स्त्री हूं, और स्त्रियों की मनोभावनाओं को भलीभांति समझती हूँ। अग्निमित्र को देखते ही धारिणी कुमुदिनी के समान खिल उठती है, और उसके मुखमण्डल पर एक अप्रतिम आभा छा जाती है। उसके जाते ही वह मुरझा जाती है। यह प्रेम नही है, तो क्या है ?

तो क्या धारिणी आपको स्वीकार है देवि !'

मेरी स्वीकृति और अस्वीकृति का अब प्रश्न ही क्या है ? पर हां, इस विषय में सेनानी की स्वीकृति तो प्राप्त कर ही लेनी चाहिए।

पर सेनानी को इन दिनों अवकाश ही कहां है ? जब तक यवनों के आक्रमण को विफल नही कर दिया जाएगा, वह इस प्रश्न पर ध्यान ही नही दे सकेंगे। अभी हमें प्रतीक्षा करनी होगी, देवि ?

मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि अग्निमित्र और धारिणी अब एक दिन भी एक-दूसरे के बिना नही रह सकते।'

'तो फिर आप ही इस समस्या का समाधान कीजिए देवि !'

दिव्या ने धारिणी को अपने पास बुलाया और एकान्त में ले जाकर उससे कहा, यह मैं क्या देख रही हूँ, बेटी ! क्या यह सच है ?

धारिणी इसका क्या उत्तर देती ? वह चुप खडी रही। दिव्या के पुन पूछने पर उसने अपना मुख दोनों हाथो से छिपा लिया और सुबक-सुबककर रोने लगी। रोते हुए ही उसने कहा आप उन्हीं से पूछ लीजिए न !'

मैं सब समझती हूँ बेटी ! तुम्हारे प्रणय में मैं बाधा नहीं डालूगी। मैं मां हूँ तुम्हारे जैसी बेटी पाकर मैं धन्य हो गई हूँ। आज से तुम मेरी पुत्री भी हो और पुत्रवधू भी।

दिव्या की स्वीकृति प्राप्त कर धारिणी का मुख-कमल खिल गया। मन्दस्मित के साथ उसने कहा—

'तो मैं जाकर यह शुभ समाचार उन्हें सुना दू।

'पर एक बात ध्यान में रखना, बेटी ! अग्निमित्र एक सैनिक है।

करने को उद्यत हो गए। उन्होंने डटकर यवन सेना का सामना किया। स्त्रियाँ और किशोरवय बालक तक शस्त्र धारण कर रणक्षेत्र में उतर आए। आगे बढ़ने के लिए एक एक पग पर दिमित्र को घोर युद्ध करना पड़ा। पर मथुरा की रक्षा के लिए न किसी दुर्ग की सत्ता थी, और न वहाँ कोई सेना ही विद्यमान थी। उसे एक पवित्र नगरी माना जाता था, और भारत की किसी भी राजशक्ति के आक्रमण का भय वहाँ के निवासियों को नहीं था। भगवान कृष्ण के बहुत से स्मृति चिह्न ब्रजभूमि में पग-पग पर विद्यमान थे, और दूर-दूर के जनपदों से लाखों नर-नारी इनके दर्शन और पूजा के लिए वहाँ आया करते थे। मथुरा के निवासियों की आजीविका का मुख्य साधन इन तीर्थयात्रियों की सेवा-शुश्रूषा ही था। वे धर्माचरण में व्यापृत रहा करते और दूर देशों से आनेवाले यात्रियों की सुख सुविधा के साधन जुटाने के लिए तत्पर रहते। जब दिमित्र की सेना ने मथुरा पर अकस्मात आक्रमण कर दिया तो ब्रजवासियों के लिए शान्त रह सकना सम्भव नहीं रहा। प्राचीन आर्य मर्यादा का अनुसरण कर श्रोत्रिय, परिव्राजक, ब्रह्मचारी और पुरोहित तक शस्त्र लेकर उठ खड़े हुए, और यवनों का प्रतिरोध करने के लिए रणक्षेत्र में उतर आए। उनके लिए यह एक धर्मयुद्ध था। वे युद्ध कर रहे थे अपनी धर्मभूमि की रक्षा के लिए अपने मन्दिरों और देवस्थानों को म्लेच्छों द्वारा अपवित्र किए जाने से बचाने के लिए और अपने अन्धक वृष्णि पूर्वजों की मान मर्यादा को अक्षुण्ण रखने के लिए।

यवनों के आक्रमण का समाचार सेनानी पुष्यमित्र को ज्ञात हो चुका था। पर अभी वह मौर्य साम्राज्य की सैन्य शक्ति को भलीभाँति संगठित नहीं कर सके थे। फिर भी उन्होंने इन्द्रप्रस्थ के दुर्गपाल वीरसेन को आदेश दिया कि कुरुदेश की सेना को साथ लेकर तुरन्त मथुरा की ओर प्रस्थान कर दें। पर वीरसेन के मथुरा पहुँचने से पूर्व ही दिमित्र ने उस पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया।

मथुरा के युद्ध में यवनों को भारी क्षति उठानी पड़ी। उनकी एक तिहाई सेना हत विहत हो गई और बहुत-सी युद्ध-सामग्री नष्ट हो गई। वहाँ दिमित्र को एक मन्दिरों में युद्ध करना पड़ा जो न मन्त्र थे और न मौन पर जो धर्म और देवभक्ति के आवेश में आकर अपना सर्वस्व न्योछावर

कर देने को उद्यत थे। यह दो सेनाओ का युद्ध नही था। यह युद्ध था, दो धर्मों का, दो सस्कृतियो का और दो सभ्यताओ का। यद्यपि अत म यवनो की विजय हुई, पर उन्ह यह ज्ञात हो गया कि शौर्य की परम्परा और देश भक्ति की भावना अभी भारत से नष्ट नही हुई है। कपिश-गान्धार और मद्रक जनपदो के अनुभव से दिमित्र का यह विचार बन गया था कि भारत के लोग अहिंसा म विश्वास रखते हैं। राजनीतिक स्वतन्त्रता को वे कोई महत्त्व नही देत सासारिक सुख वभव को तुच्छ मानते हैं युद्ध को गह्य समझत हैं और देशप्रेम का उनम सवथा अभाव है। शाकल के सघ-स्थविर कश्यप की बातचीत से उसन यह भी समझ लिया था कि भारत म सवत्र बौद्धधम का प्रचार है और वहा की जनता दण्डपाणि और पुष्यमित्र की नीति स असतुष्ट है। स्वप्न मे भी उसने यह कल्पना नही की थी कि मथुरा जसी धमप्रधान नगरी पर अपना आधिपत्य स्थापित करने म उसे इस प्रकार भारी क्षति उठानी पडेगी। पर अब उसका भ्रम दूर हो गया था। उसे यह ज्ञात हो गया था कि भारत के मध्यदेश को जीत सकना सुगम नही है।

मथुरा के युद्ध म यवन सेना जिस भयकर रूप से क्षत विक्षत हो गई थी, उसे देखकर दिमित्र क्रोध से पागल हो गया। आवेश म आकर उसने अपन सनिको को सव-सहार का आदश दिया। दो दिन और दो रात यवन सनिक हिंस्र पशुओ के समान मथुरा की पण्यवीथिया मार्गो और सारिणियो मे उन्मत्त हुए फिरते रहे। जो कोई भी उनकी दष्टि में आया, उसे उन्होने मौत के घाट उतार दिया। न उन्होने स्त्रिया को छोडा, और न बच्चा को। साधु मुनि, सन्यासी या पुरोहित—कोई भी उनकी दष्टि में अवध्य नही था। सवत्र खून की नदियाँ बहा दी गइ। राजमाग और पथ चत्वर सब शवा से पट गए। जब उन्हे कोई मनुष्य दिखाई न दिया तो वे देव-मदिरा पर टूट पडे। भागवत लोग मदिरो में देवमूर्तिया स्थापित कर उनकी पूजा किया करते थे। यवन सनिका ने इन मूर्तियो का खण्ड खण्ड कर दिया। जब सवत्र श्मशान की-सी शान्ति छा गई, तो दिमित्र ने आदेश दिया कि मथुरा नगरी को आग लगा दी जाए। देखत-देखते व्रजभूमि की यह पवित्र नगरी राख के एक विशाल ढेर के रूप म परिवर्तित हो गई। वहा न कोई

मंदिर शेष रहा और न कोई भवन। मनुष्यों के रहने का तो प्रश्न ही क्या था?

यवनराज दिमित्र के इस महाक्रोध को भारत की जनता चिरकाल तक विस्मृत नहीं कर सकी। दो सदी पश्चात् एक पौराणिक सूत ने इस महाक्रोध के विषय में एक गीत की रचना की थी। गीत का भावार्थ यह था, यवनों के क्रोध का क्या ठिकाना! जरा-सी बात पर वे क्रोध से पागल हो जाते हैं। तब उनमें उचित-अनुचित का विवेक करने की शक्ति ही नहीं रह जाती। स्त्रियों और बच्चों तक का वध करने में उन्हें कोई अनौचित्य प्रतीत नहीं होता। धर्म का उन्हें ज्ञान है ही नहीं, वे असत्यभाषी और अधार्मिक हैं। ऐसा हो भी क्या नहीं? हैं तो वे राजा, पर शास्त्रविधि से न उनका अभिषेक हुआ है और न उन्होंने प्रजापालन की प्रतिज्ञा ही की है। पशुबल के प्रयोग से ही वे राजशक्ति प्राप्त करते हैं। कोई नहीं जानता कब वे प्रसन्न हो जाएँ और कब क्रोध के वशीभूत होकर सब विवेक खो बैठें। इन्द्रियों पर उनका जरा भी वश नहीं है।

मथुरा का पूर्ण रूप से विध्वंस कर यवन सेनाएँ पाञ्चाल जनपद की ओर अग्रसर हुईं। दिमित्र का क्रोध अभी शान्त नहीं हुआ था। वह जहाँ भी गया, शस्य श्यामल खेतों को उजाड़ता गया, ग्रामों और पत्तनों को नष्ट करता गया, मन्दिरों को ध्वंस करता गया, देवमूर्तियों को खण्ड-खण्ड करता गया, और जो कोई भी मार्ग में मिला उसे मौत के घाट उतारता गया। स्त्रियों और बच्चों के प्रति भी उसने दया प्रदर्शित नहीं की। उसके नृशंस आक्रमण के कारण यमुना और गंगा की दक्षिणी अन्तर्वेदी का प्रदेश एक विशाल श्मशान के रूप में परिवर्तित हो गया।

दिमित्र को ज्ञात था कि अहिच्छत्र में पुष्यमित्र द्वारा संगठित एक बड़ी सेना विद्यमान है। मथुरा के युद्ध में उसे भारतीयों के शौर्य और साहस का अच्छा परिचय प्राप्त हो गया था। इस कारण उसने उत्तरी पाञ्चाल की ओर आगे बढ़ने का साहस नहीं किया। वह गंगा के दक्षिणी तट के साथ-साथ अग्रसर होता हुआ काम्पिल्य पहुँच गया, जो दक्षिण-पाञ्चाल का प्रमुख नगर था। मथुरा के समान काम्पिल्य में भी सर्वसंहार किया गया, और देखते-देखते यह नगर भी दिमित्र के महाक्रोध का शिकार हो गया।

काम्पिल्य को नष्ट कर यवन सेनाएँ मध्यदेश मे निरतर आगे बढती गइ। उनका लक्ष्य शीघ्र मे शीघ्र पाटलिपुत्र पहुँच जाना था, ताकि मौय साम्राज्य की जड पर कुठाराघात किया जा सके। पर काम्पिल्य मे ही दिमित्र को यह समाचार मिल गया था कि सेनानी पुष्यमित्र मौर्यों की सन्य शक्ति को पुन सगठित करने के लिए भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं और एक विशाल भारतीय सेना यवना का प्रतिरोध करन के लिए साकेत आ चुकी है। दिमित्र एक कुशल सेनानायक था। उसे यह समझने मे देर नही लगी कि साकेत मे एकत्र इस सेना को परास्त किए विना पाटलिपुत्र की ओर अग्रसर होना निरापद नही होगा। यह सेना पीछे की ओर स उस पर आक्रमण कर देगी, और दो पाटो के बीच में पडकर उसकी अपनी सेना नष्ट हुए विना नहा रहेगी। युद्ध नीति की दष्टि से उसने यही उचित समझा कि पहले साकेत पर आक्रमण किया जाए और उस हस्तगत करने के पश्चात ही पाटलिपुत्र की ओर आगे बढ़ा जाए।

सम्राट् देववर्मा की हत्या

मथुरा और काम्पिल्य से जो समाचार आ रहे थे, उन्हे सुनकर पाटलिपुत्र की जनता अत्यन्त क्षुब्ध हो गई। भारत म युद्ध पहले भी हुआ करते थे, पर इस देश के सनिक स्त्रियो और बच्चो पर हाथ उठाना पाप समझते थे। सेनाएँ आपस मे युद्ध करती रहती थीं, और किसान शान्तिपूवक अपने खेतो में हल चलाते रहते थे। रणक्षेत्र म युद्ध करना इस देश के क्षत्रिय गौरव की बात मानते थे, पर निहत्थे गहस्था पर शस्त्र चलाना उनकी दष्टि मे घोर पाप था। शस्त्र का प्रयोग वे केवल ऐसे शत्रु के विरुद्ध करते थे जो स्वय अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित हो युद्ध भूमि मे उतर आया हो। देव मन्दिर सबके लिए आदरणीय थे। देवस्थान चाहे भागवतो के हो चाहे बौद्धा क, चाहे जनो के और चाहे आजीवको के—सब कोई उनका आदर करते थे, और कोई उन पर आक्रमण नही करता था। पर ये यवन लोग ? इनके लिए न कोई अवध्य था और न कोई पूज्य।

मित्र द्वारा किए गए सवसहार के समाचार से पाटलिपुत्र की जनता बहुत उत्तेजित हो गई थी। उसने राजप्रासाद को घेर लिया और अपने आक्रोश का प्रदर्शित करने के लिए यवनों के विरुद्ध नारे लगाने प्रारम्भ कर दिए। राजप्रासाद के मुख्यद्वार पर जाकर उन्होंने दौवारिक से कहा— हम सम्राट से भेंट करना चाहते हैं।

सम्राट इस समय मन्त्रिपरिषद में हैं। इस समय वह किसी से नहीं मिल सकते। दौवारिक ने उत्तर दिया।

हम उनसे कुछ प्रार्थना करना चाहते हैं सेनापति ! पाटलिपुत्र के कितने ही श्रेष्ठी वदेहक और ज्येष्ठक उनसे भेंट करने के लिए यहाँ उपस्थित हैं। आप उन तक हमारी प्रार्थना पहुंचा तो दीजिए।'

आप शान्ति रखें। मन्त्रिपरिषद में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समस्याओं पर विचार विमर्श हो रहा है। जिन समाचारों को सुनकर आप उत्तेजित हो गए हैं मन्त्री और अमात्य भी उन्हीं पर विचार कर रहे हैं। ऐसे समय सम्राट आपसे कैसे भेंट कर सकते हैं ?

पर दौवारिक की बात से जनता को सन्तोष नहीं हुआ। शोर निरन्तर बढ़ता ही गया। देखते देखते राजप्रासाद के दक्षिणी द्वार के सामने के मैदान में हजारों नागरिक एकत्र हो गए और जनसमूह ने एक विशाल सार्वजनिक सभा का रूप धारण कर लिया। एक जोशीले युवक ने लोगों को सम्बोधन कर इस प्रकार कहना प्रारम्भ किया — मौर्य शासनतन्त्र इतना क्लीव और अशक्त हो गया है कि अपने देवस्थानों तक की रक्षा कर सकने में वह असमर्थ है। मथुरा और काम्पिल्य में यवनों ने अनगिनत स्त्रियों और बच्चों को गाजर-मूली की तरह काट कर फेंक दिया। जब यवन सेनाएँ व्रज और पाञ्चाल में सर्वसंहार कर रही थीं तो हमारे सम्राट कहाँ थे ? वह अन्तःपुर में केलिक्रीडा में व्यस्त थे। और पुष्यमित्र ? वह साकेत के शिविर में पैर पसारकर सो रहे थे। ऐसे शासन को धिक्कार है जो प्रजा की रक्षा भी न कर सके। ऐसे नपुंसक सम्राट और उसके अयोग्य मन्त्रियों को हम कब तक सहन करते रहेंगे ? भाइयो आगे बढ़ो इस शासन को उखाड़कर फेंक दो।

भीड़ के एक कोने से आवाज आई— ऐसे शासन को धिक्कार है हम उसे कभी सहन नहीं करेंगे।

उस युवक ने अपने भाषण को जारी रखते हुए कहा—'तो फिर चलो, नागरिको ! हम सब राजप्रासाद में प्रविष्ट हो जाएँ और देववर्मा को राजसिंहासन का परित्याग कर देने के लिए विवश करें। आचार्य चाणक्य के इस कथन को स्मरण करो, कि राज्य में जनता का स्थान सर्वोपरि है, और संसार का कोई भी कोप जनता के कोप से अधिक भयंकर नहीं होता। आज आप अपने इसी कोप को प्रदर्शित कीजिए। देखते क्या हो, नागरिको ! द्वार को तोड डालो। आगे क्या नहीं बढते ? क्या दौवारिक की सेना से डरते हो ? ये थोडे-से सैनिक हमारा क्या बिगाड सकेंगे ? हम तो यवनराज दिमित्र की सेना को हिन्दूकुश से परे धकेल देना है। इन निर्जीव सैनिकों से डरकर कैसे काम चलेगा ?'

युवक के जोशभरे वचनों को सुनकर भीड में उत्तेजना फैल गई। उद्दण्ड प्रकृति के कुछ लोग आगे बढ़ते हुए राजप्रासाद के महाद्वार के समीप तक पहुँच गए। दौवारिक सेना का गुल्मपति किंकर्तव्यविमूढ था कि इस स्थिति में क्या करे। इसी समय आचार्य दण्डपाणि महाद्वार पर प्रगट हुए और उत्तेजित जनता को शान्त करते हुए उन्होंने कहा—'आपके उत्साह और आक्रोश को देखकर मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ। पाटलिपुत्र के नागरिकों से मुझे यही आशा थी। मैं भलीभाँति जानता था कि यवनों के आक्रमण को वे कदापि सहन नहीं करेंगे और उसका प्रतिरोध करने के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करने को उद्यत हो जाएँगे। पर शत्रु का सामना क्रोध द्वारा कदापि नहीं किया जा सकता। उसके लिए आवश्यकता है, अनुशासित शौर्य की, जीवन के बलिदान की और कठोर नियन्त्रण की। आप सब वीर हैं, देशभक्त हैं और आर्यभूमि की रक्षा के लिए अपने तन मन धन की बलि देने को उत्सुक हैं। तो फिर आइए सेना में नाम लिखवाइए, अस्त्र शस्त्र की शिक्षा प्राप्त कीजिए और मौर्य साम्राज्य के सैनिक बनकर साकेत की ओर प्रस्थान कर दीजिए, जहाँ सेनानी पुष्यमित्र यवनों का प्रतिरोध करने के लिए सन्नद्ध हैं। अपने उत्साह और आक्रोश का उपयोग यवनों के संहार के लिए कीजिए, राजप्रासाद पर आक्रमण करने में नहीं।

वही युवक फिर आगे बढा और उसने चिल्लाकर कहा—'क्या आप चाणक्य के इस कथन को भूल गए हैं आचार्य ! कि यदि राजा उत्थानशील

हो तो प्रजा भी उत्थानशील होती है, और यदि राजा प्रमादी हो जाए तो प्रजा भी प्रमाद करने लगती है। देववर्मा नपुसक है अपने कर्तव्य का उसे जरा भी ध्यान नही है। ऐसी दशा म हम क्या कर सकते हैं ? सबसे पूर्व हम देववर्मा जसे अशक्त और प्रमादी राजा को राजच्युत करना होगा तभी जनता म उत्साह का सञ्चार हो सकना सम्भव है। नागरिको, किस बात की प्रतीक्षा कर रहे हो ? आगे क्यो नही बढते ? इस धूर्त ब्राह्मण की बातो मे न आओ। आगे बढो और द्वार को तोडकर राजप्रासाद म प्रविष्ट हो जाओ।'

वह युवक आगे बढता हुआ दण्डपाणि के समीप तक पहुँच गया था। आचार्य ने उस धीमे-से कहा— श्रमण देवपुत्र ! और अधिक आगे न बढो। मैंने तुम्हे देखते ही पहचान लिया था। यदि नागरिको के सम्मुख मैंने तुम्हारा भेद खोल दिया तो लोग अभी तुम्हारे टुकडे-टुकडे कर डालेंगे। कुक्कुट विहार के षडयन्त्रो की कोई भी बात मुझसे छिपी हुई नही रहती। अपने साथियो के साथ तुरन्त यहा से चले जाओ। इसी मे तुम्हारी भलाई है।

दण्डपाणि की बात सुनकर वह युवक स्तब्ध रह गया। धीरे धीरे वह पीछे हट गया और कुछ देर पश्चात कुक्कुट विहार को वापस चला गया। नागरिको को सम्बोधन करते हुए दण्डपाणि ने फिर कहा—

'भाइयो, आप विश्वास मानें न सम्राट देववर्मा अपने कर्तव्य से विमुख हैं और न उनके अमात्य। आप लोग धैर्य से काम लें। क्रोध और उत्तेजना के वशीभूत होकर कोई ऐसा कार्य न कर डालें जिससे हमारी पवित्र आर्य भूमि की हानि हो। मौर्य साम्राज्य को आज जिस विपत्ति का सामना करना पड रहा है वह वस्तुत अत्यन्त विकट और गम्भीर है। हम सबको मिलकर इस सकट का निवारण करना है। मन्त्रिपरिषद् म हम इसी पर विचार कर रहे हैं। सम्राट देववर्मा भी वही विद्यमान हैं और हमारा नेतृत्व कर रहे हैं। आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि सेनानी पुष्यमित्र साकेत पहुँच चुके हैं। यवन सेना की गति को अवरुद्ध करने के लिए वह जी-जान से प्रयत्न कर रहे हैं। उनकी योजना यह है कि दिमित्र की सेना साकेत से आगे न बढने पाए। यवनो को हम हिन्दूकुश से परे धकेल देना है, और अपनी सैन्यशक्ति को इतना अधिक सगठित कर देना है कि भविष्य मे कोई

विदेशी सेना हमारी मातृभूमि में प्रवेश करने का साहस न कर सके। मैं स्वीकार करता हूँ, कि शासनतन्त्र में राजा की स्थिति कूटस्थानीय होती है। आप विश्वास रखें कि सम्राट देववर्मा सच्चे वीर हैं, उत्कट योद्धा हैं और आर्य क्षत्रियों की वीर मर्यादा में आस्था रखते हैं। मागध साम्राज्य का सौभाग्य है, कि उसके राजसिंहासन पर आज एक ऐसा व्यक्ति आरूढ है जो सैन्यशक्ति और शस्त्र विजय की नीति में विश्वास रखता है। इस समय उन्हें आपके सहयोग की आवश्यकता है विरोध की नहीं। आइए, आगे बढ़िए राजप्रासाद पर आक्रमण करने के लिए नहीं, अपितु सेनानी पुष्यमित्र की सेना में सम्मिलित होने के लिए। हमें धन भी चाहिए अस्त्र शस्त्र भी चाहिए और सेना के लिए अन्न-वस्त्र भी चाहिए। आपमें जो युवक हैं वे सेना में नाम लिखवाएँ और जो धन प्रदान कर सकते हैं वे मुक्तहृदय से अर्थ दान करें। यदि मातृभूमि की स्वतन्त्रता अक्षुण्ण रहेगी, तो धन आप फिर भी कमा लेंगे। पर यदि यवनों को परास्त न किया गया, तो पाटलिपुत्र की भी वही गति होगी जो मथुरा और काम्पिल्य की हुई है। यह समय उत्तेजित होने का नहीं है। हमें अपने कर्तव्य का भलीभाँति ज्ञान है, हम उसका पालन करने के लिए सचेष्ट हैं। आप भी अपने कर्तव्य का पालन कीजिए।'

आचार्य दण्डपाणि के समझाने पर जनता का उद्वेग शान्त हो गया। युवकों ने सेना में नाम लिखवाना प्रारम्भ कर दिया और बहुत-से नर-नारी धन सञ्चय के लिए तत्पर हो गए। सर्वत्र नया उत्साह दिखाई पड़ने लगा। 'सम्राट देववर्मा की जय', 'आचार्य दण्डपाणि की जय' और 'सेनानी पुष्यमित्र की जय' के नारों से सम्पूर्ण पाटलिपुत्र गूँज उठा। आन्तर्वशिक सेना के द्वार स्थित गुल्मपति को सब आवश्यक आदेश देकर दण्डपाणि राजप्रासाद को वापस लौट गए जहाँ मन्त्रिपरिषद की बैठक अभी जारी थी। आचार्य के आ जाने पर देववर्मा ने उनसे कहा—

मुझे साकेत के लिए प्रस्थान करने की अनुमति प्रदान कीजिए आचार्य ! जनता की यही इच्छा है और मैं स्वयं भी यही चाहता हूँ। क्षत्रिय माता जिस अवसर के लिए सन्तान को जन्म देती है वह अब उपस्थित हो गया है। राजप्रासाद के सुखों का उपभोग करते हुए निष्क्रिय

जीवन बिता सकना अब मेरे लिए सम्भव नहीं है।

'साकेत जाकर तुम क्या करोगे वत्स ! वहाँ का सब कार्य सेनानी पुष्यमित्र ने सभाला हुआ है। वह कुशल सेनानायक है और युद्ध नीति में पारंगत है। राज्य में राजा की स्थिति कूटस्थानीय होती है। मन्त्री अमात्य आदि सब राजपुरुष उसी से प्रेरणा प्राप्त कर अपने अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं। यदि तुम पाटलिपुत्र को छोडकर अन्यत्र चले जाओगे तो शासन तन्त्र में शिथिलता आ जाएगी। यह भी स्मरण रखो कि राजसिंहासन पर तुम्हारी स्थिति अभी पूर्णतया सुरक्षित नहीं हुई है। पाटलिपुत्र से तुम्हारे प्रस्थान करते ही अन्त पुर के षडयन्त्र फिर से प्रारम्भ हो जाएँगे। कुक्कुट विहार के स्थविर अवसर पाते ही शतधनुष को सम्राट घोषित कर देंगे। राज्य में राजधानी का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। राज्यरूपी वृक्ष का मूल वही है। यदि राजधानी में गृहकलह प्रारम्भ हो गया तो साम्राज्य में भी सर्वत्र अशान्ति और अव्यवस्था उत्पन्न हो जाएगी। मेरी सम्मति में तुम्हारा पाटलिपुत्र में रहना बहुत आवश्यक है। तुम्हें साकेत जाने का आग्रह नहीं करना चाहिए।

पर यह भी सोचिए आचार्य ! यवनराज दिमित्र अपनी राजधानी को छोडकर इतनी दूर भारत मे आया हुआ है। वह अपनी सेना के साथ साथ रहता है। उसके साथ रहने से सेना को प्रेरणा प्राप्त होती है। यवनों के पास सेनानायकों की कोई कमी नहीं है। सैन्य सञ्चालन उनके सेनापतियों द्वारा ही किया जाता है पर दिमित्र के साथ रहने के कारण यवन सैनिकों में अपूर्व उत्साह का सञ्चार होता है। क्या मेरी उपस्थिति से साकेत की सेना को कोई लाभ नहीं होगा ?'

'होगा क्यों नहीं वत्स ! पर पाटलिपुत्र में शान्ति और व्यवस्था स्थापित रहने को मेरी दृष्टि में अधिक महत्त्व है, और उसके लिए तुम्हारा यहाँ रहना बहुत उपयोगी है। मुझे यवनों की सेना से उतना भय नहीं है जितना कि अन्त पुर के षडयन्त्रों और कुक्कुट विहार के कुचक्रों से है।

पर आप तो पाटलिपुत्र में रहते ही आचार्य ! हमारे सत्री और गूढ पुरुष भी अब जागरूक हो गए हैं। मुझे साकेत जाने की अनुमति प्रदान करें, आचार्य ! मेरी यही इच्छा है।

कुछ देर सोचकर दण्डपाणि ने कहा, 'यदि तुम्हारा सकल्प इतना दढ है, तो मैं तुम्हारे माग म बाधा नही डालूगा। पर आत्मरक्षा के लिए तुम्हें बहुत जागरूक रहना होगा।'

आतवशिक वीरवर्मा को बुलाकर दण्डपाणि न कहा, 'दखो वीरवमा! सम्राट शीघ्र ही साकेत के लिए प्रस्थान कर रह हैं। पर यह बात किसी को ज्ञात नहा हानी चाहिए। वह छद्म वेश मे यहाँ स जाएँगे। तुम्ह छाया के समान उनके साथ-साथ रहना होगा। कुछ चुन हुए सनिका को भी साथ ले लो। सम्राट की सुरक्षा का सब उत्तरदायित्व तुम्ही पर है। तुम सब छद्म वेश म रहागे।

'आपकी आज्ञा शिराधाय है आचाय! आप कोई चिन्ता न करें। जब तक मरे शरीर म रक्त की एक बूद भी शेष रहगी, सम्राट का बाल तक बाँका नही हान पाएगा।' वीरवर्मा ने उत्तर दिया।

मन्त्रिपरिषद का अधिवशन समाप्त हा गया, और सम्राट् देववर्मा साकेत-यात्रा की तयारी मे व्याप्त हो गए। उन्ह तयारी करत दख वीरवमा ने कहा आपका छद्म वेश मे चलना है सम्राट! इस तयारी की क्या आवश्यकता है? पाटलिपुत्र स एक साथ शीघ्र ही पश्चिम की आर प्रस्थान कर रहा है। श्रेष्ठी कमलपण उसक साथवाह हैं। आप उन्ह जानते ही हैं। मौयकुल क प्रति उनकी आस्था निस्सदिग्ध है और वह स्वय भी एक विकट याद्धा है। आप वदहक के वेश म उनके साथ जाएँगे।

'क्या मागध साम्राज्य का शासनतन्त्र इतना शिथिल हो गया है कि उसका सम्राट अपन साम्राज्य म भी स्वतन्त्रता के साथ कही आ जा नहा सकता? छद्म वेश म यात्रा करने की बात मेरी समझ मे नही आती। तुम्हारी सेना मेरे साथ रहगी ही, फिर भय किस बात का है?

आचाय दण्डपाणि का यही आदेश है सम्राट! और मन्त्रिपरिषद न भी यही निणय किया है।'

पर तुमने मेरे प्रश्न का उत्तर नहा दिया।

'कुक्कुट विहार के कुचक्रा स आप भलीभांति परिचित हैं सम्राट। छद्म वेश का अपनाए बिना आपकी साकेत यात्रा निरापद नही हो सकेगी। आपक समान भा मैं वदहक क वेश म रहूँगा। हमार सनिक भी ज्यष्टक

उससे एक महीने पहले पहुँचकर निपुणक ने भिखमगे का वेश बनाया और विश्वनाथ के मन्दिर के प्रांगण म भीख माँगने लगा। वह लँगडाकर चलता था और सहारे के लिए एक लाठी उसन हाथ म ली हुई थी। उसका कोई गूढपुरुष अधा बना हुआ था और कोई लूला। सब सतक होकर उम दिन की प्रतीक्षा म थे जबकि कमलपण का साथ काशी पहुँचेगा और उसके वदेहक देवदशन के लिए विश्वनाथ के मदिर म आएँगे।

उधर कुमार शतधनुष की माता माधवी भी शात नही बठी थी। योगमायासिद्ध शतमाय ने देववर्मा की मृत्यु के लिए जिस अनुष्ठान का आयोजन किया था उसका सब आवश्यक सभार उसने जुटा लिया था। शस्त्र द्वारा हत पुरुष का कपाल लकर उसमे गुन्जा बीज बो दिए गए थे। उनके छोटे-छोटे पौधे भी निकल आए थ। बकरी बिल्ली, नेवला ब्राह्मण, श्वपाक काक और उलूक के बाल भी एकत्र कर लिए गए थे और बिच्छू मधुमक्खी और साँप के चम भी। जब सब वस्तुएँ एकत्र हो गइ शतमाय को बुलाकर माधवी ने कहा—

अभिचार क्रिया की सब सामग्री प्रस्तुत है, महाराज। अब मुझे कब तक प्रतीक्षा करनी होगी ?'

शतमाय आखें बद कर कुछ समय चुपचाप बठा रहा। फिर पृथ्वी पर उँगली से रेखाए खीचकर उसने कुछ गणनाएँ की और प्रसन्न होकर कहा— अब अधिक देर नही है राजमाता। पुष्य नक्षत्र प्रारम्भ हो चुका है। केवल दस दिन और प्रतीक्षा करनी होगी। आज कृष्ण चतुर्थी है। दस दिन पश्चात कृष्ण चतुदशी की रात्रि को तुम तयार रहना। मैं अभिचार क्रिया का अनुष्ठान प्रारम्भ कर दूगा और उसके पूण होते ही देववर्मा की मत्यु हो जाएगी।

मैं तो तयार बठी हूँ महाराज। आज्ञा दीजिए कहाँ आ जाऊ ?

पर अभी तुम्हे एक काय और करना है। दाएँ हाथ की छोटी उँगली के नाखून तुम्हारे पास हैं ?

हैं महाराज। यह आपने पहले ही बता दिया था। क्या कोई अन्य वस्तु भी चाहिए ?

नीम की नीमलियाँ काकवृक्ष के पुष्प बन्दर के बाल और मनुष्य की

हड्डी—इन सबका भी संग्रह कर लो। किसी मृत मनुष्य के वस्त्र भी चाहिएँ। नीमली आदि को इस वस्त्र मे बाँधकर एक पोटली बना लो। देखना, सब वस्तुएँ ठीक तरह से बँध जाएँ। इस पाटली का देववर्मा के निवास स्थान के समीप कही गाड देना। पर यह करने से पूव तुम्ह चार दिन और चार रात का अनशन करना होगा। पानी की एक बूद भी तुम ग्रहण नही कर सकोगी। क्या तुम इसके लिए उद्यत हो ?'

यदि इससे देववर्मा की मत्यु हो जाए, तो मैं जीवन भर अनशन कर सकती हूँ, महाराज ! पर कठिनता यह है कि देववमा के निवास स्थान तक मैं पहुँच कस सकूगी ? कुक्कुट विहार म आश्रय ग्रहण कर जीवन के शेप दिन काट रही हूँ। राजप्रासाद म मुझे कौन जान देगा ?'

'अच्छा, इसका भी उपाय बता देता हूँ। तुम्ह राजप्रासाद म प्रवेश की कोई आवश्यकता नही होगी। देववर्मा शीघ्र ही पाटलिपुत्र से प्रस्थान कर रहा है। वह राजप्रासाद के पश्चिमी महाद्वार से बाहर जाएगा। तुम रात के समय वहाँ जाना और महाद्वार के समीप राजमाग के ठीक बीच मे उस पोटली को गाड देना।

हाँ, यह तो मैं कर सकूगी महाराज !

'तो फिर आज से ही अनशन प्रारम्भ कर दो। यदि चार दिन तक देववमा पाटलिपुत्र स न गया, तो काम बन जाएगा। यात्रा की तयारी म उसे इतना समय लग ही जाएगा ! पर इस काय के लिए तुम्ह अकल ही जाना हागा और वह भी रात्रि के समय। डरागी तो नही ?

नही महाराज !

चार दिन और चार रात निरन्न और निजल रहकर माधवी ने उस पोटली को राजप्रासाद के पश्चिमी महाद्वार क निकट राजमाग के मध्य म गाड दिया। यह कर चुकने पर उसने शतमाय स कहा—

'अभिचार क्रिया का अनुष्ठान कब प्रारम्भ करेंगे महाराज !'

अब केवल पाँच दिन शेप रह गए हैं राजमाता ! पर इस क्रिया क लिए किसी एस मन्दिर म जाना होगा जहाँ पूणतया एकान्त हो। हम दो के अतिरिक्त वहाँ कोई भी न हो पशु-पक्षी तक भी नहीं।

'दुष्ट ग्रहों की शान्ति के लिए जिस मन्दिर म आपने अनुष्ठान किया

था क्या उससे काम नही चलेगा महाराज !'

वह मन्दिर पाटलिपुत्र से अधिक दूर नही है। यदि कोई भी व्यक्ति अभिचार क्रिया के समय वहाँ आ गया तो सब क्रिया कराया चौपट हो जाएगा।

मैं कही भी चलने को उद्यत हूँ महाराज ! केवल आपके आदेश की प्रतीक्षा है।'

'तो सुनो राजमाता ! यहाँ से पचास योजन दूर दक्षिण-पूर्व दिशा म एक सघन कान्तार है। उसके मध्य म एक बहुत पुराना मन्दिर है। आज कल वहाँ न कोई रहता है और न कोई वहाँ आता जाता ही है। अभिचार क्रिया के लिए हम वहाँ जाना होगा। शीघ्र ही यात्रा का प्रबन्ध कर लो। रथ जगल म नही जा सकेगा। कोई चार योजन पदल चलना होगा।'

'मुझे स्वीकार है, महाराज !

कृष्ण चतुर्दशी क दिन मध्याह्न तक माधवी शतमाय के साथ महा कान्तार के एकान्त मन्दिर मे पहुच गई। सूर्यास्त होते ही शतमाय ने अभि चार क्रिया का प्रारम्भ कर दिया। यज्ञकुण्ड मे अग्नि प्रज्वलित कर पहले मद्य की आहुति दी गई, फिर क्रमश उस सब सभार की जिसे माधवी ने यत्नपूवक जुटा रखा था। आहुति द ते समय शतमाय इन मन्त्रो का उच्चा रण करता जाता था—

उपमि शरण चाग्नि दवतानि दिशो दश
अपयान्तु च सर्वाणि वशता यान्तु मे सदा ॥ स्वाहा ॥
वश मे ब्राह्मणा यान्तु भूमिपालाश्च क्षत्रिया
वश वश्याश्च शूद्राश्च वशता यान्तु मे सदा ॥ स्वाहा ॥
अमिले किमिले वयुजारे प्रयोगे फके कवयुश्वे
बिहाले दन्तकटके स्वाहा ॥

अनुष्ठान करते समय शतमाय कुछ श्रान्ति अनुभव करने लगा। मद्यपान कर उसने श्रान्ति दूर की, और माधवी से कहा 'अब पूर्णाहुति का समय आ गया है राजमाता ! तयार हो जाओ। पूर्णाहुति के साथ ही देववर्मा पचत्व को प्राप्त हो जाएगा। शस्त्रहत पुरुष के कपाल मे जो गुञ्जा बीज आरोपित हैं, उन्ह अपने दाएँ हाथ मे ले लो। हाँ और दाएँ हाथ की सबसे छोटी

उँगली का नाखून उसके ठीक बीच मे रख लो। मन्त्रोच्चार के अन तर ज्यो ही मैं स्वाहा कहू, कपाल को सावधानी से यनकुण्ड मे डाल दो। अच्छा, अब मैं मन्त्र पढता हूँ—

अमिले किमिले वयुजार प्रयोगे फके कवयुश्वे विहाले
द तकटके अलिते पलिते मवन स्वाहा।

स्वाहा के साथ ही माधवी ने कपाल को अग्निकुण्ड म डाल दिया। अग्नि वेग से प्रज्वलित हो उठी, लाल और काली ज्वाला से सम्पूण गगन प्रदीप्त हो गया, और एक प्रचण्ड ध्वनि से वायुमण्डल कम्पित हो उठा। अभिचार क्रिया अब पूण हो गई थी। प्रसन्न होकर शतमाय ने कहा, 'राजमाता देववर्मा अब इस ससार म नही है। तुम्हारा मनोरथ पूण हो गया है, जाओ अ त पुर पर निष्कण्टक राज करो।

माधवी ने शतमाय से चरणो मे अपना सिर रख दिया।

जिस समय मायायोग सिद्ध शतमाय महाकान्तार क एका त मदिर म अभिचार क्रिया के अनुष्ठान म तत्पर था, निपुणक और उसके साथी विश्वनाथ शिव के मन्दिर के बाहर खडे हुए देववर्मा की उत्सुकतापूवक प्रतीक्षा कर रहे थे। सूयास्त होने से पूव ही कमलपण का साथ काशी पहुँच गया था और देववर्मा अपने सनिको के साथ छद्मवेश म भगवान की पूजा के लिए शिवमन्दिर म आ गए थे। वह देर तक भगवान की पूजा करते रहे। आधी रात बीत जाने पर जब वह बाहर निकले तो एक भिखमगा लगडाता हुआ उनक सम्मुख उपस्थित हुआ। हाथ फलाकर उसने देववर्मा से कहा, 'श्रेष्ठी की जय हो भगवान विश्वनाथ आपका कल्याण करें ' कुछ भिक्षा मुझ विकलाङ्ग को भी मिल जाए। भीख देने के लिए देववर्मा ने ज्यो ही अपना हाथ ऊपर उठाया, उस भिखमगे ने अकस्मात उनपर आक्रमण कर दिया। जिस लाठी क सहारे वह लगडाकर चल रहा था, वह एक गुप्ती थी जिसम तीक्ष्ण धार की खडग छिपी हुई थी। आ ववशिक वीरवर्मा देखता ही रह गया और मौय सम्राट की जीवन लीला समाप्त हो गई।

प्रणय-क्रीड़ा

धारिणी और अग्निमित्र का विवाह हुए सात दिन हो चुके थे। वे दोनो इन्द्रप्रस्थ की सेना के सैनिक थे अतः दिन भर अस्त्र-संचालन और व्यूह रचना के अभ्यास में व्यस्त रहते। पर सायंकाल होते ही वे यमुना के तट पर चले जाते और आधी रात तक प्रणय-केलि में रत रहते। एक दिन धारिणी ने अग्निमित्र से कहा—

मेरी इच्छा है कि कुछ दिन कहीं अन्यत्र घूम आएँ किसी ऐसे प्रदेश में जहाँ हम दोनो के अतिरिक्त अन्य कोई न हो। यमुना का यह तट तो बड़ा उजाड़ और नीरस है। न यहाँ कोई निकुञ्ज है और न कोई सघन वृक्ष। पश्चिम की ओर आँख उठाओ तो सूखी पहाड़ियाँ दिखाई देती हैं जिन पर न हरी घास है और न वृक्ष। काली भूरी चट्टानो के सिवा और कुछ भी दृष्टिगोचर नहीं होता। पूर्व की ओर देखो तो दूर-दूर तक मटमैली रेत फैली हुई है। यमुना में जल भी नाम को ही है अन्यथा नौका द्वारा जल विहार ही कर लिया करते।

तुम कहाँ जाना चाहती हो?

क्यो न कुछ दिनो के लिए कपिश गान्धार की यात्रा कर आएं। सुना है वहाँ द्राक्षा और दाडिम इस प्रकार पाए जाते हैं जैसे यहाँ करीर और बेर। वह देश कितना सुन्दर होगा। द्राक्षा के गुच्छो से लदी हुई लताएँ और हरे भरे वृक्षो से लटकते हुए लाल लाल दाडिम। सुना है हिन्दूकुश पर्वतमाला की चोटियाँ सदा हिम से ढकी रहती है। हिमपात देखने की मेरी बहुत इच्छा होती है। मार्ग में वाहीक देश भी घूम लेंगे। माताजी तो वहाँ हो भी आई हैं। सिन्धु-तट के युद्ध में उन्होने अनुपम वीरता प्रदर्शित की थी। जब वह वाहीक जनपदो के सौन्दर्य की चर्चा करने लगती है तो मेरा मन काबू में नहीं रह पाता। इच्छा होती है उड़कर वहाँ पहुँच जाऊं और वाहीक सुन्दरियो के स्वर में स्वर मिलाकर गाने लगूं।

पर यह कैसे सम्भव है धारिणी। यवन सेनाएँ मथुरा पहुँच चुकी हैं। सेनानी ने आदेश दिया है कि दुर्गपाल वीरसेन तुरन्त मथुरा के लिए प्रस्थान कर दें। वह इसी की तैयारी में तत्पर हैं। हमे भी रण क्षेत्र में जाना

होगा।

यह सुनकर धारिणी की आखो मे आंसू आ गए। अपने मानसिक उद्वेग पर काबू पाकर उसने कहा—

सनिक जीवन भी कितना नीरस और भयकर है। प्रणय के लिए उसमे कोई स्थान ही नही है। क्या हमारा सम्पूर्ण जीवन इसी प्रकार बीत जाएगा।'

मन मे क्लय न लाओ, धारिणी! शत्रुओ से देश की रक्षा करना हम सनिको का प्रथम कतव्य है। प्रणय को कतव्य-पालन मे बाधक न होने दो।'

अग्निमित्र की बात सुनकर धारिणी गम्भीर हो गई। कुछ देर चुप रहकर सकोच के साथ उसने कहा—

मेरे मन म एक बात आ रही है। यदि बुरा न मानो तो कहूँ।'

'तुम्हारी किसी बात से मैंने क्या कभी बुरा माना है? तुम क्या सोच रही हो!

दिमित्र वाल्हीक देश का ही तो राजा है न? सुना है जब पिछली बार वाल्हीकराज ने भारत पर आक्रमण किया था, तो एक अय कुमार न वाल्हीक नगरी मे अपने को राजा घोषित कर दिया था। क्या यह सच है?'

'हा, यह सच है। उस कुमार का नाम एवुक्रतिद था। वह अभी जीवित है, और दिमित्र के प्रति घोर विद्वेष रखता है।

इसका अभिप्राय यह है कि यवन राजकुल मे भी एकता का अभाव है। जिस प्रकार के षडयन्त्र हमारे पाटलिपुत्र के राजप्रासाद मे चलते रहते है, वाल्हीक नगरी भी उनसे मुक्त नहीं है।'

हाँ, यह भी सच है। वास्तविकता तो यह है कि यवनो म उस प्रकार के अभिजात और गौरवशाली प्राचीन राजवश हैं ही नही जसे कि हमारे देश मे हैं। मूर्धाभिषिक्त राजा तो वहा कभी हुए ही नही। यह जो वाल्हीक देश है उसकी सवसाधारण जनता भी यवन जाति की नही है। यवन वहा के लिए विदेशी हैं। सैन्यशक्ति द्वारा ही यवन लोग वाल्हीक देश का शासन कर रहे हैं। वहाँ का राजकुल भी प्राचीन नही है। दिमित्र के पूवज वहा क्षत्रप के रूप मे शासन करने के लिए नियुक्त थे। यवन सम्राट की निबलता से लाभ उठाकर वे स्वतन्त्र हो गए। यही कारण है जो राजसिंहासन के

लिए वहाँ सदा झगड़े चलते रहते हैं।'

तो फिर सुनो। यवनराज दिमित्र भारत पर आक्रमण करता हुआ अपने देश से बहुत दूर चला आया है। क्या आप समझते हैं कि बाल्हीक नगरी म उसका राजसिंहासन सवथा सुरक्षित है!

तुम कहना क्या चाहती हो धारिणी!

अभी बताती हूँ। कपिश गान्धार और मद्रक जनपद दिमित्र की अधीनता स्वीकृत करते हैं न?'

हाँ करते हैं। वे बाल्हीक के यवन साम्राज्य के अ तगत हैं।

क्या उनका शासन करने के लिए दिमित्र ने वहाँ अपने कोई क्षत्रप या सेनापति नियुक्त किए हुए हैं?

मद्रक जनपद मे गणतन्त्र शासन है। पर वहाँ का गण दिमित्र के आधिपत्य को स्वीकार करता है। दिमित्र की ओर स वहाँ एक यवन सेना भी विद्यमान है, जिसका सेनापति मिनेन्द्र नाम का एक युवक है। वह दिमित्र के राजकुल का है और उसके प्रति अगाध भक्ति रखता है। कपिश-गान्धार मे भी यवन सेनाएँ स्थापित हैं और साथ ही यवन क्षत्रप भी।

एवुक्रतिद आजकल कहाँ है?

हिन्दूकुश की उपत्यकाओं मे। वह इस प्रतीक्षा मे है कि उपयुक्त अवसर मिले और वह फिर बाल्हीक के राजसिंहासन पर अपना अधिकार स्थापित कर ले। पर यह सब तुम क्यों पूछ रही हो?'

जरा धय रखो अभी बताती हूँ। क्या आप समझते हैं कि कपिश गान्धार के क्षत्रप और सेनापति दिमित्र के प्रति पूणरूप से अनुरक्त हैं?'

इस समय बाल्हीक देश पर एवुथिदिम के कुल का प्रभुत्व है। पर कुछ समय पूव यह देश सीरिया के यवन सम्राट के अधीन था। दिमित्र के एक पूवज ने सीरिया के सम्राट के विरुद्ध विद्रोह कर वहाँ अपना स्वतन्त्र शासन स्थापित कर लिया था। पर यवनो की शक्ति का वास्तविक केन्द्र अब तक भी सीरिया ही है। एवुक्रतिद वही के राजकुल का है। एवुथिदिम के कुल से उसका वर है। कपिश गान्धार के अनेक सेनापति भी उसी के कुल के हैं।

अब मेरी योजना सुनो। जब यवनो मे इतना विद्वेष भाव है तो हम

क्या न उसका उपयोग करें ! क्यो न हम यह प्रयत्न करें कि कपिश गा धार आदि मे दिमित्र के विरुद्ध विद्रोह हो जाए ? यदि एवुत्रतिद के राजकुल का कोई सेनापति वहाँ अपने को स्वतन्त्र राजा घोषित कर दे तो दिमित्र के लिए भारत मे टिक सकना सम्भव नही रहेगा। जब उसका अपना राजसिंहासन ही डावाडोल हो जाएगा तो भारत पर आक्रमण करके वह क्या करेगा ?'

'तुम्हारी यह योजना विचारणीय अवश्य है पर तुम इसे क्रियान्वित कैसे करोगी ?

तुम न कहकर 'हम कहो। हम दोना मिलकर इस योजना को क्रियान्वित करेंगे। मैं चाहती हूँ कि हम तुरन्त पश्चिम की ओर प्रस्थान कर दें और शाकल जाकर मिनन्द्र से भेंट करें। यदि वहा काम न बने तो कपिश-गान्धार जाएँ और वहाँ यवन सेनापतियो से मिलें। यदि आवश्यकता हो, तो हिन्दूकुश भी जाएँ और एवुत्रतिद से सम्पर्क स्थापित करें। हम इन यवना को यह समझाएँगे कि भारत म दिमित्र की स्थिति डाँवाडोल है। सेनानी मौर्य साम्राज्य की सैन्यशक्ति को भली भाति सगठित कर चुके हैं। दिमित्र की पराजय सुनिश्चित है। एवुत्रनिद और उसके समर्थका को और चाहिए ही क्या ? वे तुरन्त दिमित्र के विरुद्ध विद्रोह कर देंगे। एवुत्रतिद अपने को राजा घोषित कर देगा और यवना म गृहकलह प्रारम्भ हो जाएगा। दिमित्र के प्रतिरोध का यही उपाय है।

'तुम्हारी बात तो ठीक है पर यह काय तुम करोगी कैसे ?'

'मैं केवल शस्त्र सचालन म ही प्रवीण नही हूँ। औशनस नीति की शिक्षा भी मैंने प्राप्त की है। तुम मेरे साथ-साथ रहना। देखना मैं किस प्रकार यवन देश म विप्लव का सूत्रपात करती हूँ।'

पर हम दोना कुरु देश की सेना के सैनिक हैं। दुर्गपाल वीरसेन की अनुमति के बिना हमारे लिए कही भी जा सकना असम्भव है। अनुशासन मे रहना हमारा प्रथम कर्तव्य है।

'मौर्य साम्राज्य के पश्चिमी सीमान्त की रक्षा का भार भ्राता वीरसेन पर है। मैं उनकी अनुमति अवश्य प्राप्त कर लूगी। तुम इसकी चिन्ता न करो। मेरी इच्छा की वह कभी उपेक्षा नही करेंगे। देखो

प्रबल इच्छा है। पश्चिम के इन जनपदो के प्रति मेरे हृदय मे अपार आकर्षण है। पर एक बात का ध्यान रखना। सुना है वाहीक और कपिश गान्धार की स्त्रियाँ अत्यन्त रूपवती होती हैं। किसी के नयन-बाण से घायल होकर मेरा परित्याग न कर देना।

यह समय हसी का नही है धारिणी। यवन सेना मध्य देश मे प्रवेश कर चुकी है। आर्यभूमि घोर सकट मे है। यदि दुर्गपाल ने सैनिक दृष्टि से तुम्हारी योजना को स्वीकार कर लिया तो तुम्हारे साथ चलने मे मुझ क्या आपत्ति हो सकती है?

आज आप इतने गम्भीर क्यो है? क्या आपकी यह इच्छा नहा होती कि हम दोनो कुछ दिनो के लिए ऐसे सुदूर प्रदेश म चले जाए जहाँ न हमे कोई पहचानता हो न हम किसी प्रकार की औपचारिकता की आवश्यकता हो न हम किसी प्रकार की चिन्ता हो और जहा हम एक-दूसरे म निमग्न होकर स्वच्छन्दतापूर्वक प्रणयक्रीडा म रत रह सकें। आकाश म उडते हुए पक्षियो के उस युगल को देखते हो कैसे एक-दूसरे मे निमग्न है। हमारा विवाह हुए केवल एक सप्ताह ही हुआ है पर ससार भर की चिन्ताए हमारे सिर पर सवार हो गई हैं।

यह कहते कहते धारिणी की आखो म आसू आ गए। अग्निमित्र ने उसे अक म भरते हुए कहा—

मुझ कर्तव्य-पालन स च्युत न करो धारिणी।

मैं भली भाँति जानती हू कि प्रणय को कर्तव्य के मार्ग म बाधक नही होना चाहिए। पर मैं तुम्हे कर्तव्य पालन स विमुख तो नही कर रही हू। हम देश की रक्षा क महान उद्देश्य को सम्मुख रखकर ही पश्चिम की यात्रा करेंगे। यवनो द्वारा शासित आर्य जनपदो म हम ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर देंगे जिसक कारण दिमित्र क लिए मध्यदेश म टिक सकना असम्भव हो जाएगा। क्या यह कार्य महत्त्व का नहा है? तुम आचार्य चाणक्य की इस शिक्षा को क्या भूल जाते हो कि मनुष्य को कभी निम्मुख जीवन नही बिताना चाहिए। मुझ और प्रमोद को भी मानव जीवन म स्थान है। हम पश्चिम की ओर जाएँगे अकेले बिना किसी साथी-सगी क, उन्मुक्त गगन म उडते हुए दो पक्षियो के समान। हमारी प्रणय क्रीडा भी चलती रहेगी

और हम अपनी योजना को क्रियान्वित भी करते रहेंगे।

एक बार फिर अग्निमित्र ने धारिणी को अंक में भर लिया। कुछ क्षण चुप रहकर उसने कहा—'जाओ, दुर्गपाल से अनुमति ले लो।'

धारिणी की योजना सुनकर वीरसेन ने कहा—'तुम वीर कन्या हो, धारिणी! तुम पर मुझे गर्व है। जब सिंधु-तट पर पहुँचना, तो उस स्थान पर कुछ फूल चढा देना जहाँ हमारे पितृपाद ने अमरत्व प्राप्त किया था। पर, हा, क्या तुम दोनो अकेले ही जाओगे?'

'हा, भ्राताजी, हम अकेले ही जाना चाहते हैं।'

'पर यह निरापद नही होगा, धारिणी! क्यो न कुछ सैनिक साथ ले जाओ। अग्निमित्र मौर्य साम्राज्य के सेनानी के एकमात्र पुत्र हैं। उनका जीवन बहुत मूल्यवान् है, केवल तुम्हारे लिए ही नही अपितु सम्पूर्ण आर्य भूमि के लिए। यदि वह किसी विपत्ति मे फँस गए, तो मैं सेनानी को कैसे मुह दिखाऊँगा! वह मुझे कभी क्षमा नही करेंगे।

'कुमार की आप कोई चिंता न करें। मेरे साथ रहते हुए उन पर कोई विपत्ति आ ही नही सकती। मेरा सुहाग उनके लिए रक्षा-कवच का काम देगा।

पर सैनिकों को साथ ले जाने मे हानि ही क्या है?'

'हम छद्मवेश मे यात्रा करेंगे साधारण गृहस्थों के समान। यदि बहुत-से लोग साथ होंगे, तो यवनों को सन्देह हो जाएगा। उनके गूढपुरुषों से हमारी योजना छिपी नही रह सकेगी। अच्छा, भ्राताजी, आपकी अनुमति हमें प्राप्त है न?

मेरा आर्शीवाद है, तुम्हारी यात्रा निरापद हो और तुम्हें अपनी योजना मे सफलता प्राप्त हो!

दुर्गपाल वीरसेन से अनुमति प्राप्त कर धारिणी अग्निमित्र के पास गई और हँसती हुई बोली—

मैं कहती थी न भ्राताजी मेरी बात को कभी नही टाल सकते। कहा करते हैं सबकी सिर चढ़ी है। अब बताओ कब चलोगे? अभी या कल प्रात? एक बात और, हम किस वेश मे चलना चाहिए। मेरा मन करता है कि किसान का भेस बना लें। कपडे-लत्ते एक छोटी-सी गठरी में बाँध लें,

और दो चार बरतन भाण्ड भी। गठरी को लाठी से लटकाकर जब उसे कन्धे पर रखकर चलोगे तो कितने अच्छे लगोगे। चलते चलते जहाँ साँझ हो जाएगी किसी वृक्ष के तले ठहर जाया करेंगे। तुम पानी भर लाया करना और मैं लकड़ी एकत्र कर चूल्हा जला लिया करूँगी। कैसा आनन्द आएगा! कहो तुम्हें यह स्वीकार है या नहीं ?'

'पर यदि किसी ने पूछ लिया कि कहाँ जा रहे हो तो क्या उत्तर देंगे ?'

'यह भी कोई कठिन समस्या है ? कह देंगे तीर्थ यात्रा के लिए जा रहे हैं। अभिसार और त्रिगर्त जनपदों में अनेक प्राचीन देव मन्दिर विद्यमान हैं। मध्यदेश के बहुत-से किसान और कमकर भी वहाँ देव दर्शन के लिए जाया करते हैं। हम किसान वेश में देखकर किसी को सन्देह नहीं होगा। पर हाँ इस प्रकार यात्रा करते हुए तुम्हें कोई कष्ट तो नहीं होगा ?'

'जब तुम साथ रहोगी, तो कष्ट का प्रश्न ही क्या है। यही सही कल सूर्योदय से पूर्व ही हम इन्द्रप्रस्थ से प्रस्थान कर देंगे। किसान दम्पति के लिए उपयुक्त वस्त्र आदि का सब प्रबन्ध कर रखना।

धारिणी रात को सोई नहीं, यात्रा की तैयारी में व्यस्त रही। उसके मन में अपूर्व उत्साह था। वह स्वच्छन्द होकर प्रणय क्रीड़ा का आनन्द उठाने के लिए उतावली हो रही थी और साथ ही औशनस नीति द्वारा यवन शासनतन्त्र में विप्लव उत्पन्न कर देने के लिए भी।

दिव्या और वीरसेन के चरणों में सिर झुकाकर और उनसे आशीर्वाद प्राप्त कर धारिणी और अग्निमित्र ने इन्द्रप्रस्थ से प्रस्थान कर दिया। वे निरन्तर पश्चिम-उत्तर की ओर अग्रसर होते गए। दिन भर वे पैदल चलते और जहाँ कहीं साँझ हो जाती विश्राम के लिए ठहर जाते। दोनों एक-दूसरे में निमग्न थे। मार्ग में ग्रामवधूटियाँ धारिणी से पूछतीं— इस किशोर आयु में तीर्थ यात्रा के लिए क्यों निकल पड़ी हो, बहन ?' धारिणी हँसकर उत्तर देती—'क्या कहूँ, बहन! रात दिन इनकी सेवा में तत्पर रहती हूँ, पर ये प्रसन्न ही नहीं होते। हमारे गाँव में एक बूढ़ा सिद्ध रहता है उससे पूछा था। उसने कहा अभिसार जनपद में भगवान विष्णु का एक प्राचीन मन्दिर है। उसकी महिमा अपरम्पार है। वहाँ जाकर जो भी मनौती मानी जाए अवश्य पूरी होती है। इसीलिए इन्हें साथ लेकर वहाँ जा रही हूँ। शायद

मेरी मनोकामना भी पूर्ण हो जाए।' अग्निमित्र जब एकान्त पाते, तो धारिणी से कहते—'दूसरों के सामने मेरी निन्दा करने में तुम्हें अपूर्व आनन्द मिलता है। यदि सचमुच तुमसे अप्रसन्न हो जाऊँ तो क्या करोगी।' इस पर धारिणी कहती—'भगवान् विष्णु की मूर्ति के सम्मुख आसन जमाकर बैठ जाऊँगी। उनसे प्रार्थना करूँगी, तुम सदा मेरे वश में रहो। प्रसन्न होकर जब भगवान् 'तथास्तु' कहेंगे, तो तुम्हारा क्या बस जो मुझसे अप्रसन्न हो सको।'

इसी प्रकार हँसते-खेलते और विनोद करते हुए अग्निमित्र और धारिणी सिन्धु नदी के पार पहुँच गए। पुष्कलावती पहुँचने पर एक यवन सैनिक ने उन्हें टोका और प्रश्न किया—

'तुम कौन हो और कहाँ से आ रहे हो ?'

'हम बहुत दूर से आ रहे हैं नायक ! भारत के मध्यदेश में कोशल नाम का एक जनपद है, यहाँ से सैकड़ों योजन दूर। हम वहाँ के रहनेवाले हैं, और खेती द्वारा अपना निर्वाह करते हैं।'

'यहाँ किस लिए आए हो ?'

'अपना कष्ट कैसे कहूँ नायक ! विवाह हुए चार वर्ष हो गए, पर अब तक कोई बाल-बच्चा नहीं हुआ। हमारे जनपद की राजधानी श्रावस्ती नगरी है। वहाँ जेतवन नाम का एक बहुत बड़ा विहार है। उसके स्थविर बड़े पहुँचे हुए महात्मा हैं। भूत, भविष्य, वर्तमान—सब उन्हें प्रत्यक्ष है। मेरा कष्ट सुनकर उन्होंने कहा—सब तीर्थों की यात्रा करके आओ, तब तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा। सो तीर्थ यात्रा के लिए निकले हैं। कुरु, पाञ्चाल, वाहीक, मद्रक, त्रिगर्त, अभिसार—सबकी यात्रा कर आए हैं। अब गान्धार होते हुए कपिश जाएँगे। राजा अशोक के बनवाए हुए बहुत से चैत्य और स्तूप इन देशों में हैं। उन सबकी पूजा करेंगे। स्थविर का वचन कभी असत्य नहीं हो सकता नायक ! हमारी कामना अवश्य पूर्ण होगी।' धारिणी ने उत्तर दिया।

'तुम्हारे पास कोई अस्त्र-शस्त्र तो नहीं है ?'

'अस्त्र-शस्त्रों से हमारा क्या प्रयोजन, नायक ! हम तो केवल हल चलाना जानते हैं।'

'यहाँ कहाँ ठहरोगे ?'

'हम निधन किसान हैं नायक ! यहीं किसी वृक्ष के नीचे रात बिता दंगे। पर यह नगरी तो बहुत सुन्दर है। जी चाहता है दो-तीन दिन यहीं विश्राम कर लें। बहुत दूर से चल आ रहे हैं थक गए हैं। हमें कोई रोकेगा तो नहीं ? यवनों की हमने बहुत प्रशंसा सुनी है। दीनों के प्रति वे बहुत दयालु होते हैं। हाँ नायक ! एक बात मन में आई है। आज्ञा हो तो निवेदन करूँ ?

क्या कहना चाहते हो ?

सुना है यहाँ यवनराज भी निवास करते हैं। हम लोग तो राजा को ईश्वर मानते हैं साक्षात भगवान्। वह हमारे लिए सब तीर्थों से बढ़कर हैं। यदि यवनराज के दर्शन हो जाएँ तो हमारा जीवन धन्य हो जाए। सब तीर्थों और देव-स्थानों के दर्शन का पुण्य फल सहज में ही प्राप्त हो जाए। होने को तो राजा हमारे देश में भी है। पर वह तो सद्धर्म में विश्वास नहीं रखता मिथ्या देवी देवताओं की पूजा करता है। पर सुना है यवनराज तथागत के धर्म में आस्था रखते हैं। हमारे लिए तो वही राजा हैं। क्या हम उनके दर्शन प्राप्त हो सकेंगे ?

'तुम हो तो किसान, और चाहते हो यवनराज के दर्शन करना।

हमारे लिए तो वह भगवान् से भी बढ़कर हैं, सेनापति ! बस दूर से ही उनके दर्शन करा दीजिए। भगवान तथागत आपका कल्याण करेंगे !

यवन सैनिक को उन पर दया आ गई। कुछ सोचकर उसने कहा—अच्छा कल प्रातः यहीं पर आ जाना। कल वैशाख पूर्णिमा है न ? इस दिन यवनराज नगरवासियों को दर्शन देने के लिए शोभा-यात्रा किया करते हैं। तुम चुपचाप एक ओर खडे हो जाना दर्शन हो जाएँगे।

साँझ हो चुकी थी। आकाश में तारे निकल आए थे। पूर्णिमा का चाँद दिग्दिगन्त को आलोकित कर रहा था। अग्निमित्र और धारिणी एक वृक्ष के नीचे जाकर बैठ गए। धारिणी भोजन बनाने में लग गई और अग्निमित्र ने घास फूस एकत्र कर शय्या तैयार कर ली। पर रात भर उन्हें नींद नहीं आई। वे भावी योजना बनाने में लगे रहे। जिस उद्देश्य को सम्मुख रखकर उन्होंने उत्तरापथ की यात्रा प्रारम्भ की थी, उसे पूर्ण करने का अवसर अब उपस्थित हो गया था।

मोग्गलान की भिक्षु सेना

सम्राट देववर्मा की हत्या के समाचार से पाटलिपुत्र में सनसनी फैल गई। श्रेष्ठियों और व्यवहारियों ने पण्यशालाओं के कपाट बन्द कर दिए, और कर्मान्तों में काम करनेवाले कमकरों ने अपने उपकरण उठाकर रख दिए। नर-नारी बड़ी संख्या में राजमार्गों, पथचत्वरों और पण्यवीथियों में एकत्र होने लगे। सबके मुख पर एक ही प्रश्न था अब क्या होगा? यवनों के आक्रमण से मगध की रक्षा अब कौन करेगा? क्या पाटलिपुत्र में भी उसी प्रकार सर्वसंहार होगा, जैसा कि मथुरा और काम्पिल्य में हुआ है? क्या इस नगरी की ऊँची ऊँची अट्टालिकाएँ और भव्य प्रासाद भी भूमिसात् कर दिए जाएँगे। सब किंकर्तव्यविमूढ़ हो एक-दूसरे का मुँह देख रहे थे। आचार्य दण्डपाणि भी उद्विग्न थे। देववर्मा की रक्षा के उनके सब प्रयत्न निष्फल हो गए थे। माधवी की अभिचार क्रिया सफल हो गई थी, और मोग्गलान की औशनस नीति ने वीरवर्मा की सत्यशक्ति को मात दे दी थी। पाटलिपुत्र में न कोई सेना थी, और न कोई सम्राट। उसकी रक्षा अब कौन करेगा?

लोग इन्हीं समस्याओं पर विचार विमर्श कर रहे थे कि पाटलिपुत्र के दुर्ग की प्राचीर पर कुछ तूर्यकर प्रगट हुए। भेरीनाद के साथ उन्होंने घोषणा की 'कुमार शतधनुष ने सम्राट-पद ग्रहण कर लिया है। शीघ्र ही उनका राज्याभिषेक होगा। स्थविर मोग्गलान ज्योतिषियों और कार्तान्तिकों से शुभ मुहूर्त निकलवाने में तत्पर हैं। दण्डपाणि को बन्दीगृह में डाल दिया गया है, और पुष्यमित्र को सेनानी पद से च्युत कर दिया गया है। निपुणक मौर्य साम्राज्य के सेनानी नियुक्त हुए हैं और बुधगुप्त आन्तर्वंशिक। आप सब तुरन्त अपने-अपने कार्य में व्यापृत हो जाएँ। पण्यशालाएँ खोल दी जाएँ और कमकर कर्मान्तों में वापस चले जाएँ। राजमार्गों और पथचत्वरों पर भीड़ न रहे। जो कोई राजकीय आज्ञा का उल्लंघन करेगा उसे राजबन्दी बना लिया जाएगा। जाइए पण्यवीथियों और राजमार्गों को सजाना प्रारम्भ कर दीजिए। नए सम्राट के राज्याभिषेक की तैयारी में लग जाइए। सब उच्च स्वर में कहो—सम्राट शतधनुष की । माधवी

की जय हो सघ-स्थविर मोग्गलान की जय हो सेनानी निपुणक की जय हो।

पर पाटलिपुत्र के नागरिको ने नए शासनतन्त्र की जय-जयकार म तूयकरा का साथ नही दिया। भीड अवश्य छँट गई राजमाग और पथचत्वर खाली हो गए और लोग चुपचाप अपने अपने कार्यों म लग गए पर नए सम्राट के प्रति जनता ने कोई उत्साह प्रदर्शित नही किया। वह भलीभाँति जानती थी कि शतधनुष अशक्त और निर्वीय है। यवनो से रक्षा कर सकना उसकी शक्ति मे नही है। उन्हे भरोसा था, तो केवल दण्डपाणि और पुष्यमित्र का। पर पुष्यमित्र सुदूर साकेत मे थे और दण्डपाणि राजप्रासाद के बन्धनागार मे डाल दिए गए थ।

स्थविर मोग्गलान शतधनुष के राज्याभिषक की तयारी मे व्यस्त थ। कार्तान्तिको और ज्योतिषियो के परामश से उन्होने मागशीष मास की शुक्ला त्रयोदशी का दिन राज्याभिषक के लिए नियत किया। अभिषेक की विधि पूण हो जाने पर शतधनुष को सम्बोधन कर उन्होने कहा—

मुझे सन्तोष है कि बुद्ध, धम और सघ मे तुम्हारी अगाध श्रद्धा है। यवनो के आक्रमण के रूप म जो सकट आज हमारे सम्मुख उपस्थित है उसका एकमात्र कारण यह है कि देववर्मा न देवानाप्रिय प्रियदर्शी राजा अशोक द्वारा प्रदर्शित माग का परित्याग कर एक ऐसी नीति को अपना लिया था जो सद्धम के विपरीत थी। हिंसा से हिंसा का प्रादुर्भाव होता है और द्वेष स द्वेष का। ताली कभी एक हाथ से नही बजा करती। यदि हम अविकल रूप से अहिंसा व्रत का पालन करें तो कोई क्यो हमसे युद्ध करेगा। अहिंसक के सम्मुख तो सिंह और व्याघ्र तक भी अपने सिर झुका देते है। फिर मनुष्यों की तो बात ही क्या है? क्या ससार म कोई भी ऐसा मनुष्य है जो किसी न किसी धम व सम्प्रदाय का अनुसरण न करता हो? सब धर्मों और सम्प्रदायो के मूल तत्त्व एक हैं। सत्य अहिंसा, अस्तेय ब्रह्मचय, करुणा परोपकार सेवा आदि का सब समानरूप म प्रतिपादन करते है। फिर कोई क्या किसीसे शत्रुता रखे? यवन भी भगवान तथागत द्वारा प्रतिपादित मध्यमा प्रतिपदा का आदर करते हैं उस वे श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। वे भारत भूमि म पधारे हैं बडी उत्तम बात है। वे हमारे अतिथि हैं। हम

उनका आदर-सत्कार करेंगे। अतिथिसेवा हमारा कर्तव्य है। हमारा सर्वस्व अभ्यागतो के चरणो म अर्पित है। यदि हम हिंसा का परित्याग कर द्वेष-भाव को अपने हृदयो से दूर कर दें, तो कोई हमारे प्रति शत्रुता का भाव नही रखेगा। यवनो के हृदय परिवर्तन का यही उपाय है। हम उनसे युद्ध नही करेंगे। हम उनका प्रेमपूर्वक स्वागत करेंगे। वास्तविक विजय धर्म द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है। शस्त्रो द्वारा जो विजय की जाती है, वह कभी स्थायी नही होती। हम अहिंसा प्रेम और धर्म द्वारा यवनो के हृदयो को जीत लेंगे। तथागत की यही शिक्षा है। इसी मार्ग का अनुसरण कर राजा अशोक न अपन विशाल धर्म-साम्राज्य का निर्माण किया था। पर दण्डपाणि और पुष्यमित्र क प्रभाव म आकर देववर्मा ने इस नीति का परित्याग कर दिया था। तुम आज मगध के राजसिंहासन पर आरूढ हुए हो। भगवान् तथागत तुम्हे सद्धर्म म स्थिर रहन की शक्ति प्रदान करें ! तुम अक्रोध से क्रोध पर विजय पाओ प्रेम स शत्रुओ को वश म करो सबको अपना मित्र समझो किसी से द्वेष न करो ! हम आर्य भूमि की रक्षा के लिए न सेना की आवश्यकता है और न अस्त्र शस्त्रो की। जो धन इन पर नष्ट किया जाता रहा है उसे श्रमणो और भिक्षुओ की सेवा मे व्यय करो। इसी मे सबका कल्याण है। निपुणक मागध साम्राज्य के नये सेनानी नियुक्त हुए हैं पर वह किसी ऐसी सेना का सेनापतित्व नही करेंगे जो अस्त्र शस्त्रो से सुसज्जित हो। वह अहिंसक सेना के सेनानी होंगे। वह यवनराज दिमित्र के सम्मुख उपस्थित होकर उनसे कहेंगे—इस पवित्र आर्यभूमि म आपका स्वागत है यवनराज ! हमारे पास जो भी धन-सम्पत्ति है सब आपके चरणो म समर्पित है। हमारे सब कोषागारो और धान्यागारो के द्वार आपके लिए खुले हैं। पर एक अन्य भी बहुमूल्य निधि हमारे पास है जिसे हम विशेष रूप से आपकी सेवा म अर्पित करना चाहते हैं। यह निधि है हमारे धर्म की। आप इसे भी स्वीकार करें। आक्रान्ता को परास्त करने का यह एक ऐसा साधन है, जिसका प्रयोग आज तक किसी भी राजा ने नही किया। तुम इसी का आश्रय लो। तुम ससार के सम्मुख एक नया आदर्श उपस्थित करोगे। इतिहास मे तुम्हारा नाम अमर हो जाएगा।'

सम्राट शतधनुष ने स्थविर मोग्गलान के सम्मुख सिर झुका लिया।

की जय हो, सघ-स्थविर मोग्गलान की जय हो सेनानी निपुणक की जय हो।"

पर पाटलिपुत्र के नागरिकों ने नए शासनतन्त्र की जय-जयकार में तूयस्वरों का साथ नहीं दिया। भीड अवश्य छँट गई राजमार्ग और पथचत्वर खाली हो गए और लोग चुपचाप अपने अपने कार्यों में लग गए पर नए सम्राट के प्रति जनता ने कोई उत्साह प्रदर्शित नहीं किया। वह भलीभाँति जानती थी कि शतधनुष अशक्त और निर्वीर्य है। यवनों से रक्षा कर सकना उसकी शक्ति में नहीं है। उन्हें भरोसा था, तो केवल दण्डपाणि और पुष्यमित्र का। पर पुष्यमित्र सुदूर साकेत में थे, और दण्डपाणि राजप्रासाद के बन्दीगार में डाल दिए गए थे।

स्थविर मोग्गलान शतधनुष के राज्याभिषेक की तैयारी में व्यस्त थे। कार्तान्तिकों और ज्योतिषियों के परामर्श से उन्होंने मार्गशीर्ष मास की शुक्ला त्रयोदशी का दिन राज्याभिषेक के लिए नियत किया। अभिषेक की विधि पूर्ण हो जाने पर शतधनुष को सम्बोधन कर उन्होंने कहा—

'मुझे सन्ताप है कि बुद्ध धर्म और सघ में तुम्हारी अगाध श्रद्धा है। यवनों के आक्रमण के रूप में जो सकट आज हमारे सम्मुख उपस्थित है उसका एकमात्र कारण यह है कि देववर्मा ने देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा अशोक द्वारा प्रदर्शित मार्ग का परित्याग कर एक ऐसी नीति को अपना लिया था जो सद्धर्म के विपरीत थी। हिंसा से हिंसा का प्रादुर्भाव होता है और द्वेष से द्वेष का। ताली कभी एक हाथ से नहीं बजा करती। यदि हम अविकल रूप से अहिंसा व्रत का पालन करें तो कोई क्यों हमसे युद्ध करेगा। अहिंसक के सम्मुख तो सिंह और व्याघ्र तक भी अपने सिर झुका देते हैं। फिर मनुष्यों की तो बात ही क्या है? क्या ससार में कोई भी ऐसा मनुष्य है जो किसी न किसी धर्म व सम्प्रदाय का अनुसरण न करता हो? सब धर्मों और सम्प्रदायों के मूल तत्त्व एक हैं। सत्य अहिंसा अस्तेय ब्रह्मचर्य करुणा परोपकार सेवा आदि को सब समानरूप से प्रतिपादन करते है। फिर कोई क्या किसी से शत्रुता रखे? यवन भी भगवान् तथागत द्वारा प्रतिपादित मध्यमा प्रतिपदा का आदर करते हैं उसे वे श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। वे भारत भूमि में पधारे हैं बडी उत्तम बात है। वे हमारे अतिथि हैं। हम

उनका आदर-सत्कार करेंगे। अतिथिसेवा हमारा कर्तव्य है। हमारा सर्वस्व अभ्यागतो के चरणो मे अर्पित है। यदि हम हिंसा का परित्याग कर द्वेष-भाव को अपने हृदयो से दूर कर दें तो कोई हमारे प्रति शत्रुता का भाव नही रखेगा। यवनो के हृदय-परिवर्तन का यही उपाय है। हम उनसे युद्ध नही करेंगे। हम उनका प्रेमपूर्वक स्वागत करेंगे। वास्तविक विजय धर्म द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है। शस्त्रो द्वारा जो विजय की जाती है, वह कभी स्थायी नही होती। हम अहिंसा, प्रेम और धर्म द्वारा यवनो के हृदयो को जीत लेंगे। तथागत की यही शिक्षा है। इसी मार्ग का अनुसरण कर राजा अशोक ने अपने विशाल धर्म-साम्राज्य का निर्माण किया था। पर दण्डपाणि और पुष्यमित्र के प्रभाव मे आकर देववर्मा ने इस नीति का परित्याग कर दिया था। तुम आज मगध के राजसिंहासन पर आरूढ हुए हो। भगवान् तथागत तुम्हे सद्धर्म मे स्थिर रहने की शक्ति प्रदान करें! तुम अक्रोध से क्रोध पर विजय पाओ प्रेम से शत्रुओ को वश मे करो, सबको अपना मित्र समझो किसी से द्वेष न करो! हमे आर्य भूमि की रक्षा के लिए न सेना की आवश्यकता है, और न अस्त्र शस्त्रो की। जो धन इन पर नष्ट किया जाता रहा है उसे श्रमणो और भिक्षुओ की सेवा मे व्यय करो। इसी मे सबका कल्याण है। निपुणक मागध साम्राज्य के नये सेनानी नियुक्त हुए हैं, पर वह किसी ऐसी सेना का सेनापतित्व नही करेंगे जो अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित हो। वह अहिंसक सेना के सेनानी होंगे। वह यवनराज मिनान्द्र के सम्मुख उपस्थित होकर उनसे कहेंगे—इस पवित्र आर्यभूमि मे आपका स्वागत है यवनराज! हमारे पास जो भी धन-सम्पत्ति है सब आपके चरणों मे समर्पित है। हमारे सब कोषागारो और धान्यागारो के द्वार आपके लिए खुले हैं। पर एक अन्य भी बहुमूल्य निधि हमारे पास है, जिसे हम विशेष रूप से आपकी सेवा मे अर्पित करना चाहते हैं। यह निधि है हमारे धर्म की। आप इसे भी स्वीकार करें। आक्रान्ता को परास्त करने का यह एक ऐसा साधन है जिसका प्रयोग आज तक किसी भी राजा ने नही किया। तुम इसी का आश्रय लो। तुम संसार के सम्मुख एक नया आदर्श उपस्थित करोगे। इतिहास मे तुम्हारा नाम अमर हो जाएगा।'

सम्राट् शतधनुष ने स्थविर मोग्गलान के सम्मुख सिर झुका लिया।

साश्रुनयन होकर उसने कहा—

'आप मेरे गुरु हैं स्थविर ! मैं आपका अनुरक्त शिष्य और अनुचर हूँ। आप मुझे जो आदेश देंगे मैं उसका पालन करूँगा।

शतधनुष और मोग्गलान के जय-जयकार से अभिषेक मण्डप गूंज उठा। प्रसन्न होकर मोग्गलान ने कहा— बुद्ध धम और सघ म तुम्हारी आस्था सदा बनी रहे। तुम अभी यह घोषणा कर दो कि मगध की सेना को भग किया जाता है। जो सनिक पुष्यमित्र के साथ साकेत गए हुए हैं सब तुरत वापस लौट आएँ। भविष्य म किसी सनिक को राज्यकोष स वतन नही दिया जाएगा। जो कोई पुष्यमित्र का साथ देगा उसे राजद्रोही मानकर दण्ड दिया जाएगा। उसकी सब धन सम्पत्ति छीन ली जाएगी और उसके पारिवारिक जनो को बन्धनागार मे डाल दिया जाएगा।

'जो आपकी आज्ञा स्थविर ! शतधनुष न सिर झुकाकर कहा।

'हमे विश्व के सम्मुख एक महान सिद्धात को क्रियान्वित करके दिखाना है। हमे यह सिद्ध करना है कि अहिंसा ससार की सबसे बडी शक्ति है। प्रबल-से प्रबल सेना को उसके द्वारा सुगमता से परास्त किया जा सकता है। राजा अशोक ने धम-साम्राज्य अवश्य स्थापित किया, और दूसरो की विजय के लिए उसने सन्य शक्ति का आश्रय भी नहा लिया। पर उसके शासन-काल म किसी विदेशी सेना न भारत पर आक्रमण नही किया था। इसी कारण आक्रान्ता को परास्त करने के लिए अहिंसा की अमोघ शक्ति को प्रयुक्त करन का अवसर उस नही मिल सका। पर आज यवनराज दिमित्र की शक्तिशाली सेनाएँ भारत को आक्रात कर रही हैं। हम उन्हें अहिंसा द्वारा परास्त करना है। तुम मागध साम्राज्य के नये सेनानी नियुक्त हुए हो निपुणक ! क्या तुम यह काय कर सकोग ?

'आप मुझे माग प्रदर्शित कीजिए स्थविर !

तुम एक सहस्र सनिको को लेकर तुरत काशी-कोशल की ओर प्रस्थान कर दो। किसी के पास कोई अस्त्र शस्त्र न हो। सबके हाथो म भिक्षापात्र हो। सब न काषाय वस्त्र धारण किए हुए हो।

एक सनिक मुझे कहाँ स प्राप्त होंगे स्थविर ?

'कुक्कुटाराम म भिक्षुओ की क्या कमी है? उन्हें अपने साथ ले जाओ।

स्वय भी भिक्षु वेश धारण कर लो।'

'जो आज्ञा, स्थविर।'

अच्छा यह बताओ, दिमित्र की सेनाएँ इस समय कहाँ तक पहुँच चुकी हैं?'

'वे काम्पिल्य को ध्वस कर साकेत की ओर अग्रसर हो रही हैं। सत्रियो द्वारा मुझे सूचना मिली है कि वे शीघ्र ही सकिशा नगरी पहुँच रही हैं।

'तो फिर तुम भी तुरन्त सकिशा के लिए प्रस्थान कर दो। सब भिक्षु सनिक नियन्त्रण मे रहे। ऐसा प्रतीत हो कि कोई सेना सनिक अभियान के लिए जा रही है। यह मत भूलो कि तुम अब विशाल मागध साम्राज्य के सेनानी हो। तुम्हे अहिसा की शक्ति द्वारा यवनो को परास्त करना है। अपने सत्रियो और गूढपुरुषा को भिक्षु सेना के आगे भेज दो। वे यवन सेना की गतिविधि से तुम्हें सूचित करते रहे। यदि सकिशा मे यवनराज से भेंट हो जाए तो बहुत उत्तम है। अन्यथा ब्रह्मावर्त तीर्थ या अन्यत्र जहाँ कही सम्भव हो शीघ्र-से शीघ्र यवन सेना का सामना करो। पर यह न भूलना कि तुम्हे अहिसा द्वारा ही यवनो को परास्त करना है, अस्त्र शस्त्रो द्वारा नही।

पर यह कार्य मैं कैसे सम्पन्न कर सकूगा, स्थविर!

तुम यवन सेना के मार्ग को रोककर खडे हो जाना। ठीक उसी ढग से व्यूह रचना करना, जसे कि अस्त्र शस्त्रो से सुसज्जित सेनाएँ किया करती हैं। जब यवन सेना तुम्हारे व्यूह के समीप पहुँच जाए, तो अपने दस सनिको को उनके स्वागत के लिए आगे भेज देना। ये भिक्षु-सनिक यवनराज दिमित्र के सम्मुख जाकर दण्डवत हो उन्हे प्रणाम करें और हाथ जोडकर कहे— आर्य भूमि मे आपका स्वागत करने के लिए हम यहा उपस्थित हैं यवन-राज! सम्राट शतधनुष ने हमे इस प्रयोजन से आपकी सेवा मे भेजा है ताकि मार्ग मे आपको किसी प्रकार का कोई कष्ट न होने पाए। आप हमारे अतिथि हैं। भारत के लोग अतिथि सेवा को परम धर्म मानते हैं।'

पर यदि यवन हम पर अस्त्र शस्त्र चलाएँ, तो हम क्या करें स्थविर!

वे तुम पर शस्त्र नही चलाएँगे। यवन मनुष्य हैं, हिंस्र पशु नही हैं। भगवान् तथागत की शिक्षाओ से भी वे परिचित हैं। कापाय

भिक्षुओं पर व कभी शस्त्र प्रहार नहीं करेंगे। पर यदि भ्रमवश उन्होंने तुम पर आक्रमण कर भी दिया, तो कोई विशेप हानि नही होगी। तुम्हारे दस सनिक धराशायी हो जाएँगे यही तो होगा। उनका स्थान लेने के लिए अन्य दस सनिकों को भेज देना। यह क्रम तब तक जारी रखना, जब तक कि यवनों का भ्रम दूर न हो जाए। जब यवन सनिक जान लेंगे कि तुम्हारे भिक्षु-सनिक युद्ध के लिए नही आए हैं तब व स्वयमेव शस्त्र प्रहार रोक देंगे। युद्ध म हजारों-लाखों व्यक्तियों का संहार होता है। यदि तुम्हारे अहिंसात्मक युद्ध में दस-बीस-पचास भिक्षुओं की मृत्यु भी हो जाए, तो इससे क्या हानि होगी ? अन्ततोगत्वा तुम्हारी जीत ही होगी निपुणक ! तुम्हारी अहिंसा वत्ति को देखकर यवन स्वयमेव तुम्हारे सम्मुख घुटने टेक देंगे। वे गले लगकर तुमसे मिलेंगे और अपनी भूल के लिए तुमसे क्षमायाचना करेंगे। तुम्हारे लिए यह बात कितने गौरव की होगी निपुणक ! इतिहास म तुम्हारा नाम अमर हो जाएगा। अहिंसा की शक्ति द्वारा यवन आक्रान्ताओं को परास्त कर तुम सचमुच एक ऐसा काय कर दिखाओगे जिसके कारण तुम अमरत्व प्राप्त कर लोगे। तुम यह कर सकोगे न ?'

'शस्त्र द्वारा युद्ध करते हुए सैनिकों मे एक प्रकार का उन्माद उत्पन्न हो जाता है, स्थविर ! उसके कारण न उन्हे पीड़ा की अनुभूति होती है और न मृत्यु का भय। दूसरों को मारते हुए स्वय मर जाना अधिक कठिन नहीं है। पर निहत्थे होकर बलि के बकरे के समान आक्रान्ता के सम्मुख खड़े हो जाना तो बहुत कठिन है स्थविर !'

मैं तुम से इसी कठिन काय की अपेक्षा रखता हूँ, निपुणक ! अहिंसा की शक्ति को प्रदर्शित करने का यह अनुपम अवसर आज हमारे सम्मुख उपस्थित हुआ है। इसके लिए अत्यत उत्कृष्ट प्रकार की वीरता की आवश्यकता है। तुम भगवान तथागत के सच्चे अनुयायी हो। कुक्कुट विहार म चिरकाल तक निवास कर तुमने अहिंसा की जो शिक्षा प्राप्त की है उसे क्रियान्वित कर दिखाने के इस अवसर को हाथ से न जाने दो।'

आपकी आज्ञा शिरोधाय है, स्थविर ! पर जब तक पुष्यमित्र की सेना विद्यमान है यवन हम पर कदापि विश्वास नही करेंगे। समझेंगे, मगध के शासनतन्त्र की यह भी एक चाल है।'

यह तुम ठीक कहते हो। पुष्यमित्र की सेना का अन्त हम करना ही होगा। इसीलिए तो मैंने अभी यह आज्ञा दी थी कि मगध के जो सैनिक साकेत गए हुए हैं, तुरन्त वापस लौट आएँ।

पर पुष्यमित्र की सेना में केवल मगध के ही तो सैनिक नहीं हैं, स्थविर ! कुरु, पाञ्चाल, वाहीक, कोशल आदि जनपदों के जो सहस्रों सैनिक पुष्यमित्र की सेना में हैं, वे क्षात्रधर्म में विश्वास रखते हैं, और पुष्यमित्र के प्रति अनुरक्त भी हैं। नाम को तो ये जनपद अब भी मागध साम्राज्य के अन्तर्गत हैं, पर पाटलिपुत्र का शासन अब केवल सदानीरा नदी के पूर्व तक ही रह गया है। पश्चिम के ये जनपद हमारे राजशासन को नहीं मानते।'

तुम इसकी चिन्ता न करो। पुष्यमित्र की सेना का अन्त करना मेरा काम है। तुम्हें जो कार्य दिया गया है उसे सम्पन्न करो। भगवान् तथागत तुम्हें सफलता प्रदान करें।'

निपुणक ने स्थविर मोग्गलान के सम्मुख सिर झुका दिया। पर उसका मन अशान्त और उद्विग्न था। वह भलीभाँति जानता था कि कुक्कुटाराम के भिक्षुक न सैनिक अनुशासन में रह सकेंगे और न अपने प्राणों की आहुति देने के लिए ही उद्यत होंगे। पर मोग्गलान के सम्मुख वह असहाय था। उसमें स्वयं भी यह साहस नहीं था कि यवन सेना का प्रतिरोध करने के लिए रणक्षेत्र में जा सके चाहे यह प्रतिरोध अहिंसात्मक ही क्यों न हो। पर मोग्गलान के आदेश का पालन तो उसे करना ही था। वह तुरन्त कुक्कुटाराम गया और भिक्षुओं की सेना के संगठन में लग गया। पर उसका कार्य सुगम नहीं था। पाटलिपुत्र के इस प्राचीन संघाराम में सहस्रों भिक्षुओं का निवास था। धन धान्य की वहाँ कोई कमी नहीं थी। मगध के राजाओं, श्रेष्ठियों और सार्थवाहों द्वारा प्रदत्त कोटि-कोटि सुवर्ण निष्क वहाँ सञ्चित थे। भिक्षु लोग भव्य भवनों में निवास करते, षट्रस भोजन करते, काषाय वर्ण के कौशेय वस्त्र धारण करते और निश्चिन्त, सुखी जीवन व्यतीत करते। सूर्योदय होने पर सो कर उठना, उपोसथ करना, सुत्तों का पाठ करना, भिक्षापात्र हाथ में लेकर पाटलिपुत्र की वीथियों का पर्यटन करना और गपशप लगाना—यही उनकी दैनिक दिनचर्या थी। यवनों का सामना करने के लिए सुदूर देश की यात्रा पर जाने की बात का उन्हें जरा भी पसन्द

नहीं किया। उन्होंने कहा—हमारा कार्य बुद्ध, धर्म और संघ की सेवा करना और भाइयों का धर्म का प्रचार करना है। सेना में भर्ती होना हमारा कार्य नहीं है। पर महाप्रतापी स्थविर [illegible] के आदेश की उपेक्षा कर सकना भी उनके लिए सम्भव नहीं था। इस प्रकार भिक्षु निपुणक द्वारा चुन लिए गए और काषाय वस्त्रधारी सैनिकों की इस चमू ने पश्चिम दिशा की ओर प्रस्थान कर दिया।

पाटलिपुत्र ने बड़ी-बड़ी सेनाएँ देखी थीं। महापद्म नन्द की जिस सेना ने कलिङ्ग देश की स्वतन्त्रता को नष्ट किया था, वह भी कभी पाटलिपुत्र की वीथियों से होकर गई थी। चन्द्रगुप्त मौर्य की जिन सेनाओं ने यवनराज सैल्युकस को परास्त किया था, उन्होंने भी इसी नगरी से हिन्दुकुश की ओर प्रस्थान किया था। सेनानी पुष्यमित्र की सेना भी पाटलिपुत्र से ही साकेत के लिए चली थी। पाटलिपुत्र के निवासी इन सेनाओं की चर्चा करते हुए कभी अघाते नहीं थे। पर अब उन्हें एक नए ढंग की सेना को देखने का अवसर मिला। सब सैनिकों के सिर मुंडे हुए, न किसी के शरीर पर कवच और न सिर पर शिरस्त्राण। न हाथ में तलवार और न कन्धे पर धनुष-बाण। पर सब सैनिक एक पंक्ति में सिर झुकाए चल रहे थे मानो भिक्षा के लिए जा रहे हों। नर-नारी इन्हें देखते और छिप-छिपकर हँसते। पर मुख से जयघोष करते हुए कहते—सेनानी निपुणक की जय हो।

जहाँ भी यह सेना पहुँचती, सहस्रों नर-नारी उसे देखने के लिए एकत्र हो जाते। पुष्पमालाओं और बहुमूल्य उपहारों से उसका स्वागत किया जाता। भिक्षु इससे बहुत सन्तुष्ट थे। वे समझ रहे थे, यह भी विनोद का एक नया ढंग है। धीरे-धीरे यात्रा करती हुई यह भिक्षु-सेना ब्रह्मावर्त क्षेत्र पहुँच गई। यवन सेना अभी वहाँ नहीं आई थी। निपुणक ने ब्रह्मावर्त के समीप अपना स्कन्धावार डाल दिया। दस स्थूलकाय भिक्षुओं को चुनकर उसने उन्हें आदेश दिया—यवन सेना ज्यों ही ब्रह्मावर्त पहुँचे, तुम आगे बढ़कर उसका स्वागत करो।

यवनों के सत्री अपने कार्य में बहुत कुशल थे। दिमित्र को उन्होंने सूचना दी—मगध के नए सम्राट शतधनुष ने भी अपनी सेना संगठित कर ली है। वह ब्रह्मावर्त पहुँच गई है, और हमारी सेना के मार्ग को अवरुद्ध

करने के लिए व्यूह रचना कर रही है। उसे परास्त किए बिना साकेत की दिशा मे आगे बढ सकना सम्भव नही होगा।'

'पर हमने तो यह सुना था कि शतधनुप मोग्गलान का शिष्य है, और युद्ध को पाप समझता है। यह भी सुनने मे आया था कि वह पुष्यमित्र के विरुद्ध हमारी सहायता करेगा।' दिमित्र ने कहा।

'शतधनुप पुष्यमित्र का कट्टर शत्रु है। इसी कारण उसने उसे सेनानी-पद से च्युत कर दिया है। साकेत मे जो सेना एकत्र है, उसे भग करने का आदेश भी शतधनुप द्वारा दिया जा चुका है। पर यह भी सत्य है कि पाटलिपुत्र से एक सेना हमारे माग को अवरुद्ध करने के लिए ब्रह्मावत पहुँच चुकी है। इसका सेनापति निपुणक नाम का एक योद्धा है जो पहले आन्तर्वशिक के पद पर रह चुका है।'

क्या यह सेना बहुत शक्तिशाली है ?'

नही, यवनराज ! न यह सेना अस्त्र शस्त्रो से सुसज्जित है और न इसके सनिको की सख्या ही अधिक है। पर मगध के लोग जादू-टोना जानते हैं, और मन्त्र शक्ति तथा अभिचार क्रिया मे अत्यन्त निपुण हैं। यह सेना मन्त्र शक्ति द्वारा ही हमे परास्त करना चाहती है। इसके सनिको के पास ऐसे पात्र हैं, जिनम मन्त्र से अभिमन्त्रित जल भरा हुआ है। सुना है, कि इस जल की एक भी बूद जिस पर पड जाएगी वह तुरन्त भस्म हो जाएगा।

'ये सब निरर्थक बातें हैं। जादू-टोने और तन्त्र-मन्त्र म मुझे विश्वास नही है। डण्डे के सामने तो भूत भी भाग जाते हैं। जाओ तुरन्त मार्किएनस को मेरे सम्मुख उपस्थित करो।'

सेनापति मार्किएनस ने आकर यवनराज की सेवा मे प्रणाम निवेदन किया। उसे सम्बोधन कर दिमित्र ने कहा— पाटलिपुत्र से एक सेना आई है जो व्यूह रचना कर हमारा सामना करने को उद्यत है। तुरन्त जाओ और अकस्मात उस पर आक्रमण कर दो।

यवनराज से आदेश पाकर मार्किएनस ने तुरन्त ब्रह्मावत के लिए प्रस्थान कर दिया। निपुणक की भिक्षु-सेना के आगे जो दस स्थूलकाय भिक्षु खडे हुए थे, यवनो को देखकर वे आगे बढे और पुष्पमालाओं

उठाकर उन्होंने उच्च स्वर में कहा— आर्य भूमि में आपका स्वागत है। आइए और पुष्यमाल्य ग्रहण कीजिए। पर भिक्षुगण और उनके सैनिकों ने उनकी बात नहीं समझी। उन्होंने सोचा कि ये हमारे विनाश के लिए कोई मन्त्र पढ़ रहे हैं। उन्होंने तुरन्त बाण-वर्षा प्रारम्भ कर दी। भिक्षु इसके लिए तैयार नहीं थे। अनेक भिक्षु धराशायी हो गए। उन्हें गिरते देखकर भिक्षु-सेना में भगदड़ मच गई। जिसे जिधर भाग निकलने का मार्ग मिला भाग खड़ा हुआ। न वहाँ सेनानी निपुणक रहा और न उसका कोई सैनिक। क्षण भर में ही यवन सेना का मार्ग निष्कंटक हो गया।

'अरुणत् यवनः साकेतम्'

नए सम्राट शतधनुष ने पुष्यमित्र को सेनानी के पद से च्युत कर दिया था और साकेत की सेना के सैनिकों को यह आदेश दिया था कि वे तुरन्त अपने-अपने घर वापस लौट जाएं। आज्ञा पालन न करने पर उनके लिए कठोर दण्ड की भी व्यवस्था की गई थी। इसके कारण पुष्यमित्र के सम्मुख एक गम्भीर समस्या उपस्थित हो गई थी। उन्हें भय था कि सेना कहीं विद्रोह न कर दे या सैनिक कहीं पदच्युत सेनानी का साथ छोड़कर न चले जाएं। उन्होंने सब सैनिकों को एकत्र किया और उन्हें सम्बोधन करते हुए कहा—

सम्राट शतधनुष का राजशासन आपको ज्ञात हो चुका है। आप सम्राट की प्रजा हैं और उनकी आज्ञाओं का पालन करना आपका कर्तव्य है। राजकीय आदेश को न मानना एक भयंकर अपराध है। आप यह भी जानते हैं कि राजशासन का उल्लंघन करने के क्या परिणाम होंगे। आपके आत्मीय और प्रियजन बन्धनागारों में बन्द कर दिए जाएंगे वहाँ उन्हें भयंकर यातनाएं दी जाएंगी आपकी सब धन-सम्पत्ति छीन ली जाएगी, और आपको राजद्रोही घोषित कर दिया जाएगा। राजद्रोह न केवल अपराध है अपितु पाप भी है। आपके परिवार हैं सन्तान हैं। पारिवारिक जनों और सन्तान के प्रति आपको जो स्वाभाविक प्रेम है, उसे मैं भली

भाँति जानता हूँ। आप चाहें, तो मेरा साथ छोडकर अपने-अपने घरो को वापस जा सकते हैं। मैं आपको सनिक अनुशासन से मुक्त करता हूँ। आप पर मेरा अधिकार अब रह भी कहा गया है ? सेनानी पद से मुझे च्युत कर दिया गया है। मौय साम्राज्य के सेनानी अब निपुणक है। राजभक्त प्रजा के रूप म अब आपका यह क्तव्य है कि सेनानी निपुणक के आदेशो का पालन करें। जा सनिक मरा साथ छोडकर अपने घरो का वापस लौट जान" चाहत हा, दाइ ओर चले जाएँ।

एक भी सनिक अपने स्थान से नही हिला। जा जहाँ खडा था वही खडा रहा। यह देखकर पुष्यमित्र ने फिर कहना प्रारम्भ किया—

मैं भी मौय सम्राट की प्रजा हूँ। उनके राजशासन के सम्मुख सिर झुका देना मेरा भी क्तव्य है। पर मैंने राजद्रोह करने का निणय किया है। जानत हो किसलिए ? क्योकि सम्राट की तुलना मे भी एक उच्चतर सत्ता है और वह है ज मभूमि या स्वदेश। जब किसी राजकुमार को सम्राट के पद पर अभिषिक्त किया जाता है तो उम प्रजापालन और देशरक्षा की शपथ दिलाई जाती है। आर्यों की यही परम्परा है। पर यदि सम्राट इस पवित्र प्रतिज्ञा का पालन न करे, तो क्या उसे राजसिंहासन पर आरुढ रहने का कोई अधिकार रह जाता है ?'

सहस्रो कण्ठो ने एक स्वर से कहा— नहीं, कदापि नही।

'क्या सम्राट शतधनुष राज्याभिषक के समय की गई प्रतिज्ञा का पालन कर रहे हैं ? यवन सना हमारी मातृभूमि को आक्रान्त करती हुई वायुवेग स आग बढ रही है। मथुरा और काम्पिल्य जसी कितनी ही नगरियो को वह भूमिसात कर चुकी है। लाखा स्त्रिया और बच्चा का उसने सवसहार कर दिया है। ऐसे समय म सम्राट का क्या क्तव्य था ? उन्ह क्षात्रधम का अनुसरण कर शत्रु का सामना करने के लिए रणक्षेत्र म उतर आना चाहिए था। पर उन्होंने क्या किया ? जो सेना यवना के माग को अवरुद्ध करने के लिए यहाँ एकत्र है उन्होने उसे भी भग करने का आदेश दे दिया। पाटलिपुत्र का शासनतन्त्र अपने क्तव्य से विमुख हो गया है। वहाँ अब स्थविरो और भिक्षुओ का प्रभुत्व है। सम्राट देववर्मा देश की सैन्यशक्ति के पुन सगठन म तत्पर थे पर उनकी हत्या कर दी गई।

आचार्य दण्डपाणि को बन्धनागार में डाल दिया गया। किस अपराध में ? उनका अपराध यही तो था कि वे मागध साम्राज्य में शान्ति का सञ्चार करने के लिए प्रयत्नशील थे। मुझे स्थविरों और भिक्षुओं से कोई भी विरोध नहीं है। मैं बौद्ध धर्म का आदर करता हूँ। पर स्थविरों का कार्य क्या देश के शासन में हस्तक्षेप करना है ? सम्राट की रक्षा करना क्या तथागत के उपदेशों के अनुकूल है ? शतधनुष मोग्गलान के हाथों में कठपुतली के समान हैं। उन्हें अपने कर्तव्यों का जरा भी ध्यान नहीं है। ऐसे व्यक्ति को सम्राट स्वीकार कर सकना मेरे लिए सर्वथा असम्भव है। निस्सन्देह मैं राजद्रोही हूँ और स्पष्ट शब्दों में यह घोषणा करता हूँ कि शतधनुष को मैं मौर्य साम्राज्य का सम्राट स्वीकार नहीं करता।

हम सब भी आपके समान राजद्रोही हैं। सैनिकों ने एक स्वर से कहा।

'मैं एक बार फिर कहता हूँ जिसे अपनी धन-सम्पत्ति से जरा भी मोह हो और जो अपनी सन्तान और पारिवारिक जनों के दुःखों को न सह सके वह प्रसन्नतापूर्वक अपने घर को वापस चला जाए।'

हम सब आपके साथ रहेंगे। सैनिकों ने उच्च स्वर से घोषित किया।

मुझे आप सबसे यही आशा थी। आप सब वीर हैं सच्चे क्षत्रिय हैं। आपने जान-बूझकर स्वेच्छापूर्वक एक ऐसे मार्ग को चुना है जिसमें पग-पग पर संकट हैं। आप सब मातृभूमि के लिए अपने सर्वस्व को स्वाहा कर देने के लिए तत्पर हैं। आप पर मुझे गर्व है। मैंने राजद्रोह करने का जो निश्चय किया है उसके लिए मुझे जरा भी खेद नहीं है। क्या आचार्य चाणक्य और कुमार चन्द्रगुप्त ने मगधराज नन्द के विरुद्ध विद्रोह नहीं किया था ? शतधनुष जैसे कर्तव्यविमुख राजा के विरुद्ध विद्रोह करने को न मैं अपराध समझता हूँ और न पाप। मुझे प्रसन्नता है कि आप सब भी मेरा साथ देने को उद्यत हैं। पर एक बात का निर्णय करना अभी शेष है। अब तक मैं आपका सेनानी था क्योंकि मागध सम्राट ने मुझे इस पद पर नियुक्त किया था। पर अब मुझे इस पद से च्युत कर दिया गया है। अब आपको अपना सेनानी स्वयं चुनना होगा। विद्रोही सैनिकों की यही परम्परा है।

हम सब आपको सेनानी के रूप में वरण करते हैं।' सहस्रों कण्ठों ने

एक स्वर से कहा।

'जब आप सबकी यही इच्छा है तो मुझे यह पद स्वीकार है। अब आप अपने कर्तव्य के पालन के लिए तत्पर हो जाएँ। यवन सेना ब्रह्मावत क्षेत्र तक आ चुकी है। शीघ्र ही वह साकेत पहुँच जाएगी। यहाँ हम उसके मार्ग को अवरुद्ध कर देना है। यवन साकेत से आगे बढ़कर मगध को आक्रांत न करने पाएँ इसकी उत्तरदायिता आप सब पर ही है। साकेत में यवनों को परास्त कर हम उन्हें आर्यभूमि से बाहर खदेड़ देंगे।

सेनानी पुष्यमित्र के जयजयकार से साकेत नगरी गूंज उठी। सैनिकों में नए उत्साह का सञ्चार हो गया। पर पुष्यमित्र का मन अब भी आश्वस्त नहीं हुआ था। उन्हें रह रहकर यह चिन्ता सता रही थी, कि आचार्य दण्डपाणि को किस प्रकार बन्धन से मुक्त किया जाए। उनके अभाव में वह अपने को पंगु अनुभव कर रहे थे। उन्होंने अपने सचिवों के आचार्य गुणवर्मा को बुलाकर कहा—

क्या गुणवर्मा! क्या आचार्य को बन्धन मुक्त करने का कोई उपाय नहीं है?

आचार्य की चिन्ता आप क्यों करते हैं सेनानी! अपनी चिन्ता स्वयं करने में वह पूर्णरूप से समर्थ हैं। वायु और अग्नि को कौन पिंजरे में बन्द करके रख सका है? किसमें इतनी शक्ति है जो आचार्यपाद को बन्धनागार में रख सके? वह जब चाहेंगे बन्धन से मुक्त हो जाएँगे। आप उनकी शक्ति में विश्वास रखें।

'आचार्य की शक्ति में मुझे पूर्ण विश्वास है। पर मोग्गलान से मुझे अब कुछ भय लगने लगा है। वह न केवल धूर्त है, अपितु क्रूर भी है। विश्वनाथ शिव के मन्दिर में उसके सचिवों ने कितनी सुगमता से सम्राट देववर्मा की हत्या कर दी। हमारे सत्री और गूढ़पुरुष देखते ही रह गए। अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए मोग्गलान हीन-से-हीन साधनों का प्रयोग कर सकता है। न जाने आचार्य के विरुद्ध वह क्या कुछ कर बैठे। हम उससे सावधान रहना चाहिए।

हमारे गूढ़पुरुष राजप्रासाद में विद्यमान हैं। अन्तःपुर में भी हमारे सत्री नियुक्त हैं। शतधनुष का अनुज बृहद्रथ बड़ा महत्त्वाकांक्षी है। वह

आचार्य दण्डपाणि को कारागार में डाल दिया गया। किस अपराध में? उनका अपराध यही था कि वे मागध साम्राज्य में धर्म का सन्तुलन बनाए रखने के लिए प्रयत्नशील थे। मुझे स्थविरों और भिक्षुओं से कोई भी विरोध नहीं है। मैं बौद्ध धर्म का आदर करता हूँ। पर स्थविरों का क्या शासन के मामले में हस्तक्षेप करना है? सम्राट् की हत्या करना क्या तथागत के उपदेशों के अनुकूल है? शतधनुष सेनापति के हाथों में कठपुतली के समान है। उसे अपने कर्तव्यों का जरा भी ध्यान नहीं है। ऐसे व्यक्ति को सम्राट् स्वीकार कर सकना मेरे लिए सर्वथा असम्भव है। निस्सन्देह मैं राजद्रोही हूँ और सबके सामने मैं यह घोषणा करता हूँ कि शतधनुष को मैं मौर्य साम्राज्य का सम्राट् स्वीकार नहीं करता।

हम सब भी आपके समान राजद्रोही हैं। सैनिकों ने एक स्वर से कहा।

मैं एक बार फिर कहता हूँ जिसे अपनी धन-सम्पत्ति से जरा भी मोह हो और जो अपनी सन्तान और पारिवारिक जनों के दुःखों को न सह सके, वह प्रसन्नतापूर्वक अपने घर को वापस चला जाए।

हम सब आपके साथ रहेंगे। सैनिकों ने उच्च स्वर में घोषित किया।

मुझे आप सबसे यही आशा थी। आप सब वीर हैं सच्चे क्षत्रिय हैं। आपने जान-बूझकर स्वेच्छापूर्वक एक ऐसे मार्ग को चुना है जिसमें पग-पग पर संकट हैं। आप सब मातृभूमि के लिए अपने सर्वस्व को स्वाहा कर देने के लिए तत्पर हैं। आप पर मुझे गर्व है। मैंने राजद्रोह करने का जो निश्चय किया है उसके लिए मुझे जरा भी खेद नहीं है। क्या आचार्य चाणक्य और कुमार चन्द्रगुप्त ने मगधराज नन्द के विरुद्ध विद्रोह नहीं किया था? शतधनुष जैसे कर्तव्यविमुख राजा के विरुद्ध विद्रोह करने को न मैं अपराध समझता हूँ और न पाप। मुझे प्रसन्नता है कि आप सब भी मेरा साथ देने को उद्यत हैं। पर एक बात का निर्णय करना अभी शेष है। अब तक मैं आपका सेनानी था क्योंकि मागध सम्राट ने मुझे इस पद पर नियुक्त किया था। पर अब मुझे इस पद से च्युत कर दिया गया है। अब आपको अपना सेनानी स्वयं चुनना होगा। विद्रोही सैनिकों की यही परम्परा है।

हम सब आपको सेनानी के रूप में वरण करते हैं। सहस्रों कण्ठों ने

एक स्वर से कहा।

'जब आप सबकी यहा इच्छा है, तो मुझे यह पद स्वीकार है। अब आप अपने कतव्य के पालन के लिए तत्पर हो जाएँ। यवन सना ब्रह्मावत क्षत्र तक आ चुकी है। शीघ्र ही वह साकेत पहुँच जाएगी। यहाँ हम उसके माग को अवरुद्ध कर देना है। यवन साकेत से आगे बढकर मगध को आक्रात न करन पाए इसकी उत्तरदायिता आप सब पर ही है। साकेत म यवना का परास्त कर हम उ हे आयभूमि से बाहर खदेड देंगे।

सेनानी पुष्यमित्र के जयजयकार से साकेत नगरी गूज उठी। सैनिका म नए उत्साह का सञ्चार हो गया। पर पुष्यमित्र का मन अब भी आश्वस्त नही हुआ था। उ हे रह रहकर यह चि ता सता रही थी कि आचाय दण्डपाणि को किस प्रकार ब धन मे मुक्त किया जाए। उनके अभाव मे वह अपन को पगु अनुभव कर रहे थे। उ होने अपने सत्रिया के आचाय गुणवर्मा को बुलाकर कहा—

क्यो गुणवर्मा ! क्या आचाय को ब धन मुक्त करने का कोई उपाय नही है ?

'आचाय की चि ता आप क्या करते हैं सेनानी ! अपनी चि ता स्वय करने म वह पूणरूप से समथ हैं। वायु और अग्नि को कौन पिंजरे म ब द करके रख सका है ? किसमे इतनी शक्ति है जो आचायपाद को ब धनागार मे रख सके ? वह जब चाहेग ब धन से मुक्त हो जाएँगे। आप उनकी शक्ति मे विश्वास रखें।

'आचाय की शक्ति मे मुझे पूण विश्वास है। पर मोग्गलान स मुझे अब कुछ भय लगने लगा है। वह न केवल धूत है, अपितु क्रूर भी है। विश्व नाथ शिव क म दिर मे उसके सत्रिया ने कितनी सुगमता से सम्राट् देववर्मा की हत्या कर दी। हमारे सत्री और गूढपुरुष देखत ही रह गए। अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए मोग्गलान हीन-से-हीन साधनो का प्रयोग कर सकता है। न जाने आचाय के विरुद्ध वह क्या कुछ कर बठे। हम उससे सावधान रहना चाहिए।

हमारे गूढपुरुष राजप्रासाद म विद्यमान हैं। अ त पुर म भी हमारे सत्री नियुक्त हैं। शतधनुष का अनुज बृहद्रथ बडा महत्त्वाकाक्षी है।

राजसिंहासन के लिए लालायित है। आपको स्मरण होगा सेनानी! योगमाया सिद्ध शतमाय ने यह भविष्यवाणी की थी कि एक दिन बृहद्रथ भी राजसिंहासन पर आरूढ़ होगा। अन्तःपुर की महिलाएं इस सिद्ध को बहुत मानती हैं। बृहद्रथ कहा करता है यदि मुझे सम्राट बनना ही है तो देर क्यों की जाए? बूढ़े होकर राजपाट प्राप्त करने में क्या लाभ? अन्तःपुर मे उसके पक्षपातियों की कोई कमी नही है। वहाँ षडयन्त्र प्रारम्भ हो गए हैं। अपने सत्रियों से मुझे सब सूचनाएं मिलती रहती हैं। मुझे यह भी ज्ञात हुआ है कि बृहद्रथ आचार्य की सहायता प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील है। आप आचार्य की ओर से निश्चिन्त रहें।

तुम ठीक कहते हो गुणवर्मा! आचार्य अपनी रक्षा करने में स्वयं समर्थ हैं। मुझे अपनी सब शक्ति यवनों का प्रतिरोध करने में ही लगानी चाहिए। मेरे लिए आचार्य की चिन्ता करना सर्वथा निरर्थक है।

साकेत नगरी एक विशाल दुर्ग के समान थी जिसके चारों ओर की प्राचीर पचास हाथ ऊँची और दस हाथ चौड़ी थी। यह प्राचीर दो-सौ हाथ चौड़ी और बीस हाथ गहरी परिखा से परिवेष्टित थी। परिखा सदा जल से भरी रहती थी। साकेत में प्रवेश के लिए बारह महाद्वार थे, जिनके सामने परिखा के ऊपर बारह पुल बने हुए थे। कोई भी बाह्य व्यक्ति साकेत के पौर की अनुमति के बिना महाद्वार में प्रविष्ट नहीं हो सकता था। यवनों के आसन्न आक्रमण को दृष्टि में रखकर पुष्यमित्र ने आदेश दिया कि महाद्वारों के कपाट बन्द कर दिए जाएँ और परिखा पर बने हुए पुलों को उठा कर खड़ा कर दिया जाए। अब न कोई साकेत में प्रविष्ट हो सकता था और न कोई उसके बाहर ही जा सकता था। भोजन सामग्री और अन्य आवश्यक वस्तुओं को इतनी मात्रा में सचित कर लिया गया था कि वे साकेत के निवासियों के लिए तीन साल तक पर्याप्त थी। अब पुष्यमित्र इस प्रतीक्षा में थे कि यवन सेना साकेत आए और वहाँ उसका प्रतिरोध किया जाए।

ब्रह्मावर्त क्षेत्र में निपुणक की भिक्षुसेना को परास्त कर यवन सेना जब उत्तर पूर्व की ओर अग्रसर होने लगी तो दिमित्र ने अपने सब प्रमुख सेनानायकों को भावी अभियान के सम्बन्ध में परामर्श करने के लिए एकत्र किया। सेनानी पुष्यमित्र की गतिविधि की सब सूचनाएँ उसे प्राप्त होती

रहती थी। अपने गूढपुरुषो और सत्रियो के नायक अन्तिअल्किद को सम्बोधन कर दिमित्र ने प्रश्न किया—

क्यो अन्तिअल्किद, पुष्यमित्र की सेना मे कितने सैनिक हैं ?

'दो लाख के लगभग, यवनराज !'

'और पाटलिपुत्र मे ?'

'वहा तो अब एक भी सैनिक नही है। स्थविर मोग्गलान युद्ध के विरोधी हैं और हिंसा को पाप समझते है। उनके आदेश से शतधनुष ने सेना को भग कर दिया है।'

'तो क्या न सीधे पाटलिपुत्र पर आक्रमण कर दिया जाए ? ब्रह्मावर्त से पाटलिपुत्र जाने का क्या कोई ऐसा माग नही है जिसका अनुसरण करने पर पुष्यमित्र की सेना मे युद्ध करने की आवश्यकता ही न रह जाए !'

'गगा के साथ-साथ चलने पर सुगमता से पाटलिपुत्र पहुँचा जा सकता है।'

पर वह सम्भव नही होगा, यवनराज !' मार्किएनस ने कहा।

यह क्या मार्किएनस !'

'हमारे काशी पहुँचने से पूव ही पुष्यमित्र की सेना पीछे की ओर से हम पर आक्रमण कर देगी। पुष्यमित्र युद्धनीति मे प्रवीण है। सिन्धुतट के युद्ध मे मैं उसके कौशल को अपनी आँखो से देख चुका हूँ। वह कभी हमें पाटलिपुत्र तक निरापद नही जाने देगा। मैं यही उचित समझता हूँ, कि पहले साकेत की ओर प्रस्थान किया जाए और वहा पुष्यमित्र को परास्त करने के अनन्तर ही पूव की ओर अग्रसर हुआ जाए।

'पर सुना है कि साकेत का दुग अत्यन्त सुदृढ है। उसे अतिक्रान्त करने मे बहुत समय लग जाएगा।

आप ठीक कहते हैं यवनराज !' अन्तिअल्किद ने कहा साकेत में इतने अस्त्र शस्त्र और भोजन-सामग्री सञ्चित है जो तीन साल म भी समाप्त नही हो पाएगी। दुग मे बैठा हुआ एक धनुधर बाहर खडे हुए सौ धनुधरो का सुगमता से सामना कर सकता है। फिर पुष्यमित्र की सेना भी तो कम नही है।

क्या कोई ऐसा उपाय नहीं है जिससे साकेत में प्रवेश प्राप्त किया,

सके ?'

है क्या नही यवनराज ! मेरे सत्रियों ने सूचना दी है कि साकेत की परिखा और प्राचीर के नीचे एक पुरानी सुरंग है जो एक जीर्ण मंदिर के प्राङ्गण में निकलती है। यह मन्दिर साकेत नगरी के पूर्व में आधा योजन की दूरी पर स्थित है। अतिअल्किद ने कहा।

तो फिर क्या न इस सुरंग मार्ग से साकेत के दुर्ग में प्रविष्ट होने का प्रयत्न किया जाए ? यवन सेना साकेत का घेरा डालकर पड़ जाए, और आसपास के सब ग्रामों को उजाड़ दिया जाए। उस मंदिर पर भी अपना अधिकार स्थापित कर लिया जाए। निश्चित दिन हमारी सेना दुर्ग पर धावा बोल दे और जब पुष्यमित्र के सैनिक हमारे आक्रमण को निष्फल बनाने के लिए प्राचीर पर आ जाएँ तो कोई दस सहस्र यवन सैनिक सुरंग मार्ग से साकेत में प्रविष्ट हो जाए। वे पीछे की ओर से पुष्यमित्र की सेना पर आक्रमण प्रारम्भ कर दें। दो पाटों के बीच में पिस कर साकेत की सेना नष्ट हो जाएगी। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि पुष्यमित्र को परास्त किए बिना मगध की ओर प्रस्थान करना निरापद नहीं होगा। यवनराज दिमित्र ने कहा।

पर मार्क्एनस कुछ और ही सोच रहा था। उसने कहा, शतधनुष पुष्यमित्र का विरोधी है, और मगध का शासनतन्त्र उसे राजद्रोही भी घोषित कर चुका है। क्या यह सम्भव नहीं है कि पुष्यमित्र को परास्त करने के लिए हम मगध की सहायता प्राप्त कर सकें ? साकेत में उसने जो सैन्य शक्ति संगठित की हुई है उसे हम अकेले सुगमता से नष्ट नहीं कर सकेंगे। क्या शतधनुष को एक नई सेना संगठित करने के लिए प्रेरित नहीं किया जा सकता ?'

पर मोग्गलान तो अहिंसा में विश्वास रखता है। शस्त्रशक्ति के प्रयोग को वह धर्म विरुद्ध समझता है। इसी कारण उसने मगध की सेना को भंग करने का आदेश दिया था। अतिअल्किद ने कहा।

तुम्हारे सत्रियों ने क्या तुम्हें यही सूचित किया है अतिअल्किद ! मोग्गलान भिक्षुवेश में अवश्य रहता है पर धर्म उसके लिए आवरणमात्र है। वस्तुत, वह एक धूर्त और पापात्मा कूटनीतिज्ञ है। अपने लक्ष्य की

प्राप्ति के लिए वह हीन-से-हीन साधनों को अपना सकता है। हत्या, षडयन्त्र आदि सब उसकी दृष्टि म समुचित हैं यदि उनसे कार्यसिद्धि सम्भव हो। वह केवल धूर्त ही नहीं, अपितु दम्भी भी है। दम्भ के वशीभूत हो निर्बल मनुष्य कभी-कभी ऊँच आदर्शवाद की बातें करने लगते हैं। मोग्गलान जो अहिंसा की शक्ति से शत्रुओं को परास्त करने की नीति अपना रहा है वह दम्भ ही का परिणाम है। वह भलीभाँति जानता था कि भिक्षु सैनिकों की अहिंसक सेना एक क्षण भी रणक्षेत्र म नहीं टिक सकेगी। वह मूर्ख नहीं है। पर पुष्यमित्र की सैन्यशक्ति के सम्मुख वह अपने को असहाय अनुभव करता था। जनता उसके साथ नहीं थी। उसे अपने प्रति अनुरक्त करने के लिए ही उसने अहिंसा के उच्च आदर्श को क्रियान्वित करने का ढोंग रचा था। भारत के सर्वसाधारण गृहस्थ धर्म के प्रति अगाध श्रद्धा रखते हैं। मोग्गलान का विचार था कि अहिंसा के उदात्त आदर्श को सम्मुख रखकर वह जनता को पुष्यमित्र से विमुख कर सकेगा। मार्किएनस ने कहा।

तो क्या मगध मे एक ऐसी सेना सगठित की जा सकती है जो पुष्यमित्र को परास्त करने म हमारी सहायक हो सके ? यवनराज ने प्रश्न किया।

मेरा तो यही विचार है यवनराज ! साकेत के दुर्ग को अतिक्रान्त कर सकना हमारे लिए सुगम नहीं होगा। उसे जीतने म हमे कई वर्ष लग जाएँगे। क्या न इस बीच म अन्तिअल्किद मगध चले जाएँ। हमारे सत्री और गूढपुरुष वहा विद्यमान हैं ही। अन्तिअल्किद पाटलिपुत्र जाकर स्थविर मोग्गलान से भेंट करें। मुझे निश्चय है कि वह पुष्यमित्र के विरुद्ध मागध सेना को प्रयुक्त करने के विचार का अवश्य स्वागत करेगा। उसे भली भाँति ज्ञात है कि जब तक पुष्यमित्र की सैन्यशक्ति विद्यमान है पाटलिपुत्र मे शतधनुष की स्थिति सुरक्षित नहीं है।

तुम्हारी योजना युक्तिसगत है मार्किएनस ! अच्छा अन्तिअल्किद तुम शीघ्र पाटलिपुत्र चले जाओ और वहा जाकर मोग्गलान से भेंट करो। बुद्ध धर्म और सघ के प्रति यवनों की आदर भावना को प्रकट कर स्थविर से कहो कि यवनराज भारत को शस्त्रशक्ति से जीतकर अपने अधीन नहीं करना चाहते। हिन्दूकुश पार के सब यवन वाल्हीक, शक और

म यवना के जो अन्य क्षत्रप व सेनापति हैं वे सब भी स्वतन्त्र हो जाने के लिए प्रयत्नशील हैं। कोई भी दिमित्र का आधिपत्य स्वीकार करने के लिए उद्यत नही है और सर्वत्र विद्रोहों का सूत्रपात हो गया है। इस दशा म दिमित्र ने यही उचित समझा कि भारत का घेरा उठा लिया जाए। वह और कर भी क्या सकता था? वह समझ गया था कि भारत को जीत सकना असम्भव है। उसने अपनी सेना को वापस लौट चलने का आदेश दे दिया।

पर सुरक्षित रूप से भारत से लौट सकना भी दिमित्र के लिए सम्भव नही हुआ। मार्ग म उसे अनेक संकटों का सामना करना पड़ा। साकेत का घेरा उठते ही पुष्यमित्र की सेना दुर्ग के बाहर निकल आई। लौटती हुई यवन सेना पर उसने पीछे की ओर से आक्रमण प्रारम्भ कर दिए। दिमित्र की इच्छा थी कि शीघ्र से शीघ्र शाकल पहुँच जाए। वहाँ का मद्रक गण अब तक भी आर्यों और यवनों की मित्रता का समर्थक था। मद्र जनपद मे स्थित यवन सेनापति मिनेन्द्र दिमित्र का स्वजन व सखा था। यवनराज को आशा थी कि मद्रक गण और मिनेन्द्र की सहायता से वह अब भी अपनी डावाँडोल स्थिति को सभाल सकता है। पर वाहीक देश के अन्य जनपद उसके शत्रु थे। उन्हें वे दिन भूले न थे जबकि यवन सेनाओ ने न केवल उनकी स्वतन्त्रता का अपहरण ही किया था अपितु उनकी फलती फूलती नगरियो का ध्वस भी किया था। उनकी सेनाओं ने यवनो का डटकर सामना किया।

यवनो के 'आत्मचक्रोत्थित' घोर युद्ध

वैशाख पूर्णिमा के दिन जब क्षत्रप हिप्पोस्त्रात पुष्कलावती नगरी के निवासियो को दर्शन प्रदान करने के लिए शोभायात्रा को निकले तो धारिणी और अग्निमित्र मार्ग के एक ओर खड़े हुए उनके आने की उत्सुकता-पूर्वक प्रतीक्षा कर रहे थे। कुछ अजीब से वेश में एक स्त्री और एक पुरुष को देखकर हिप्पोस्त्रात ने अपने अंगरक्षक से प्रश्न किया—ये लोग कौन हैं? ये गान्धार देश के तो प्रतीत नही होते। यहाँ किस लिए आए हैं?

जिस यवन सनिक से पहले दिन धारिणी और अग्निमित्र की भेंट हुई थी वह आगे बढ़ा और प्रणाम निवेदन के अनन्तर उसने क्षत्रप से कहा—ये बहुत दूर से तीर्थयात्रा के लिए आए हैं क्षत्रप ! चत्यो, स्तूपो और देवस्थानो का दशन करते हुए परिभ्रमण कर रहे हैं। गान्धार स कपिश जाएँगे। पाटलिपुत्र के माग मे कोशल नाम का एक जनपद पडता है, उसके निवासी हैं।'

ये लोग करते क्या हैं ?'

निधन किसान हैं, क्षत्रप ! राजा को साक्षात भगवान् मानते हैं। आपके दशन के लिए उत्सुक थ। कहते थे, यवनराज के दशन कर तीर्थ यात्रा और देवपूजन के सब सुफल सहज मे ही प्राप्त हो जाएँगे।

यह सुनकर हिप्पोस्त्रात बहुत प्रसन्न हुआ। उसने आदेश दिया—'इन्हे हमारे सम्मुख उपस्थित करो।

सनिक का सकेत पाकर धारिणी और अग्निमित्र आगे बढे। दण्डवत् होकर उन्होंने हिप्पोस्त्रात को प्रणाम किया और धारिणी ने उच्च स्वर से कहा—यवनराज की जय हो ! यावच्चन्द्र दिवाकरो कपिश-गान्धार पर आपका शासन स्थिर रहे सम्पूण भारतभूमि आपके आधिपत्य म आ जाए ! यवनराज का दशन पाकर हमारा जीवन धन्य हो गया।'

समीप खडे हुए एक सनानायक से हिप्पोस्त्रात ने पूछा—यह स्त्री क्या कह रही है ? नायक भारत की भाषा जानता था। धारिणी के कथन को यवन भाषा म सुनकर हिप्पोस्त्रात गदगद हो गया। प्रसन्न होकर उसने कहा—कल प्रात इन्हें हमारे सम्मुख प्रस्तुत करो। हम इनसे बात करेंगे।

क्षत्रप के प्रासाद मे प्रवेश करते समय धारिणी और अग्निमित्र ने फिर हिप्पोस्त्रात का जयजयकार किया। जब क्षत्रप ने उन्हे आसन ग्रहण करने के लिए कहा तो धारिणी सिर झुकाकर बोली—हम तो आपके दास हैं यवनराज ! दास क्या कभी स्वामी के सम्मुख आसन ग्रहण कर सकते हैं ? हमारे लिए तो आप साक्षात भगवान हैं। भक्त पर भगवान की कृपा हो गई हमारे लिए यही बहुत है।'

हिप्पोस्त्रात को मध्यदेश के जनपदो के विषय मे जानकारी प्राप्त करने की बहुत इच्छा थी। वह देर तक भारतीयो के रहन-सहन खान-पान,

यात्रा के लिए भ्रमण कर रहे हैं। पर मेरे मन्त्रियों का कहना है कि देखने में वे किसान प्रतीत नहीं होते। किसी उच्च घराने के हैं। यदि आज्ञा दें, तो उन्हें बुलाकर सेवा में उपस्थित करूँ। सम्भवत, भारत की परिस्थिति के विषय में वे कोई नई जानकारी दे सकें।'

'इस समय वे कहाँ हैं?'

'यहाँ से तीन योजन दूर एक पुराना चैत्य है। वहीं ठहरे हुए हैं।

कहीं वे दिमित्र के गूढपुरुष न हों। मद्रक लोग दिमित्र के पक्षपाती हैं। स्थविर कश्यप का वहाँ बहुत प्रभाव है। कश्यप हमें अपना शत्रु समझता है। कहीं उसी ने तो इन्हें हमारी टोह लेने के लिए न भेजा हो।'

'उन्हें बुलाने में हानि ही क्या है यवनराज! यदि वे सचमुच मिनेन्द्र के सखी हुए तो यहाँ से जीवित वापस नहीं जाने पाएँगे।

एवुक्रतिद से अनुमति प्राप्त कर हिप्पाक्स ने अपने सैनिकों को अग्निमित्र और धारिणी को बुलाने के लिए भेज दिया। दो दिन पश्चात उन्हें एवुक्रतिद की सेवा में उपस्थित किया गया। हिप्पाक्स ने उनसे पूछा—सच-सच बताओ तुम कौन हो और यहाँ किसलिए आए हो?'

आपसे क्या छिपाना यवनराज मैं अग्निमित्र हूँ सेनानी पुष्यमित्र का पुत्र। यह मेरी पत्नी धारिणी है। आपसे भेंट करने के लिए ही किसान वेश में इतनी दूर चलकर आए हैं।

पुष्यमित्र का नाम सुनकर एवुक्रतिद एकदम अपने आसन से उठकर खड़ा हो गया। अपना दाँया हाथ आगे बढ़ाकर उसने कहा—'दिमित्र के घोर शत्रु सेनानी पुष्यमित्र के पुत्र हो तुम! आओ हाथ मिलाओ और इस आसन पर बैठो। आपका शरीर तो स्वस्थ है आपका चित्त तो प्रसन्न है?'

'सब आपकी कृपा है यवनराज! आपसे परिचय प्राप्त कर हम कृतार्थ हो गए हैं।'

अच्छा, अब यह बताओ भारत के क्या समाचार हैं? सुना है दिमित्र साकेत पहुँच गया है और शतधनुष पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आरूढ हो गया है। मगध की राजशक्ति अब स्थविर मोग्गलान के हाथों में है और वह दिमित्र के सम्मुख आत्मसमर्पण कर देने को उद्यत है।'

यह सब सत्य है यवनराज! पाटलिपुत्र चिरकाल से राजनीतिक षड्-

यन्त्रों का केन्द्र रहा है। एकतन्त्र शासनों के लिए यह अस्वाभाविक भी नहीं है। पर भारत की राजशक्ति किसी एक व्यक्ति पर निर्भर नहीं करती। वहाँ की जनता को अपनी मातृभूमि से प्रेम है और उसके युवक देश की रक्षा के लिए अपने तन-मन धन की बलि दे देने के लिए उद्यत हैं। यही कारण है कि मगध की सम्पूर्ण सेना सेनानी का साथ दे रही है। उन्हें राजशासन का उल्लंघन कर राजद्रोह करना स्वीकार है, पर दिमित्र के सम्मुख आत्म समर्पण कर देने का विचार तक भी वे मन में नहीं ला सकते।

पर दिमित्र की सेना साकेत पहुँच चुकी है। यदि इस नगरी पर दिमित्र का आधिपत्य हो गया तो काशी और मगध को जीत सकना उसके लिए जरा भी कठिन नहीं होगा।

'सेनानी युद्धनीति में अत्यन्त प्रवीण हैं यवनराज! उन्होंने जान-बूझ कर दिमित्र को साकेत तक आने दिया है। यदि वह चाहते, तो मथुरा काम्पिल्य और ब्रह्मावर्त क्षेत्र—कहीं भी उसके मार्ग को अवरुद्ध कर सकते थे। उनकी सेना में दो लाख से भी अधिक सैनिक हैं सब उत्कट योद्धा और अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित। उन्होंने दिमित्र को साकेत तक आने दिया क्योंकि इस नगरी का दुर्ग अत्यन्त विशाल और अभेद्य है। दिमित्र की सब शक्ति इस दुर्ग के अवरोध में नष्ट हो जाएगी।

क्या यह सही है कि शतधनुष ने पुष्यमित्र को सेनानी के पद से च्युत कर दिया है?'

'यह सही है यवनराज! पर इसका कोई परिणाम नहीं हुआ। सब सैनिक सेनानी के प्रति अनुरक्त हैं और उनके आदेशों का पालन कर रहे हैं। वास्तविक शक्ति सेनानी के ही हाथ में है। शतधनुष तो नाम का ही सम्राट है। मोग्गलान के षडयन्त्र के कारण पाटलिपुत्र के राजसिंहासन को उसने अवश्य हस्तगत कर लिया है, पर जनता और सेना पर उसका किञ्चित्मात्र भी प्रभाव नहीं है। आप विश्वास मानिए, यवनराज! दिमित्र कभी भारत से सकुशल वापस नहीं लौट सकेगा। न केवल उसकी सैन्य शक्ति ही नष्ट हो जाएगी, अपितु उसका अपना जीवन भी संकट में पड़ जाएगा। वाल्हीक देश को हस्तगत करने का यह सुवर्णावसर है यवन राज! इसे हाथ से न जाने दीजिए।

पर ज्यो ही दिमित्र को यह ज्ञात होगा कि मैंने वाल्हीक की ओर प्रस्थान कर दिया है, वह तुरन्त साकेत का घेरा उठाकर पश्चिम की ओर चल पडेगा। वह कदापि यह सहन नही करेगा, कि वाल्हीक पर किसी अन्य व्यक्ति का अधिकार हो जाए। पाटलिपुत्र के राजसिंहासन की तुलना मे उसे वाल्हीक का राज्य कही अधिक प्रिय है।'

'आपका कथन सत्य है यवनराज ! पर भारत से सकुशल लौट सकना दिमित्र के लिए कदापि सम्भव नही है। साकेत का घेरा उठते ही सेनानी की सेना दुर्ग के बाहर निकल आएगी और पीछे की ओर से दिमित्र की सेना पर आक्रमण कर देगी। साकेत भारत के मध्य देश मे है। दिमित्र को वाल्हीक वापस लौटने के लिए पाञ्चाल, स्रुघ्न, कुरु, मत्स्य, यौधेय आदि जनपदो से होकर जाना होगा। इन सबके निवासी अत्यन्त वीर हैं। स्वतन्त्रता उन्हे अपने प्राणो से भी प्रिय है। दिमित्र जहाँ भी जाएगा सर्वत्र उसे इन वीरो का सामना करना पडेगा। क्या आप समझते हैं कि वह इनसे बचकर सकुशल अपने देश को लौट सकेगा ? दिमित्र अब एक ऐसे मझधार मे फस गया है जिससे निकल सकना उसके लिए असम्भव है। उसके एक ओर गहरी खाई है और दूसरी ओर ऊची चट्टान। वाल्हीक के राजसिंहासन को प्राप्त करने का यही अवसर है, यवनराज !'

पर कपिश गान्धार और मद्रक आदि के यवन क्षत्रप और सेनापति दिमित्र के प्रति अनुरक्त हैं। ये सब अवश्य उसकी सहायता करेंगे।

हम कपिश-गान्धार से होकर आ रहे हैं यवनराज ! पुष्कलावती के क्षत्रप हिप्पोस्त्रात का आपके राजकुल से घनिष्ठ सम्बन्ध है। हमारी उनसे बातचीत हुई थी। वह दिमित्र के विरुद्ध विद्रोह के लिए उद्यत हैं। केवल आपके सकेत की देर है कपिश, गान्धार आदि सर्वत्र दिमित्र के विरुद्ध विद्रोह हो जाएगा।

'पर मद्रक का सेनापति मिनेन्द्र वह दिमित्र के कुल का है। वह तो उसी का साथ देगा। सुना है मद्रक लोग बडे विकट योद्धा हैं। कश्यप के प्रभाव के कारण वे भी मिनेन्द्र का साथ देंगे।'

यह सही है यवनराज ! मरुभूमि, मथुरा काम्पिल्य आदि में जो यवन सेनाएँ हैं उनके सेनापति भी दिमित्र का ही साथ देंगे। पर

सीमान्त के सब क्षत्रपो और सेनापतियो के सहयोग पर आप पूरा-पूरा भरोसा कर सकते है। फिर आपकी अपनी शक्ति भी क्या कम है ? आप साहस से काम लें। दिमित्र की सब शक्ति भारत की सेनाओ से युद्ध मे ही नष्ट हो जाएगी। वहाँ से बचकर बाल्हीक लौट सकना उसके लिए कदापि सम्भव नही होगा। आप तुरन्त हिन्दूकुश पार कर बाल्हीक के लिए प्रस्थान कर दीजिए।

अग्निमित्र की बात सुनकर एवुक्रतिद मे उत्साह का सचार हो गया। अपने आसन से उठकर उसने कहा—

हाथ मिलाओ युवक ! तुम तो मेरा साथ दोगे न ? आयु मे तुम मुझसे बहुत छोटे हो पर मैं तुमसे मित्र का सा व्यवहार करूँगा। आज से तुम मेरे सखा और बन्धु हो। अब मैं तुम्हे उस जीर्ण चैत्य मे नही रहने दूगा। तुम मेरे अतिथि बनकर रहोगे। किसान के वेश मे वक्षा के नीचे सोते-सोते इस वीरागना की कैसी दुर्दशा हो गई है। यह अब इस वेश मे नही रहेगी।

धारिणी और अग्निमित्र के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही एवुक्रतिद ने हिप्पाकस से कहा— सुनो हिप्पाकस, अब प्रतीक्षा का समय नही है। सिन्धु सौवीर का क्षत्रप अप्पोलोदोत हमारा मित्र है। कपोतो द्वारा तुरन्त उसे यह सन्देश भेज दो कि वह अपनी सेना को साथ लेकर उत्तर-पूर्व की ओर प्रस्थान कर दे। और हाँ मिनन्द्र की सेना मे हेलियोदोर नाम का जो नायक है, वह भी अवश्य हमारा साथ देगा। उसे भी सन्देश भेज दो। तुरन्त यह घोषणा कर दो कि हमने बाल्हीक सम्राट का पद प्राप्त कर लिया है। मिनेन्द्र को पदच्युत किया जाता है और हेलियोदोर को उसके स्थान पर मद्रक की यवन सेना का सेनापति नियुक्त कर दिया गया है। भारत मे जो भी यवन क्षत्रप और सेनापति है उन सबको हमारे सम्राट बन जाने की सूचना दे दो। साथ ही उन्हे यह भी स्पष्ट रूप से जता दो कि जो कोई दिमित्र का साथ देगा, उसे कठोर दण्ड दिया जाएगा। हाँ, यह बताओ कि बाल्हीक मे सैनिको की कुल सख्या कितनी है ?

दस हजार से अधिक नही है सम्राट ! सब बाल्हीक सेना इस समय दिमित्र के साथ भारत गई हुई है।

'फिर चिन्ता की क्या बात है ? बाल्हीक के निवासी हमारे राजकुल

के प्रति अनुरक्त हैं। सीरिया के सम्राट् के प्रति उनकी अगाध भक्ति है। किसका साहस है जो हमारा विरोध कर सके ?'

'आपकी आज्ञा शिरोधार्य है सम्राट ! पर हमारे साथ तो केवल दो सौ सैनिक ही हैं।'

'बीच मे बोलने के लिए मुझे क्षमा करें सम्राट ! सैनिकों की समस्या अधिक जटिल नही है। हिन्दूकुश की घाटियो मे जो पक्थ लोग निवास करते हैं, वे स्वभाव से ही विकट योद्धा हैं। आप भृत सैनिकों के रूप मे उनका साहाय्य प्राप्त कर सकते हैं।' अग्निमित्र ने कहा।

पर वे यवन तो नही हैं, कुमार ! हिप्पाकस ने कहा।

'हमारे देश के राजा केवल मौल सैनिकों पर ही निर्भर नही रहते। वे भृत और आटविक सैनिकों को मौल सैनिकों की तुलना मे अधिक महत्त्व देते हैं। विशाल मागध साम्राज्य की सैन्यशक्ति का आधार उसकी भृत सेना ही रही है। आचार्य चाणक्य और चन्द्रगुप्त मौर्य ने भृत सैनिकों द्वारा ही हिमालय से दक्षिण समुद्र तक विस्तीर्ण विशाल मौर्य साम्राज्य की स्थापना की थी। दिमित्र की सेना मे जो सहस्रों शक और कुशाण सैनिक हैं वे भृत नहीं तो क्या हैं। आप भी पक्थों की भृत सेना संगठित कीजिए।

'पर भृत सैनिकों को भृति देने के लिए धन कहाँ से आएगा ?

'बाल्हीक नगरी मे धन-सम्पत्ति की कोई कमी नही है उसके कोषागार धन धान्य सुवर्ण और मणि माणिक्य से परिपूर्ण हैं। पक्थ लोग यवनों के धन वैभव से भलीभाँति परिचित हैं। आप प्रयत्न तो कीजिए सहस्रों पक्थ आपकी सेना मे भरती हो जाएँगे। युद्ध मे उन्हें अपार आनन्द आता है।'

तुम तो बड़े चाणाक्ष राजनीतिज्ञ भी हो युवक ! इस किशोर आयु मे राजनीति का ऐसा परिपक्व ज्ञान तुमने कैसे प्राप्त कर सके हो ? सुन लिया हिप्पाकस कोई अन्य शंका तो शेष नही है ? अब तुरन्त कार्य प्रारम्भ कर दो। एवुक्रतिद ने कहा।

हिप्पाकस की सब शंकाएँ अब निवृत्त हो चुकी थी। उसने उच्च स्वर से कहा—'सम्राट एवुक्रतिद की जय हो।' सबने उसका एवुक्रतिद के जय-जयकार से गुह्यगृह गूँज उठा।

यवनो के आत्मघातीत्थित' घोर युद्ध का अब श्रीगणेश हो गया था। पक्थो की भृत सेना को सगठित करने म हिप्पाक्स ने अनुपम तत्परता प्रदर्शित की। एवुक्रतिद के साथी ज्यो-ज्यो उत्तर की ओर अग्रसर होते गए, हजारो पक्थ युवक उनकी सेना म सम्मिलित होते गए। शीघ्र ही यह सेना वाल्हीक नगरी पहुच गई। दिमित्र की जो छोटी-सी सेना वहाँ विद्यमान थी, वह एवुक्रतिद का माग अवरुद्ध कर सकने मे असमर्थ रही। वाल्हीक देश से दिमित्र के शासन का अन्त हो गया और वहाँ के राजसिंहासन पर एवुक्रतिद का आधिपत्य स्थापित हो गया। कपिश-गान्धार मे हिप्पोस्त्रात ने अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। ये जनपद भी दिमित्र की अधीनता से निकल गए। सिन्धु-सौवीर के क्षत्रप अप्पोलोदोर ने एवुक्रतिद का साथ दिया और उसके आदेश को स्वीकार कर वह दिमित्र का प्रतिरोध करने के लिए उत्तर-पूर्व की ओर चल पडा। तक्षशिला के क्षत्रप अन्तलिकित ने भी उसका अनुसरण किया और वह भी दिमित्र का सामना करने के लिए कटिबद्ध हो गया। मद्रक मे मिनेन्द्र की स्थिति भी डावाडोल हो गई। हेलियोदोर ने उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया। विविध यवनक्षत्रप और सेनापति परस्पर युद्ध करने और एक दूसरे का सहार करने म व्यापृत हो गए। यद्यपि वाल्हीक नगरी के राजसिंहासन पर एवुक्रतिद आरूढ था पर भारत के विविध यवन क्षत्रपों को अपना वशवर्ती बना सकना उसके लिए भी सम्भव नही हुआ। वे सब स्वतन्त्र राजाओ के समान अपने-अपने प्रदेश मे शासन करने लग गए। कितने ही छोटे-छोटे यवन राज्य भारत मे स्थापित हो गए जो सब एक दूसरे के प्रतिद्वन्द्वी व प्रतिस्पर्धी थे।

यवनो के इस पारस्परिक युद्ध के कारण दिमित्र की स्थिति अत्यन्त सकटपूर्ण हो गई। पश्चिम की ओर अग्रसर हो सकना उसके लिए निरापद नही रहा। पुष्यमित्र की सेना पीछे की ओर से उस पर आक्रमण कर रही थी और वह जहाँ कही जाता वहाँ की स्थानीय सेनाएँ सामने की ओर से उसके माग को अवरुद्ध करती। पहले उसका विचार मद्रक जनपद जाने का था जहाँ का यवन सेनापति मिनेन्द्र उसका पक्षपाती था। पर पश्चिम चक्र के यौधेय, आर्जुनायन, राजन्य आदि गणराज्यो के विरोध के कारण वह मद्रक की दिशा म अग्रसर नही हो सका। विवश होकर उसने मरुभूमि के

मा का अनुसरण किया । पर वहाँ भी उसे घोर सकट का सामना करना पडा । अप्योलोन्तेर की सेना उसका प्रतिरोध करने के लिए मरुभूमि पहुँच गई थी। घोर युद्ध के अनन्तर बडी कठिनता से वह सुदूर सौराष्ट्र पहुँच सकने मे समथ हुआ । जब वह सौराष्ट्र पहुँचा, तो उसकी सेना मे केवल एक सहस्र सनिक शेष रह गए थे। शेष सब माग म ही पञ्चत्व को प्राप्त हो गए थे।

धारिणी और अग्निमित्र जिस महान् उद्देश्य को सम्मुख रखकर 'तीथ यात्रा के लिए चले थे, वह अब पूण हो गया था। तीथयात्रा का फल उन्होंने प्राप्त कर लिया था।

आचार्य दण्डपाणि का दारुण अन्त

हेलियोदोर ने मिनेन्द्र के विरुद्ध जो विद्रोह किया था वह सफल नही हुआ। मिनेन्द्र की बुद्ध, धम और सघ म अगाध श्रद्धा थी, और वह बहुधा स्थविर कश्यप की सेवा म उपस्थित होकर धम का श्रवण किया करता था। मद्रक जनपद के गणमुख्य सामदेव कट्टर बौद्ध थे और वहाँ की गण-सभा पर कश्यप का अतुल प्रभाव था। इसीलिए हेलियोदोर को परास्त करने मे मद्रक लोगो ने मिनेन्द्र का साथ दिया, और उसे शाकल नगरी से भागकर तक्षशिला मे आश्रय लेना पडा। कपिश गान्धार के समान तक्षशिला और केकय जनपद भी उन दिनो यवनो के अधीन थे और अन्तलिकित नाम का यवन-क्षत्रप शासन के लिए वहाँ नियुक्त था। यवनो के 'आत्मचक्रोत्थित घोर युद्ध से लाभ उठाकर अन्तलिकित ने भी अपने को स्वतन्त्र राजा घोषित कर दिया था, और पूर्वी गान्धार तथा केकय जनपद म अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया था। अन्तलिकित ने हेलियोदोर का स्वागत किया, और अपनी सेना मे उसे उच्च पद प्रदान किया।

भारत के मध्यदेश से जो समाचार आ रहे थे स्थविर कश्यप उनसे बहुत चिन्तित थे। वह भलीभाँति जानते थे कि दिमित्र को [illegible] निकालकर पुष्यमित्र की सेना शीघ्र ही पाटलिपुत्र की ओर

देगी और मगध मे शतधनुष की स्थिति सुरक्षित नही रह पाएगी। उन्होंने निश्चय किया कि पाटलिपुत्र जाकर शीघ्र मोग्गलान से भेंट करें। पुष्यमित्र के रूप मे बौद्ध धर्म के लिए जो घोर सकट उपस्थित हो रहा था, मोग्गलान से मिलकर वह उसका निवारण करने के लिए उत्सुक थे। शाकल म कश्यप का प्रधान शिष्य नागसेन नाम का आचाय था जो अपने पाण्डित्य और धमज्ञान म सम्पूण पश्चिम चक्र म अद्वितीय माना जाता था। कश्यप ने उसे बुलाकर कहा—

मैं आज ही पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान कर रहा हूँ। मुझे वहा अत्यन्त आवश्यक काय है। मेरे पीछे मद्रक जनपद मे सद्धम की रक्षा और उत्कप की सब उत्तरदायिता तुम पर ही रहेगी।

विहार के सब धार्मिक कृत्य यथाविधि सम्पन्न होते रहेंगे, स्थविर! आप निश्चिन्त रह।

'तुम मेरी बात को समझने का प्रयत्न करो। मेरा अभिप्राय पूजा-पाठ और धार्मिक क्रिया क अनुष्ठान से नही है। सद्धम पर आज जो घोर सकट उपस्थित है उसके निवारण के लिए ही मैं पाटलिपुत्र जा रहा हूँ। उसम तुम्हारे सहयोग की भी आवश्यकता है नागसेन!

मुझे क्या कुछ करना होगा स्थविर!

'पहले मेरी बात को ध्यान से सुन लो। यवनराज दिमित्र बौद्ध धर्म को आदर की दष्टि से देखते थे। मुझे उनसे बहुत आशा थी। यदि भारत पर उनका आधिपत्य स्थापित हो जाता तो सद्धम के उत्कप में बहुत सहायता मिलती। राजा अशोक के दिन फिर एक बार वापस लौट आते।'

सम्राट शतधनुष भी तो सद्धम के अनुयायी हैं स्थविर!'

'पर वह अयोग्य और अशक्त है। रात दिन अन्त पुर म पडा हुआ रूपाजीवाओ के साथ कतिक्रीडा म मस्त रहता है। उससे हम अपने काय में कोई भी सहायता प्राप्त नही हो सकती। पुष्यमित्र का सामना कर सकना उसकी शक्ति म नही है। मिनान्द्र तुम्हारा शिष्य है। बुद्ध, धम और सघ के प्रति वह श्रद्धा रखता है। तुमसे धमप्रवचन का श्रवण करता रहता है। वह वीर और साहसी भी है। हलियोदार का परास्त कर उसने अपने शौय और साहस का प्रमाण प्रस्तुत कर दिया है। पुष्यमित्र का दमन करने के

लिए हमें मिनेन्द्र का ही सहारा लेना होगा। यदि भारत के सब स्थविर, भिक्षु श्रमण और श्रावक मिनेन्द्र के झण्डे के नीचे एकत्र हो जाएँ तो पुष्यमित्र को परास्त कर सकना जरा भी कठिन नहीं होगा। पर यह तभी सम्भव होगा, जब मिनेन्द्र बौद्ध धर्म में दीक्षित हो जाए। तुम्हें इसी के लिए प्रयत्न करना है।'

'इसके लिए मुझे क्या कुछ करना चाहिए स्थविर!'

मिनेन्द्र को बौद्ध धर्म में दीक्षित करने का प्रयत्न करो, और साथ ही उसे यह भी समझाओ कि पुष्यमित्र सद्धर्म का कट्टर शत्रु है। उसकी शक्ति का नष्ट किए बिना धर्म की रक्षा सम्भव नहीं है। यवन लोग स्वभाव से ही क्रोधी होते हैं। यदि एक बार मिनेन्द्र को पुष्यमित्र पर क्रोध आ गया, तो वह उसका दमन करने में अपनी पूरी शक्ति लगा देगा। हमारी आशा अब मिनेन्द्र पर ही केन्द्रित है नागसेन।

मैं पूरा-पूरा प्रयत्न करूँगा, स्थविर! मिनेन्द्र की धर्म में रुचि है। मैं प्रतिदिन स्वयं उसके पास जाऊँगा और उसे धर्मसूत्रों का उपदेश दूँगा।'

अपने धर्मसूत्रों को कुछ दिन के लिए उठाकर रख दो नागसेन! राजनीति की ओर भी कुछ ध्यान दो। तुम्हें मिनेन्द्र में वह धार्मिक आवेश उत्पन्न करना है जिससे आविष्ट होकर वह सम्पूर्ण भारत को अपने शासन में ले आए और सद्धर्म के विरोधियों का सर्वनाश करने के लिए खड्गहस्त हो जाए।

'आपकी आज्ञा शिरोधार्य है स्थविर!'

नागसेन को शाकल नगरी में अपने स्थान पर नियुक्त कर स्थविर कश्यप ने पूर्व की ओर प्रस्थान कर दिया। शाकल से वह सीधा श्रावस्ती गया और वहाँ जाकर जेतवन विहार के मध स्थविर मज्झिम से मिला। मज्झिम को भी उसने अपने साथ ले लिया। दिमित्र को मध्यदेश से बाहर खदेड़कर सेनानी पुष्यमित्र अभी विश्राम ही कर रहे थे कि ये दोनों स्थविर पाटलिपुत्र पहुँच गए। वहाँ उन्होंने तुरन्त मोग्गलान से भेंट की। कुक्कुट विहार के गुप्त गर्भगृह में इन तीनों संघ-स्थविरों में मन्त्रणा प्रारम्भ हुई। कुशल समाचार पूछने के अनन्तर कश्यप ने मोग्गलान से कहा—

मैं एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समस्या वरन के लिए शाकल

नगरी स इतनी दूर पाटलिपुत्र आया हूँ। सद्धम पर जा घोर सकट आज उपस्थित है, उस आप भलीभाँति जानत हैं। ग्निमित्र पराम्त हार र मध्यदेश से चले गए हैं और यवना मे गृह-युद्ध प्रारम्भ हो चुका है। पुष्यमित्र की शक्ति अब बहुत बढ गई है। वह अभी पाटलिपुत्र नही पहुँचा है पर अपन सत्रियो द्वारा हमारी यात्रा की सूचना उस अवश्य मिल गई होगी। अब वह देर नही करेगा और बहुत शीघ्र पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान कर देगा। स यशक्ति का प्रयाग कर वह पाटलिपुत्र पर सुगमता स अधिकार स्थापित कर लेगा और दण्डपाणि को ब धन स मुक्त कर दगा। सद्धम के ये दोना कट्टर शत्रु आपस म न मिलने पाएँ, हम शीघ्र इसका उपाय करना चाहिए।

'मुख्य समस्या तो पुष्यमित्र की सेना का सामना करने की है स्थविर। मोग्गलान ने कहा।

नीतिबल स यबल से भी अधिक शक्तिशाली होता है स्थविर! दण्डपाणि कूटनीति मे पारगत है। पुष्यमित्र की सेना और दण्डपाणि की कूटनीति यदि एक साथ मिल जाएँ तो सद्धम के शत्रुआ की शक्ति अजेय हो जाएगी। दण्डपाणि इस समय हमारे हाथो मे है। हम पहले उसका अ त कर देना चाहिए। पुष्यमित्र से हम बाद म निबट लेंगे।

पर यह काय कसे सम्पन्न किया जाएगा ? मज्झिम ने प्रश्न किया।

'क्या स्थविर मोग्गलान के सत्री और गूढपुरुष आज सवथा अशक्त हो गए हैं ? कौशलस नीति पर उन्हें अगाध विश्वास था। भिक्षुओ की नि शस्त्र सेना को सगठित कर अहिसा धम का उन्होने व्यथ उपहास कराया। यदि भिक्षुसेना के स्थान पर वह कूटनीति का आश्रय लेते, तो उत्तम होता।

'पर अब हमे क्या करना चाहिए स्थविर ? मोग्गलान ने प्रश्न किया।

क्या आपका कोई गूढपुरुष दण्डपाणि की हत्या नही कर सकता ? वह राजप्रासाद के ब धनागार मे बद है। न वह कही बाहर जा सकता है और न कोई उससे मिल ही सकता है। राजप्रासाद मे सवत्र बुधगुप्त क सत्री विद्यमान हैं। पुष्यमित्र की सेना अभी पाटलिपुत्र से बहुत दूर है। फिर डर किस बात का है ? क्यो न किसी गूढपुरुष को भेजकर दण्डपाणि की हत्या करा दी जाए ?

'मगध की जनता श्रमणों और ब्राह्मणों का बहुत आदर करती है, स्थविर! दण्डपाणि की हत्या के समाचार से पाटलिपुत्र के लोग भड़क जाएँगे और वे हमारे विरुद्ध उठ खड़े होंगे।'

आपकी औशनस नीति फिर कब काम आएगी, स्थविर! क्या कोई ऐसा उपाय नहीं है जिससे साँप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे? हत्या के भी अनेक साधन हैं। किसी ऐसे उपाय को अपनाओ जिससे जनता यह समझे कि दण्डपाणि ने स्वयं अपने जीवन का अन्त कर दिया है।

'आप ही कोई ऐसा उपाय सुझाइए, स्थविर!'

'दण्डपाणि को भोजन और जल देना बन्द कर दिया जाए। यह प्रसिद्ध कर दिया जाए कि उसने अनशन-व्रत किया हुआ है। आन्तवंशिक प्रतिदिन भोजन भेजते हैं पर वह उसे वापस लौटा देता है।

पर क्या जनता इस पर विश्वास करेगी?'

क्यों नहीं, स्थविर! किसी पाप के प्रायश्चित्त के रूप में अन्न-जल ग्रहण न करने की परम्परा हमारे देश में बहुत पुरानी है। चान्द्रायण आदि कितने ही व्रतों का पारायण ब्राह्मण लोग किया ही करते हैं।'

पर आप यह क्यों भूल जाते हैं स्थविर! कि राजप्रासाद में ऐसे स्त्री-पुरुषों की कमी नहीं है जो पुष्यमित्र और दण्डपाणि के पक्षपाती हैं। उनके सखी भी राजप्रासाद में सर्वत्र नियुक्त हैं। यदि वे गुप्त रूप से दण्डपाणि को अन्न जल भेजते रहें तो क्या होगा?

स्थविर कश्यप कुछ देर चुप रहकर सोच विचार में मग्न रहे। फिर उत्तेजित होकर उन्होंने कहा— दण्डपाणि को हम अपने मार्ग से हटाना ही होगा। सद्धर्म की रक्षा के लिए यह अनिवार्य है। जिस कक्ष में दण्डपाणि बन्द है, उसके द्वार और गवाक्ष को प्रस्तर-खण्डों द्वारा बन्द करवा दिया जाए। वायु तक का प्रवेश वहाँ सम्भव न रहे। इससे उसे देर तक यातना भी नहीं सहनी पड़ेगी। उसका पापी शरीर शीघ्र ही पञ्चत्व को प्राप्त हो जाएगा। यह उपाय कैसा रहेगा, स्थविर!'

पर क्या यह बात राजप्रासाद और अन्तःपुर के नर-नारियों से छिपी रह सकेगी? यदि कहीं पाटलिपुत्र के नागरिकों को इसका पता लग गया तो विद्रोह हुए बिना नहीं रहेगा। मगध में ऐसे लोगों की कमी नहीं है, जो

दण्डपाणि को अत्यन्त श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं।

यह समय साहस से काम लेने का है संघ-स्थविर ! जिस औपनिषद् नीति के न केवल आप प्रवक्ता अपितु प्रयोक्ता भी हैं उसमें मन्त्रगुप्ति को बहुत महत्त्व दिया जाता है। क्या हम अपनी इस मन्त्रणा को गुप्त नहीं रख सकते ? यहाँ हम केवल तीन व्यक्ति उपस्थित हैं। हम तीन के अतिरिक्त कोई भी इस योजना को न जानने पाए।

बन्धनागार के कक्ष के द्वार को कौन बन्द करेगा स्थविर ! उसके लिए तो हमें अन्य व्यक्तियों का सहयोग लेना ही पड़ेगा।

'यह कार्य मैं स्वयं करूँगा संघ-स्थविर ! युवावस्था में शिल्पी का कार्य कर चुका हूँ। स्थपति के शिल्प को मैं भलीभाँति जानता हूँ। धर्म सूत्रों का पाठ करते हुए भी अपने पुराने शिल्प को अभी भूला नहीं हूँ। मैं शिल्पी का भेस बनाकर राजप्रासाद में जाऊँगा और स्वयं अपने हाथों से दण्डपाणि के कक्ष के द्वार को बन्द कर दूँगा। यह कार्य तो हमें करना ही होगा स्थविर ! दण्डपाणि सद्धर्म का सबसे भयंकर शत्रु है। उसे हमें अपने मार्ग से हटाना ही होगा।'

पर आपको किसी ने देख लिया तो ? बन्धनागार के आस-पास लोगों का आना-जाना लगा ही रहता है।

आन्तर्वशिक के पद पर आजकल कौन नियुक्त है ? हाँ याद आया, बुधगुप्त। आपका उस पर विश्वास है ?

हाँ बुधगुप्त पूर्णतया विश्वस्त व्यक्ति है। सद्धर्म में उनकी अगाध श्रद्धा है।

तो उसे भी हमें अपनी योजना में सम्मिलित करना होगा। उसे बुलाकर सब बातें समझा दीजिए। वह प्रसिद्ध कर दे कि दण्डपाणि किसी अभिचार क्रिया के अनुष्ठान में तत्पर हैं। देश और धर्म की रक्षा के लिए वह कोई गोपनीय प्रयोग कर रहे हैं। उनका आदेश है कि कोई भी व्यक्ति बन्धनागार के उस भाग में न जाने पाए जहाँ उनका कक्ष स्थित है। कोई परिचारक भी वहाँ न जा सके। आचार्य के धार्मिक विश्वासों और अनुष्ठानों के प्रति आदर भाव रखना हमारा कर्तव्य है। इन दिनों वह केवल कन्दमूल फल खाकर रहेंगे और यह सब भोजन सामग्री उनके कक्ष में पहुँचा दी गई

है। राजप्रासाद के नर-नारी स्वभाव से धर्मभीरु होते हैं। अभिचार क्रिया का नाम सुनकर वे आतङ्कित हो जाएँगे और कोई भी दण्डपाणि के कक्ष के समीप जाने का साहस नहीं करेगा। साथ ही अपने कुछ विश्वस्त गुप्तपुरुषों को बन्धनागार के चारों ओर नियुक्त कर दो। व किसी को भी वहाँ न जाने दें। अन्न-जल और वायु के अभाव में दण्डपाणि कब तक जीवित रह सकेगा? दो चार दिन में उसकी मृत्यु हो जाएगी। तब हम प्रसिद्ध कर देंगे कि अभिचार क्रिया करते हुए आचार्य का स्वर्गवास हो गया है। ये क्रियाएँ बहुत भयंकर होती हैं उनका अनुष्ठान करते हुए मृत्यु की आशङ्का सदा बनी रहती है। कोई हम पर सन्देह नहीं करेगा, और हमारी योजना सफल हो जाएगी।

'आपकी योजना तो अत्यन्त उत्तम है स्थविर! पर क्या यह समुचित भी है?' मोग्गलान ने प्रश्न किया।

उचित-अनुचित का विचार आप कब से करने लगे हैं संघ-स्थविर! आप आयु में मुझसे बड़े हैं और संघ में आपका स्थान भी मुझसे ऊँचा है। धर्म के ज्ञान में भी आप मुझसे बढ़ कर हैं। इस दशा में मुझे यह उचित प्रतीत नहीं होता कि धर्म-अधर्म उचित-अनुचित और कर्तव्य-अकर्तव्य का आपके सम्मुख विवेचन करूँ। पर कुक्कुट विहार के इसी गर्भ गृह में बैठकर जिन षड्यन्त्रों का आप सूत्रपात करते रहे हैं क्या मुझे उनका स्मरण कराने की कोई आवश्यकता है? आज आपमें यह क्लैब्य भावना क्यों उत्पन्न हो रही है? आप ही तो हम सब कहा करते थे कि उच्च उद्देश्य की पूर्ति के लिए हीन-से-हीन साधनों का प्रयोग भी सर्वथा समुचित होता है। यही तो औशनस नीति का सार है। सद्धर्म की रक्षा के लिए हम दण्डपाणि की हत्या करनी ही होगी चाहे उसके लिए किसी भी उपाय का क्यों न प्रयुक्त करना पड़े। इसी विचार को लेकर मैं शाकल से इतनी दूर आया हूँ। आपकी क्या सम्मति है स्थविर मज्झिम!'

'मैं आपके विचार से पूर्णतया सहमत हूँ, स्थविर! जब से दण्डपाणि और पुष्यमित्र ने पाटलिपुत्र के रंगमंच पर पदार्पण किया है सद्धर्म का निरन्तर ह्रास हो रहा है। आज कहाँ हैं अनाथपिण्डक जैसे श्रेष्ठी जिन्होंने कोटि-कोटि सुवर्ण मुद्राएँ जेतवन विहार के लिए प्रदान कर दी थीं?

कहाँ हैं प्रियदर्शी अशोक जैसे राजा जिन्होंने धर्म के लिए अपना सर्वस्व स्वाहा कर दिया था ? आज तो जनवन विहार का सम्भार तक करा सकना हमारे लिए कठिन हो रहा है। दण्डपाणि और पुष्यमित्र का विनाश हम करना ही होगा, स्थविर ! चातुरन्त संघ का भविष्य इनके विनाश पर ही निर्भर है। दण्डपाणि की बुद्धि और पुष्यमित्र की सैन्यशक्ति हमारे सबसे प्रबल शत्रु हैं। उनके विनाश के लिए कोई भी साधन अनुचित व अग्राह्य नहीं है।

तो अब विलम्ब करना कदापि उचित नहीं है। इससे पूर्व कि पुष्यमित्र पाटलिपुत्र पहुँच सके, हम दण्डपाणि को ठिकाने लगा देना चाहिए। जरा बुधगुप्त को तो बुलाइए संघ-स्थविर !

दो घड़ी बाद आतवशिव बुधगुप्त कुक्कुटाराम के गुप्त गर्भ-गृह में आ उपस्थित हुआ। स्थविरों को प्रणाम निवेदन कर उसने कहा— मेरे लिए क्या आज्ञा है स्थविर !

'राजप्रासाद में सब कुशल तो है ? दण्डपाणि का क्या हाल चाल है ? कश्यप ने प्रश्न किया।

'भगवान तथागत की कृपा से सर्वत्र कुशल मंगल है, स्थविर ! दण्डपाणि आनन्द में है और रात दिन पूजापाठ में व्यापृत रहता है।

'उसके पास कौन आते-जाते हैं ?

'कोई भी नहीं, स्थविर ! प्रातः सायं एक परिचारक अन्न-जल देने के लिए उसके कक्ष में जाया करता है। अन्य किसी को वहाँ जाने की अनुमति नहीं है।'

क्या यह परिचारक पूर्णतया विश्वसनीय है ? वह बाहर के कोई समाचार तो उसे नहीं देता ?'

समाचार वह कैसे देगा, स्थविर ! वह गूंगा और बहरा जो है।

साधु, साधु ! बन्धनागार के समीप कहीं शिलाखण्ड या प्रस्तर तो उपलब्ध हो सकेंगे ?'

'क्यों नहीं स्थविर ! अन्तःपुर के बन्धनागार में कुछ नये कक्ष अभी बनकर तैयार हुए हैं। वहाँ बहुत से शिलाखण्ड शेष बचे पड़े हैं।'

बुधगुप्त को सारी योजना समझा दी गई। उसे सुनकर बुधगुप्त ने

कहा—

'यदि आज्ञा हो, तो एक बात कहू, स्थविर !'

'हाँ, हाँ निस्सकोच कहो।

'दण्डपाणि बडा धूत है। हमार सन्नी रात दिन उमकी गतिविधि पर दष्टि रखत हैं। उसके कक्ष म जरा-सी भी आहट पाकर व सतक हो जात हैं। उसन अनेक बार यत्न किया कि अपन कक्ष म सुरग बनाकर बधनागार मे मुक्त हो जाए। पर हमारे सत्रिया की मतकता के कारण वह सफल नही हो सका। आपका ज्ञात ही है, स्थविर ! चाणक्य न सुरग माग से ही शकटार को बधनागार से मुक्त किया था। यदि दण्डपाणि के कक्ष द्वार को शिलाखण्डो से बन्द कर दिया गया, तो उसकी गतिविधि पर दष्टि रख सकना सम्भव नही रहेगा।

'पर सुरग खोदने के लिए दण्डपाणि उपकरण कहाँ से प्राप्त करगा ?'

'इस धूत ब्राह्मण के लिए सब-कुछ सम्भव है स्थविर ! उसकी वाणी म जादू है वह वशीकरण मत्र जानता है। क्या बताऊँ, स्थविर ! बडी कठिनता स अब तक उसे बधनागार म बन्द रख सका हूँ। यदि वह क्षण भर के लिए भी हमार सत्रिया की आखा से ओझल हो गया तो न जाने क्या कर बठेगा।'

तो तुम्हारा क्या सुझाव है बुधगुप्त !

उसके कक्ष के द्वार को अवश्य बन्द कर दिया जाए, पर दो अगुल चौडा एक छिद्र खुला छोड दिया जाए। दण्डपाणि की गतिविधि पर दष्टि रखने का यही उपाय है।

'तो यही सही। इससे एक लाभ यह भी होगा कि थोडी-थोडी वायु उसे मिलती रहेगी। अन्न-जल के बिना वह कब तक जीवित रह सकेगा ? उसे तडप तडप कर प्राण देते दखकर मुझे हार्दिक आह्लाद प्राप्त होगा। कभी-कभी मैं भी उसे देख जाया करूगा।

रात्रि का समय था। आकाश म बादल छाए हुए थे। घोर अधकार था। एस समय एक शिल्पी ने पाटलिपुत्र के महाद्वार म प्रवेश किया। द्वारपाल क प्रश्न के उत्तर म उसने चुपचाप एक अनुज्ञा-पत्र उसे दिखा दिया। माग मे किसी न उसे नहीं रोका। राजप्रासाद के द्वार पर आकर

शिक सेना के सनिका ने उसे फिर रोका। पर बुधगुप्त के सकेत पर सनिक एक ओर हट गए। शिल्पी सीधा बचनागार गया और देखते-देखते अपना काय उसने पूण कर दिया। जिस कक्ष मे आचाय दण्डपाणि कैद थे, उसके गवाक्ष और द्वार प्रस्तर-खण्डा स बन्द कर दिए गए। केवल एक छोटा-सा छिद्र खुला छोड दिया गया ताकि आचाय की गतिविधि पर दृष्टि रखी जा सके। न वहाँ कोई परिचारक जा सकता था, और न कोई गूढपुरुष। बुधगुप्त स्वय वहाँ प्रहरी का काय कर रहा था। कश्यप का आदेश था कि कोई भी अन्य व्यक्ति दण्डपाणि के कक्ष के पास न जाने पाए।

आचाय दण्डपाणि को स्थविरो के षडयन्त्र को समझने म देर नही लगी। पर वह असहाय थे। अब न उन्ह भोजन दिया जाता था और न जल। अन्न-जल के बिना वह कब तक जीवित रह सकते थे? शुद्ध वायु का सचरण भी वहाँ सभव नही था। इस दशा म मृत्यु को आसन्न देख दण्डपाणि समाधि लगाकर बैठ गए। चिरकाल से उन्हे पुष्यमित्र का कोई भी समाचार नही मिला था। पर उन्ह अपने इस सुयोग्य शिष्य पर पूण विश्वास था। जीवन के अन्तिम क्षणा म भी आयभूमि के उज्ज्वल भविष्य के सबध मे उन्हे कोई भी आशका नही थी। सवशक्तिमय भगवान स वह यही प्राथना कर रहे थे कि यवना को परास्त कर पुष्यमित्र शीघ्र पाटलिपुत्र आए और भिक्षुआ के कुचक्र का अन्त कर भारत की शस्त्रशक्ति का पुनरुद्धार करे। अपने प्राणा की उन्ह जरा भी चिन्ता नही थी। वह जानते थे कि यह शरीर नश्वर है। एक-न-एक दिन इसका अन्त होना ही है। प्राचीन ऋषिया का योगेनान्ते तनुत्यजाम का आदश उनके सम्मुख था। तीन सप्ताह तक वह समाधि लगाकर बठे रहे। अन्न जल के बिना उनका शरीर क्षीण हो गया पर उनके मुखमण्डल के तेज म कोई कमी नही आई। अन्त म समाधि म बठे-बठे ही उन्होने अपनी जीवन-लीला समाप्त कर दी।

पुष्यमित्र का प्रतिशोध

मित्र को मध्यमिका म मरुभूमि म खदेडकर पुष्यमित्र ने मगध की ओर

प्रस्थान किया। निरंतर युद्ध मे व्यापृत रहते हुए भी पाटलिपुत्र के समाचारो से वह अनभिज्ञ नही थे। उन्हें ज्ञात था कि आचार्य दण्डपाणि अभी बन्धनमुक्त नही हुए हैं। वह शीघ्र से शीघ्र पाटलिपुत्र जा पहुँचने को उत्सुक थे, ताकि अपने गुरु को बन्धनागार से छुटकारा दिला सकें और उनके पथ प्रदर्शन में मगध के राजतन्त्र में नवजीवन के सञ्चार का प्रयत्न करें। मरुभूमि से लौटते हुए वह जहा भी गए जनता ने उत्साह के साथ उनका स्वागत किया। लोगो की दृष्टि में वही एक ऐसे वीर थे, जो यवनो के आक्रमण से भारतभूमि की रक्षा कर सकते थे।

धारिणी और अग्निमित्र भी हिन्दूकुश और कपिश-गान्धार की 'तीर्थयात्रा' से वापस लौट आए थे। वे सेनानी से मिलने के लिये उत्सुक थे और काम्पिल्य में उनके आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। चिरकाल पश्चात अपने वीर पुत्र को देखकर पुष्यमित्र की आखो में आसू आ गए और उन्होंने आगे बढ़कर उसे अपने अंक में भर लिया। धारिणी एक ओर चुपचाप खडी थी और साश्रुनयन हो पिता-पुत्र के मिलन को देख रही थी। उसकी परिचारिका एक यवनी थी जो अत्यन्त प्रगल्भ और मुखर थी। अपनी स्वामिनी को इस प्रकार उपेक्षिता-सी चुपचाप खडी देखकर उससे नही रहा गया। आगे बढ़कर उसने कहा— आपकी पुत्रवधू भी यहा खडी है स्वामी! उसे भी आपका स्नेह और आशीर्वाद प्राप्त करने का अधिकार है। यवनी की बात सुनकर पुष्यमित्र का ध्यान धारिणी की ओर गया। उसकी ओर देखकर उन्होंने कहा—'तुम्हें तो पहले कभी देखा ही नही था बेटी! जितनी प्रशंसा सुनी थी उससे बहुत अधिक हो तुम। अग्निमित्र सचमुच सौभाग्यशाली है जो तुम्हारे जैसी सहधर्मिणी उसे प्राप्त हुई है। यवनो की पराजय का वास्तविक श्रेय तुम्ही को दिया जाना चाहिए। मैं आशीर्वाद देता हूँ यावच्चन्द्र दिवाकरौ तुम्हारा सुहाग स्थिर रहे! तुम्हारे जैसी पुत्रवधू को पाकर मुझे गर्व है। धारिणी ने चरण-स्पर्श कर अपने श्वसुर को प्रणाम किया।

यवनी फिर आगे बढ़ी। हँसते हुए उसने कहा— यह छोटा-सा शिशु भी आपके आशीर्वाद की प्रतीक्षा कर रहा है स्वामी! देखने में तो यवन जैसा लगता है पर है आपका वंशधर ही। देखिए कैसे फूले फूले गाल हैं और नीली आँखें। कौन कहेगा, दशार्ण देश का वासी है। हिन्दूकुश

गुहा-गृह में उत्पन्न हुआ था। बिलकुल पवया जैसा रंग रूप पाया है।' यवनी की गोद से बच्चे को लेकर धारिणी ने उसे पुष्यमित्र के चरणों के पास खड़ा कर दिया, और सकोच के साथ बोली— इसे आशीर्वाद दीजिए सेनानी। यह आपके समान ही वीर और साहसी बने।

पुष्यमित्र ने बच्चे को गोद मे उठा लिया। अपने पौत्र के स्पर्श से उनका तन पुलकित हो गया। उसके सिर पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा— अपने माता पिता का नाम उज्ज्वल करो बेटा। उन्हीं के समान वीर और साहसी बनो, आर्यभूमि का गौरव बढ़ाओ। आयुष्मान् होओ।

यवनी एक बार फिर आगे बढ़ी और मृदु मुसकान के साथ बोली— 'किसे इतने ढेर सारे आशीर्वाद दे रहे हैं स्वामी। इसका कोई नाम तो है ही नहीं। दो साल का हो गया पर अब तक इसका कोई नाम ही नहीं रखा गया। माँ इसे पुकारती है, मुन्ना और पिता बिट्टू। भला ये भी कोई नाम हैं। जब नाम संस्करण की बात चलती है तो इसकी माँ टाल देती है और कहती है— इसके पितामह बहुत बड़े आदमी हैं। सम्पूर्ण मौर्य साम्राज्य के सेनानी और कर्णधार हैं। वही इसका नामकरण-संस्कार करेंगे।' अब इसका कोई नाम रख दीजिए न? कब तक इसे मुन्ना या बिट्टू कहते रहेंगे?

पुष्यमित्र कुछ देर तक बच्चे को एकटक देखते रहे। फिर उन्होंने हँस कर कहा— इसे पाकर विश्व की सब सुख सम्पदा मुझे प्राप्त हो गई है। यही मेरा रत्न है यही मेरा वसु है। इसका नाम वसुमित्र होगा।

यवनी वसुमित्र को लेकर चली गई तो पुष्यमित्र ने कहा— 'अब तुम्हारा क्या विचार है, वत्स। कुछ दिन विश्राम क्यों नहीं करते? कपिश गान्धार की यात्रा से बहुत थक गए होगे।

सैनिक के लिए विश्राम कहाँ, सेनानी। मैं भी आपके साथ पाटलिपुत्र चलूँगा।

पाटलिपुत्र की दशा अत्यन्त अव्यवस्थित है, वत्स। धारिणी और वसुमित्र को वहाँ ले जाना निरापद नहीं होगा। कुक्कुटाराम के स्थविर हमारे शत्रु हैं उनके कुचक्रों से इन्हें बचा सकना बहुत कठिन होगा। कुछ दिनों के लिए तुम दशार्ण देश क्यों न चले जाओ? गोनर्द आश्रम में जाकर रह लो। वसुमित्र की शिक्षा प्रारम्भ करने का समय भी समीप आ रहा

है। इसे महर्षि पतजलि को सौंपकर फिर पाटलिपुत्र आना। हा तुम्हारी यह परिचारिका कौन है ?

पुष्यमित्र की बात अभी पूरी नही हुई थी कि एक दण्डधर ने प्रवेश किया, और हाथ जोडकर कहा—'क्षमा कीजिए, सेनानी ! पाटिलपुत्र से एक सत्री आया है, बहुत जल्दी म है, तुरन्त आपसे भेंट करना चाहता है। मैंने बहुत समझाया सेनानी इस समय किसी से नही मिल सकते। पर वह मानता ही नही। कहता है मुझे एक अत्यन्त आवश्यक काय से तुरत सेनानी से मिलना है।'

सेनानी की अनुमति प्राप्त कर मत्री को उनकी सेवा मे उपस्थित किया गया। प्रणाम निवेदन कर सत्री ने कहा—

'बहुत बुरा समाचार है सेनानी ! शाकल से कश्यप और श्रावस्ती से मज्झिम पाटलिपुत्र पहुँच गए है। कुक्कुटाराम के गभगह म उन्होंने माग्गलान से कोई गूढ मन्त्रणा भी की है। ठीक ठीक बात तो हमे ज्ञात नही हो सकी पर ऐसा सुना है कि आचाय की हत्या की योजना बनाई गई है।'

सत्री की बात सुनकर पुष्यमित्र एकदम स्तब्ध रह गए। कुछ क्षण पश्चात् उत्तेजित होकर उन्होंने कहा—

'क्या कहा ? आचाय की हत्या की योजना ?

'मुझे क्षमा करें, सेनानी ! जसा मैंने सुना आपसे निवेदन कर दिया।'

पूरी बात बताओ तुमने क्या सुना है ?'

मुझे अधिक तो ज्ञात नही, सेनानी ! राजप्रासाद मे नियुक्त हमार सत्रियो ने सूचना दी है कि अधरात्रि के समय कोई शिल्पी उस बन्धनागार म गया था जहाँ आचाय का कक्ष है। ऐसी चर्चा है कि आचाय के कक्ष के गवाक्षो और द्वार को प्रस्तर-खण्डो से बन्द कर दिया गया है।'

'क्या तुम सच कह रहे हो ?'

मैं झूठ क्या बोलूगा, सेनानी ! जसा सुना वैसा सेवा म निवेदन कर दिया। कोई भी व्यक्ति अब राजप्रासाद के बन्धनागार के समीप नही जा सकता।

स्थविरो का यह साहस ! अच्छा, तुम पाटलिपुत्र स कब चले थे ?'

कोई आठ दिन पूर्व सेनानी ! रात दिन घोडे की पीठ पर बैठा-बैठा

अभी काम्पिल्य पहुँचा हूँ। केवल एक रात मार्ग में विश्राम किया था। बहुत थक गया हूँ।

'तो आचार्य को अन्न जल और स्वच्छ वायु के बिना रहते हुए आठ दिन बीत गए। अच्छा अब तुम विश्राम करो। मैं इसी क्षण पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान कर रहा हूँ।

क्या आप अकेले ही पाटलिपुत्र जाएँगे ? अग्निमित्र ने प्रश्न किया।

सेना को तैयार होने में देर लग जाएगी। एक क्षण की भी देर करने का अब अवसर नहीं है। मुझे एक सप्ताह में पाटलिपुत्र पहुँच जाना है। सेना पीछे आती रहेगी।'

पर आपका अकेले जाना क्या निरापद होगा ? मैं भी क्या न चला चलूँ ?'

यह आचार्य के जीवन का प्रश्न है वत्स ! यदि तुम चाहो मेरे साथ चल सकते हो। पर धारिणी और वसुमित्र को गानंद आश्रम में भेजने की व्यवस्था भी तो तुम्हें करनी होगी।

इसकी व्यवस्था मैं स्वयं कर लूँगी सेनानी ! आप इन्हें साथ चलने से न रोकिए।' धारिणी ने कहा।

पुष्यमित्र और अग्निमित्र ने तुरंत पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान कर दिया। वायु वेग से वे निरन्तर पूर्व की ओर आगे बढ़ते गए। केवल छः दिन में वे पाटलिपुत्र पहुँच गए। जिस समय वह मागध साम्राज्य की इस विशाल राजधानी में पहुँचे, महाद्वारों के कपाट बन्द हो चुके थे। पश्चिमी महाद्वार के समीप पहुँचकर पुष्यमित्र ने प्रहरी से कहा—

तुरंत कपाट खोल दो एक क्षण की भी देरी न करो।

दौवारिक की अनुज्ञा-पत्र दिखाइए प्रहरी ने कहा।

मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ तुरन्त कपाट खोल दो।

आप कौन हैं जो मुझे इस प्रकार आदेश दे रहे हैं ?

क्या तुम मुझे नहीं पहचानते ? मागध साम्राज्य के सेनानी की आज्ञा है तुरन्त कपाट खोल दो। सुनते हो या नहीं ?'

आप, सेनानी पुष्यमित्र। पर मागध के सेनानी पद पर तो अब निपुणक नियुक्त हैं।

'यह खडग देखते हो, सेनानी पुष्यमित्र की आज्ञा है। तुरंत कपाट खोल दो।'

प्रहरी को पुष्यमित्र की आज्ञा का उल्लघन करने का साहस नही हुआ। कपाट खोलते हुए उसने हाथ जोडकर कहा—'मेरे प्राणो की रक्षा आपके हाथो मे है, सेनानी! निपुणक मुझे कभी क्षमा नही करेगा।'

पर पुष्यमित्र ने प्रहरी की प्रार्थना पर कोई ध्यान नही दिया। विद्युत गति से आगे बढते हुए वह क्षणभर मे राजप्रासाद के महाद्वार पर पहुँच गए। आन्तवशिक सेना के सैनिको को उन्हे रोकने का साहस नही हुआ। वह सीधे बन्धनागार गए, और उस कक्ष पर जा पहुँचे जहा आचार्य दण्डपाणि बन्द थे। एक प्रहरी को वहा खडे देखकर उन्होने पूछा—

'क्या आचार्य दण्डपाणि इसी कक्ष मे हैं?'

'तुम कौन हो, और यहा आने का साहस तुमने कैसे किया?

रात्रि के घोर अन्धकार मे न प्रहरी ने पुष्यमित्र को पहचाना, और न पुष्यमित्र ने प्रहरी को। सेनानी ने प्रहरी को एक धक्का दिया जिसे वह नही सभाल सका, और दूर जा गिरा। पुष्यमित्र ने तलवार की मूठ से प्रस्तर-खण्डो पर प्रहार करना प्रारम्भ किया और देखते देखते वहाँ इतना मार्ग बन गया जिससे एक व्यक्ति कक्ष के भीतर प्रवेश कर सकता था। भीतर जाकर जो दृश्य पुष्यमित्र ने देखा उसे वह सहन नही कर सके। कुछ क्षण वह स्तब्ध खडे रहे और फिर चीत्कार कर विलाप करने लगे। आचार्य दण्डपाणि का प्राणान्त हो चुका था और उनका शरीर विकृत होना प्रारम्भ हो गया था। बन्धनागार से चीत्कार का शब्द सुनकर आन्तवशिक भागा-भागा आया और जोर से बोला—'यहा कौन है?'

'ओह, बुधगुप्त आओ अन्दर आओ।' बुधगुप्त की वाणी पहचानकर पुष्यमित्र ने कहा।

पुष्यमित्र को देखकर बुधगुप्त अपनी सुध-बुध भूल गया। वह लौटकर जाने लगा पर पुष्यमित्र ने उसे पकड लिया और लात मारकर कहा—'बताओ यह किसकी करतूत है?'

'मैं कुछ नही जानता सेनानी! मैं सर्वथा निर्दोष हूँ।' बुधगुप्त ने हाथ जोडकर गिडगिडाते हुए कहा।

तुम आततायिक हो और कुछ नहीं जानते। बताओ वह प्रहरी कौन था जो अभी यहाँ खड़ा था ? खड्ग उठाकर पुष्यमित्र ने प्रश्न किया।

'मुझे क्षमा करें सेनानी ! कुक्कुटाराम के स्थविरों के आदेश से ही यह सब हुआ है। मेरा कोई अपराध नहीं है। मैं आपका तुच्छ सेवक हूं।

बताओ वह प्रहरी कौन था ?

'वह शाक्य के संघ-स्थविर कश्यप थे सेनानी ! रात दिन स्वयं इस कक्ष पर पहरा दिया करते थे। पहले यह काम उन्होंने मुझे सौंपा था। पर मैं ऐसा घृणित काम कैसे कर सकता था सेनानी ! उन्होंने मुझे हटाकर स्वयं पहरा देना प्रारम्भ कर दिया।

अच्छा यह द्वार किसने बन्द किया था ?

इन्हीं स्थविर ने सेनानी !

शतधनुष कहाँ है ? मैं तुरन्त उससे मिलना चाहता हूं। मौर्य वंश के शासन में एक विश्वविख्यात आचार्य की इस प्रकार निर्मम हत्या की जाए इसका दण्ड उसे भोगना ही पड़ेगा।

'सम्राट इस समय अन्तःपुर में हैं और अपने शयन-कक्ष में विश्राम कर रहे हैं।'

'तुरन्त जाओ और उसे यहाँ बुला लाओ। कहो, पुष्यमित्र ने तुरन्त यहाँ आने का आदेश दिया है।'

अर्धरात्रि के समय अन्तःपुर में मैं कैसे प्रवेश कर सकूंगा, सेनानी ! कुब्ज और वामन प्रहरी मेरे टुकड़े-टुकड़े कर देंगे। ये प्रहरी अत्यन्त क्रूर हैं सेनानी !'

'सुनते हो या नहीं तुरन्त जाओ और शतधनुष को बुला लाओ। पुष्यमित्र ने चिल्लाकर कहा।

बुधगुप्त डरता डरता गया और अन्तःपुर के द्वार पर जाकर प्रहरियों से बोला 'मैं बड़े सकट में हूँ, भाई ! न जाने, पुष्यमित्र कैसे पाटलिपुत्र आ गया है और राजप्रासाद में प्रवेश कर बन्धनागार तक पहुँच गया है। वह तुरन्त सम्राट से मिलना चाहता है। उन्हें सूचना दे दो, बड़ी कृपा होगी।

'सम्राट इस समय केलिगृह में हैं मञ्जुमती का नृत्य हो रहा है। हमें

आदेश है कि किसी को भी अन्त पुर के अन्दर न आने दिया जाए।' एक प्रहरी ने उत्तर दिया।

'कोई उपाय तो करना ही होगा, भाई! अन्यथा, पुष्यमित्र यहा आ पहुँचेगा। वह इस समय क्रोध से पागल हो रहा है। बात तो करता ही नही, सीधा तलवार दिखाता है। यदि जरा भी देर हुई तो यही आ पहुँचेगा और हम सबको तलवार के घाट उतार देगा।'

डरते डरते एक प्रहरी अन्त पुर के द्वार मे प्रविष्ट हुआ, और उच्च स्वर से बोला, 'सम्राट की जय हो!'

शतधनुष मञ्जुमती को अक म भर सुरापान म मस्त थे। रग मे भग देखकर उन्होने रोष के साथ चिल्लाकर कहा 'कौन है क्या बात है?'

'घोर सकट उपस्थित है सम्राट! पुष्यमित्र राजप्रासाद मे घुस आया है और इसी क्षण आपसे मिलना चाहता है।' प्रहरी ने हाथ जोडकर कहा।

'कौन, पुष्यमित्र, वह तो साकेत म था, यहा कैसे आ गया?'

'सम्राट एक क्षण बाहर आने की कृपा करें। बुधगुप्त बहुत घबराए हुए हैं बाहर खडे प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

शतधनुष न अपने परिधान को ठीक किया और अन्त पुर म बाहर आकर बुधगुप्त स बोले 'कहो, बुधगुप्त क्या बात है इतने घबराए हुए क्यो हो?'

'रक्षा कीजिए सम्राट! पुष्यमित्र न जाने कैसे यहाँ आ पहुँचा है और क्रोध से पागल हो रहा है। दण्डपाणि के शव के पास बैठा हुआ है, और आपसे मिलना चाहता है।

'तुम्हारी आतवशिक सेना कहाँ है? उसे पकडकर उसी कक्ष म बन्द क्या नहीं कर देते?'

किसका साहस है सम्राट! जो मत्त मयग के पास जा सके? एक क्षण की भी देर होने पर वह यही आ धमकेगा। मुझे भय है कहीं सम्राट पर ही हाथ न उठा दे।'

अच्छा, फिर उसी के पास चलो। कहाँ है मेरी तलवार?

ओह, वह तो इधर ही चला आ रहा है। मुझे तो डर लग रहा है सम्राट! भाग चलिए आइए मेरे साथ। सुरग के गुप्त माग से निकलकर

किसी सुरक्षित स्थान पर चल चलें। भूखे शेर के सामने पड़ना बुद्धिमत्ता नहीं है, सम्राट !'

पुष्यमित्र को आता देखकर शतधनुष घबरा गया। बुधगुप्त के साथ उसने सुरंग मार्ग में प्रवेश किया और ऊपर के कपाट को अन्दर से बन्द कर तेजी से आगे बढ़ने लगा। एक गुप्त गृह में पहुँचकर उसने चैन की साँस लिया और बुधगुप्त से कहा—

'यह विपत्ति कहाँ से आ गई, बुधगुप्त ! रंग में भंग हो गया। मञ्जुमती की वह सघन केशराशि, वे मांसल भुजाएँ, वह नृत्य भंगिमा और वे मधुर चुम्बन ! सब मिट्टी हो गया।'

अब प्राणों की रक्षा का उपाय कीजिए सम्राट ! पौ फटने से पहले ही किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँच जाइए। राजप्रासाद में रहना अब निरापद नहीं है।

क्या तुम्हारी सेना एक पुष्यमित्र को पकड़कर बन्धनागार में नहीं डाल सकती ? जाओ, तुरन्त संकट की भेरी बजवा दो। सब सैनिकों को एकत्र कर लो। पुष्यमित्र बचकर जाने न पाए।

हमारे पास सेना है ही कहाँ सम्राट ! अब तो पाटलिपुत्र पर भिक्षुओं का राज है। काषाय वस्त्रधारी भिक्षु पुष्यमित्र के सम्मुख कहाँ टिक सकते हैं ?

तो फिर हमें क्या करना चाहिए ?

चलिए सम्राट ! देर न कीजिए। इस सुरंग मार्ग का एक द्वार कुक्कुटाराम के गुप्त गर्भगृह में खुलता है। हम वहीं जाकर आश्रय ग्रहण करना चाहिए। राजप्रासाद अब हमारे लिए निरापद नहीं रहा है। यहाँ ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो पुष्यमित्र के प्रति अनुरक्त हैं। सूर्योदय होते ही उसके आगमन की बात सारे राजप्रासाद में फैल जाएगी। कौन जाने कब क्या हो जाए ? अब देर न करें सम्राट ! कुक्कुटाराम ही एकमात्र ऐसा स्थान है जिसे हम सुरक्षित समझते हैं।'

अरे जरा ठहरो, बुधगुप्त ! मञ्जुमती को भी साथ लेते चलें। कुक्कुटाराम के रुण्ड-मुण्ड भिक्षुओं के बीच मेरे दिन कैसे कटेंगे ! मञ्जुमती साथ रहेगी तो मन लगा रहेगा। आह कैसा बढ़िया नाचती है वह कैसा

मृदुकण्ठ है उसका ! बोलती है, तो ऐसा लगता है मानो कोयल कुहू-कुहू कर रही हो।'

यह न भूलिए सम्राट ! पुष्यमित्र अन्त पुर के द्वार पर खडा आपकी प्रतीक्षा कर रहा है। अब देर न कीजिए।'

शतधनुष को सहारा देता हुआ बुधगुप्त सुरगमार्ग म आगे बढता गया। शीघ्र ही वे दक्षिणी द्वार पर पहुँच गए। यह द्वार कुक्कुटाराम क गुप्त गमगह म खुलता था। कश्यप मज्झिम और मोग्गलान अभी वही उपस्थित थ। सम्राट को अकस्मात अपने बीच म पाकर मोग्गलान ने कहा—

'आह सम्राट ! आप यहाँ कमे ? सब कुशल तो है ?

मैं क्या जानू स्थविर ! यह बुधगुप्त मुझ यहाँ घसीट लाया है।'

'जानकर भी क्या अनजान बनते हैं स्थविर ! क्या आपको ज्ञात नही है कि पुष्यमित्र राजप्रासाद म पहुँच चुका है, और तलवार हाथ में लिए अन्त पुर के आसपास घूम रहा है। बडी कठिनता से सम्राट को यहा ला सका हूँ। बुधगुप्त ने कहा।

तुमने बहुत अच्छा किया बुधगुप्त ! हिंसा का सामना अहिंसा द्वारा करना ही तथागत को अभिप्रेत था। अब आप विश्राम कीजिए सम्राट ! शयनकक्ष पास म ही है।

सुरा और सुन्दरी क बिना मुझे नीद नही आती स्थविर ! मैंने बुधगुप्त से कितना ही कहा मञ्जुमती को भी साथ लते चलो। पर इसने मेरी एक नही सुनी। अब मुझे नीद कसे आएगी ?

सुरा और सुन्दरी का भी प्रबन्ध हो जाएगा। आप शयनकक्ष म जाकर निश्चिन्त हो विश्राम कीजिए। कुक्कुट विहार म किसी चीज की कमी नही है। तुम भी जाओ बुधगुप्त ! तुम भी विश्राम करो।

शतनुष और बुधगुप्त के चले जान पर मोग्गलान ने कश्यप स कहा 'अब क्या विचार है, स्थविर !'

मगध म रहना अब हमारे लिए निरापद नही है। पुष्यमित्र की सेना वायुवेग से पाटलिपुत्र की ओर अग्रसर हो रही है। वह शीघ्र यहाँ पहुँच

जाएगी। बात की बात म मगध पर पुष्यमित्र का अधिकार हो जाएगा। दण्डपाणि की हत्या के कारण वह क्रोध से पागल हो गया है। न जाने क्या कर बठे।

'तो आपकी क्या योजना है स्थविर!'

'सूर्योदय से पूर्व ही हम कुक्कुटाराम से चल देना चाहिए। श्रेष्ठी पुण्य नयन के साथ ने कल ही पाटलिपुत्र स प्रस्थान किया था। अभी वह अधिक दूर नही गया होगा। हम शीघ्र ही उमस जा मिलेंगे।

पर भिक्षुवेश मे जाना उचित नही होगा, स्थविर!'

'हम वदेहक ज्येष्ठक शिल्पी—किमी भी भेस म जा सकते हैं। पुण्य नयन को मैं भली भाँति जानता हूँ। शाकल म भी उमकी पण्यशाला है। सद्धर्म के प्रति उसकी अगाध श्रद्धा है। वह शाकल से भी आगे कपिश गान्धार जा रहा है। शाकल तक उसके साथ चले जाएँगे। छद्मवेश म रहने पर किसीको हम पर सन्देह नही होगा।

'क्या इस प्रकार कुक्कुटाराम का छोडकर भाग जाना हमारे लिए उचित होगा, स्थविर!'

'हम भाग कहाँ रहे हैं? अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही शाकल जा रहे हैं। वहा का यवन सेनापति मिनेन्द्र मेरा शिष्य है। धम प्रवचन का श्रवण करने के लिए बहुधा सघाराम आया करता है। नागसेन उसे बौद्ध धम मे दीक्षित करने का प्रयत्न कर रहे हैं। मुझे उससे बहुत आशा है। जो काय दिमित्र द्वारा सम्पन्न नही हो सका मिनेन्द्र उसे पूरा कर सकेगा। उसके नेतृत्व मे हमे धम-युद्ध करना है स्थविर! पुष्यमित्र जसे सद्धम के विरोधी को विनष्ट करने का यही एकमात्र साधन है।

शतधनुष का क्या होगा स्थविर! क्यो न उसे भी अपने साथ लेते चलें?

हा यह भी ठीक है। शाकल जाकर घोषित कर देंगे कि मौय साम्राज्य की राजधानी अब पाटलिपुत्र क स्थान पर शाकल है। शतधनुष वही से साम्राज्य का सचालन करगा।

'पर वह तो गहरी नीद म सो रहे हैं स्थविर! बुधगुप्त ने कहा।

तो उन्ह यही रहने दो। देर करने का अब काम नही है।

कश्यप, मज्झिम, मोग्गलान और बुधगुप्त न श्रेणि ज्येष्ठक का भेस बना लिया। रात समाप्त होने म अभी एक प्रहर शेष था कि ये चारा द्रुत-गामी घोडो पर सवार होकर उस पल्ली म पहुँच गए जहा श्रेष्ठी पुष्यनयन पडाव डाले पडा था। कश्यप ने एकात मे उसे सब योजना समझा दी। चारा ज्येष्ठक साथ के साथ हो गए। किसी को यह ज्ञात नही हुआ कि व कौन हैं।

पुष्यमित्र अकस्मात पाटलिपुत्र पहुँच गए हैं और क्रुद्ध सिंह के समान अन्त पुर के समीप चक्कर लगा रहे हैं, बात की बात मे यह समाचार सारे राजप्रासाद मे फल गया। पाटलिपुत्र का राजप्रासाद एक नगर के समान था, जिसम सहस्रो नर नारी निवास करते थे। शासनतन्त्र के सब प्रमुख अधिकरण वही पर विद्यमान थे और साम्राज्य के प्रमुख मन्त्री, अमात्य और सचिव भी वही निवास करते थ। पुष्यमित्र के आगमन के समाचार से सवत्र उत्तेजना फल गई लाग घरा से बाहर निकल आए स्त्रियाँ गवाक्षा स झाँकने लगी और अन्त पुर म कोलाहल मच गया। बात की बात म सकडो राजपुरुष एकत्र हो गए और सेनानी पुष्यमित्र की जय-जयकार करन लग। राजप्रासाद मे एस लोगा की कमी नही थी जो क्षात्रधम मे विश्वास रखते थे, मोग्गलान की नीति से असन्तुष्ट थे और सनानी के वीर कृत्या का गव के साथ स्मरण करत थे। जयघोष को सुनकर पुष्यमित्र को सुध आई, और समीप आती हुई भीड को देखकर उन्होने प्रश्न किया—

शतधनुष कहा है ? वह अब तक क्या नही आया ? मैं कितनी देर से उसकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

एक राजपुरुष ने आगे बढकर उच्च स्वर से कहा, सेनानी पुष्यमित्र की जय हो। सबने उसका साथ दिया। फिर उसी राजपुरुष ने हाथ जोडकर कहा, शतधनुष और बुधगुप्त अन्त पुर के सुरग माग से कुक्कुटाराम चले गए हैं सेनानी ! मगध का राजसिंहासन अब रिक्त हो गया है। आचाय की दशा आप अपनी आँखा से देख ही चुके हैं। मागध साम्राज्य का शासन सूत्र अब आपको ही सभालना होगा।

पुष्यमित्र को अब वस्तुस्थिति का बोध हुआ। कुछ देर सोचकर उन्होन कहा— शतधनुष ने कायरो के समान राजप्रासाद को छोड दिया। कोई आपमे

उत्तरदायित्व का जरा भी ज्ञान नही है। चलिए साम्राज्य के सभाभवन म चलकर विचार विमश करें। सब मन्त्री और अमात्य तो यहाँ उपस्थित हैं न ?'

राजप्रासाद के उत्तर पूव म मागध साम्राज्य का सभाभवन था जहाँ मन्त्रिपरिपद क अधिवशन हुआ करते थे। किसी महत्त्वपूण समस्या के प्रस्तुत होने पर पाटलिपुत्र के पौरो और मगध के जानपदो व ग्रामणियो को भी इस सभाभवन मे आमन्त्रित कर लिया जाता था। राजप्रासाद और पाटलिपुत्र म जो भी मन्त्री सचिव अमात्य पौर जानपद और ग्रामणी विद्यमान थे, सब पुष्यमित्र के आदेश से सभाभवन मे एकत्र हो गए। उन्ह सम्बोधन कर पुष्यमित्र ने कहा—

'आयभूमि की क्षात्र शक्ति का पुनरुद्धार करने के लिए यह आवश्यक है कि शतधनुष को सम्राट पद से च्युत कर दिया जाए। वह स्वय स्वेच्छापूवक राजप्रासाद को छोडकर कुक्कुटाराम चला गया है इससे हमारा काय सुगम हो गया है। क्या आप शतधनुष को पदच्युत करने के मेरे प्रस्ताव का समयन करते है ?

सबने एक स्वर से सेनानी के प्रस्ताव का अनुमोदन किया।

अब प्रश्न यह है कि सम्राट पद पर किस कुमार को अभिषिक्त किया जाए। शतधनुष का अनुज बहद्रथ अब वयस्क हो चुका है। मौयकुल मे वही एसा कुमार है जो सम्राट-पद का अधिकारी है। पुष्यमित्र ने कहा।

पर वह भी अपने अग्रज के समान ही निर्वीय और कापुरुष है। एक राजपुरुष न विप्रतिपत्ति की।

'यह सही है पर आप यह क्यो भूल जाते हैं कि मौयकुल के सब सम्राट सचिवायत्तसिद्धि रहे हैं। चन्द्रगुप्त भी चाणक्य जैसे गुरु और मन्त्रिपुरोहित को पाकर ही हिमालय स समुद्रपयन्त सहस्र योजन विस्तीण मागध साम्राज्य की स्थापना करने म समय हुए थे। शासन-तन्त्र म राजा की स्थिति 'ध्वजमात्र' होती है। पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर मौयकुल के कुमार ही आरूढ हो सकते हैं। बहद्रथ के अतिरिक्त कोई ऐसा कुमार नहीं है जो वयस्क हो। यदि मन्त्री और अमात्य सुयोग्य और कतव्यनिष्ठ हुए तो बहद्रथ को उनका अनुगामी बनकर ही रहना होगा।'

सबने पुष्यमित्र के विचार का समर्थन किया। अपने कथन को आगे बढ़ाते हुए पुष्यमित्र ने कहा—

हमारे सम्मुख मुख्य समस्या स्थविरा के षडयन्त्रा का अ त करने की है। भारत के निवासी सब धर्मों और सम्प्रदाया को आदर की दृष्टि से देखते हैं। इस देश की यही मनातन परम्परा है। पर यदि धर्म-गुरु अपने कर्तव्य से विमुख हो दस्युआ, लम्पटो और आततायियो के समान आचरण करने लगें तो शासनतन्त्र को उनका दमन करना ही होगा। बौद्ध स्थविरो और भिक्षुआ का आज किस सीमा तक पतन हो चुका है इसे आप भलीभाँति जानते हैं। आचाय दण्डपाणि की हत्या आपके सम्मुख है। स्थविर कश्यप ने स्वय अपने हाथो से आचाय के कक्ष के द्वार और गवाक्षा को प्रस्तर-खण्डा द्वारा ब द किया, और वह स्वय रात दिन वहाँ पहरा देता रहा। क्या यह काय धमगुरुआ के अनुरूप है ? हम कश्यप और उसके साथिया के प्रति वही व्यवहार करना होगा जो दस्युआ डाकुआ और हत्यारा के प्रति किया जाता है। स्थविरा के वश म ये आततायी दस्यु हैं। इनके विरुद्ध हमे राज शक्ति का प्रयोग करना ही होगा।

तो फिर चलें सबसे पहले कुक्कुटाराम को ही घेर लिया जाए। कश्यप और उसके साथी इस समय वही हैं। एक राजपुरुष ने उत्तेजित होकर कहा।

हा यह काय हम शीघ्र ही करना होगा। कश्यप और उसके साथी कहा यहाँ स बचकर न चले जाएँ। पुष्यमित्र ने सहमति प्रगट की।

कुमार अग्निमित्र भी सभा भवन म उपस्थित थे। उन्होने खडे होकर कहा— यह काम मुझे सौंप दीजिए सेनानी ! कुक्कुटाराम के स्थविरा से मैं भली भाँति निबट सकूगा।

ठीक है तुम अभी कुक्कुटाराम चले जाओ एक क्षण की भी देर न करो। कुछ राजपुरुषा और सनिका को भी अपने साथ लेते जाओ। जरा सभलकर रहना। कुक्कुटाराम नृशस आततायियों का गढ है।'

'आप निश्चिन्त रहे सनानी !'

पुष्यमित्र का आदेश पाकर अग्निमित्र और उसके सनिको ने कुक्कुटाराम को घेर लिया। पाटलिपुत्र का यह प्राचीन सघाराम एक सुदृढ दुग के समान

था जिसके महाद्वारों पर सशस्त्र भिक्षु रात दिन पहरा देते रहते थे। अग्निमित्र प्रहरियों को एक ओर धकेलकर संघाराम में प्रविष्ट हो गया, और वहाँ उसने सब भवनों, कक्षों, चैत्यों और पूजास्थानों को छान डाला। पर कश्यप, मज्झिम और मोग्गलान का कहीं पता नहीं चला। अग्निमित्र निराश होकर लौट ही रहे थे कि एक भिक्षु ने आकर उन्हें प्रणाम किया। अभिवादन के अनन्तर उसने मृदुस्मित के साथ कहा—

'मुझे पहचाना नहीं, कुमार!'

कुछ क्षण अग्निमित्र उस भिक्षु की ओर ध्यान से देखते रहे। उन्हें पहचानता न देख भिक्षु ने फिर हँसते हुए कहा—'इतने शीघ्र भूल गए कुमार! याद तो कीजिए, गोनर्द आश्रम की अपनी उस सहपाठिनी को जो आपको सदा छेड़ती रहती थी।'

'ओह मधुरिका, तुम इस वेश में? भिक्षु कब से बन गई?'

'हाँ कुमार! वीरवर्मा द्वारा चिरकाल से कुक्कुटाराम में नियुक्त हूँ। भिक्षु-जीवन व्यतीत करते हुए तंग आ गई हूँ। यहाँ यह कोई नहीं जानता कि मैं स्त्री हूँ। यहाँ मुझे सब भिक्षु जीवपुत्र कहते हैं। क्या करती सेनानायक का यही आदेश था।'

'तुम्हें यह अवश्य ज्ञात होगा कि कश्यप आदि कहाँ छिपे हुए हैं।'

'सब जानती हूँ कुमार! एक प्रहर रात शेष थी जबकि वे तीनों श्रेणि-ज्येष्ठकों का भेस बनाकर कुक्कुटाराम से चले गये। बहुत तेज चलने वाले घोड़ों पर सवार होकर गए हैं। श्रेष्ठी पुष्पनयन के सार्थ ने कल ही पाटलिपुत्र से प्रस्थान किया था। उनकी योजना यह है कि उस सार्थ में सम्मिलित होकर शाकल नगरी पहुँच जाएँ और वहाँ मिनेन्द्र की सहायता से पाटलिपुत्र पर आक्रमण करें। मद्रक जनपद पर उन्हें बहुत भरोसा है, कुमार!'

'और शतधनुष! वह कहाँ है?'

'वह संघाराम के गुप्त गृह के समीप स्थित शयनकक्ष में विश्राम कर रहा है कुमार!'

'यह सूचना तुमने पहले क्यों नहीं दी?'

'कुक्कुटाराम के सब द्वार बन्द थे। सर्वत्र सशस्त्र भिक्षुओं का पहरा

था। बाहर निकलती, तो कैसे ? मैं कोई कुमार अग्निमित्र तो थी नही, जो प्रहरियो को धक्के देकर बाहर निकल आती। इसी प्रतीक्षा मे रही, कि सूर्योदय हो और भिक्षुओ को भिक्षापात्र लेकर नगर जाने का अवसर मिले।'

कुक्कुटाराम म और अधिक ठहरना अब व्यथ था। अग्निमित्र राज-प्रासाद को वापस लौट आये। सेनानी पुष्यमित्र अभी सभा भवन म ही थे और शासनतत्र के सम्बध मे मन्त्रियो से विचार विमर्श मे व्यापृत थे। मधुरिका द्वारा दी गई सूचनाओ को सुनकर एक राजपुरुष ने कहा—'स्थविरो के कुचक्र का अन्त करना ही होगा, सेनानी ! क्या न कुक्कुटाराम को भूमिसात कर दिया जाए, और उसके सब स्थविरो, श्रमणो और भिक्षुओ को मौत के घाट उतार दिया जाए ? सब अनथ की जड यह कुक्कुटाराम ही है।'

'पर यह उचित नही होगा। कितने ही स्थविर, श्रमण और भिक्षु ऐसे हैं जो वस्तुत धार्मिक जीवन व्यतीत करने म तत्पर हैं। राजनीतिक षडयन्त्रो के साथ उनका कोई भी सम्बध नही है। सब-सहार की नीति आय मर्यादा के प्रतिकूल ह। बौद्ध धम से हम कोई द्वेष नही है। हम केवल उन स्थविरो और भिक्षुओ के विरुद्ध शक्ति का प्रयाग करना चाहिए, जो धम से विमुख हो दस्युओ और आततायियो का जीवन बिता रहे हैं। वस्तुत, व स्थविर या भिक्षु हैं ही नही व तो दस्यु हैं।' पुष्यमित्र ने कहा।

पुष्पनयन का साथ अभी अभी अधिक दूर नही गया है सेनानी ! क्या न हमारे सनिक वायुवेग से जाकर अगले पडाव पर पहुँच जाएँ, और कश्यप आदि को बदी बना लें ।

मैं इस भी समुचित नही समझता। अच्छा यह होगा कि कश्यप और उसके साथियो को शाकल पहुँच जाने दिया जाए। उनके जो अन्य साथी यहा पाटलिपुत्र म या मागध साम्राज्य म अयत्र विद्यमान हैं वे सब भी शीघ्र ही शाकल चले जाएँगे। यहाँ रहना उन्हें निरापद प्रतीत नही होगा। जो भी स्थविर श्रमण भिक्षु और श्रावक कश्यप के षडयन्त्र मे सम्मिलित रहे हैं या उसके समथक और सहयोगी हैं उन सबको शाकल म एकत्र हो लेने दो। तब वहाँ एक साथ उन सबका सहार कर सकना कठिन नहीं

होगा। निरपराध लोगों को दण्ड देना आर्य शासन-परम्परा के विपरीत है। क्या आप मेरे विचार से सहमत हैं?

सबने एक स्वर से पुष्यमित्र का समर्थन किया।

पुष्यमित्र ने जो सोचा था, वही हुआ। कुक्कुटाराम, [illegible] विहार आदि के संघारामों में जो भिक्षु स्थविर, श्रमण और भिक्षु सद्धर्म की रक्षा और उत्कर्ष के नाम से मौर्य साम्राज्य के विरुद्ध षड्यन्त्र करने और यवनों के साथ मिलकर पाटलिपुत्र पर अपना आधिपत्य स्थापित करने में तत्पर थे, धीरे-धीरे सब मगध और मध्यदेश को छोड़कर शाकल नगरी में एकत्र हो गए। मिनेन्द्र से उन्हें बड़ी आशा थी। तथागत के बौद्ध धर्म में दीक्षित हो चुका था। स्थविर कश्यप को विश्वास था कि जो काम डिमित्र नहीं कर सका, मिनेन्द्र उसे अवश्य सम्पन्न करेगा। शीघ्र ही यवन सेनाएँ एक बार फिर भारत पर आक्रमण करेंगी और मध्यदेश को पदाक्रान्त करती हुई पाटलिपुत्र तक पहुँच जाएँगी। मगध के राजसिंहासन पर एक ऐसे सम्राट का अधिकार हो जाएगा जो सद्धर्म में विश्वास रखता हो और सैन्य शक्ति में भी जो डिमित्र से कम न हो। इस बार जो युद्ध होगा, वह दो देशों, दो जातियों, दो राजाओं या दो सेनाओं का युद्ध नहीं होगा। वह एक धर्म-युद्ध होगा, जिसमें सद्धर्म के अनुयायी एक ओर होंगे और मिथ्या सम्प्रदायों के पक्षपाती दूसरी ओर। निश्चय ही इसमें सद्धर्म की विजय होगी। पुष्यमित्र परास्त हो जाएगा और उसकी भी वही गति होगी जो दण्डपाणि की हुई है।

कश्यप और उसके साथी शाकल नगरी को केन्द्र बनाकर धर्म युद्ध की तैयारी में लग गए। कपिश, गान्धार, अभिसार, केकय, सिन्धु, सौवीर और सौराष्ट्र आदि पश्चिमी सीमान्त के प्रदेशों में जो भी यवन राजा, क्षत्रप और सेनापति थे, उन सबको मिनेन्द्र की ओर से इस धर्मयुद्ध में भाग लेने के लिए आमन्त्रण भेजे गए। मध्यदेश के सब विहारों में सत्री और गूढ़पुरुष इस प्रयोजन से नियत कर दिए गए कि यवन आक्रमण के प्रारम्भ होते ही सर्वत्र मौर्य शासनतन्त्र के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया जाए। जब ये समाचार पुष्यमित्र ने सुने, तो उन्होंने एक राजशासन प्रचारित किया जिसका आशय इस प्रकार था—

'मद्रक जनपद म एकत्र सब स्थविर, श्रमण और भिक्षु आयभूमि के शत्रु हैं। व यवना से मिलकर भारत को आक्रान्त करने के लिए प्रयत्नशील हैं। मौर्यों के शासन का अन्त कर विदेशी यवनो के शासन को इस देश में स्थापित करन के लिए वे कटिबद्ध हैं। धर्म-गुरुओ के वेश मे वे दस्यु आततायी और तस्कर हैं। अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता को वे जरा भी महत्त्व नही देते। उनके विनाश म ही भारत भूमि का कल्याण है। जिन्हें अपनी मातृभूमि से प्रेम है जो अपन देश की स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण रखना चाहत हैं और आर्यों की प्राचीन परम्पराओ तथा मर्यादाओ के प्रति जिनकी आस्था है, उन सबका यह पुनीत कर्तव्य है कि आयभूमि के इन शत्रुओ के विनाश म हमारी सहायता करें। अत यह घोषणा की जाती है कि जो कोई इन धर्मध्वजी शत्रुओ के सिर काटकर लाएगा, उसे एक सिर के बदले मे एक सौ सुवर्ण मुद्राएँ प्रदान की जाएँगी। मागध साम्राज्य के पश्चिम चक्र के सब युक्तो और आयुक्ता को यह आदेश दे दिया गया है कि वे राजकोष स यह धन प्रदान कर सकें। यह आदेश तब तक मान्य रहेगा, जब तक कि यवन सेनाएँ सिन्धु के पार नहा चली जाएँगी।

आचाय दण्डपाणि की नृशस हत्या का यही प्रतिशोध था।

कुक्कुटाराम विहार का विध्वस

पुष्यमित्र बहुत थक गए थे। उनका शरीर श्रान्त था और मन क्लान्त। आचाय दण्डपाणि की नृशस हत्या की स्मृति उनके मन म शूल की तरह चुभती रहती थी, और उन्हें क्षण भर के लिए भी चैन नहा लेने देती थी। शाकल नगरी म एकत्र देशद्रोही स्थविरा और भिक्षुओ के सहार का आदेश प्रचारित कर देने पर उनका उद्वेग अब कुछ शान्त होने लगा था। वह चाहते थे कि आज भलीभाँति विश्राम कर लें। पर विश्राम उनके भाग्य म नहीं था। वह शय्या पर लेटे ही थे कि एक दण्डधर उनकी सेवा म उपस्थित हुआ। प्रणाम निवेदन के अनन्तर उसने हाथ जोडकर कहा—

'राजमाता आपसे भेंट करना चाहती हैं सेनानी!'

कौन ? राजमाता ? वह तुरन्त शय्या छोड़कर उठ खड़े हुए।

हाँ सेनानी ! सम्राट की माता महादेवी माधवी !

पुष्यमित्र ने शयन-कक्ष से बाहर जाकर राजमाता माधवी का अभ्यर्थना की, और उन्हें आदरपूर्वक आसन पर बिठाकर कहा— क्या आज्ञा है राजमाता ! इस असमय आपने क्यों कष्ट किया ?

मैं पूछती हूँ मेरा शतधनुष कहाँ है ?' माधवी ने आक्रोश में आकर प्रश्न किया।

क्षमा करें राजमाता ! काम में व्यस्त रहने के कारण मुझे उनकी ओर ध्यान देने का अवकाश ही नहीं मिला। पर वह कुक्कुटाराम में ही तो होंगे। सम्राट ने स्वयं स्वेच्छापूर्वक राजप्रासाद का परित्याग कर कुक्कुटाराम में आश्रय ग्रहण किया था। उनकी चिन्ता करने की हमें आवश्यकता ही क्या है, राजमाता !

'मैं सब समझती हूँ। तुम हत्यारे हो। तुमने मेरे लाल की हत्या कर दी है।'

शान्त हो, राजमाता ! मौर्य कुल के प्रति मेरी अगाध भक्ति है। मेरे हाथों से मौर्य कुल का अहित सम्भव ही नहीं है। जब सम्राट शतधनुष ने स्वयं राजसिंहासन का परित्याग कर दिया तो मन्त्रिपरिषद ने उनके अनुज कुमार बृहद्रथ को सम्राट पद पर अभिषिक्त करने का निर्णय किया। वह अब राजसिंहासन पर आरूढ़ हैं। आर्यों की सनातन परम्परा के अनुसार उनका राज्याभिषेक भी हो गया है और प्रजा-पालन की शपथ भी वह ले चुके हैं। बृहद्रथ भी आपके ही पुत्र हैं, राजमाता !

पर मैं पूछती हूँ शतधनुष का तुमने क्या किया ? वह कहाँ है ? वह कुशल तो है ?'

कुक्कुटाराम विहार में निवास करते हुए उनके कुशल में क्या आशंका हो सकती है, राजमाता ! उनका बचपन वहीं व्यतीत हुआ था। वहाँ के जीवन का उन्हें भली भाँति अभ्यास है।'

'इतने दिन हो गए मुझे उसका कोई भी समाचार नहीं मिला। मेरा मन बहुत उद्विग्न है। तुम जाओ और शतधनुष के विषय में जानकारी प्राप्त कर मुझे सूचना दो।

'आपकी आना शिराधाय है राजमाता !'

माधवी के चले जाने पर पुष्यमित्र ने तुरत कुक्कुटाराम के लिए प्रस्थान किया। रात्रि का समय था विहार के सब द्वार बद हो चुके थे। पहरे पर जो सशस्त्र भिक्षु नियुक्त थे पुष्यमित्र को पहचानकर वे मार्ग से एक ओर हटकर खडे हो गए। पुष्यमित्र ने उन्हे आदेश दिया—'द्वार खोल दो।' भिक्षुओ को यह साहस नही हुआ कि सेनानी के आदेश की उपेक्षा कर सकें। उन्होंने तुरत द्वार खोल दिया। समीप के एक कक्ष म बठकर पुष्यमित्र ने प्रश्न किया—

'मोग्गलान कहाँ है ?'

'सघ-स्थविर इन दिनो कुक्कुटाराम म नही है सेनानी !

'उनके स्थान पर अब कौन सघ-स्थविर का काय कर रहा है ?'

सघ-स्थविर तो अब भी मोग्गलान ही हैं पर स्थविर वीरभद्र आज कल उनका काय सभाल रहे हैं।'

'वीरभद्र कहाँ है ? उसे तुरत यहाँ उपस्थित करो।

प्रहरी को यह कहने का साहस नही हुआ कि स्थविर वीरभद्र इस समय अपने शयन कक्ष म हैं और उनके लिए वहा जा सकना सम्भव नही है। वह चुप खडा रहा। उस चुप दखकर पुष्यमित्र ने क्रोध से कहा—

'सुनते हो या नही ? वीरभद्र को तुरत यहा उपस्थित करो। जाओ, एक क्षण की भी देर न करो।

पुष्यमित्र की मुख मुद्रा को देखकर प्रहरी भिक्षु तुरत वहा स चला गया और एक घडी पश्चात एक स्थूलकाय स्थविर को साथ लकर वापस लौट आया। उस दखकर पुष्यमित्र न प्रश्न किया—

'तुम्हारा नाम ही वीरभद्र है ?

'हा श्रावक ! कहिए मुझस क्या काय है ?'

'शतधनुप कहाँ है ?'

'मुझ उनके सम्बध म कुछ भी ज्ञात नही है, श्रावक !'

क्या तुम्ह ज्ञात है कि शतधनुप ने कुक्कुटाराम म आश्रय ग्रहण किया था ?

नहीं श्रावक ! मैं यह भी नहीं जानता ?'

'तुम कुक्कुटाराम में रहते हो, मोग्गलान के स्थान पर संघ-स्थविर का कार्य कर रहे हो और तुम्हें यह भी ज्ञात नहीं है कि कभी शतधनुष ने यहाँ आकर आश्रय ग्रहण किया था। क्या तुम सच कह रहे हो ?

'मैं भगवान तथागत की सौगन्ध करके कहता हूँ मुझे सम्राट के बारे में कुछ भी जानकारी नहीं है।'

अच्छा तुम जाओ और भिक्षु जीवपुत्त को मेरे पास भेज दो।'

जीवपुत्त ने आकर सेनानी पुष्यमित्र को प्रणाम किया। उसे आशीर्वाद देकर पुष्यमित्र ने कहा—'तुम अब तक भी भिक्षु वेश में रह रही हो मधुरिका ! अग्निमित्र मुझे तुम्हारे विषय में सब कुछ बता चुका है।

'मैं यहाँ सेनानायक वीरवर्मा द्वारा नियुक्त हूँ सेनानी ! उनकी अनुमति के बिना इस वेश का परित्याग कैसे कर सकती हूँ ? अनुशासन में रहना मेरा कर्तव्य है।

अच्छा, यह बताओ शतधनुष अब कहाँ है ?'

'जब से मोग्गलान यहाँ से गया है, शतधनुष का कोई भी समाचार ज्ञात नहीं हो सका है।'

कहीं वह भी तो मोग्गलान के साथ शाकल नहीं चला गया ?

नहीं सेनानी ! मोग्गलान के साथ केवल कश्यप और मज्झिम ही यहाँ से गए थे।

उन्हें गए हुए तो बहुत दिन हो गए। तुम तो कुक्कुटाराम में सर्वत्र अनवरुद्ध रूप से आती-जाती हो। क्या कभी कहीं शतधनुष को नहीं देखा ?

नहीं सेनानी ! कुक्कुटाराम का गर्भगृह अत्यन्त विस्तीर्ण है, वहाँ न जाने कितने गुप्त मार्ग हैं और कितने ही गुप्त कक्ष। वहाँ क्या होता रहता है इसे जान सकना बहुत कठिन है।

क्या तुम कभी गर्भगृह में नहीं गई ?

'नहीं सेनानी ! सर्वसाधारण भिक्षुओं के लिए वहाँ जा सकना असम्भव है। उसके गुप्त मार्ग को केवल संघ-स्थविर और उसके अत्यन्त विश्वस्त भिक्षु ही जानते हैं। कुक्कुटाराम के सब षड्यन्त्र और कुचक्र

की याजनाए वही तयार की जाती है।'

क्या कोई व्यक्ति वहा महीनो तक भी निवास कर सकता है ?'

क्या नही सेनानी ! सुना है वह एक विशाल प्रासाद के समान है। सैकडो व्यक्ति वहा निवास कर सकते हैं। भोजन वस्त्र—सब वहा प्रचुर परिमाण म विद्यमान हैं। सुख भोग के सब साधन भी वहा हैं।'

क्या यह सम्भव है कि शतधनुष अब तक भी इस गुप्त गभगह म निवास कर रहा हो ?'

सम्भव क्या नही है सेनानी ! यदि वह चाह तो सारी आयु वहा बिता सकता है।'

'शतधनुष का पता हम लगाना ही होगा, मधुरिका ! इस गभगह मे प्रवेश का माग कौन सा है ?

मुझे कुक्कुटाराम म रहते हुए सात वष बीत चुके हैं सेनानी ! मैं निरतर इस प्रयत्न म रही कि किसी प्रकार इस गुप्त माग का पता कर सकू। पर मुझे सफलता नही मिली। सुना है कि किसी कक्ष की दीवार का प्रस्तर-खण्ड हटाकर इस माग म प्रवेश किया जाता है।

पुष्यमित्र कुछ समय तक चुपचाप सोच विचार करते रहे। फिर उन्होंने आवेश के साथ कहा— यही सही मधुरिका ! कुक्कुटाराम के सब कक्षा की दीवारें तोडकर इस गुप्त माग का पता लगाया जाएगा। हम केवल शतधनुष को ही नही ढूढना है अपितु हम उस गभगृह का भी सदा के लिए अत कर देना है जहां आयभूमि के विरुद्ध षडयन्त्र तयार किये जाते हैं। कौन जाने, आज भी इस गभगह म किसी नए कुचक्र की योजना बनाई जा रही हो।'

सूर्योदय स पूव ही सैकडो कमकर और स्थपिति कुक्कुटाराम पहुँच गए। पुष्यमित्र न वीरभद्र को बुलाकर आदेश दिया—'कुक्कुटाराम के सब कक्षो और भवना को खाली कर दिया जाए, कोई भी स्थविर श्रमण या भिक्षु वहां न रहन पाए सब सामान वहां से उठा लिया जाए। स्थपितिया और कमकरा न अपना काय प्रारम्भ कर दिया। देखते-देखते विशाल कुक्कुटाराम की सब दीवारा को ताडकर भूमिसात् कर दिया गया और सारे फश खोद डाले गए। पर कही भी कोई ऐसा प्रस्तर-खण्ड नही मिला, जहां

से किसी गुप्त मार्ग का प्रारम्भ होता हो। पुष्यमित्र स्वयं खड़े रहकर स्थपतियों के कार्य का निरीक्षण करते रहे। जब सांझ हो गई, तो उन्होंने जीवपुत्त को बुलाकर कहा—

'क्यों मधुरिका ! सम्पूर्ण कुक्कुटाराम भूमिसात् हो गया, पर कहीं गुप्तमार्ग का पता नहीं चला।'

'अभी वह चैत्य तो शेष है सेनानी ! मोग्गलान बहुधा रात्रि के समय वहां जाया करता था। कहीं इस चैत्य से ही गुप्तमार्ग का प्रारम्भ न होता हो।'

'क्या इस चैत्य को भी भूमिसात् करना होगा मधुरिका ! यह तो एक पूजा-स्थान है। भारत की जनता सब देव मन्दिरों और पूजा-स्थानों को समान रूप से श्रद्धा की दृष्टि से देखती है। क्या इसे तुड़वाना उचित होगा ?'

'यह मैं क्या जानूं, सेनानी ! यह निर्णय करना तो आपका कार्य है। पर यह असन्दिग्ध है कि इस विशाल विहार के नीचे जो सुविस्तीर्ण गर्भगृह है, वही सब षड्यन्त्रों और कुचक्रों का केन्द्र है।'

पुष्यमित्र कुछ देर तक चुपचाप बैठे रहे। फिर उन्होंने धीरे-धीरे कहा—'कौन कहता है यह चैत्य एक पूजा-स्थान है ? चैत्यों का निर्माण उपास्य देव की पूजा के लिए किया जाता है, शासनतन्त्र के विरुद्ध षड्यन्त्रों की रचना के लिए नहीं। इस चैत्य को भी हम भूमिसात् करना ही होगा।'

सेनानी का आदेश पाकर स्थपति और कर्मकर अपने कार्य में लग गए। आधी रात बीतने तक कुक्कुटाराम विहार का विशाल चैत्य भी खण्ड-खण्ड हो गया। उसकी दीवारें भी तोड़कर नीचे गिरा दी गईं। पर गुप्तद्वार का कहीं पता नहीं चला। पुष्यमित्र उद्विग्न थे, उनका सारा प्रयत्न व्यर्थ हो गया था। उन्हें चिन्तित देखकर मधुरिका ने कहा—'निराश न हों सेनानी ! यह मूर्ति अभी शेष है। जिस आधार पर यह विशाल मूर्ति स्थापित है, वह एक बड़े कमरे के समान है। उसके प्रस्तर-खण्डों को हटाने का आदेश प्रदान कीजिए।'

'पर मैं निराश नहीं होगा मधुरिका ! यदि प्रस्तर-खण्डों को हटाने हुए भगवान तथागत की मूर्ति को भी हानि पहुंच गई, तो घोर अनर्थ हो

जाएगा। हम बौद्ध धम के अनुयायी नही हैं पर गौतम बुद्ध ता हमारे लिए भी पूज्य हैं। उनकी मूर्ति को खण्डित करना पाप है मधुरिका !'

आप पाप-पुण्य का विचार कर रहे हैं, सेनानी पर यह न भूलिए कि हमे उस गभगह के गुप्त माग का पता करना है जहा आचाय दण्डपाणि की नशस हत्या की योजना बनाई गइ थी। यह गभगह ही स्थविरो के सब कुचक्रा का केद्र है। कौन जाने आज भी वहा कितने स्थविर छिपे हुए हो और मौय शासन-तन्त्र के विरुद्ध पडयन्त्र रचने मे तत्पर हो।'

'पर भगवान तथागत की मूर्ति को सुरक्षित रखने की व्यवस्था तो हमे करनी ही चाहिए, मधुरिका !

'इस मूर्ति पर आघात करना ता हमारा लक्ष्य नही है, सेनानी ! पर यदि गुप्त माग का पता लगाने हुए इसे कोई क्षति पहुँच गई, तो हमारा क्या दोष है ? यदि आवश्यकता हो तो इसे खण्डित करने म भी मेरी दष्टि म कोई पाप नही है सेनानी ! *उच्च उद्देश्य की पूर्ति के लिए हीन साधनों का* उपयोग भी करना ही पडता है। भगवान उशना ने इस तथ्य का प्रतिपादन किया था और आचाय चाणक्य भी इस शास्त्र-सम्मत मानते थे।'

तुम ठीक कहती हो मधुरिका ! यह समय पाप पुण्य के विचार का नही है।

पुष्यमित्र का सकेत पाते ही स्थपितियो और कमकरो ने अपना काय प्रारम्भ कर दिया। जिस आधार पर तथागत की मूर्ति स्थापित थी, उस पर आघात किए जाने लगे। अभी आठ-दस प्रस्तर-खण्ड ही अपने स्थान म हटे थे कि एक गुप्त माग दिखाई दिया। उसे देखते ही पुष्यमित्र प्रसन्नता स उछल पडे। आवेश म आकर उन्होंने कहा— वह रहा गुप्त माग अब और अधिक आघातो की कोई आवश्यकता नही। सब कोई पीछे हट जाए। आओ, मधुरिका, तुम मेरे साथ चलो।

मधुरिका का साथ लेकर पुष्यमित्र ने गुप्त माग म प्रवेश किया। कोई अस्सी सीढ़ियाँ उतरकर वे एक बडे भवन म पहुँच गए। इस भवन म प्रवेश का द्वार ता था, पर वहाँ से कही अयत्र जाने का कोई द्वार या माग दिखाई नही देता था। उसे देखकर पुष्यमित्र ने कहा— क्या मधुरिका क्या यही गभगृह है ?'

'नहीं, सेनानी ! गर्भगृह में तो बहुत-से कक्ष हैं। वह तो एक विशाल प्रासाद के समान है। इस भवन से होकर कोई अन्य मार्ग गया है। प्रश्न यह है कि उस मार्ग का द्वार कहाँ है ?' मधुरिका ने उत्तर दिया।

पुष्यमित्र मधुरिका को वहाँ छोड़कर फिर बाहर आ गए। कारु स्थपितियों को अपने साथ लेकर वह वापस गए और उनसे कहा—'इस भवन में कोई गुप्त द्वार है, जरा उसका पता तो लगाइए।'

स्थपितियों ने मंत्रों से प्रस्तर-खण्डों पर आघात करने प्रारम्भ किए। प्रत्येक आघात की ध्वनि को वे ध्यानपूर्वक सुनते जाते थे। एक स्थान पर आकर वे रुक गए और प्रसन्नतापूर्वक बोले—'द्वार यहाँ पर होना चाहिए सेनानी ! पर इस विशाल शिला को अपने स्थान से हटाया कैसे जाए।'

स्थपिति अपने काम में अत्यन्त कुशल थे। शीघ्र ही वे शिला को हटाकर गुप्त द्वार का पता करने में सफल हो गए। एक छोटी-सी कील को घुमाते ही द्वार स्वयमेव खुल गया। उससे होकर एक तंग-सी गली आगे की ओर गई थी जो पाँच सौ हाथ लम्बी थी। उसे पार करने पर वह विशाल गर्भगृह आ गया, जिसकी पुष्यमित्र को खोज थी। उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि वहाँ श्मशान की सी शान्ति थी। न वहाँ कोई स्थविर था, न कोई भिक्षु और न कोई परिचारक। सब कक्ष खाली पड़े थे। वह एक-एक करके सब कक्षों में गये पर कहीं भी जीवन के चिह्न दिखाई नहीं दिए। एक बड़े से कक्ष के समीप उन्हें हलकी हलकी दुर्गन्ध-सी अनुभव हुई। अन्दर प्रवेश करने पर उन्होंने देखा कक्ष अत्यन्त सुसज्जित है, सुख भोग के सब साधन वहाँ विद्यमान हैं और एक बड़ी-सी शय्या पर कोई व्यक्ति लेटा पड़ा है। उसका सारा शरीर वस्त्र से ढका हुआ है। वस्त्र को हटाते ही पुष्यमित्र चौंक पड़े और पाँच पग पीछे हटकर अपना माथा पकड़कर बैठ गए।

मधुरिका अभी कक्ष के बाहर ही खड़ी थी। उसने आश्चर्य से पूछा—'यह कौन है सेनानी !'

'सम्राट शतधनुष' पुष्यमित्र ने उद्वेग के साथ उत्तर दिया।

'सम्राट और यहाँ ?'

'हाँ मधुरिका ! पर उनका अब प्राणान्त हो चुका है। शव को देखने से प्रतीत होता है कि उनकी मृत्यु हुए पर्याप्त समय हो गया है।'

शतधनुप के शरीर का वही छोडकर पुष्यमित्र गभगह से बाहर आ गए। स्थविर वीरभद्र को बुलाकर उन्होंने आदेश दिया—'कुक्कुटाराम के सब स्थविरो, श्रमणा और भिक्षुओ को एक स्थान पर एकत्र करो। मुने कुछ आवश्यक बातें पूछनी है।'

कुक्कुटाराम के चैत्य के समीप पीपल का एक विशाल वक्ष था। उसकी छाया म सब स्थविरा और भिक्षुआ के एकत्र हो जाने पर पुष्यमित्र ने उन्ह सम्बोधन करके कहा— कुक्कुटाराम के नीचे जो एक विशाल गभगह है उसका पता मुझे लग गया है। अब मुझे यह मालूम करना है कि आप म स कौन-कौन इस गभगह मे आते जात रहे हैं। जो कोई कभी इस गह म गए हो, वे उठकर खडे हा जाएँ।

सब अपने-अपने स्थान पर बठे रहे। कोई भी उठकर खड़ा नही हुआ। इस पर पुष्यमित्र ने कहा— आप सब मौय सम्राट की प्रजा हैं। शासनतन्त्र के आदेशा का पालन करना आपका कत्तव्य है। मैं आपसे एक बार फिर कहता हू जा कोई कभी इस गभगह मे गया हो वह उठकर खडा हो जाए।'

इस बार भी कोई व्यक्ति उठकर खडा नही हुआ। पुष्यमित्र न फिर कहा— मैं तीसरी बार अपने आदेश को दोहराता हूँ। जो कोई कभी इस गभगह म गया हा उठकर खडा हो जाए। यह राजशासन है, यह मागध साम्राज्य के सेनानी का आदेश है। इसको स्वीकार न करने का जा परिणाम होगा, उसे आप भलीभाति जानत हैं। कुक्कुटाराम भूमिसात किया जा चुका है, और उसका चत्य खण्डहर कर दिया गया है। राजकीय आदेश का उल्लघन करना राजद्रोह है, और राजद्रोह का दण्ड है मृत्यु। यहा जो भी स्थविर, भिक्षु और श्रमण एकत्र हैं सब राजद्रोही घोपित कर दिए जाएँगे यदि मेरे आदेश का तत्काल पालन न किया गया।'

सेनानी की कठोर मुखमुद्रा को देखकर पाँच भिक्षु उठकर खडे हो गए। पुष्यमित्र ने उन्ह अपने पास बुलाकर कहा— जब तुम गभगह को जानते थे और अनेक बार वहाँ आ जा भी चुके थे, ता तुमने गुप्त मार्ग का पता क्या नहीं बताया ? कुक्कुटाराम के विध्वस के लिए तुम्ही उत्तरदायी हो। तुम्हे इसका दण्ड भोगना होगा।

हम पर दया कीजिए, सेनानी ! हम अकिंचन दास हैं और स्थविरा...

की सेवा मे नियुक्त हैं। यद्यपि हम भिक्षुवेश म रहते हैं पर प्रव्रज्या हमने ग्रहण नही की है। गभगह म हम आन जाते अवश्य रहे हैं पर उसके गुप्त माग का हम परिज्ञान नही है। आँखो पर पट्टी बाधकर हम वहाँ ले जाया जाता था और वहाँ से वापस लौटते हुए भी हमारी आँखो पर पट्टी बाँध दी जाती थी। एक भिक्षु ने हाथ जोडकर कहा।

'अच्छा यह बात है। पर गभगह म तुम्हे ले कौन जाता था ?

भिक्षुओ न इसका कोई उत्तर नही दिया। वे चुपचाप खडे रहे। इस पर पुष्यमित्र ने क्रुद्ध होकर कहा—

बोलत क्यो नही ? मैं क्या पूछ रहा हूँ ? गुप्तमाग से कौन तुम्हे गभ गह मे ले जाया करता था ?

स्थविर वीरभद्र। एक भि ु ने हकलाते हुए उत्तर दिया।

अपना नाम सुनत ही वीरभद्र भाग खडा हुआ। पर भिक्षु जीवपुत्त ने तुरन्त उसका पीछा किया और पकडकर उसे सेनानी के सम्मुख उपस्थित कर दिया। वीरभद्र का दायाँ हाथ पकडकर पुष्यमित्र ने कहा—

कहिए स्थविर! भगवान तथागत द्वारा प्रतिपादित अष्टागिक आय माग का अनुसरण क्या इसी ढग से किया जाता है ? भगवान की शपथ लेकर झूठ बोलन मे भी आपको कोइ सकोच अनुभव नही होता। अच्छा, अब यह बताइए सम्राट शतधनुष की मृत्यु किस प्रकार हुई ?

वीरभद्र क लिए सत्य को छिपा सकना अब सम्भव नही रहा था। उसन कहा मघ-स्थविर मोग्गलान की इच्छा थी कि सम्राट भी उनके साथ शाकल नगरी के लिए प्रस्थान कर दें। पर सम्राट इसके लिए उद्यत नही हुए। गभगह म भोग विलास के सब साधन विद्यमान थे। वहाँ सुरा भी थी और रूपाजीवाएँ भी। षडरस भोजन और सुन्दर वस्त्र भी वहाँ यथष्ट परिमाण म उपलब्ध थे। सम्राट को और क्या चाहिए था ? उन्होन वही रहन का निश्चय किया। चिरकाल तक सुखभोग क सब साधन हम उनक लिए जुटात रह।

फिर उनकी मृत्यु किस प्रकार हो गई ?

सम्राट को अपनी इन्द्रियो पर जरा भी वश नही रह गया था। व रात भर सुरापान करत और गणिकाओ क साथ क्रीडा म रत रहा

करते। अत्याधिक सुरा-सवन के कारण उनका शरीर जजर हो गया था, और उनके लिए शय्या से उठ सकना भी सम्भव नही रहा था। एक बार जब वह मदिरा पान करके सोए, तो फिर उठे नही। हृदय की गति बन्द हो जाने से उनकी मृत्यु हो गई।'

'किसी ने उन्हे विष तो नही दिया!'

'नहीं, शव परीक्षा द्वारा आप मेरी बात की सचाई को जान सकते हैं।

'तुमने उनका दाह सस्कार क्या नही कराया?'

'सघ-स्थविर मोग्गलान का यही आदेश था। वह नही चाहते थे कि सम्राट की मृत्यु का समाचार किसी को भी ज्ञात हो पाए। वह इसे गुप्त रखना चाहते थ।'

'यह किसलिए?'

'ताकि उपयुक्त अवसर आने पर उन्हे सम्राट घोषित किया जा सके। मोग्गलान की यह योजना थी कि मिनेन्द्र की सेनाए जब मगध का आक्रान्त कर लें, तो यह घोषणा कर दी जाए कि बृहद्रथ को राजसिंहासन से च्युत कर दिया गया है और शतधनुष ने सम्राट पद सभाल लिया है। शतधनुष युद्ध के बिना ही मिनेन्द्र की अधीनता स्वीकार कर लें और सम्पूण भारत पर यवनराज का आधिपत्य स्थापित हो जाए।

पर शतधनुष की तो मृत्यु हो चुकी थी।

सघ-स्थविर मोग्गलान चाहते थे कि किसी अन्य व्यक्ति को शतधनुष बताकर उसके नाम से सब काय सम्पन्न कर दिये जाए। फिर यह घोषणा कर दी जाए कि सम्राट अब स्वेच्छापूवक भिक्षुव्रत ग्रहण कर रहे हैं और अपना शेष जीवन वह बुद्ध, धम और सघ की सेवा म व्यतीत करना चाहते हैं। भारत के राजाओ म यह परम्परा रही भी है। इससे किसीको यह सन्देह न होता कि शतधनुष पञ्चत्व को प्राप्त हो चुके हैं और यवनराज मिनेन्द्र का आधिपत्य मगध पर स्थापित हो जाता।'

'तो पाटलिपुत्र मे इस योजना का तुम्हे क्रियान्वित करना था?'

वीरभद्र ने इसका कोई उत्तर नही दिया। वह चुपचाप खडा रहा। पुष्यमित्र ने उससे फिर कहा, 'मैं समझता था कि मगध के जो स्थविर और भिक्षु कश्यप और मोग्गलान के षडयन्त्रा मे सम्मिलित थे, वे सब शाकल के

के लिए आया करते हैं। व तो पूणतया निरपराध हैं, सेनानी! हम सबकी प्राथना है कि चत्य को भस्म न किया जाए।

पुष्यमित्र कुछ क्षण सोच विचार म मग्न रहे। फिर उन्होंने धीरे धीरे कहा—क्या आप सबकी यही इच्छा है?' हजारा कण्ठो ने एक स्वर से कहा, 'हाँ, सेनानी!'

तो ठीक है। जनता की इच्छा का आदर करना शासनतन्त्र का प्रथम कतव्य है। इस चत्य को भस्मसात नहा किया जाएगा। पर इसमें केवल वही स्थविर और भिक्षु पूजापाठ के लिए रह सकेंगे, जो वस्तुत धार्मिक हो।

सेनानी पुष्यमित्र के जय-जयकार स सम्पूण आकाश गूज उठा और धीरे धीरे सब नर-नारी अपन-अपने घरा को वापस लौट गए। कुक्कुट विहार का यह विशाल चत्य सदियो तक अक्षुण्ण दशा म कायम रहा। चीनी यात्री ह्यु एनसाग आठ सदी पश्चात भारत-यात्रा करता हुआ जब पाटलिपुत्र आया था तो उसने इस प्राचीन चत्य को अपनी आँखा से देखा था और इसकी विशालता को देखकर वह आश्चयचकित रह गया था।

निपुणक का कुचक्र

आधी रात बीत चुकी थी पर माधवी अभी सोई नहीं थी। वह बारम्बार अन्तःपुर क प्रवेश द्वार तक आती और बाहर झाँककर अपने शयनकक्ष का लौट जाता। जब रात्रि के तीन प्रहर बीत गए तो उन्हें हल्की-सी कपाट ध्वनि सुनाई दी। वह उठकर तुरन्त बाहर आई और एक छाया को देखकर धीरे स बोली—कौन है?' छाया न उत्तर दिया, 'वरुणा। माधवी न कहा अन्दर आ जाओ। छायामूर्ति माधवी क शयन-कक्ष म प्रविष्ट हाकर चुपचाप एक ओर खडी हो गई। उस ध्यान से देखकर माधवी न कहा तुमन इतनी देर क्यो लगा दी निपुणक! मैं कब स तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हूँ?

सब बताता हूँ राजमाता! पर मुझ कुछ क्षण विश्राम कर लेने

दीजिए। वहुत थक गया हू, प्यास भी वहुत लगी है। क्या पीने को कुछ मिल जाएगा ?' निपुणक न उत्तर दिया ?

क्या पियोगे ?' शीतल जल या और कुछ ?'

'जल से काम नही चलेगा, राजमाता ! सुबह से भूखा-प्यासा हूँ। गला सूख रहा है, वालने तक म कठिनाई अनुभव हो रही है। क्या एक चपक मदिरा नही मिल सकेगी।

'क्या नही, निपुणक ! यहाँ किस वस्तु की कमी है ? मरेय माध्वीका, जो चाहो लकर अपनी श्रान्ति मिटा लो।'

निपुणक न मरेय के चार चपक पीकर शान्ति की सास ली। उसे स्वस्थ देखकर माधवी न कहा—

'मैं पूछ रही थी तुमने इतनी देर क्यो लगा दी, निपुणक !

'क्या वताऊँ, राजमाता ! राजप्रासाद के सब महाद्वार बन्द हैं। दिन के समय भी व नही खुलते। मनुष्य के लिए तो क्या, पशु पक्षियो तक के लिए भी राजप्रासाद म प्रवेश पा सकना सम्भव नही है। चारो ओर प्रहरी नियत है। पुराने प्रहरियो को छुट्टी दे दी गई है और पुष्यमित्र ने अपने सनिको को पहर के लिए नियुक्त कर दिया है। य प्रहरी किसी से वात तो करते ही नही। किसी को अपनी ओर आत देखते हैं तो झट तलवार चला देते है। न जान पुष्यमित्र इन्हें कहाँ से ले आया है ? ऊँचाई म पूरे छ हाथ हैं। हमारी भाषा तक नही समझते। वडी कठिनाई से राजप्रासाद म प्रवेश पा सका हूँ राजमाता !

'तुम आजकल रहते कहाँ हो निपुणक ! कितने दिनो से तुम्हे याद कर रही थी।

क्या वताऊँ, राजमाता ! पुष्यमित्र के मारे नाक म दम है। हिंस्र पशु के समान मेरी टोह म लगा है। मोग्गलान के सब साथियो को ढूँढ-ढूँढकर बधनागार मे डाल रहा है। अच्छा होता मैं भी शाकल नगरी चला जाता। सघ-स्थविर से कितना कहा पर वह नहा माने। कहन लगे, तुम्हे पाटलिपुत्र म ही रहना होगा। तुम्हारे बिना यहाँ का काम कौन देखेगा ? क्या करता, मन मारकर रह गया। गगा के दक्षिणी घाट पर एक मल्लाह के वेश म अपने दिन काट रहा हूँ। एक छोटी-सी नौका खरीद ली है उसी से अपना

निर्वाह कर रहा हूँ। कल प्रात आपकी दासी गंगास्नान के लिए घाट पर आई थी। मुझे देखते ही पहचान गई। पहचानती क्यों नहीं राजमाता! कितने समय तक इसी राजप्रासाद में अन्तःपुर के द्वार पर घूमा हूँ और फिर आतवशिर के पद पर भी रहा हूँ। मुझे यहाँ कौन नहीं जानता? मल्लाह के वेश में भी मुझे वह पहचान गई। उसने ही बताया 'राजमाता आपको स्मरण कर रही हैं, सेनापति!'

फिर कल प्रात ही तुम यहाँ क्यों नहीं आ गए?

कैसे आता राजमाता! सब ओर पहरा जो था। गंगा के तट पर राजप्रासाद से लगा हुआ जो एक पुराना वट वृक्ष है दिन भर उसकी शाखाओं में छिपकर बैठा रहा। अन्न का एक दाना तक मुँह में नहीं गया। प्रहरी वट वृक्ष के आसपास चक्कर लगाते रहे पर मुझे नहीं देख पाए। इस वृक्ष की एक शाखा राजप्रासाद की प्राचीर के समीप तक चली गई है। जब रात हो गई और सर्वत्र अँधेरा छा गया तो उस शाखा से होकर मैं धीरे से प्राचीर पर सरक गया। अवसर पाते ही एक रस्सी के सहारे नीचे उतर आया और छिपते छिपते किसी प्रकार यहाँ तक आने में समर्थ हुआ।

'साधु निपुणक! साधु। अच्छा अब यह बताओ बाहर का क्या हाल चाल है? कहने को तो मैं राजमाता हूँ और मेरा पुत्र सम्राट है पर अन्त-पुर के इस खण्ड में एक राजबन्दी का सा जीवन बिता रही हूँ। न मैं कहीं बाहर जा सकती हूँ और न कोई मेरे पास आ सकता है।

सर्वत्र यही दशा है राजमाता! पुराने सब मन्त्री सचिव और अमात्य राजसेवा से मुक्त कर दिये गए हैं। मुझ ही देखिए न! कभी मैं इस राजप्रासाद का आतवशिर था सब सैनिक मुझे देखते ही हाथ उठाकर प्रणाम करते थे। माताएँ मुझे देखकर बच्चों को अपने आँचल में छिपा लेती थीं कैसा आतंक था मेरा! फिर मौर्य साम्राज्य के सेनानी पद पर भी रहा। साम्राज्य भर के दुर्गाध्यक्ष अन्तपाल और सेनानायक मेरे नाम से थर-थर काँपा करते थे। पर आज मेरी क्या दशा है? राजमाता फटे-पुराने चिथड़े पहनकर रहता हूँ और लोगों को गंगा के पार उतारकर जो दो चार कार्षापण प्राप्त हो जाते हैं उनसे अपना निर्वाह करता हूँ। यह भी कोई जीवन है? पर आप चिन्ता न करें राजमाता! ये दिन सदा नहीं रहेंगे

मोग्गलान की शक्ति अपार है पुष्यमित्र उनके सम्मुख नहीं टिक सकेगा। अच्छा अब यह कहिए, राजमाता ! मुझे आपने किसलिए बुलाया है ?'

'क्या यह भी तुम्हें बताना होगा निपुणक ! शतधनुष का कहीं पता नहीं है। सबसे पूछते पूछते थक गई। कुछ दिन हुए पुष्यमित्र के पास भी गई थी पर वह भी कुछ नहीं बता सका। सोचा, योगमाया सिद्ध शतमाय से मिलूं। सम्भवत, उन्हें कुछ पता हो। वह तो त्रिकालदर्शी हैं न ? भूत, भविष्य वर्तमान—सब उन्हें प्रत्यक्ष हैं। पर उन्हें मैं कहाँ पाती ? तुम तो उनका पता जानते ही होगे ? पहले भी तुम्हीं उन्हें मेरे पास लाए थे। एक बार फिर उनसे मेरी भेंट करा दो। तुम्हें इसीलिए स्मरण किया था।

'शतमाय को बुलाकर क्या करेंगी राजमाता ! मुझे सब कुछ ज्ञात है।'

तुम शतधनुष के विषय में सब कुछ जानते हो ? पहले ही क्यों नहीं कह दिया ?'

सम्राट कुक्कुटाराम के गर्भगृह में निवास कर रहे थे। वहाँ उन्हें किसी प्रकार का कोई भी कष्ट नहीं था। सब सुख-सुविधाएँ वहाँ उन्हें प्राप्त थीं। शाकल जाते हुए मोग्गलान मुझे कह गए थे—सम्राट का ध्यान रखना उन्हें कोई कष्ट न होने पाए। पर उन्हें गर्भगृह से बाहर कहीं भी न जाने देना। पुष्यमित्र के सर्वत्र गुप्तचर नियुक्त हैं। कहीं कोई उन्हें देख न ले। सम्राट गर्भगृह में ही निवास करें और वहीं रहते हुए उपयुक्त समय की प्रतीक्षा करें। स्थविर मुझे यह भी कह गए थे कि सम्राट के विषय में कोई कुछ न जान सके गर्भगृह में उनके निवास की बात पूर्णतया गुप्त रहे।

तो शतधनुष कुक्कुटाराम में हैं ? वह कुशल से तो हैं ? उनका शरीर तो स्वस्थ है ? उन्हें कोई कष्ट तो नहीं है ? क्या तुम मुझे उनसे मिलवा नहीं सकते ?'

क्षण भर धैर्य रखें राजमाता ! सब बताता हूँ। न जाने पुष्यमित्र को कैसे यह पता लग गया कि सम्राट कुक्कुटाराम के गर्भगृह में हैं। फिर क्या था उसके सैनिकों ने कुक्कुटाराम को घेर लिया। रात भर वे गर्भगृह के गुप्त मार्ग का पता लगाते रहे। स्थविरों को बुलाया भिक्षुओं को बुलाया, उन पर अनेक प्रकार के अत्याचार किए उन्हें कठोर यातनाएँ दीं। पर किसी ने गुप्त मार्ग का पता नहीं बताया।'

साधु स्थविरों और भिक्षुओं से मुझे यही आशा थी। अच्छा, फिर क्या हुआ ?'

जब पुष्यमित्र ने यह देखा कि स्थविरों और भिक्षुओं से गुप्त मार्ग का पता लगा सकना असम्भव है तो उसने स्थपतियों और कर्मकरों को बुला कर यह आदेश दिया कि कुक्कुटाराम के सब भवनों और कक्षों की दीवारों को तोड़ दिया जाए सारे फर्श खोद दिए जाएँ और भगवान् तथागत की मूर्ति तक को खण्डित कर दिया जाए।

'ओह कितना नृशंस है यह पुष्यमित्र ! विहारों और चैत्यों तक का इसकी दृष्टि में कोई महत्त्व नहीं है। उसने कुक्कुटाराम का विध्वंस करने में भी संकोच नहीं किया। अच्छा फिर क्या हुआ ?

पुष्यमित्र के आदेश से कुक्कुटाराम भूमिसात् कर दिया गया पर गर्भ गृह के गुप्त मार्ग का तब भी पता नहीं लगा। यह देखकर पुष्यमित्र क्रोध से पागल हो गया और उसने कुक्कुटाराम को आग से भस्म कर देने की आज्ञा दे दी। विहार और चैत्य राख के ढेर के रूप में परिवर्तित हो गए और न जाने कितने स्थविर और भिक्षु इस अग्नि में जलकर भस्म हो गए।

क्या कहा निपुणक ? कुक्कुटाराम को भस्म कर दिया गया ?

हाँ राजमाता ! न अब कुक्कुटाराम है और न उसका विशाल चैत्य। सब जलकर भस्म हो गए हैं।

तो शतधनुष का क्या हुआ ?'

बड़ा बुरा समाचार है राजमाता ! भगवान् तथागत आपको उसे सुन सकने की शक्ति प्रदान करें ! हाय यह भी मेरे ही भाग्य में बदा था, कि माता को पुत्र की नृशंस हत्या का समाचार दूँ। सम्राट को भी इन आततायियों ने अग्नि में भस्म कर दिया। जब आग की प्रचण्ड लपटों ने गर्भगृह को व्याप्त कर लिया तब मैं भी वहीं उपस्थित था, राजमाता ! मैंने बहुत यत्न किया किसी प्रकार सम्राट की प्राणरक्षा कर सकूँ। आप जानती ही हैं गर्भगृह में एक सुरंग राजप्रासाद तक आती है। मैं सम्राट को इसी सुरंग मार्ग में बचाकर लाने का प्रयत्न कर रहा था। पर पुष्यमित्र स्वयं वहाँ आ गया और खड्ग उठाकर उसने कहा— तुम कौन हो ? यहाँ क्या करने आए हो ? मैं क्या करता राजमाता ! मेरी आँखों के सामने सम्राट आग

मे भस्म हो गए। हाय मैं उन्हे नही बचा सका।'

शतधनुप की दारुण मृत्यु के समाचार को सुनकर राजमाता माधवी चीत्कार कर उठी।। निपुणक ने उन्हें धय बधाते हुए कहा— अब शोक से क्या लाभ है राजमाता। शतधनुप अब इस असार ससार म नही रहे पर वृहद्रथ तो अभी जीवित हैं। आप उनकी चिता करें। यह पुष्यमित्र उनको भी जीवित नही छोडेगा। यह मौय राजकुल के सवनाश पर उतारू है। मौय वश के सब कुमार इसको आँखो म शूल क समान चुभते हैं। मुझ भय है कि यह वृहद्रथ की भी वही गति न कर दे जो शतधनुप की की है। पुष्यमित्र स वृहद्रथ की रक्षा करन के लिए आपको धय धारण करना होगा राजमाता।

माधवी देर तक सिसक सिसककर रोती रही। कुछ शात होने पर उसने कहा— तुम ठीक कहत हो निपुणक। शतधनुप चला गया अब हो ही क्या सकता है? अब तो हमे वहद्रथ की चिन्ता करनी चाहिए।

कुछ दिन धय रखें राजमाता। सघ-स्थविर मोग्गलान की शक्ति पर विश्वास रखिए। शाक्ल म वह चुप नही बठे हैं। यवनराज मिनन्द्र की सहायता स पुष्यमित्र का विनाश करन की तयारी म लग हैं। शीघ्र ही यवन सेनाए मध्य देश को आक्रान्त करती हुइ पाटलिपुत्र पहुँच जाएँगी। पुष्यमित्र उनके सम्मुख नहा टिक सकगा। मगध का शासन फिर हमारे हाथो म आ जाएगा।'

तुम्ह मगध के शासन की पडी है निपुणक। तुम्ह वहद्रथ के प्राणो की रक्षा की जरा भी चिन्ता नही। यह कहकर माधवी एक बार फिर करुण स्वर म विलाप करने लगी। निपुणक कुछ कहने को ही था कि उन्होने उस रोककर कहा— अब अधिक न बोलो। मरा मन बहुत विक्षुब्ध है मूर्छा सी आ रही है। अब तुम जाओ, मुझ अकेला छोड दो।

पर निपुणक वहा स गया नही। घडी भर विलाप कर लेने के अनन्तर माधवी जब कुछ शान्त हुई तो उन्होन धीरे धीरे कहा— तुम अभी यहा हो निपुणक। हाँ जाओगे भी कहाँ? अन्त पुर के चारो ओर पहरा है। पुष्यमित्र के गुप्तपुरुष तुम्ह देख लेंगे तो जीता नही छाडेंगे। तुम्ही तो इस समय मरे एकमात्र सहारा हो। जाओ अब कुछ घडी विश्राम कर लो।

निपुणक चुपचाप बैठा रहा। उसे बैठा देखकर माधवी ने कहा—'यह मेरा शयन-कक्ष है। यहाँ तुम कैसे आओगे? साथ लगा हुआ मेरा प्रसाधन कक्ष है वहाँ जाकर कुछ देर सो लो। थके हुए हो। मैं भी कुछ देर लेट लेती हूँ। नींद आ गई तो शरीर हल्का हो जाएगा।

निपुणक प्रसाधन कक्ष में जाकर भूमि पर लेट गया। बहुत थका हुआ था। लेटते ही उसे नींद आ गई। जब वह जागकर उठा दिन के तीन प्रहर बीत गए थे। माधवी उसके पास आकर बैठ गई और उसने धीरे धीरे कहा—ऐसा प्रतीत होता है प्रहरियों को कुछ सन्देह हो गया है। दो दासियाँ बार-बार यहाँ का चक्कर लगा रही हैं। अन्य दिन तो कोई मेरी सुध ही नहीं लेता था। आज यह नई बात क्या हो गई? अवश्य दाल में कुछ काला है।

आप चिन्ता न करें राजमाता! कभी मैं भी सत्रिया और गूढ़पुरुषों का आचार्य रहा हूँ। छद्म वेश बनाना मुझे खूब आता है। स्नानागार में जाता हूँ जब वापस आऊँगा तो आप भी मुझे नहीं पहचान सकेंगी।

कुछ समय पश्चात् एक वृद्धा दासी माधवी के शयन कक्ष में प्रविष्ट हुई। पके हुए बाल झुकी हुई कमर और टूटे हुए दाँत। माधवी के सम्मुख सिर झुकाकर उसने कहा—राजमाता की जय हो! कहिए मेरे लिए क्या आज्ञा है? माधवी उसे आश्चर्य में देखती रह गई। दासी ने माधवी के कान के पास मुख ले जाकर कहा—पहचाना नहीं राजमाता! मैं हूँ निपुणक!

निपुणक को इस वेश में देखकर माधवी प्रसन्न हो गई। उसने कहा—अब ठीक है। अब तुम्हें कोई नहीं पहचान सकता। पर अन्तःपुर की स्त्रियाँ जब तुम्हारे बारे में पूछेंगी तो मैं क्या उत्तर दूँगी!

आप निश्चिन्त रहें राजमाता! मैं स्वयं सबसे परिचय कर आता हूँ।

अन्तःपुर में सैकड़ों दासियाँ थीं। एक नई दासी को अपने बीच में देख कर उन्हें विशेष कौतूहल नहीं हुआ। पूछने पर निपुणक ने कह दिया—मैं राजमाता के पितृ गृह से आई हूँ। शतधनुष की अकाल मृत्यु के समाचार से उनके मातुल और अन्य बन्धु शोक से व्याकुल हो गए। उनकी मातामही तो रात-दिन मूर्छित हो गई। बड़ी कठिनता से मैंने उन्हें सँभाला। स्वस्थ होने पर उन्होंने मुझसे कहा—सुनो गौतमी तुरन्त पाटलिपुत्र चली जाओ।

माधवी की न जाने क्या दशा होगी। तुम बचपन से उसके साथ रही हो, तुम्हारी सेवा से ही वह पलकर बड़ी हुई है। जाओ इस समय भी उसकी संभाल करो। माधवी मेरी अपनी बेटी के ही समान है। शतधनुष को भी गोदी में खिलाती रही हूँ। रात दिन यात्रा करते हुए कल रात ही पाटलिपुत्र पहुँची थी। महाद्वार पर मुझे प्रहरियों ने रोका, तो मैं सीधी सेनानी के पास चली गई। सेनानी बड़े दयालु हैं। मेरा परिचय पाते ही उन्होंने मुझे राजप्रासाद में जाने की अनुमति प्रदान कर दी। पुत्र की मृत्यु से माधवी अत्यंत उद्विग्न है। कुछ दिन उनके पास रहूँगी, तो उन्हें शांति प्राप्त होगी।'

अन्तःपुर की स्त्रियों और दासियों को अपना परिचय देकर निपुणक माधवी के पास लौट आया। उसे पास बिठाकर माधवी ने कहा—'हाँ, अब बताओ कल तुम क्या कह रहे थे ?'

यवनराज मिनेन्द्र की शक्ति असीम है, राजमाता ! पुष्यमित्र उनके सम्मुख नहीं टिक सकेगा। यवन सेनाएँ पाटलिपुत्र पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लेंगी। स्थविर मोग्गलान फिर वापस लौट आएँगे, और मगध का शासन फिर हमारे हाथों में आ जाएगा।'

पर मगध पर तब यवनों का शासन हो जाएगा। क्या यह उचित होगा निपुणक ?

'यवन जिन प्रदेशों को जीतकर अपने अधीन कर लेते हैं उनका शासन स्वयं नहीं करते। यदि वहाँ का राजा उनका आधिपत्य स्वीकार कर ले, तो वे राजसिंहासन पर उसी को आरूढ़ रहने देते हैं। कपिश गन्धार में उन्होंने यही किया। मद्रक जनपद उनकी अधीनता स्वीकार करता है पर वहाँ का शासन अब भी मद्रक गण के ही हाथों में है। यदि सम्राट बृहद्रथ ने भी यवनराज के आधिपत्य को स्वीकृत कर लिया तो पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर वही आरूढ़ रहेंगे। अन्तर केवल यह आएगा कि वह पुष्यमित्र के चंगुल से मुक्त हो जाएँगे। पुष्यमित्र बड़ा क्रूर है। शतधनुष को उसने जीते जी आग में भस्म कर दिया। यवन ही उसे नीचा दिखा सकते हैं राजमाता !

'यवनों का आक्रमण कब तक होगा ?

अभी इसमें समय लगेगा, राजमाता ! मिनेन्द्र तैयारी में लगे हैं। अन्य यवन राजाओं क्षत्रपों और सेनापतियों को अपने साथ मिलाने का प्रयत्न

कर रहे हैं। पुष्यमित्र की सैन्यशक्ति नगण्य नहीं है। साकेत के युद्ध में वह अनुपम वीरता प्रदर्शित कर चुका है। उसे परास्त करने के लिए यवनों की शक्ति को सगठित करना आवश्यक है। मिनेन्द्र इसी के लिए प्रयत्नशील हैं। पर इस बीच में हमें भी चुप नहीं बैठना चाहिए। हमें यह प्रयत्न करना चाहिए कि ज्यों ही यवन सेनाएँ मध्यदेश में प्रविष्ट हों, सर्वत्र पुष्यमित्र के विरुद्ध विद्रोह हो जाए। इस सब तैयारी में अभी कई वर्ष लग जाएँगे।

'पर इस बीच में यदि पुष्यमित्र ने बृहद्रथ के विरुद्ध कोई षड्यन्त्र किया तो क्या होगा? मुझे अपने पुत्र की प्राणरक्षा की चिन्ता है निपुणक!'

हाँ यह बात विचारणीय है। हमें ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि पुष्यमित्र सम्राट का बाल भी बाँका न कर सके। अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए वह कुछ भी कर सकता है।

तो इसका कुछ उपाय करो निपुणक! मुझे केवल तुम्हारा ही भरोसा है।

निपुणक कुछ देर चुपचाप विचार करता रहा। फिर उसने चुटकी बजाकर कहा— पुष्यमित्र से सम्राट की रक्षा करनी ही होगी राजमाता! मगध के सम्राट बृहद्रथ है न कि पुष्यमित्र। सम्राट स्वामी हैं और मन्त्री सचिव अमात्य, सेनापति—सब उनके अनुचर हैं। स्वामी जिसे चाहे सेवा में रखें जिसे चाहे सेवा से मुक्त कर दे। पुष्यमित्र एक सेनापति ही तो है। क्या सम्राट उसे पदच्युत नहीं कर सकते? आप उन्हें समझाइए, राजमाता!

'बृहद्रथ अब युवा हो गया है निपुणक! जब सन्तान बड़ी हो जाती है तो माता पिता के कथन का उसको दृष्टि में कोई महत्त्व नहीं रहता। ससार का यही नियम है। मैं उसे समझाकर क्या करूँगी? मेरी बात तो वह सुनेगा भी नहीं। इस आयु में तो युवक अपनी पत्नी की ही बात सुना करते हैं।

'तो आप उनका विवाह क्यों नहीं कर देतीं राजमाता! जो कुमारी मगध की साम्राज्ञी बनकर आएगी पुष्यमित्र की प्रभुता को वह कदापि सहन नहीं करेगी। युवा पुरुष अपनी पत्नियों के दास होकर रहा करते हैं। सम्राट को पुष्यमित्र से विमुख करने का यही उपाय है राजमाता!

बृहद्रथ के विवाह की चर्चा से माधवी का मन पुलकित हो गया। उसने पूछा— कोई कुलीन कुमारी तुम्हारी दृष्टि म है, निपुणक ?'

'मद्रक जनपद का गणमुख्य सोमदेव बहुत सम्पन्न और प्रतापी है। उसकी पुत्री विदुला अत्यन्त रूपवती है। अपनी आयु के उन्नीस वष पूर्ण कर अब वह बीसवें वष मे प्रवेश कर रही है। बुद्ध धम और सघ म उसकी प्रगाढ श्रद्धा है। स्थविर कश्यप क चरणो म बठकर उसने अठारह विद्याआ की शिक्षा प्राप्त की है। सम्राट के लिए वह सब प्रकार से उपयुक्त है, राजमाता ! विदुला यदि साम्राज्ञी बनकर पाटलिपुत्र आ गई, तो पुष्यमित्र की एक न चलन देगी। मोग्गलान इस विषय म सोमदेव से बात भी कर चुके हैं।'

'पर मद्रक म तो गण शासन है, निपुणक ! विदुला राजकुमारी तो नही है।

'मौर्यों के अतिरिक्त अन्य कोई राजकुल अब भारत म रह ही कहाँ गया है राजमाता ! मद्रक जनपद अत्यन्त विशाल और समृद्ध है। वहाँ का गणमुख्य किसी राजा से क्या कम है ? गणमुख्यो की कन्याओ से विवाह मौय कुल की परम्परा के अनुकूल है राजमाता ! परमप्रतापी राजा चन्द्रगुप्त मौर्य मोरिय गण की कुमारी क पुत्र थ, और प्रियदर्शी राजा अशोक ने एक श्रेष्ठी की कन्या से विवाह किया था। विदुला कुलीन है रूपवती है राजनीति म निपुण है और सद्धम म श्रद्धा रखती है।

'पर प्रश्न यह है कि बृहद्रथ को इसके लिए सहमत किस प्रकार किया जाए ?'

यह समस्या कठिन नहीं है राजमाता ! मुझे केवल आपकी अनुमति चाहिए। मेरा सन्देश प्राप्त होत ही मध-स्थविर मोग्गलान विदुला को पाटलिपुत्र भिजवान की व्यवस्था कर देंगे। विदुला को देखत ही सम्राट उस पर मुग्ध हो जाएँग। वह मद्रक कुमारी है राजमाता ! कच्चे दूध का सा रग काली घटा जसी केश राशि लता जसी शरीर यष्टि और हँसती हुई आँखें। सम्राट को और क्या चाहिए ? विदुला जसी रूपवता दिया लेकर ढूढन से भी नही मिलेगी, राजमाता ! वह सच्चे अर्थो म सम्राट की सह धर्मिणी बनकर रहेगी। उसके रहत हुए पुष्यमित्र की एक न चलेगी।

'पर क्या विदुला निरापद रूप से पाटलिपुत्र पहुच सकेगी ?

क्या नही राजमाता ! यह काम मुझ पर छोड दीजिए। मोग्गलान इसकी सब व्यवस्था कर चुके हैं। तीर्थ-यात्रियो की मण्डलिया मध्यदेश के मदिरो चत्यो और तीर्थ स्थानो के दर्शन के लिए भारत के सब जनपदो से आती रहती हैं। विदुला भी तीर्थ यात्रा के निमित्त से ही इधर आएगी और श्रावस्ती काशी प्रयाग आदि होती हुई पाटलिपुत्र पहुच जाएगी। आप इस विषय म निश्चिन्त रह राजमाता !

'क्या विदुला को यह सब समझा दिया गया है ?

हाँ राजमाता ! स्थविर मोग्गलान अत्यन्त दूरदर्शी हैं। उन्ही के आदेश स यह प्रस्ताव मैंने आपके सम्मुख प्रस्तुत किया है। पिछले दिनो मैं केवल नौका चलाकर यात्रियो को गगा के पार ही नही उतारता रहा हूँ। छद्म वश म रहकर स्थविर की योजनाओ की सफलता के लिए भी मैं प्रयत्न करता रहा हू। मर समान कितने ही अय व्यक्ति भी स्थविर की योजनाओ को क्रियान्वित करने के लिए प्रयत्नशील है। इस अन्त पुर म भी हमारे कितने ही सत्री नियुक्त हैं। विदुला भी एक महान आदर्श को सम्मुख रख कर पाटलिपुत्र आन क लिए उद्यत हुई है। यह महान आदर्श है सद्धम की रक्षा और उत्कर्ष।

तो फिर मुझे तुम्हारे प्रस्ताव को स्वीकृत करने म क्या आपत्ति हो सकती है ? पर एक बात पर फिर विचार कर लो निपुणक ! मनुष्य के जीवन म विवाह का बहुत अधिक महत्त्व है ! पारिवारिक सुख इसी बात पर निभर रहता है कि पति पत्नी म सौमनस्य हो। यदि विदुला का स्वभाव बृहद्रथ क अनुरूप न हुआ तो उसका ववाहिक जीवन नरक हो जाएगा। अपने पुत्र को दु ख तो मैं नही देख सकूगी।

आप विश्वास रखें राजमाता ! विदुला सब प्रकार स योग्य है पर यदि यह भी मान लिया जाए कि वह सम्राट को सुखी नही कर सकेगी तब भी क्या हानि है इस समय हमारे सम्मुख सबस महत्त्वपूर्ण समस्या सम्राट की जीवनरक्षा की है। पुष्यमित्र उनकी भी वही गति करेगा जो उसने शतधनुष की है। सम्राट की प्राणरक्षा का एकमात्र उपाय यह है कि उन्हें पुष्यमित्र क प्रभाव स मुक्त किया जाए। वह पुष्यमित्र को सेनानी पद

से च्युत कर दें। ऐसी नई मन्त्रि परिषद का सगठन किया जाए, जो सम्राट की आज्ञानुवर्तिनी हो। इसी म सम्राट का कल्याण है, राजमाता! पर सम्राट को समझाए कौन? वह तो पुष्यमित्र के अनुवर्ती हो गए हैं। शासन सूत्र का सचालन अविकल रूप से पुष्यमित्र के हाथो म आ गया है। इस दशा को हम परिवर्तित करना ही होगा। सम्राट विदुला की इच्छा के विरुद्ध नहा जा सकेंगे, और विदुला वही करेगी जो स्थविर मोग्गलान चाहेंगे। राजनय की दृष्टि से विवाह-सम्बन्ध करना भारत के राजाओ की परम्परा के प्रतिकूल नही है। विदुला के साम्राज्ञी बन जाने पर मद्रक जनपद की सहायता हम प्राप्त हो जाएगी। केवल मद्रक ही नही, अपितु वाहीक, कपिश-गान्धार आदि पश्चिम चक्र के अन्य सब प्रदेशो की जनता भी हमारे साथ हो जाएगी। पुष्यमित्र को नीचा दिखाने का यही उपाय है, राजमाता!'

'पर तुमने मेरे प्रश्न का उत्तर नही दिया, निपुणक! यदि बृहद्रथ और विदुला के स्वभाव मे सामजस्य न हुआ तो क्या होगा? बृहद्रथ का दुख मुझसे नहीं देखा जाएगा।

इसका भी उपाय है राजमाता! विवाह सम्बन्ध से मोक्ष शास्त्रसम्मत है। पुष्यमित्र रूपी काटे को अपने मार्ग से हटाकर सम्राट यदि चाहेंगे तो विदुला से सम्बन्ध विच्छेद भी कर सकेंगे। मैं भलीभाति समझ रहा हूँ, कि एक अपरिचित कुमारी से अपने प्रिय पुत्र के विवाह की बात आपको उपयुक्त प्रतीत नही हो रही है। पर सम्राट की प्राणरक्षा का यही उपाय है राजमाता! स्थविर मोग्गलान दूरदर्शी हैं। बहुत सोच विचार के अनन्तर ही उन्होंने यह निर्णय किया है। आपसे भेंट करने के लिए मैं स्वय ही दम्य ... था।

का शत्रु यह पुष्यमित्र उन्हें कठपुतली की तरह नचाए और उन्हीं को साधन बनाकर मिथ्या पाषण्डों का पुनरुद्धार करे। विदुला कश्यप की शिष्या है, राजमाता! बौद्ध धर्म के उत्कर्ष के लिए उसके मन में अनन्त उत्साह है। जब वह साम्राज्ञी बनकर पाटलिपुत्र आ जाएगी, तो पुष्यमित्र की उसके सम्मुख एक न चलेगी। तब अन्तःपुर पर आपका राज होगा राजमाता!'

'तुम ठीक कहते हो निपुणक! तुम्हारा प्रस्ताव मुझे स्वीकार है। विदुला को शीघ्र पाटलिपुत्र बुला लो। मैं बृहद्रथ को समझा दूंगी। वह मेरी बात कभी नहीं टालेगा। मेरा मन सदा अशान्त रहता है निपुणक! बृहद्रथ की रक्षा की चिन्ता मुझे रात दिन सताती रहती है। विदुला से मुझे सहारा मिल जाएगा।

प्रणाम कर निपुणक ने राजमाता से विदा ली। जिस मार्ग से उसने राजप्रासाद में प्रवेश किया था उसी से होकर वह बाहर निकल गया। इसके पश्चात किसी ने उस वृद्ध दासी को नहीं देखा।

महर्षि पतञ्जलि का पौरोहित्य

पुष्यमित्र मागध साम्राज्य के सेनानी-पद को संभाल चुके थे और वह शासनतन्त्र में शक्ति का संचार करने में लगे थे। नई मन्त्रिपरिषद् संगठित कर ली गई थी। जो पुराने मन्त्री, सचिव और अमात्य स्थविर मौग्गलान के सहयोगी थे उन सबको पदच्युत कर दिया गया था। बुधगुप्त जैसे कतिपय मन्त्री बन्धनागार में भी डाल दिए गए थे। सम्राट बृहद्रथ ने पुष्यमित्र को अपना पथ-प्रदर्शक स्वीकार कर लिया था और वह उन्हीं के आदेशानुसार राजशासन प्रचालित कर रहे थे।

पुष्यमित्र अब कुछ निश्चिन्त होने लगे थे कि एक दण्डधर ने आकर उन्हें प्रणाम किया। पूछने पर उसने कहा— अन्तःपुर से एक दासी आई है और वह तुरन्त आपसे मिलना चाहती है।

'मुझसे उसे क्या कार्य है?

मैंने पूछा था सेनानी! पर वह कहती है कार्य अत्यन्त गोपनीय है

केवल सेनानी को ही बताया जा सकता है। मैंने उसे कहा—सेनानी दास दासियो से नही मिला करते। तुम्ह जो कुछ कहना हो, आ तवशिक वीरवर्मा स कहो। पर वह आपसे ही भेंट करने का आग्रह कर रही है सेनानी !

'अच्छा, उसे यही ले आओ।

दासी ने दडवत होकर सेनानी को प्रणाम किया। हाथ जाडकर उसने कहा— रात एक वद्धा दासी अ त पुर म आई थी। पूछने पर उसने बताया कि वह राजमाता के मातृकुल से आई है। बचपन से राजमाता के साथ रही है। पर आज प्रात से उसका कही पता नही है।'

वह अ त पुर म प्रविष्ट कमे हुई ?'

कहती थी, सेना नी की अनुमति प्राप्त कर राजप्रासाद म प्रविष्ट हुई हूँ। सेनानी बडे दयालु हैं। जब मैंने उन्हे अपना परिचय दिया, उन्होंने तुरन्त राजप्रासाद म प्रवेश की अनुमति प्रदान कर दी। अपना नाम गौतमी बताती थी।'

दासी की बात सुनकर पुष्यमित्र अत्यत गम्भीर हो गए। उन्होंने तुरत वीरवर्मा को अपने पास बुलाकर कहा— स्थविरो का एक सत्री अन्त पुर मे प्रविष्ट हो गया और तुम्ह उसका पता भी नही चला।

वीरवर्मा इसका क्या उत्तर देते वह चुप खडे रहे। पुष्यमित्र ने कुछ क्षण विचार कर कहा— एसे काम नही चलेगा वीरवर्मा ! स्थविरो के षड्-यन्त्रो का अभी अ त नही हुआ है। न जाने, वे किन कुचक्रो मे व्यापृत हैं। तुम्हारे सत्री क्या कर रहे हैं ?'

कुछ देर तक चिन्तामग्न रहने के अनन्तर पुष्यमित्र न फिर कहा— आचाय दण्डपाणि की नृशस हत्या के कारण मैं सवया पगु हो गया हूँ। मैं सेना का सगठन तो कर सकता हूँ, रणक्षेत्र म शत्रु को नीचा भी दिखा सकता हूँ, पर स्थविरो के कुचक्रो का सामना कर सकना मरी शक्ति म नही है। इसके लिए तो दण्डपाणि के समान किसी एस आचाय की आवश्यकता है, जो कूटनीति म पारगत हो।'

यदि आज्ञा हो तो एक बात कहूँ सनानी !' वीरवमा ने सिर झुका कर कहा।

कहो क्या कहत हो ?'

'क्यो न महर्षि पतञ्जलि से मौर्य शासनतन्त्र का पौरोहित्य स्वीकार करने के लिए प्रार्थना की जाए ? महर्षि न केवल व्याकरण और शब्दानुशासन के प्रकाण्ड पण्डित है अपितु त्रयी, आन्वीक्षकी और दण्डनीति—तीनो विद्याओ म पारगत हैं। आप उनके शिष्य हैं आपकी प्रार्थना को वह अस्वाकृत नही करेंगे। यदि वह पाटलिपुत्र आकर आचाय दण्डपाणि का स्थान ग्रहण कर लें तो बहुत उत्तम हो। सम्पूण आयभूमि म महर्षि पतञ्जलि जसा विद्वान आचाय अन्य कोई नही है।

पुष्यमित्र को वीरवर्मा की बात समझ म आ गई। उन्होने उत्साहपूवक कहा—तुम्हारा सुझाव उत्तम है वीरवर्मा ! पर गोनद आश्रम आने-जाने मे कई मास लग जाएँगे। इतने समय तक पाटलिपुत्र म मेरा अनुपस्थित रहना उचित नही होगा।'

तो कुमार अग्निमित्र को गोनद भेज दीजिए सेनानी ! कुमार भी महर्षि के शिष्य हैं। उनकी कुमार पर सदा कृपा रही है। वह उनकी बात कभी नहीं टालगे।

यही ठीक रहेगा वीरवर्मा ! वसुमित्र भी इन दिनो गोनद आश्रम म है। अग्निमित्र को उसे देखे कई वष हो चुके हैं। वह गोनद जाएगा तो वसुमित्र से भी मिल लेगा।

पुष्यमित्र ने अग्निमित्र को बुलाकर कहा—मैं तुम्हे एक आवश्यक काय से गोनद भेजना चाहता हूँ वत्स !

कहिए मेरे लिए क्या आज्ञा है ?

महर्षि पतञ्जलि को पाटलिपुत्र आने के लिए प्रेरित करना है। तुम तुरन्त गोनद चले जाओ और महर्षि से बात करो। आयभूमि पर जो घोर सकट उपस्थित है उसकी चर्चा कर उन्हे मौर्य शासनतन्त्र का पौरोहित्य स्वीकार करने के लिए प्रेरित करो। तुमने गोनद आश्रम म रहकर शिक्षा प्राप्त की है। पतञ्जलि तुम्हारे गुरु है। तुम पर उनका अगाध स्नेह है। तुम्हारी प्रार्थना को वह कभी नहीं टालेंगे। वसुमित्र भी इन दिनो गोनद म है उससे भी मिलना हो जाएगा।

पर यह काय तो आप अधिक अच्छे ढग से कर सकेंगे। मैं आयु म महर्षि से बहुत छोटा हूँ। सम्भवत मेरी बात को वह अधिक महत्व

न दें।'

'यह काय इतना महत्त्वपूण है कि मैं स्वय इसके लिए गानद जाना चाहता था। पर मगध की दशा का तुम जानते ही हो। मिनन्द्र मध्यदेश पर आक्रमण करने की तयारी मे व्यापृत है और शाकल म एकत्र महस्रा स्थविर और भिक्षु मौय शासनतन्त्र के विरुद्ध षडयन्त्र करन म लगे है। यहाँ पाटलिपुत्र मे भी ऐसे लोगा की कमी नहा है जा हमारे विरोधी है। ऐसी स्थिति म मेरा पाटलिपुत्र छोडना समुचित नही होगा वत्स ! तुम सकोच न करा पतञ्जलि तुम्हे बहुत मानते है।'

'आपकी आना शिरोधाय है सेनानी !

हाँ एक बात और है। सीमान्ता की रक्षा के लिए हम विशेष रूप से सचेष्ट रहना है। मागध साम्राज्य का दक्षिण सीमान्त भी अब सुरक्षित नही रहा है। उसकी रक्षा का भार भी तुम्हे सभालना है।'

पर दक्षिण-चक्र के शासक तो इस समय माधवसेन हैं। वह विदभ के शासन के लिए नियुक्त है और दक्षिणापथ की सेना भी उन्ही के अधीन है।

पर विदभ म माधवसेन की स्थिति अब सुरक्षित नही रह गई है वत्स ! बुधगुप्त को तो तुम जानते ही हो शतधनुष के समय म वह आन्तव शिक के पद पर नियुक्त था। अब वह बन्धनागार मे है। रस्सी जल जाती है, पर उसकी ऐंठन दूर नही हाती। बन्धनागार म रहता हुआ भी वह षड-यन्त्रा मे बाज नही आ रहा है। उसका भागिनेय यज्ञसेन विदभ पहुँच गया है और माधवसेन के विरुद्ध विद्रोह के लिए प्रयत्नशील है। दक्षिणापथ म बौद्ध धम का बहुत प्रचार है। यज्ञसेन विदभ के बौद्धो के साथ मिलकर विद्रोह की तयारी म सलग्न है। वह वहा अपना स्वतन्त्र शासन स्थापित करना चाहता है। बुधगुप्त और स्थविरा की यह योजना है कि जब मिनन्द्र की सेनाएँ मध्यदश पर आक्रमण करें, ता यज्ञसेन दक्षिणापथ की सेना को साथ लकर उनकी सहायता के लिए उत्तर की ओर प्रस्थान कर द। हम इस सकट का निवारण करना है, वत्स !

इसके लिए मुझे क्या करना हागा ?'

मैं तुम्हें विदिशा का शासक नियुक्त करता हूँ। गोनद

महर्षि पतञ्जलि से मेरी प्रार्थना निवेदन करके तुम विदिशा चले जाना और वहाँ से दुर्ग को सभाल लेना। वहाँ जाकर नई सेना का संगठन करना। दक्षिणापथ की सुरक्षा का भार अब तुम पर ही रहेगा वत्स ! विदिशा से अधिक दूर नहीं है। विदिशा रहते हुए तुम यवनों की गतिविधि पर दृष्टि रख सकोगे। आवश्यकता पड़ने पर तुम माध्यमिका की सहायता करना और यवनों को मगध में पदार्पण न होने देना। यह काम बड़े महत्त्व का है वत्स ! किसी दशा में मगध साम्राज्य की रक्षा तभी की जा सकती है जबकि अपने देश में सर्वत्र शांति और व्यवस्था स्थापित रहे।

आपकी आज्ञा शिरोधार्य है सेनानी !

हाँ एक बात और सुन लो। अपनी माताजी को भी साथ ले जाओ। दिव्या को अपने पितृकुल गये बहुत दिन हो गए हैं। श्रेष्ठि इन्द्रदत्त भी उन से मिलने के लिए बहुत उत्सुक हैं। अनेक बार मुझे लिख चुके हैं। उनका घर विदिशा में ही है।

अग्निमित्र ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। वह चुपचाप खड़े रहे। उन्हें चुप देखकर पुष्यमित्र ने कहा—

'हाँ धारिणी को भी अपने साथ ले जाओ। अब तुम्हें विदिशा में ही रहना है। यहाँ वह किसके पास रहेगी? उसका तुम्हारे साथ रहना ही उचित होगा।'

अग्निमित्र ने सिर झुका लिया। शीघ्र ही दिव्या और धारिणी के साथ उन्होंने दक्षिण पश्चिम की ओर प्रस्थान कर दिया। एक सेना भी उनके साथ थी। काशी, काम्पिल्य और मथुरा होते हुए कुछ ही सप्ताहों में वे विदिशा पहुँच गए। कुछ दिन अपने मातामह के घर विश्राम कर वह गोनर्द आश्रम गए और महर्षि पतञ्जलि की सेवा में उपस्थित हुए। चरण छूकर उन्होंने महर्षि को प्रणाम किया। चिरकाल के अनन्तर अपने मेधावी शिष्य को देखकर पतञ्जलि बहुत प्रसन्न हुए और आशीर्वचन कहकर उन्होंने प्रश्न किया—'कहो वत्स ! कुशल से तो हो ? तुम्हारा शरीर तो स्वस्थ है ? तुम्हारा मन तो प्रसन्न है ? तुम्हें देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है।

'सब आपकी कृपा है आचार्य !'

'अब तो तुम बहुत बड़े हो गए हो, वत्स ! पहले मैं तुम्हें पहचान ही

नही पाया। सुना है, दशाण देश के शासक नियुक्त होकर विदिशा आए हो ?'

सेनानी की यही आज्ञा थी आचाय !'

'अच्छा, पुष्यमित्र तो स्वस्थ है न ?'

सेनानी ने आपके चरणा म प्रणाम निवेदन किया है, आचाय !'

मेरा आशीर्वाद है पुष्यमित्र द्वारा आयभूमि का हित सम्पादित हो।'

'सेनानी का शरीर तो स्वस्थ है आचाय ! पर उनका मन प्रसन्न नही है वह सदा उद्विग्न रहते हैं।'

'यह किस लिए, वत्स !

'आचाय दण्डपाणि की हत्या के पश्चात वह अपने को पगु अनुभव करते हैं आचाय !'

'दण्डपाणि की नृशस हत्या का समाचार मैं सुन चुका हूँ। उनकी हत्या कर कश्यप ने अच्छा नहा किया। मैं कश्यप को भलीभाँति जानता हूँ। वह मनीषी है, विद्वान है और धमशास्त्रा मे उसकी अप्रतिहत गति है। मुझे उससे यह आशा नही थी। वह ऐसा घार पाप कर सकता है स्वप्न म भी यह मैं यह कल्पना नही कर सकता था।

कश्यप सत्य सनातन आयधम का कट्टर शत्रु है आचाय। बौद्ध धम के उत्कप की धुन म उसे उचित अनुचित, कतव्य-अकतव्य और पाप-पुण्य का जरा भी विवेक नही रह गया है। अब वह यवना का आयभूमि पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित करने म लगा हुआ है।

'मुझे यह भी ज्ञात है वत्स !'

'आयभूमि पर इस समय घोर सकट उपस्थित है आचाय ! कश्यप, मज्झिम मोग्गलान आदि सब स्थविर शाकल नगरी मे एकत्र हैं और मौय शासनतन्त्र के विरुद्ध षडयन्त्र करने म तत्पर हैं। उनकी योजना है कि मिनेन्द्र के भारत पर आक्रमण करते ही मध्यदेश म सवत्र मौय सम्राट् के विरुद्ध विद्रोह कर दिया जाए।

मैं यह भी सुन चुका हूँ, वत्स।

'सेनानी इससे बहुत चिन्तित हैं आचाय ! वह चाहते हैं कि सकट के इस काल मे आप पाटलिपुत्र आकर मौय शासनतन्त्र का पौरोहित्य स्वीकार

कर लें। आयभूमि को इस समय आपके नतत्व की आवश्यकता है, आचाय।'

'मैं अव वद्ध हो चला हूँ, वत्स ! फिर दण्डनीति का मुझ विशेप ज्ञान भी तो नही है। सारा जीवन व्याकरण की गुत्थियो को सुलझाने मे व्यतीत किया है। मेरा विषय शब्दानुशासन है वत्स !

'मुझे स्मरण है, आचाय ! कौटलीय अथशास्त्र पर प्रवचन करते हुए एक दिन आपने कहा था कि ऐस दिन भी आ जाते है, जब श्रोत्रिया और परिव्राजको को भी रणक्षत्र म उतर पडने की आवश्यकता हो जाती है। आज एसा ही अवसर उपस्थित है आचाय ! यवनराज मिनेन्द्र भारत को आक्रान्त करने के लिए सेना के सगठन मे तत्पर है। बौद्ध स्थविर और भिक्षु देश मे विद्रोह की अग्नि को प्रज्वलित करने के लिए प्रयत्नशील हैं। आयभूमि सकट म है। ऐसे ही एक अवसर पर आचाय दण्डपाणि न वटुको को दण्डनीति की शिक्षा देते रहने के स्थान पर सेनानी की माग प्रदर्शित करने का काय स्वीकार किया था। वह आज हमारे बीच में नही हैं। उनका स्थान आपके अतिरिक्त और कौन ग्रहण कर सकता है ?'

वासुदव को तुम भलीभाति जानते हो, वत्स ! वह तुम्हारे गुरु हैं। दण्डनीति के वह प्रकाण्ड पण्डित हैं। दण्डपाणि के स्थान पर उन्हे ही मैंने अपने आश्रम म दण्डनीति के अध्यापन के लिए नियुक्त किया था। मैं उनसे कह दूगा वह कुछ समय के लिए पाटलिपुत्र चले जाएँगे।

'पर सेनानी इस समय अत्यन्त उद्विग्न हैं, आचाय ! उनका अनुरोध है कि आप स्वय पाटलिपुत्र आकर मौय शासनतन्त्र का पौरोहित्य स्वीकार करें। आचाय वासुदेव मेरे गुरु हैं। मैं उनका आदर करता हू। यदि वह भी पाटलिपुत्र जा सकें तो बहुत उत्तम होगा। पर अकेले उनसे काम नही चल सकेगा।

पर मेरे चले जाने पर इस आश्रम का क्या होगा वत्स ! पाणिनि मुनि की अष्टाध्यायी पर जो महाभाष्य मैं लिख रहा हू वह भी अभी पूर्ण नही हुआ है। मैं उसे शीघ्र पूरा कर लेना चाहता हूँ।

महाभाष्य को पूर्ण करने की अपेक्षा आयभूमि की रक्षा का काय अधिक महत्त्वपूर्ण है आचाय ! आपकी अनुपस्थिति म आश्रम का काय आचाय

वासुदेव सभाल सक्ते हैं।'

पतञ्जलि कुछ दर तक आखें ब द कर अग्निमित्र की बात पर विचार करत रहे। फिर उ होन धीरे धीरे कहा—

'तुम्हारा कथन ही सही है वत्स ! आयभूमि पर जो सक्ट उपस्थित है उस दष्टि मे रखन हुए मुझे श ानुशासन पर विचार विमश के काय को स्थगित ही कर देना चाहिए। पुष्यमित्र का अनुरोध मुझे स्वीकार है वत्स !'

'सेनानी की प्राथना है कि आप शीघ्र से शीघ्र पाटलिपुत्र पहुँचने की कृपा करें।'

'हा, यही उचित है। मैं शीघ्र ही पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान कर दूगा।'

पतञ्जलि ने वासुदेव को आश्रम का सब काय समझा दिया और वह मगध की यात्रा के लिए उद्यत हो गए। उ हे अकेले यात्रा के लिए तयार देखकर अग्निमित्र ने कहा—

आप अके न नही जाने पाएँगे आचाय ! सनिका का एक गुल्म आपके साथ रहेगा। सेनानी का यही आदेश है। पाटलिपुत्र की यात्रा निरापद नहीं है। चम्बल की घाटी दस्युओं से परिपूण है और मध्यदश म सवत्र मोगलान के गूढपुरुष विद्यमान हैं। आपकी यात्रा उनस छिपी नहा रह सकेगी, आचाय !'

'तुम मरी चि ता न करो, वत्स ! आयभूमि म कौन है जो मेरे ऊपर शस्त्र चलाने का साहस कर सके। मुझे सनिका की कोइ आवश्यकता नही है वत्स !'

'पर यदि माग म आपको किमी सक्ट का सामना करना पडा, तो सेनानी मुझे कभी क्षमा नही करेंगे आचाय !

अच्छा, पांच छात्रा को मैं अपने साथ ले जाऊँगा। मरे ये शिष्य केवल वटुक ही नहा है अपितु युद्ध विद्या म भी पारगत हैं। गोनद आश्रम के छात्रो की वीरता और साहस का तो तुम जानते ही हो।

आपके सम्मुख मैं क्या कह सकता हूँ आचाय !'

महर्षि पतञ्जलि न अपने पांच शिष्या के साथ गोनद आश्रम से प्रस्थान

कर दिया। शीघ्र ही वह पाटलिपुत्र पहुच गए। पुष्यमित्र को उनकी यात्रा का समाचार प्राप्त हो चुका था। पाटलिपुत्र से चार योजन बाहर जाकर उन्होने महर्षि का स्वागत किया। मगध के सब मन्त्री और पाटलिपुत्र के सब पौर उनके साथ थे। सबने चरण छूकर महर्षि को प्रणाम किया, और बडे समारोह के साथ उन्हे राजप्रासाद म ले आए। अपने निवास के लिए नियत भवन को देखकर पतञ्जलि ने पुष्यमित्र से कहा—

'मैं यहाँ नही रह सकूगा वत्स! राजप्रासाद मे निवास का मुझे अभ्यास नही है। तुम तो जानते ही हो गोनद आश्रम मे एक पर्णकुटी म रहा करता हू। क्या मेरे लिए उसी प्रकार की एक कुटी की व्यवस्था कर सकना सम्भव नही होगा ?

'होगा क्या नही आचार्य! पर आपको पर्णकुटी म कष्ट होगा। यहाँ मगध म वर्षा बहुत अधिक होती है। गोनद और पाटलिपुत्र की जलवायु म बहुत अन्तर है। वर्षा ऋतु का प्रारम्भ अब होने ही वाला है। यहाँ जब वर्षा प्रारम्भ होती है तो थमती ही नही। जल थल सब एक हो जाता है।'

पर राजप्रासाद म तो मुझे सुख नही मिल सकेगा, वत्स! तुम मेरे लिए एक ऐसी पर्णकुटी बनवा दो जिसम वर्षा और प्रचण्ड वायु से रक्षा हो सके।'

राजप्रासाद के विशाल प्रागण के एक कोने म महर्षि के लिए पर्णकुटी बनवा दी गई। उसे देखकर उन्होने कहा— हाँ यह ठीक है। यहाँ मुझे सब प्रकार की सुख-सुविधा रहेगी। छात्र मेरे साथ हैं। कुछ अध्ययन अध्यापन भी चलता रहेगा और समय मिलेगा तो मैं अपना महाभाष्य भी पूरा कर लूँगा। मनुष्य के जीवन म अभ्यास का स्थान बहुत महत्त्व का है वत्स! मुझे इसी प्रकार की कुटी म रहने का अभ्यास है। इसीलिए तुम्हें यह कष्ट दिया था।

महर्षि पतञ्जलि ने मौर्य शासनतन्त्र का पौरोहित्य स्वीकार कर लिया था। सब मन्त्री अमात्य और सचिव पर्णकुटी म आकर उनसे परामर्श लेते रहते थे। मन्त्रिपरिषद् के अधिवेशनो म भी वह उपस्थित हुआ करते थे। एक दिन उन्होने पुष्यमित्र से कहा—

सम्राट् बृहद्रथ से अब तक मेरी भेंट नही हुई है वत्स!'

'शासन म उन्हे कोई रुचि नही है आचार्य! राज्य का सब कार्य मन्त्री

ही सम्पादित करते हैं। बृहद्रथ सच्चे अर्थों म 'सचिवायत्तसिद्धि' हैं।'

'पर यह तो उचित नहा है, वत्स ! चाणक्य वे इस कथन को कभी न भूलो कि यदि राजा उत्थानशील हो, तो मन्त्री, सचिव और अमात्य भी उत्थानशील रहते हैं। यदि राजा शासन काय से विमुख हो प्रमाद करने लगे, तो राज्य के कमचारी भी प्रमादी हो जाते हैं।'

'मुझे आचाय चाणक्य की यह शिक्षा भलीभाति स्मरण है। मैंने बहुत यत्न किया कि बृहद्रथ शासन काय मे रुचि लेने लगें, पर मुझे सफलता नही हुई। मन्त्रिपरिषद की बठकों म भी मैंने उन्हे अनक बार बुलाया पर वह आए ही नही।'

'इसका क्या कारण है, वत्स ! क्या वह सुरा-सुन्दरी के जाल म फँसकर भोग विलास म अपना समय व्यतीत किया करते हैं ?'

'नही, आचाय ! बृहद्रथ युवा अवश्य हैं, पर इन्द्रियाँ उनके वश मे हैं। सुरा सुन्दरी से उन्ह विशेष अनुराग नही है।'

'ता क्या धमरूपी मदिरा ने उन्ह कतव्यपालन से विमुख किया हुआ है ?'

यह बात भी नही है आचाय ! बृहद्रथ बौद्ध धम के अनुयायी हैं। उनका बाल्यकाल कुक्कुटाराम मे व्यतीत हुआ है। धम कम म वह कुछ समय अवश्य लगाते हैं, पर धमरूपी मदिरा का वह इतनी अधिक मात्रा मे सेवन नही करते कि उन्हें अपने कतव्यों का ध्यान ही न रहे।'

'कहीं वह किसी तन्त्र मन्त्र के फेर मे तो नही हैं ?

'राजमाता माधवी को तन्त्र मन्त्र म अगाध विश्वास है। सम्राट देववर्मा की हत्या के लिए इन्होंने अभिचार क्रियाओं का भी अनुष्ठान किया था। पर किसी योगमायासिद्ध को सम्राट के पास जाता हुआ नही देखा गया।

'क्या उन्हें कोई व्यसन है ? मृगया का द्यूत का या इसी प्रकार का कोई अन्य व्यसन ?

नही, आचाय ! उन्हें कोई ऐसा व्यसन नही है। पर उन्ह किसी भी बात म रुचि नही है। वह सदा गुम-सुम से रहते हैं। न किसी से मिलते हैं, न किसी से बात करते हैं। बस, अपने-आप म ही मग्न रहते हैं।

'यह तो उचित नही है वत्स ! सम्राट् का तो उत्थानशील होना

चाहिए। अच्छा मैं बृहद्रथ से मिलना चाहूँगा। क्या इसकी व्यवस्था की जा सकेगी ?'

क्यो नही, आचार्य ! आपको जब भी सुविधा हो सम्राट यही आपसे भेंट के लिए चले आएँगे।

नही वत्स ! मैं स्वय बृहद्रथ से मिलने के लिए जाऊँगा। सम्राट-पद की मर्यादा को हमे अक्षुण्ण रखना चाहिए।

पर आप सदृश विश्वविख्यात आचार्यों के दर्शन के लिए तो राजा स्वय ही आया करते हैं।'

यह ठीक है वत्स ! यदि राजा को किसी श्रोत्रिय आचार्य परिव्राजक या स्थविर के प्रति श्रद्धा हो वह स्वय उससे मिलने के लिए इच्छुक हो तो वह उनकी कुटी पर चला जाया करता है। मुझे यहाँ निवास करते हुए इतना समय हो गया पर बृहद्रथ के मन म मुझसे मिलने की कभी इच्छा नही हुई। वह तो मुझसे नही मिलना चाहते मैं ही उनसे भेंट करना चाहता हूँ। अत मैं ही उनके पास जाऊँगा।'

पुष्यमित्र ने अन्तर्वशिक वीरवर्मा को बुलाकर कहा—आचार्य बृहद्रथ से मिलना चाहते हैं। सम्राट से पूछकर तिथि, समय आदि निश्चित कर दो।

आचार्य के लिए कौन सा समय सुविधाजनक होगा ? वीरवर्मा ने प्रश्न किया।

यदि ब्राह्ममुहूर्त के दो घडी पश्चात का समय हो सके तो मुझे सुविधा रहेगी। मैं ब्राह्ममुहूर्त से पूर्व ही सो कर उठ जाता हूँ। दो घडी म नित्य कर्मों से निवृत्त हो जाऊँगा। पतञ्जलि ने उत्तर दिया।

वीरवर्मा न सम्राट से मिलकर दिन और समय का निर्धारण कर दिया। निश्चित दिन प्रात वह स्वय आकर महर्षि को अपने साथ राजप्रासाद म ले गया। पर अभी बृहद्रथ अपने शयनकक्ष मे ही थे। वीरवर्मा ने एक दास द्वारा उन्हें महर्षि के पधारने की सूचना भेज दी। दास ने हाथ जोडकर बृहद्रथ स कहा—

कोई वृद्ध पुरुष द्वार पर खडे हैं सम्राट ! अन्तर्वशिक उनके साथ हैं।

'कौन है जो इस समय मुझसे मिलने के लिए आया है ?'

'नाम मुझे बताया तो था, सम्राट ! पर स्मरण नही रहा। लम्बा-सा शरीर है, केशश्मश्रु सब पके हुए हैं। तन पर केवल एक अधोवस्त्र और एक उत्तरीय है।'

जाकर पूछो, वह कौन है और मुझसे उसे क्या काय है ?

'उनसे प्रश्न करने का मुझे साहस नही होता, सम्राट ! उनके मुखमण्डल पर एक अदभुत प्रकार का तेज है। उनके सम्मुख आखें तो ऊपर उठती ही नही मैं उनसे प्रश्न कसे करूँगा, सम्राट !'

'हा, याद आया। कही यह पतञ्जलि तो नही है ? सुना है, किसी आश्रम का आचार्य है। राजप्रासाद के समीप ही एक कुटी म निवास करता है। यदि कुछ दान-दक्षिणा चाहता हो, तो देकर टाल दो।

'पर वह तो आपसे भेंट करना चाहते हैं सम्राट !'

'ठीक है याद आ गया। वीरवर्मा कह गया था कि पतञ्जलि मुझसे कुछ बातचीत करना चाहता है। पर मैं तो अभी नित्य कर्मों से निवृत्त भी नही हुआ। उससे कह दो, कुछ समय प्रतीक्षा करे।'

दो घडी पश्चात जब बृहद्रथ अपने शयनकक्ष मे बाहर आए तो पतञ्जलि और वीरवर्मा उनके द्वार के समीप ही खडे थे। बृहद्रथ को देखकर पतञ्जलि ने कहा— सम्राट की जय हो। गोनद आश्रम का निवासी पतञ्जलि सम्राट की सेवा मे प्रणाम निवेदन करता है।'

महर्षि के प्रणाम के प्रत्युत्तर मे बृहद्रथ न अपना सिर हिला दिया। फिर उसने कहा— कहिए आपका मुझसे क्या काय है ? अच्छा चलिए, सभा भवन म बठकर बातचीत करें।

महर्षि का सकेत पाकर वीरवर्मा सभाभवन स चले गए। एकान्त पाकर पतञ्जलि ने बृहद्रथ से कहा—

मागध साम्राज्य पर जो घोर सकट उपस्थित है मैं उसके सम्बन्ध म आपस बातचीत करन के लिए आया हूँ।

'सकट ! कसा सकट ! मगध म सवत्र शान्ति है। मुझे तो कोई सकट दिखाई नही पडता।

'यवनराज मिनान्द्र आयभूमि पर आक्रमण के लिए तयारी म व्यग्र है,

सम्राट ! क्या आप वह दिन भूल गए जब मध्यदेश को आक्रान्त करता हुआ दिमित्र साकेत तक पहुँच गया था ? मिनेन्द्र का आक्रमण उससे भी अधिक भयंकर होगा। मिनेन्द्र की शक्ति बहुत अधिक है, सम्राट !

'तो पुष्यमित्र किसलिए है ? आप उससे जाकर क्यों नहीं मिलते ? सेनानी मैं हूँ या पुष्यमित्र है ? उससे कहिए, मिनेन्द्र का सामना करने के लिए सेना को साथ लेकर वह पश्चिमी सीमान्त पर चला जाए।

पुष्यमित्र को अपने कर्तव्य का पूरा पूरा ध्यान है सम्राट !

तो फिर आप मुझे कष्ट देने के लिए क्यों आए हैं ? आप तो कोई श्रोत्रिय प्रतीत होते हैं। सेना और युद्ध से आपका क्या प्रयोजन है ? पुष्यमित्र अपने कार्य में जागरूक है ही। फिर आपको चिन्ता किस बात की है ?

राज्य में राजा की स्थिति कूट-स्थानीय होती है सम्राट ! यदि राजा उत्थानशील हो तो मन्त्री और सचिव भी उत्थानशील होते हैं। अन्यथा वे प्रमादी हो जाते हैं। इस संकट के समय आपका भी कुछ कर्तव्य है सम्राट !

'मेरा क्या कर्तव्य है ? सब मन्त्रियों सेनापतियों और अमात्यों को ठीक समय पर वेतन प्रदान कर दिया जाता है। उन्हें और क्या चाहिए ? वे वेतन किसलिए पाते हैं ? पुष्यमित्र को वेतन किसलिए दिया जाता है ? यदि वह कर्तव्यपालन में शिथिलता करेगा, तो उसे पदच्युत कर दिया जाएगा।

'मैं आपको उस प्रतिज्ञा का स्मरण कराने के लिए आया हूँ जो राज्याभिषेक के अवसर पर आपने पौर-जानपदों के सम्मुख अग्नि, जल और पृथ्वी को साक्षी करके ग्रहण की थी। क्या आपको उस प्रतिज्ञा का स्मरण है ?

राज्याभिषेक के समय न जाने कौन-कौन-सी विधियाँ सम्पन्न की गई थी। उन्हें कौन स्मरण रख सकता है ? मुझे तो कुछ भी याद नहीं है।

'अभिषेक के समय की गई प्रतिज्ञा विस्मरण के लिए नहीं होती सम्राट ! यदि आप उसे भूल गए हैं तो आज पुनः स्मरण कर लीजिए। सब देवताओं और जननेताओं को साक्षी मानकर आपने यह प्रतिज्ञा की थी— जिस रात्रि में मेरा जन्म हुआ और जिस रात्रि मेरी मृत्यु होगी, उनके मध्य में (अपने सम्पूर्ण जीवन काल में) जो भी सुकृत मैंने किए हों वे सब नष्ट हो जाएँ और मैं शुभ कर्मों से वञ्चित हो जाऊँ यदि मैं किसी भी

प्रकार से प्रजाजन के प्रति विद्रोह करूँ, किसी भी प्रकार उसका अपकार करूँ।'

'पर मैंने प्रजाजन के विरुद्ध कोई विद्रोह नहीं किया और न उनका कोई अपकार ही किया है।'

'प्रजा का पालन आपका प्रमुख कर्तव्य है सम्राट् ! और प्रजापालन तभी सम्भव है जबकि जनता को बाह्य और आभ्यन्तर शत्रुओं का कोई भी भय न हो। यदि आप इन दोनों प्रकार के भयों से प्रजा की रक्षा नहीं करते, तो उसका अपकार ही तो करते हैं।'

'यदि मैं कर्तव्य पालन में शिथिलता करता हूँ तो उससे मेरे ही तो सुकृत नष्ट होते हैं। किसी अन्य का इससे क्या बिगड़ता है ? अपनी चिन्ता करने में मैं स्वयं समर्थ हूँ।'

'यह आपकी भूल है सम्राट ! आपको स्मरण होगा कि प्रतिज्ञा कर चुकने पर आपकी पीठ पर दण्ड द्वारा धीरे धीरे आघात भी किए गए थे। किस लिए ? आपको यह स्मरण कराने के लिए कि राजा भी दण्ड से ऊपर नहीं होता है। कर्तव्य-पालन न करने पर आपको दण्ड भी दिया जा सकता है।'

'मुझे दण्ड देने की सामर्थ्य किस में है ?

'जिन्होंने आपको सम्राट-पद पर अभिषिक्त किया वही आपको दण्ड भी दे सकते हैं सम्राट ! आर्य राजाओं की प्राचीन परम्परा के अनुसार प्रजा राजा का वरण करती है। राज्याभिषेक के समय राज्य के सब मन्त्री, अमात्य, पौर, जानपद, ग्रामणी आदि सभा मण्डप में एकत्र होते हैं और राजा का वरण करते हैं। उनकी अनुमति से ही कोई व्यक्ति राजा का पद प्राप्त करता है। कितने ही राजा इस कारण राजपद से च्युत कर दिए गए, क्योंकि काम, क्रोध, लोभ, मोह मद आदि शत्रुओं के वशीभूत होकर वे कर्तव्य पालन से विमुख हो गए थे।

'पर मैं तो इनके वशीभूत नहीं हूँ।'

यह सही है। इन्द्रियों पर आपका वश है। पर यही तो पर्याप्त नहीं है। आर्यभूमि पर जो घोर संकट इस समय उपस्थित है उसका सामना करने के लिए आपको सक्रिय रूप से प्रयत्न करना चाहिए। राज्य में

की स्थिति बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। जिस प्रकार चन्द्र नक्षत्र और ग्रह सूर्य से प्रकाश प्राप्त कर प्रकाशित होते हैं वैसे ही मन्त्री सचिव अमात्य आदि राजा से प्रेरणा और शक्ति प्राप्त कर अपने-अपने कर्तव्य के पालन में तत्पर होते हैं।

पर आप किस स्थिति में मुझसे ये सब बातें कर रहे हैं ? आप न मन्त्री हैं और न अमात्य।

यह ठीक है। मैं राजकीय सेवा में नहीं हूँ। पर इस आर्यभूमि में आचार्यों और परिव्राजकों का स्थान मन्त्रियों और अमात्यों से भी ऊपर होता है। आर्यों की यही परम्परा है। जब राजा या राजपुरुष कर्तव्य विमुख होने लगें तो आचार्य परिव्राजक व स्थविर उन्हें उनके कर्तव्यों का बोध कराते हैं। आचार्य चाणक्य का नाम आपने सुना ही होगा। मागध साम्राज्य के उत्कर्ष का सब श्रेय उन्हीं को प्राप्त है। मौर्य वंश के हाथ में पाटलिपुत्र का सिंहासन उन्हीं के प्रयत्न और कर्तृत्व से आया था। चाणक्य न मन्त्री थे और न अमात्य। पर चन्द्रगुप्त के समय में वही शासनतन्त्र के कर्णधार थे। अपने आश्रम को छोड़कर किसी स्वार्थ के साधन के लिए मैं पाटलिपुत्र नहीं आया हूँ। यवनों के सम्भावित आक्रमण के कारण जो संकट मगध पर उपस्थित हो रहा है उसके निवारण के लिए ही मैं यहाँ आया हूँ। इसीलिए मैंने आपको भी कष्ट दिया है।

आप मुझसे चाहते क्या हैं ?

आपके मन्त्री और अमात्य सब योग्य और कार्यकुशल हैं। आपकी सेना के सेनानी युद्ध नीति में निष्णात हैं। आपको उन्हें सक्रिय रूप से सहयोग प्रदान करना चाहिए। चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार ने जिस मार्ग को अपनाया था, मैं चाहता हूँ आप भी उसी का अनुसरण करें। उनके मन्त्री और अमात्य भी सुयोग्य थे। पर मागध साम्राज्य का जो इतना उत्कर्ष हुआ, उसमें इन सम्राटों का कर्तृत्व भी कम नहीं था। चन्द्रगुप्त ने यवन राज सल्यूकस को हिन्दूकुश पर्वत माला से परे धकेल दिया था। मेरी इच्छा है कि आप भी अपने इस प्रतापी पूर्व पुरुष के पद चिह्नों पर चलें।

आपने मुझे कुछ और कहना है ?

'हाँ एक बात और कहना चाहता हूँ। भारत में अनेक धर्मों, सम्प्रदायों

और पाषण्डो की सत्ता है। यहा की जनता सबके प्रति आदर का भाव रखती है सबके धर्माचार्यों के प्रवचनो को श्रद्धा के साथ श्रवण करती है। राजाओ की भी यही परम्परा रही है। वे सबका दान दक्षिणा आदि द्वारा सत्कार करते रहे हैं। राजा अशोक और उनके उत्तराधिकारियो ने इस परम्परा का त्याग करके अच्छा नही किया। मैं जानता हूँ आप बौद्ध धर्म के अनुयायी हैं। भगवान तथागत ने जिस मध्यमा प्रतिपदा का प्रतिपादन किया था, वह अत्यन्त उत्कृष्ट है। मैं उसे आदर की दृष्टि से देखता हूँ। पर आपको किसी एक धर्म के प्रति पक्षपात नही करना चाहिए। अपने धर्म के उत्कर्ष के लिए स्थविर और भिक्षु जिस ढग के षडयन्त्र करते रहे हैं आप उन्हे जानते ही हैं। अब भी इन षड्यन्त्रो का अन्त नही हुआ है। मेरी इच्छा है, कि आप इससे पृथक रहते हुए अपनी सम्पूर्ण प्रजा का पालन करने मे तत्पर रहे, किसी के प्रति पक्षपात न करें और सबको समान दृष्टि से देखें।

मैं आपकी बात पर विचार करूँगा। अब आप जाइए, मुझे अन्य भी अनेक कार्य हैं।

मेरी बात पर आप विचार करेंगे, यह सुनकर मैं कृतकृत्य हो गया। मागध सम्राट से मुझे यही आशा थी।' महर्षि पतञ्जलि यह कहकर सभा भवन से अपनी पर्णकुटी मे लौट आए। पुष्यमित्र वहा उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उनके प्रश्न करने पर पतञ्जलि ने कहा—'मैं बृहद्रथ से सर्वथा निराश नही हूँ, वत्स! वह अभी किशोरवय युवक है। उसे सन्मार्ग पर लाया जा सकता है। उसे निरन्तर समझाते रहने की आवश्यकता है। सम्भवत वह हमारे कार्य मे सहायक तो नही हो सकेगा पर यदि वह स्थविरो के कुचक्र से बचा रहे, तब भी सतोष की बात है। हमे इसी के लिए प्रयत्न करना चाहिए। उससे मिलकर मैंने यह भलीभांति समझ लिया है कि न वह कर्मठ है और न प्रतिभा सम्पन्न। उससे यह आशा तो की ही नही जा सकती कि वह चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार के समान प्रतापी तथा उत्थान शील होगा। मुझे भय है कि कही वह शालिशुक और शतधनुष के पद चिह्नो पर चलकर 'धर्मवादी और अधार्मिक न न हो जाए। निर्बल व्यक्ति प्राय धर्म की आड मे अपनी अशक्तता को छिपाने का प्रयत्न किया करते हैं। हमे बृहद्रथ को स्थविरो के प्रभाव से बचाने का प्रयत्न करना चाहिए। क्या

वत्स ! तुम्हारे सत्री और गूढपुरुष ता राजप्रासाद और अ त पुर मे सवत्र नियुक्त हैं न ?

'हाँ आचाय !'

क्या स्थविर और भिक्षु बृहद्रथ के पास आते-जाते हैं ?

सम्राट बौद्ध धम के अनुयायी हैं। उनकी माता माधवी भी बौद्ध हैं। अ त पुर की बहुत सी स्त्रियाँ भी बुद्ध धम और सघ के प्रति श्रद्धा रखती हैं। इस दशा म राजप्रासाद और अ त पुर म स्थविरा के प्रवेश को सवथा रोक सकना असम्भव है। पर जो भी स्थविर श्रमण और भिक्षु मोग्गलान के सहयोगी थे व सब अब शाकल चले गए है। सब स्थविर देशद्रोही नही हैं आचाय !'

यह मैं स्वीकार करता हू। पर धार्मिक उन्माद के वशीभूत होकर मनुष्या की मनोवत्ति अत्यन्त सकीर्ण हो जाती है। धम के आवेश म व अपने साम्प्रदायिक हितो को देश और राष्ट की तुलना म अधिक महत्त्व देन लगते हैं। आयभूमि पर जा सकट इस समय उपस्थित है उसे दष्टि म रखते हुए किसी भी स्थविर और भि ु पर विश्वास करना उचित नही है। इस समय हमे अत्यधिक सतकता की आवश्यकता है। जो कोई भी राजप्रासाद मे आए जाएँ बहद्रथ और माधवी से मिले-जुलें चाहे वे श्रोत्रिय हो या स्थविर भिक्षु हो या परिव्राजक दास हो या सेवक—सब पर दष्टि रखो।

मैं इसकी समुचित व्यवस्था कर दूगा आचाय !

विदुला का बलिदान

चन्द्रभागा नदी के तट पर आज बडी भीड थी। वशाखी का पव था। सहस्रा नर-नारी स्नान के लिए वहाँ एकत्र थे। कुछ युवतियाँ एक मण्डली बनाकर बातचीत म व्यग्र थी। व बार बार पूव दिशा की ओर दखन लगती। जब बहुत देर हो गई, तो एक युवती ने कहा—विदुला अब तक नही आई क्या बात है ?'

अब वह क्या आने लगी ? एक अन्य युवती न हसत हुए कहा।

'क्या क्या बात है ? वह तो कहती थी, सूर्योदय से पूव ही च द्रभागा के इस घाट पर आ जाएगी।'

'अरे तुम्ह यह भी नही पता ! जानती नही उसका विवाह होनेवाला है। सम्भव है उसके मगतर शाकल पधार गए हो और वह उनके साथ प्रेमालाप म मग्न हो।'

'हा, यही बात है। वशाखी के पव पर दूर दूर के जनपदा स लोग च द्रभागा म स्नान के लिए आया करत हैं। भवदेव को तो बहाना चाहिए। वह आज रात्रि का ही शाकल पहुँच गया होगा। एक युवती न कहा।

'यह भवदेव कौन है ?'

अरे, तुम भवदेव को नही जानती ? पुष्कलावती के एक श्रेष्ठी का सुपुत्र है। सौ दय मे कामदेव को मात करता है और धन म कुवर को। शाकल मे भी तो उसकी पण्यशाला है।'

चुप रहो देखा विदुला चली आ रही है। क्सी मस्ती है उसकी चाल मे ! पृथ्वी पर पर तो पडते ही नही। आकाश मे उडी जा रही है।'

'आइए श्रीमती भवदेव जी, पधारिए। इतनी देर क्या कर दी ? वही पुष्कलावती स कोई साथ तो नही आ गया ? साथ म श्रीमान् भवदेव जी तो होग ही। उनक अतिथि सत्कार म देर हो गई होगी।

क्या बकती हो ? कौन है यह भवदेव ? मैं किसी भवदेव को नही जानती। विदुला ने म दस्मित से कहा।

'दाई से क्या पट छिपाती हो देवी जी ! मैं सब कुछ सुन चुकी हूँ। वही भवदेव जिसका नाम सुनते ही तुम्हारा मुखमण्डल आरक्त हो जाता है। क्या मैं जानती नही, अभी दो मास ही तो हुए हैं जब श्रीमान भवदेव जी शाकल पधारे थे। चत्य की वाटिका म खडी होकर तुम किससे बातें किया करती थी ! एक दिन उसके साथ तुम च द्रभागा क किनार किनारे न जाने कितनी दूर चली गई थी। जब अँधेरा हो गया और तुम घर वापस नही लौटी तो गणमुख्य कितने चिन्तित हो गए थ। तुम्ह ढूढ़ने क लिए उन्होंने चारो दिशाओ म अपने अनुचर भेज दिए थे। बेचारे सोमदेव तुम्हारी चिन्ता म मरे जा रहे थे और तुम वटवक्ष के नीचे बठी हुई भवदेव के साथ प्रेमालाप म मग्न थी। अनुचर को अपनी ओर आते हुए देखा,

तो सिर झुकाकर खड़ी हो गई। बोल मैं सच कह रही हूँ या झूठ ?'

सब झूठ है। विदुला ने हसते हुए कहा।

क्या यह भी झूठ है कि उस दिन तुम और भवदेव दोनों भगवान् तथागत की मूर्ति के सम्मुख हाथ जोड़कर बठे हुए थे ? तुम क्या प्राथना कर रही थी, यह भी मुझे ज्ञात है।

'सब झूठ है। विदुला ने आँचल से मुह छिपाकर कहा।

'अरी छिपाती क्या है ? अभी सब सामने आ जाएगा। दो-तीन सप्ताह की ही तो बात है। गणमुख्य तो तेरे विवाह की तयारी भी प्रारम्भ कर चुके हैं। आभूषण बन रहे हैं वस्त्र सिलाए जा रहे हैं। बस शुभ मुहूत की देर है। अच्छा बता, मिठाई कब खिलाएगी ?

जब तुझे इतनी बातें ज्ञात हैं तो मुझसे क्या पूछती है ?

देर तक सखियाँ विदुला से इसी प्रकार की बातें करती रहीं। स्नान के अनन्तर जब वह घर वापस आई तो उसने देखा कि श्रेष्ठी सोमदेव उत्सुकतापूवक उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। विदुला को देखकर उन्होंने कहा—

'तुमने बहुत देर कर दी बेटी !'

सखियाँ मुझे छोडती ही नही थी पिताजी ! कहिए क्या कोई काम है ?

'हा बेटी ! स्थविर कश्यप बहुत देर से तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। किसी आवश्यक काय मे तुमसे मिलना चाहते हैं।

मुझसे स्थविर को क्या काम है पिताजी !'

'मैंने उनसे पूछा था। पर वह कहने लगे, विदुला को ही बताएँगे।

स्थविर कश्यप श्रेष्ठी सोमदेव के प्रासाद मे एक उच्च आसन पर विराजमान थे। परिचारक उनकी सेवा सुश्रूषा मे व्यस्त थे। विदुला ने दण्डवत होकर कश्यप को प्रणाम किया।

बुद्ध धम और सघ म तुम्हारी श्रद्धा सदा बनी रहे। तुम्हारे द्वारा सद्धम का उत्कर्ष हो। यह कहकर कश्यप ने विदुला को आशीर्वाद दिया।

'कहिए स्थविर ! मेरे लिए क्या आज्ञा है ?

सोमदेव भी विदुला के साथ थे। कश्यप ने उन्हें कहा— मैं विदुला से एकान्त म कुछ बात करना चाहता हूँ। स्थविर का सकेत पाकर सोमदेव

वहाँ से चले गए। विदुना को अकेला पाकर कश्यप ने कहा— सद्धर्म पर जो घोर सकट उपस्थित है उसे तुम भलीभांति जानती हो। मगध का शासन-तन्त्र आज ऐसे लोगो के हाथ मे है जो बुद्ध, धर्म और सघ के कट्टर शत्रु हैं। पुष्यमित्र ने स्थविरो श्रमणो और भिक्षुओ के सर्वसहार का आदेश दिया हुआ है। शाकल नगरी मे जो सहस्रो स्थविर और भिक्षु निवास करते हैं उनका जीवन आज सुरक्षित नही है। मैं तुम्हारा गुरु हूँ पर मेरा जीवन भी सकट मे है। कोई भी व्यक्ति मुझे मारकर एक-सौ सुवर्ण निष्क प्राप्त कर सकता है।

'मुझे यह सब ज्ञात है स्थविर!'

'हमे इस सकट का निवारण करना ही होगा। बृहद्रथ बौद्ध धर्म का अनुयायी है उसकी माता माधवी भी बौद्ध है। पर पाटलिपुत्र के बौद्ध आज इतने निर्वीर्य हो गए हैं कि पुष्यमित्र के सम्मुख वे उँगली तक नहीं उठा सकते। बृहद्रथ नाम का तो सम्राट है पर वस्तुत पुष्यमित्र के हाथो मे कठपुतली के समान है। कितने खेद की बात है कि सम्राट तो सद्धर्म मे आस्था रखता हो और उसका एक सेवक सद्धर्म के अनुयायियो के सहार मे तत्पर हो और यह सहार भी उस सम्राट् के नाम पर प्रचारित किए गए राजशासन द्वारा किया जाए जो स्वय बौद्ध है।

'यह स्थिति अत्यन्त शोचनीय है, स्थविर!

'हमे पुष्यमित्र को नीचा दिखाना है बेटी! जब तक बृहद्रथ को पुष्यमित्र के चगुल से मुक्त नही किया जाएगा, सद्धर्म की रक्षा असम्भव है।

'सुना है, यवनराज मिनन्द्र शीघ्र ही मध्यदेश पर आक्रमण करनेवाले हैं। यवन सेना के सम्मुख पुष्यमित्र कभी नही टिक सकेगा। वह उनसे अवश्य परास्त हो जाएगा।

'तुम पुष्यमित्र की शक्ति को नही जानती। युद्ध-नीति मे वह पारगत है। अनेक बार वह यवनो को युद्ध मे परास्त कर चुका है। दिमित्र की सेनाओ को साकेत के युद्ध मे उससे किस प्रकार मुह की खानी पडी थी, यह तुम्हे ज्ञात ही होगा।'

मुझे ज्ञात है स्थविर! पर अब पुष्यमित्र को केवल यवनो का ही

सामना नहा करना होगा। मद्रक जनपद की सना भी यवना क साथ रहगी। मद्रक युवक वीरता और साहस म किसी से कम नहीं हैं स्थविर !'

मुझ मद्रका की वीरता और धम प्रम पर गव है। पर पुष्यमित्र का नीचा दिखाने क लिए बलिदान की आवश्यकता हागी। न जान कितन युवका और युवतिया को हम सद्धम की रक्षा क लिए बलि दनी पड़े।

'मद्रक लोग बलिदान म कभी पीछे नहीं रहत स्थविर !

तो तुम भी बलिदान के लिए उद्यत हो न बेटी !

मेरा तन मन धन—सवस्व आपकी सवा म अर्पित है। यदि मरा यह तन सद्धम के काम म आ सके, तो मेरा परम सौभाग्य हागा।'

'मुझ तुमस यही आशा थी बटी ! मुझे तुम पर गव है। सद्धम पर तुम्हारी अगाध श्रद्धा है।

मेरे लिए क्या आज्ञा है स्थविर !'

मैं तुमसे बलिदान की भी आशा करता हूँ, बेटी ! तुम्हारे शरीर या जीवन के बलिदान की नहीं।

मरे पास और है ही क्या, स्थविर !

मैं तुमसे प्रणय के बलिदान की अपेक्षा करता हूँ बेटी !'

यह सुनकर विदुला स्तब्ध रह गई। उस मूर्छा सी आ गई। कुछ क्षण बाद शांत होने पर उसने कहा—'प्रणय का बलिदान ! मैं इसका अभिप्राय नहीं समझ पाई स्थविर !

मैं जानता हू भवदेव से तुम प्रम करती हो। वह सब प्रकार स तुम्हार योग्य भी है। पर भवदेव क प्रति तुम्हारा जो प्यार है सद्धम की रक्षा के लिए तुम्हे उसकी बलि देनी होगी।

यह किस लिए स्थविर ! विदुला ने रोते हुए कहा।

भवदेव के साथ तुम्हारे विवाह की सब तयारी हो चुकी है। श्रेष्ठी सोमदेव सद्धम के परम भक्त है। उसके उत्कष के लिए वह सदा प्रयत्नशील रहे हैं। मध्य देश के स्थविर और भिक्षु जो आज मद्रक जनपद मे शरण प्राप्त कर सके हैं उसका श्रेय सोमदेव को ही प्राप्त है ! जब उन्ह ज्ञात होगा कि तुम भवदेव से विवाह नहीं कर रही हो तो उन्ह बहुत दुख होगा, विशेषतया उस दशा म जबकि तुम उन्ह यह नहीं बताओगी कि किस कारण

तुम भवदेव से विवाह करने को उद्यत नहीं हो। मुझे अपनी योजना को गुप्त रखना है, बेटी ! सोमदेव भी उसे नहीं जान पायेंगे। तुम्हें भवदेव के सम्मुख भी बुरा बनना होगा, और सोमदेव के सम्मुख भी। तुम्हें भवदेव के प्रणय निवेदन को ठुकराना होगा और अपने पिता के क्रोध का वीरता पूर्वक सामना करना होगा। मुझे विश्वास है, तुम यह सब कर सकोगी, क्योंकि सद्धर्म के प्रति तुम्हारी श्रद्धा अगाध है और उसकी रक्षा व उत्कर्ष के लिए तुम बड़े से बड़ा बलिदान करने को उद्यत हो।

विदुला देर तक बिलख बिलख कर रोती रही। शान्त होने पर उसने कहा—'पिताजी को मैं क्या कहूँगी स्थविर !

जो मन मे आए कह देना। कह देना, भवदेव से मुझे प्रेम नहीं है।

'यह मैं कैसे कह सकूँगी, स्थविर !' विदुला फिर फूटकर रो पड़ी।

तुम वीर और साहसी हो, विदुला ! सद्धर्म के लिए क्या तुम इतना भी त्याग नहीं कर सकती ? शाकल के उस संघाराम को ही देखो। वहाँ कितनी भिक्षुणियाँ निवास करती हैं। उनमे से बहुत सी युवती व किशोरवय की भी है। सांसारिक सुखो का त्याग कर उन्होंने जो भिक्षुणीव्रत ग्रहण किया है वह किस लिए ? भगवान् तथागत की सेवा के लिए ही तो न ? क्या उनका त्याग कम महत्त्व का है ? तुम किस प्रकार उनसे कम हो ?'

'हाँ भिक्षुणी होना मुझे स्वीकार्य है। भवदेव के बिना मैं एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकती। पर भगवान की शरण मे जाकर, सम्भवत मुझे शान्ति मिल सके। मैं आपको अपने सर्वस्व की बलि दे देने का वचन दे चुकी हूँ। यदि आप सद्धर्म के लिए मेरे प्रणय की बलि चाहते हैं, तो मैं उसके लिए उद्यत हूँ। मैं आज ही संघाराम जाकर भिक्षुणी संघ में सम्मिलित हो जाती हूँ। आप इसकी व्यवस्था कर दीजिए, स्थविर ! विदुला ने आँसू पोछते हुए कहा।

'तुम्हें भिक्षुणी-व्रत ग्रहण नहीं करना है बेटी ! तुम्हें मगध की साम्राज्ञी बनना है।

'क्या कहा स्थविर ! मुझे साम्राज्ञी बनना है ? विदुला ने इस ढंग से कहा, मानो उस पर वज्रपात हो गया हो।'

हाँ, बेटी ! तुम्हें बृहद्रथ के साथ विवाह करना है। सद्धर्म की रक्षा के

लिए हमारा यही निर्णय है।

'भवदेव के अतिरिक्त मैं किसी से प्रणय नहीं कर सकती स्थविर! आर्य कन्या जब किसी को अपना पति स्वीकार कर लेती है तो उसके अतिरिक्त किसी अन्य से वह प्रेम कर ही नहीं सकती। मैं भगवान की चरण सेवा में जीवन बिता सकती हूँ पर किसी अन्य से प्रेम कर सकना मेरे लिए असम्भव है।

'प्रणय के तत्त्व को मैं नहीं जानता विदुला! पर प्रणय और विवाह एक तो नहीं हैं। चाहे तुम बृहद्रथ से प्रेम न कर सको पर उससे विवाह तो कर सकती हो। विवाह एक कर्तव्य है वह एक सामाजिक बन्धन है। इस बन्धन के लिए प्रेम अनिवार्य नहीं है।'

'प्रेम के अभाव में विवाह की कल्पना मेरे लिए सम्भव ही नहीं है स्थविर!'

'प्रेम धीरे धीरे विकसित हो जाया करता है विदुला! पर मैं तुमसे बृहद्रथ के साथ विवाह के लिए जो अनुरोध कर रहा हूँ उसका एकमात्र प्रयोजन सद्धर्म की रक्षा है। बृहद्रथ को हमें पुष्यमित्र के प्रभाव से मुक्त करना है। हमें उसे उस मार्ग का अनुसरण करने के लिए प्रेरित करना है जिसे प्रियदर्शी राजा अशोक ने अपनाया था और शालिशुक तथा शतधनुष ने जिसका अवलम्बन किया था। बृहद्रथ बौद्ध अवश्य है, पर साथ ही वह अशक्त भी है। हमें उसमें शक्ति का संचार करना है। पत्नी पति की अर्धांगिनी होती है। तुमसे बल और साहस पाकर वह सद्धर्म के शत्रुओं के चंगुल से छुटकारा पा सकेगा।

'पर क्या मद्रक जनपद में कोई भी अन्य कुमारी नहीं है जो यह कार्य कर सके? मैं भवदेव की हो चुकी हूँ, स्थविर! मेरी कितनी ही सखियाँ हैं, अभी जिनका वाग्दान भी नहीं हुआ है। रूप और गुण में भी वे किसी से कम नहीं हैं। क्या उनमें से किसी से यह काम नहीं लिया जा सकता, स्थविर!

सद्धर्म के काम आ सकने से बढ़कर गौरव की क्या बात है विदुला! जीवन से किसे मोह नहीं होता? कौन सुखपूर्वक जीवन बिताना नहीं चाहता? ये जो लाखों सैनिक हँसते हँसते रणक्षेत्र में अपने जीवन की

आहुति दे देते हैं क्या उनके परिवार नही होते ? क्या उन्हे प्रेम करने वाली प्रेयसियाँ नही होती ? क्या उनकी सन्तान नही होती ? क्या उनके माता पिता बहिन भाई नही होते ? पर वे हँसते खेलते अपने जीवन की बलि चढा देते हैं। किस लिए ? क्योकि एक उच्च उद्देश्य उनके सम्मुख होता है। अपने देश के लिए, अपने राजा के लिए अपनी जाति के लिए वे अपने प्राण तक दे देते हैं। मैं तुमसे जीवन की बलि देने का नही कहता, विदुला ! मैं केवल तुम्हारे प्रणय की बलि चाहता हूँ और वह भी धर्म के लिए जिसका स्थान देश, राजा और जाति सबसे ऊपर है।'

'प्रणय की बलि मैं दे सकती हूँ स्थविर ! भिक्षुणी होकर जीवन बिता देना मुझे स्वीकार है। पर किसी अन्य पुरुष से प्रेम करना ? यह मेरे लिए अकल्पनीय है। बहद्रथ मेरे लिए पर पुरुष हैं स्थविर ! ससार मे मेरे लिए केवल एक पुरुष है, और वह है भवदेव। किसी अन्य का स्पर्श तक कर सकना मेरे लिए सम्भव नही होगा।'

'पर तुम प्रणय का नाटक तो कर सकती हो, विदुला ! हमारी ओर से कितनी ही सच्चरित्र कुमारियाँ आज रूपाजीवाओ और गणिकाओ के रूप मे शत्रु का भेद लेने के लिए नियुक्त है। वे पर-पुरुषो के पास हँसती हुई जाती हैं, उनके अक मे बैठती है उनके साथ सुरापान करती हैं उन्हे सब प्रकार से प्रसन्न और तृप्त करने का प्रयत्न करती हैं। शत्रु की ओर से भी कितनी ही युवतियाँ यही कर रही हैं। क्या तुम उन्हे चरित्रहीन कहोगी ? नही कदापि नही ! वे एक उच्च आदर्श को सम्मुख रखकर प्रणय का नाटक करती हैं और पर पुरुषो के सम्पर्क मे आती हैं। वे भी अपने जीवन की बलि देती है विदुला !'

'पर वे किसी के साथ विवाह बन्धन मे तो नही बँध जाती, स्थविर ! विवाह एक पवित्र सम्बन्ध है, उसमे नाट्य और कृत्रिमता के लिए अवकाश ही नहीं होता। मैं आपकी सत्री के रूप मे रूपाजीवा का नाट्य प्रसन्नता-पूर्वक कर सकती हूँ। पर एक पर पुरुष के साथ विवाह करना और उसके साथ पत्नी के रूप मे रहना—यह मेरे लिए सम्भव नही है, स्थविर ! मैं क्या, कोई भी युवती इसके लिए तैयार नही होगी।'

मैं जानता हूँ, विदुला ! यह कार्य अत्यन्त कठिन है। इसीलिए तो

मैंने तुम्हे इसके लिए चुना है। तुम गणमुख्य सोमदेव की सुयोग्य पुत्री हा। तुम्हारे पिताजी की सद्धम म कितनी श्रद्धा है। अपना तन मन धन सब कुछ वह बुद्ध धम और सघ के लिए अपण करने को उद्यत रहते हैं। तुम भी उनका अनुकरण करो, विदुला। जो काय मैं तुमसे लेना चाहता हूँ वह अत्यन्त कठिन है। पर कठिन काय सब कोई तो नही कर सकते। जिस बलिदान के लिए मैं तुमसे कह रहा हूँ वह वस्तुत बहुत उच्चकोटि का है। रणक्षत्र मे प्राण दे देना सुगम है भिक्षुणी बनकर सारा जीवन बिता देना भी कठिन नही है। पर एक ऐसे पुरुष के साथ जीवन बिताना जिसके प्रति मन म जरा भी प्रेम न हो बहुत ही कठिन है। मैं जानता हू बहद्रथ के साथ रहते हुए तुम्हे जो ग्लानि होगी उसकी तुलना मे तिल तिल कर अग्नि मे भस्म हो जाना बहुत सुगम होगा। बहद्रथ के साथ तुम्हे केवल रहना ही नही होगा अपितु उसके तन मन और प्राण पर तुम्हे अपना आधिपत्य स्थापित करना होगा। तुम्हे उसके प्रति ऐसा बरताव करना होगा जिससे वह तुम्हारा दास हो जाए तुम्हारे सकेत पर नाचने लगे। सद्धम की रक्षा के लिए यह परमावश्यक है विदुला। भगवान तथागत तुमस आज इसी बलिदान की अपेक्षा रखते हैं। तुम भलीभांति सोच विचार कर लो शीघ्रता मे कोई निणय न करो। भगवान तथागत तुम्हे इस उत्कृष्ट बलिदान के लिए शक्ति प्रदान करें।

विदुला ने इसका कोई उत्तर नही दिया। वह सिसक सिसक कर रोती रही। उसे चुप देखकर कश्यप न कहा—

अच्छा अब मैं जा रहा हू विदुला। मेरी इस योजना को सवथा गुप्त रखना। सोमदेव स भी इसकी चर्चा न करना। समय आने पर मैं स्वय उनस बात कर लूँगा। यदि तुम्हें मेरा प्रस्ताव स्वीकाय हो तो कल-परसो जब भी चाहो सघाराम म आकर मुझस मिल लना। मैं उत्सुकतापूवक तुम्हारी प्रतीक्षा करूगा। एक अधखिली कली को असमय म ही कुचल डालने म मुझे बहुत दुख हो रहा है विदुला। पर दवपूजा के लिए प्रतिदिन कितनी ही कलियाँ इसी प्रकार स तोड ली जाती हैं। यदि पुष्यमित्र की शक्ति का नष्ट न किया गया तो तुम्हारी यह शाकल नगरी ध्वस हो जाएगी। तुम्हारे गुरुजन मौत क घाट उतार दिए जाएँगे। यह सघाराम

यह चत्य, भगवान की यह प्रतिमा—सब भूमिसात हो जाएँगे। पाटलिपुत्र का वह प्राचीन कुक्कुटाराम विहार ? पुष्यमित्र ने उसे भूमिसात् कर दिया, सम्राट शतधनुष को जीते जी आग म जला दिया। क्या यही सब वह शाक्ल मे भी नही करेगा ? क्या तुम अपनी इस सुदर नगरी का ध्वस देख सकोगी ? तुम्हारा यह सुदर प्रासाद, यह पण्यशाला, तुम्हारे माता पिता—इस नशस आततायी के रहते हुए कोई भी तो सुरक्षित नही है। क्या तुम भवदेव के साथ निश्चिन्त रूप से गहस्थ जीवन बिता सकोगी ? नही, विदुला, कदापि नही। तुम्ह जो कुछ भी प्रिय है, उसकी रक्षा के लिए यदि मैं तुम्हे इस बलिदान के लिए कह रहा हूँ तो क्या यह अनुचित है ? भली भाँति विचार कर लो, विदुला ! अच्छा, मैं अब जा रहा हूँ। मुझसे मिलना अवश्य।'

स्थविर कश्यप सोमदेव के प्रासाद से चले गए, तो विदुला रोती हुई अपनी माता के पास गई। उसे रोती देखकर माता ने कहा—क्यो विदुला, क्या बात है ? रोती क्या हो ?'

'माँ, मैं यह विवाह नही करूँगी, मा।'

विवाह नही करेगी ? पागल तो नही हो गई है ? विवाह की सब तयारी हो चुकी है। दो सप्ताह पश्चात बरात आनेवाली है। भवदेव कल यहाँ था तो कसे हँस हँस कर उससे बाते कर रही थी। एक दिन म क्या हो गया ?

विदुला ने इसका कोई उत्तर नही दिया। वह रो रोकर केवल यह कहती रही—'मैं यह विवाह नही करूँगी, मा ! मुझसे और कुछ न पूछो। आज ही कोई दूत पुष्कलावती भेज दो। वह विवाह को मना कर आए।'

यह कसे हो सकता है पगली ! कोई बात तो बता। क्या भवदेव से रूठ गई है ?'

नही, माँ, मैं उनसे क्यो रूठने लगी।'

'फिर बात क्या है ?'

माँ और बेटी म बातें हो ही रही थी कि सोमदेव वहाँ आ गए। अपनी पत्नी को एकात म बुलाकर उन्होने कहा—

'स्थविर कश्यप आए हुए थे। देर तक विदुला स बातें करते रहे। न

जाने उन्होंने क्या कह दिया है जो यह रोने लग गई। मैं उनके पास जाऊँगा और बात करूँगा। तुम अभी इससे कुछ न कहो।

सोमदेव कश्यप से जाकर मिले। पूछने पर उन्होंने कहा—'विदुला अब बड़ी हो गई है गणमुख्य! उचित-अनुचित को स्वयं समझने लगी है। मैंने उससे कोई विशेष बात नहीं की। कुछ धर्म की चर्चा की, और उसे यह बताया कि सद्धर्म पर जो घोर संकट इस समय उपस्थित है उसके निवारण के लिए स्त्रियों के भी कुछ कर्तव्य हैं। स्त्रियाँ बहुत भावुक होती हैं श्रावक! सम्भवतः धर्म पर संकट जानकर उसने विवाह के विचार का परित्याग कर दिया हो।

पर अब यह कैसे सम्भव है स्थविर! विवाह की सब तैयारी हो चुकी है।

तुम चिन्ता न करो श्रावक! विदुला को मेरे पास भेज देना। मैं उसे समझा दूँगा।

सोमदेव ने घर लौटकर विदुला की माता से कहा—'स्थविर ने विदुला को बुलाया है और उसे समझा देने का वचन दिया है। विदुला स्थविर को बहुत मानती है। उनकी बात को वह टालेगी नहीं।

विदुला स्थविर कश्यप के पास जाने को उद्यत नहीं थी। वह बार-बार यही कह रही थी—मैं कहीं नहीं जाऊँगी मैं किसी से नहीं मिलूँगी। मैं विवाह भी नहीं करूँगी। मेरा यही निश्चय है मेरा निश्चय अडिग है।

श्रेष्ठी सोमदेव किंकर्तव्यविमूढ थे। उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि विदुला को क्या हो गया है, वह क्यों विक्षिप्त हो गई है। उसे प्यार से पुचकारते हुए उन्होंने कहा—स्थविर कश्यप तुम्हारे गुरु हैं बेटी! उन्होंने तुम्हें बुलाया है। वह तुमसे बात करना चाहते हैं। क्या तुम उनकी भी आज्ञा नहीं मानोगी?

आना! स्थविर की आज्ञा! मैं अवश्य मानूँगी। उनकी आँखों में एक अद्भुत आकर्षण है। वह तन्त्र मन्त्र जानते हैं। वह मुझे अपनी ओर खींच रहे हैं। मैं अभी जाती हूँ।

विदुला कश्यप के पास चली गई। सोमदेव भी उसके साथ जाना चाहते थे। पर विदुला ने उन्हें रोक कर कहा—

'स्थविर आपको तो नही बुला रहे, पिताजी ! मैं अकेली ही जाऊँगी। उनकी यही आना है।'

विदुला को अपने समीप खडी देखकर कश्यप ने कहा—'मैं जानता था तुम अवश्य आओगी। संघम तुम्हारा आह्वान करे और तुम न आओ, यह कैसे सम्भव है ! अच्छा अपने माता पिता से विदा ले आई हो न ?'

मुझे किसी से विदा नही लेनी है, स्थविर ! संसार म मेरा कोई नही है। जब भवदेव ही मेरे नही रहे तो अन्य कोई क्या मेरा होगा ? मैं बलिदान के लिए प्रस्तुत हूँ। ब्राह्मण लोग मेध्य पशु को यूप से बाधकर उसकी बलि दिया करते हैं न ! ओह मेध्य पशु की आखो म क्या करुण भाव होता है। मुझसे तो देखा नही जाता। क्या जानती थी, एक दिन मुझे भी मेध्य पशु बनना होगा। मैं स्वय यूप के पास चली आई हूँ, स्थविर !'

विदुला के करुण विलाप को सुनकर क्षण भर के लिए कश्यप का हृदय भी द्रवीभूत हो गया। फिर सम्भलकर उन्होंने कहा—'प्रणय एक भावना है विदुला ! वह मानसिक आवेश के अतिरिक्त अन्य कुछ नही है। क्षणिक आवेश के वशीभूत होकर तुम कर्तव्य-पालन मे प्रमाद न करो। यह ससार क्षणिक है पानी के बुलबुले के समान है। यहा यथार्थता की सत्ता ही नही है। शीघ्र तुम भवदेव को भूल जाओगी। तुम साम्राज्ञी बनोगी, विदुला ! ससार की सब ऋद्धिया और सिद्धिया तुम्हारे सम्मुख हाथ जोडकर खडी होगी। विशाल मागध साम्राज्य की तुम स्वामिनी बनोगी।

'जले पर नमक न छिडकिये स्थविर ! मैं बलिदान के लिए प्रस्तुत हू। आपको और क्या चाहिए ! कहिए मेरे लिए क्या आदेश है ? मुझे अब क्या करना होगा ?

तुम अब यहा सघाराम म ही रहोगी। निपुणक पाटलिपुत्र से लौटकर आ चुका है। वह राजमाता माधवी से बात कर आया है। तुम उसके साथ पाटलिपुत्र जाओगी। वहाँ क्या करना है यह मैं उसे समझा दूगा।

'आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, स्थविर !

बस अब तुम बुद्ध धम और सघ म ध्यान लगाओ। अपने को इस त्रिरत्न को समर्पित कर दो। तुम बहद्रथ से प्रेम करोगी यह समझकर कि तुम भगवान तथागत से प्रेम कर रही हो। तुम उसे अपने वश म लाओगी,

यह समझकर कि सद्धर्म के प्रति अपने कर्तव्य का पालन कर रही हो। तुम अपने काम कम का चेष्टा से कभी यह प्रकट नहीं होने दोगी कि बृहद्रथ से तुम्हें प्रेम नहीं है। तुम यह कर सकोगी न, विदुला!

हाँ कर सकूँगी स्थविर!

'मनुष्य परिस्थितियों का दास होता है, विदुला! वह परिस्थितियों के अनुसार अपने को ढाल लेता है। जब तुम बृहद्रथ के साथ रहोगी तो धीरे धीरे उससे प्रेम भी करने लगोगी। साम्राज्ञी का पद पूर्वजन्म के पुण्यों से ही प्राप्त होता है बेटी! तुम्हारा भाग्य अत्यन्त प्रबल है जो मागध साम्राज्य की स्वामिनी बनने जा रही हो।

बस मुझसे यही न कहिए स्थविर! न मैं बृहद्रथ से प्रेम कर सकूँगी और न साम्राज्ञी बनने में कोई गौरव ही अनुभव करूँगी। हाँ मैं बलिदान के लिए उद्यत हूँ। अपने जीवन प्राण प्रणय—सब की बलि दे देने को प्रस्तुत हूँ।

अच्छा यही सही।' कश्यप ने कुछ आक्रोश के साथ कहा।

स्थविर और विदुला कुछ देर चुप बैठे रहे। विदुला ने इस शान्ति को भंग किया। वह हाथ जोड़कर बोली—

'एक बार अपने घर हो आऊँ, स्थविर! माता पिता से विदा ले आऊँ?'

नहीं अब तुम कहीं नहीं जाओगी। निपुणक अभी यहाँ आ रहा है। मुझे उसे कुछ निर्देश देने हैं।

निपुणक ने आकर स्थविर को प्रणाम किया। उसे देखकर स्थविर ने कहा—'देखो, निपुणक! यह है विदुला। इसे भलीभाँति देख लो। रूप रंग में साक्षात रति है। बृहद्रथ के लिए यह उपयुक्त रहेगी न?'

'हाँ, स्थविर! सम्राट इसे देखते ही अपनी सुधबुध भूल जाएँगे। मगध में ऐसा रूप रंग दुर्लभ है।

शीघ्र इसे पाटलिपुत्र ले जाओ। किसी को सन्देह न होने पाए। हमारी योजना पूर्णतया गुप्त रहनी चाहिए। पुष्यमित्र के सैनिक सर्वत्र छाए हुए हैं। उन्हें यह पता न होने पाए कि तुम लोग कौन हो।

मैं इसका ध्यान रखूँगा, स्थविर!

'और पाटलिपुत्र पहुँचकर तुम्हे क्या करना है, यह भी भलीभाँति समझ लो। वृहद्रथ को विदुला के साथ विवाह के लिए तयार करना है।'

मुझे आपकी योजना ज्ञात है, स्थविर!'

'जो मैं कहता हूँ उसे ध्यानपूर्वक सुन लो। बहद्रथ तो विवाह के लिए तयार हो जाएगा पर विदुला नही होगी। भवदेव नाम का कोई श्रेष्ठी पुत्र है। उसके प्रणय म फँसी हुई है। किसी अन्य की ओर इसका मन उठता ही नही है। समझाते-समझाते थक गया हूँ। पर यह समझती ही नही। कहती है बलिदान के लिए प्रस्तुत हूँ पर बहद्रथ से प्रेम कर सकना मेरे लिए सम्भव नही होगा। जब प्रेम नहीं करगी, तो वह इसके वश मे कसे आएगा। तुम्हें इसे समझाना होगा, निपुणक! इसके मन को भवदेव की ओर से विमुख करना भी तुम्हारा ही काय है। ऐसा यत्न करो जिससे यह सचमुच वृहद्रथ से प्रेम करने लगे। हमारी योजना तभी सफल हो सकेगी।

आप निश्चिन्त रहें, स्थविर! विदुला को सही माग पर लाना मेरा काम है।

'अच्छा अब तुम जाओ। दो दिन यहा विश्राम कर लो। विदुला भी तब तक सघाराम म ही रहेगी।'

जब साँझ हो गई और विदुला घर वापस नहा आई तो सोमदेव बहुत चिन्तित हुए। वह सघाराम गए और उन्होने कश्यप से विदुला के विषय म पूछा। स्थविर ने उन्हें कहा—'आप क्या कह रहे है श्रेष्ठी! विदुला यहाँ कब आई? मैं उससे मिलन के लिए बहुत उत्सुक था। उसे समझाना चाहता था। पर वह मेरे पास आई ही नही। तुम्हारे प्रासाद मे मैं जब उससे मिला था, तो वह कुछ विक्षिप्त सी प्रतीत हो रही थी। न जाने, क्या सोच कर बार-बार शून्य दृष्टि से क्षितिज की ओर देखन लगती थी। आप चिन्ता न करें श्रेष्ठी! कुछ दिनो म वह स्वय ही घर लौट आएगी। स्त्रियाँ स्वभाव से ही भावुक होती है क्षणिक आवेश म कहा चली गई होगी।

निराश होकर सोमदेव अपने घर लौट गए। उन्हें क्या पता था कि उनकी प्रिय पुत्री को एक मेध्य पशु के समान बलि के लिए ले जाया जा रहा है।

बृहद्रथ का विवाह

पाटलिपुत्र में भगवान अपराजित शिव की रथ-यात्रा का उत्सव बड़ी धूमधाम के साथ मनाया जाता था। सहस्रों गृहस्थ, साधु, संन्यासी और तापस इस उत्सव में सम्मिलित होने के लिए दूर दूर से आया करते थे। बहुत से नट नर्तक, वादक और मदारी आदि भी इस अवसर पर पाटलिपुत्र आ जाया करते थे और भगवान के कोष्ठ के प्राङ्गण में एक मेला-सा लग जाता था। यात्रियों के पाटलिपुत्र आने जाने के सम्बन्ध में इस समय कोई विशेष रुकावट नहीं रह जाती थी। दुर्ग के महाद्वार खोल दिए जाते थे और सब कोई बिना किसी रोक टोक के मागध साम्राज्य की इस राजधानी में आ-जा सकते थे।

रथ-यात्रा का उत्सव प्रारम्भ हो चुका था, मेला भर गया था। मन्दिर के प्राङ्गण में कहीं तिल रखने का भी स्थान शेष नहीं रहा था। कहीं मदारी अपने करतब दिखा रहे थे, कहीं नट रस्से पर नाच रहे थे कहीं अहितुण्डक (सपेरे) साँपों का प्रदर्शन कर रहे थे, और कहीं गान और नृत्य का समा बंधा हुआ था। भगवान के कोष्ठ के समीप बहुत से लोग एकत्र थे, और उनके बीच में एक युवती नृत्य में मग्न थी। एक वृद्ध वहाँ बैठा हुआ मृदंग बजा रहा था और युवती उसकी थाप के साथ ताल मिलाकर नाच रही थी। बीच-बीच में वह ज़ोर से कह उठती—'भगवान अपराजित की जय हो भगवान सबका कल्याण करें जो दे उसका भी और जो न दे उसका भी। कुछ भीख मिल जाए दाता! बहुत दूर से आ रही हूँ। वह नाचती हुई झोली फैलाकर चारों ओर चक्कर लगाती और दर्शक निष्कों पणों और कार्षापणों से उसकी झोली को भर देते। राजप्रासाद की एक दासी इस नर्तकी और उसके साथ के वादक को ध्यान से देख रही थी। जब रात हो गई और भीड़ छट गई तो वह उनके पास गई और वादक के कान के पास अपना मुख ले जाकर धीमे से बोली—राजमाता ने तुम्हें स्मरण किया है, निपुणक! अपना नाम सुनकर वादक एकदम चौंक उठा। उसने धीमे से कहा—

मेरा नाम वक्रतुण्ड है माँ! मुझे इसी नाम से पुकारो।

'अच्छा, सुनो, वक्रतुण्ड ! राजमाता इस युवती के नत्य से वहुत प्रसन्न हैं। वह अत पुर म तुम्हारी प्रेक्षा कराना चाहती हैं।

'अहाभाग्य हमारा ! अरी सुनती है शशिलेखा ! राजमाता तुम्हारा नत्य देखना चाहती हैं। अब हमे क्या चाहिए। हमारा पाटलिपुत्र आना सफल हो गया। राजमाता को प्रसन्न कर देना, मुह मागा पुरस्कार पा जाओगी।

'पर हम राजप्रासाद मे प्रवेश कस पा सकेंगे ?' युवती ने प्रश्न किया।

अरी तुझे इसकी क्या चिन्ता है। जब राजमाता ने हम बुलाया है ता किसकी शक्ति है जा हम राजप्रासाद मे जान से रोक सके ? अच्छा, माँ, हम अवश्य अन्त पुर जाएगे और वहा प्रेक्षा करेंगे।'

निपुणक ने फिर अपने स्वर को वहुत धीमे करके कहा—'राजमाता का मेरा प्रणाम निवेदन करके कहना कि विदुला आ गई है। आन्तवशिक स अनुमति लेकर हम अन्त पुर म बुला ले। बाहर से आए हुए नट-नतका और गायक-वादका का प्रेक्षा के लिए अन्त पुर म बुलाया ही जाता है। यह पुरानी प्रथा है। किसी को सन्देह नही होगा।

दासी ने निपुणक का सन्देश राजमाता तक पहुँचा दिया। माधवी न आन्तवशिक वीरवर्मा को बुलाकर कहा—

'सुना है, रथ-यात्रा के उत्सव म वहुत-से नट-नतक और गायक-वादक आए हुए हैं वीरवर्मा !'

हाँ राजमाता !'

मैं अन्त पुर म उनकी प्रेक्षा कराना चाहती हूँ। इन दिनो मरा मन वहुत अशान्त रहता है। जब से शतधनुष की मृत्यु हुई है किसी भी काम म मन नही लगता। प्रेक्षा दखकर मन कुछ वहल जाएगा।'

'प्रेक्षा आप किस दिन कराना चाहती हैं राजमाता !'

यदि आज हो सके, तो वहुत अच्छा है। यदि यह सम्भव न हा ता कल सही।

'इतनी शीघ्र व्यवस्था कर सकना तो कठिन होगा, राजमाता ! हम प्रत्येक नट नतक आदि की सूक्ष्मता क साथ परीक्षा करनी होगी। छद्म वेश

बनाकर कितने ही गूढ़पुरुष दस्यु आदि भी ऐसे अवसरों पर पाटलिपुत्र आ जाया करते हैं। धार्मिक उत्सव के कारण उन्हें रोक सकना कठिन हो जाता है। पर राजप्रासाद में तो किसी को प्रविष्ट नहीं होने दिया जा सकता। जब तक जाँच न कर ली जाए किसी को अन्तःपुर में आने की अनुमति नहीं दी जा सकेगी। इसके लिए समय अपेक्षित है राजमाता!

अपना काम तुम जानो वीरवर्मा! जहाँ तक हो सके शीघ्रता करना। हाँ, सुना है कोई अनिन्द्य सुन्दरी उत्सव में आयी हुई है जो नाचती और गाती भी है। मेरी दासी कह रही थी कोई अत्यन्त दीन युवती है, पर है लाखों में एक। संगीत और नृत्य में अत्यन्त प्रवीण है। उसका गाना सुनकर मेरा मन बहल जाएगा।

मैं उसकी परीक्षा कर लूँगा, राजमाता! ऐसी युवतियाँ बहुत भयंकर होती हैं। कौन जाने, यवनों की सखी हो। शत्रुओं से सम्राट की रक्षा का हमें ध्यान रखना है, राजमाता!

हाँ, यह ठीक है! पर अधिक देर न करना। प्रेक्षा के लिए मेरा मन तरस रहा है।'

जो आज्ञा, राजमाता!

वीरवर्मा ने प्रेक्षा की सब व्यवस्था करा दी। अन्तःपुर के प्राङ्गण में एक पट मण्डप लगवा दिया गया। सुगन्धित तेल से परिपूर्ण दीपकों से सर्वत्र उजाला हो गया। सम्राट और उनकी वधुओं के बैठने के लिए एक ऊँची वेदी का निर्माण किया गया। अन्तःपुर की कुलीन महिलाओं के लिए पृथक व्यवस्था कर दी गई। आन्तर्वंशिक के सैनिकों ने सब नटों, नर्तकों, गायकों और वादकों की सूक्ष्मता के साथ परीक्षा की। जब वे उस युवती के पास पहुँचे तो उन्होंने प्रश्न किया—'तुम्हारा नाम क्या है भद्रे!'

'नन्दिका, महारानि!'

तुम कहाँ से आयी हो? कहाँ की रहनेवाली हो?

न मेरा कोई घर है महारानि! और न कोई अभिजन। बचपन में माता पिता की मृत्यु हो गई थी। अनाथ हूँ। नाच-गाकर किसी प्रकार अपना पेट पाल रही हूँ। इसी तरह सर्वत्र घूमती फिरती हूँ।

'तुम्हारे साथ यह बच्चा कौन है?'

'इनका नाम वक्रतुण्ड है सेनापति ! ढोलक, मृदग, वीणा—सब वाद्यो के वादन म पारगत हैं।'

तुम्हारे पास कोई अस्त्र शस्त्र तो नही है ?'

'अस्त्र शस्त्र से हमे क्या काम सेनापति !'

गुल्मपति स आदेश पाकर एक स्त्री शशिलेखा को एका त कक्ष म ल गई। वहाँ उसके वस्त्रा की परीक्षा ली गई। वेणी को खोलकर देखा गया नखा को परखा गया दात देखे गए। जब स्त्री को विश्वास हो गया, कि शशिलेखा ने कोई अस्त्र शस्त्र छिपाकर नही रखे हुए हैं, और उसके नख भी विषाक्त नही हैं, तो उस राजप्रासाद म जान की अनुमति दे दी गई।

वक्रतुण्ड को देखकर गुल्मपति को कुछ स देह हुआ। उ हान कहा—'तुम्हारा मुख कुछ परिचित-सा प्रतीत होता है। क्या कभी पहल भी पाटलिपुत्र आए हो ?

'आया क्या नही, सनापति ! इसी प्रकार भटकत हुए सारी आयु बीत गई है। अब बूढ़ा हो गया हूँ। साठ वष की आयु है। तीन-चार बार पाटलिपुत्र आ चुका हूँ। गाना-बजाना ही मेरा धधा है। जब कभी यहा कोई उत्सव होता है भीख की आशा से चला आता हू। मुझे आपने पहले भी अवश्य देखा होगा। जब मैं ढोल बजाना प्रारम्भ करता हूँ लोगा की भीड लग जाती है।'

पर तुम्हारे साथ की यह युवती तो अत्य त किशोरवय है। क्या यह भी पहले कभी तुम्हार साथ पाटलिपुत्र आई है ?

'नही सेनापति ! यह पहले कभी नही आई। इधर उधर भीख मागती फिरा करती थी। मैंने देखा तो इसे साथ ले लिया। देखने मे सु दर है और नत्य-सगीत म प्रवीण। यह शिल्प मैंने ही इसे सिखाया है, सनापति ! इसक साथ रहने स भिक्षा सुगमता से मिल जाती है।

वक्रतुण्ड की भी सतर्कता के साथ परीक्षा ली गई। जब कोई अस्त्र शस्त्र उसके पास नहीं मिला तो उसे भी राजप्रासाद में प्रवेश की अनुमति प्रदान कर दी गई।

सब नटो, नतका गायको और वादको के आ जान पर प्रेक्षा प्रारम्भ हुई। पर राजमाता माधवी को न नटा के नाटय देखन थे और न नर्तकों के

नत्य। उनका ध्यान तो शशिलेखा मे केंद्रित था। वह साच रही था यही वह विदुला है जिसे स्थविरो न शाकल से बृहद्रथ के लिए भेजा है। वास्तव म ही यह अनिद्य सुदरी है। चम्पा का सा रग, नील कमल-सी आँखें और कम्बु की सी ग्रीवा। गाती है तो वीणा सी बज उठती है। नाचती है तो एक एक अग थिरकन लगता है। सब प्रकार स यह बृहद्रथ के योग्य है।

प्रेक्षा जब समाप्त हो गई तो माधवी ने शशिलेखा को अपने पास बुलाकर कहा—'तुम्हार सगीत और नत्य मे मैं बहुत प्रसन्न हूँ। कहो क्या चाहती हो ? तुम्हे मुह मागा पुरस्कार प्रदान किया जाएगा।

मुझे कुछ नही चाहिए मा ! आपने मेरा नत्य पसद किया मेरे लिए यही पर्याप्त पुरस्कार है। बचपन से अनाथ हू भीख माँगकर अपना निर्वाह करती हूँ। बस, भीख मिल जाए मेरे लिए यही बहुत है।

'नही, अब तुम भीख नही मागोगी। बोलो क्या चाहती हो ?

निपुणक ने विदुला को पहले स ही सब कुछ सिखाया हुआ था। सकोच क साथ उसने कहा—'अपने चरणो म मुझे स्थान प्रदान कीजिए, मा !

यह सुनकर माधवी का मन प्रसन्न हो गया। मृदु स्मित के साथ उन्होने कहा— अब तुम यहाँ मेरे पास ही रहोगी। बोलो, तुम्हे स्वीकार है न ?

मैं आपकी चरण सेवा मे अपना जीवन बिता दूँगी मा !'

माधवी ने एक दासी को बुलाकर कहा— शशिलेखा को अपने साथ ले जाओ। इसे स्नान कराओ नए वस्त्र पहनाओ। सोलहो शृगार करके इसे मेरी सेवा म उपस्थित करो।

शशिलेखा को लेकर जब दासी चली गई तो माधवी ने बृहद्रथ के पास जाकर कहा— क्यो बृहद्रथ, उस नतकी को देखा था जो थिरक थिरक कर नाच रहा था। कितनी सुन्दर है ! देखकर आँखें तृप्त ही नही होती।

नतकी की चर्चा से बृहद्रथ का मुखमण्डल सकोच से आरक्त हो गया। प्रेक्षा म वह एकटक उसी की ओर देखत रहे थे। उसके सौन्दय स वह मन्त्र मुग्ध स रह गए थे।

'अरे वही नतकी जो मृदग की थाप क साथ ताल मिलाकर नाच रही थी।

'हाँ मा मुझे उसका ध्यान है। कोई भिखारिणी थी। आप उससे बात भी कर रही थी। उसे भिक्षा प्रदान कर दी है न ?'

'अब उसे भिक्षा की कोई आवश्यकता नही है। वह यहाँ मेरे पास ही रहेगी।'

भिखारिणी ! और वह आपके पास रहगी। क्या कह रही हो, मा !'

'वह भिखारिणी नहा है वत्स ! मद्रक जनपद के गणमुख्य सोमदेव की पुत्री विदुला है। भारत भर मे एसी सुन्दरी दीपक लेकर ढूढ़न स भी नही मिलेगी। भिखारिणी के छद्म वेश म पाटलिपुत्र आयी है। स्थविरा न उस तुम्हारे लिए भेजा है।

'उसे स्थविरा ने मेरे लिए भेजा है ? आप क्या कह रही हैं मा !

मैं सच कह रही हूँ वत्स ! सच कहो, तुम्हे वह पसन्द है न ?'

वृहद्रथ न इसका कोई उत्तर नही दिया। वह सिर झुकाकर बैठा रहा। उसे चुप देखकर माधवी ने कहा—

'अब तुम युवा हो गए हो वत्स ! कब तक अविवाहित रहोगे ? विदुला सब प्रकार स तुम्हारे योग्य है। उसका कुल अत्यन्त उच्च है। शाकल के सघाराम म उसने सोलहो कलाओ और अठारहो विद्याओ की शिक्षा प्राप्त की है। भगवान तथागत द्वारा प्रतिपादित मध्यमा प्रतिपदा म उसकी अगाध श्रद्धा है। तुम्हे और क्या चाहिए ? उसके रूप रग को तुमन स्वय अपनी आँखो से देख ही लिया है।'

माधवी यह कह ही रही थी कि दासी ने आकर उन्हे प्रणाम किया। हाथ जोडकर उसने कहा—

'शशिलेखा स्नान से निवृत्त हो चुकी हैं राजमाता ! अब मेरे लिए क्या आज्ञा है ?'

'उसे यहीं ले आओ।

शशिलेखा को देखकर वृहद्रथ स्तब्ध हो गए और वह उसे देखते ही रह गए। स्नान और शृगार से उसका रूप ऐसा निखर आया था कि उसे पहचानना सम्भव नही रहा था। उसे देखकर वृहद्रथ ने अपने मन म कहा—'ओह ! कैसी सुन्दर है यह शशिलेखा ! मगध म ऐसा रूप कभी देखने म ही नही आया। क्या यह सचमुच मेरी हो सकेगी ?

शशिलेखा को अपने समीप बुलाकर माधवी ने कहा—यह मागध साम्राज्य के सम्राट बृहद्रथ हैं। इन्हें प्रणाम करो, बेटी।'

शशिलेखा ने सम्राट के सम्मुख सिर झुका दिया।

'तुमने शशिलेखा के प्रणाम का प्रत्युत्तर नहीं दिया, वत्स।' माधवी ने हँसते हुए कहा। इस पर बृहद्रथ ने अपना दायां हाथ ऊपर उठा दिया। माधवी ने फिर कहा—बस, अब ठीक है। अच्छा, बेटी! अब तुम जाकर विश्राम करो। सकडों योजन की यात्रा करके आयी हो। थक गई होगी।

'पर मेरे साथ जो वादक है वह कहाँ रहेंगे? मैं उन्हें कैसे छोड़ सकती हूँ माँ।

'अरे, निपुणक की तुम चिन्ता न करो, बेटी! वह कभी यहाँ आन्तवंशिक रह चुका है। यहाँ का कोई भी स्थान उससे छिपा हुआ नहीं है। वह अपनी चिन्ता स्वयं कर लेगा।

शशिलेखा दासी के साथ चली गई। माधवी ने मृदु स्मित के साथ बृहद्रथ से कहा—'तुमने मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया, वत्स! शशिलेखा तुम्हें पसन्द है, न?

जब आप पहले ही निर्णय कर चुकी हैं तो मुझे क्या कहना है माँ।'

तो ठीक है! मैं अभी कार्तान्तिक को बुलाकर शुभ मुहूर्त निकलवाती हूँ।

पर विवाह के लिए सेनानी से अनुमति प्राप्त करनी होगी माँ! मौर्य कुल में विवाह के लिए भी मन्त्रिपरिषद् के निर्णय की आवश्यकता हुआ करती है।

'विवाह तुम्हें करना है या सेनानी को? मन्त्रिपरिषद् का तुम्हारे विवाह से क्या सम्बन्ध?

'आप उस बूढ़े आचार्य को जानती हैं न? क्या नाम है उसका? हाँ, स्मरण आया पतञ्जलि। वह कहा करता है सम्राट को मन्त्रि परिषद के अधीन रहकर सब काम करने हैं। उसका व्यक्तित्व, उसका पारिवारिक जीवन उसका प्रणय—सब मन्त्रियों के नियन्त्रण में रहना चाहिए।'

मैं भी कभी पाटलिपुत्र में वधू बनकर आयी थी वत्स! मेरा भी एक सम्राट् के साथ विवाह हुआ था। तब तो मन्त्रि परिषद की अनुमति का

प्रश्न उपस्थित नही हुआ था।'

व दिन अब बीत गए है मॉं ! मैं केवल नाम को ही सम्राट् हूँ। वास्तविक शक्ति तो पुष्यमित्र के हाथो मे है।'

ये दिन भी अब शीघ्र ही बीत जाएँगे, वत्स ! अब तुम सच्चे अर्थों मे सम्राट बनोगे। मौर्य शासनतत्र का सचालन अब तुम्हारे हाथो म रहेगा। शशिलेखा दण्डनीति म प्रवीण है। उसके सम्मुख पुष्यमित्र की एक न चलेगी ! स्थविर कश्यप ने इसीलिए ता उसे तुम्हारे लिए चुना है। हा, उसका वास्तविक नाम विदुला है। अब मैं उसे विदुला ही कहूँगी। विदुला के साम्राज्ञी बन जाने पर तुम्हारी शक्ति दुगनी हो जाएगी। तुम अब पुष्यमित्र और पतञ्जलि को अपने मन से निकाल दो।'

'यदि कही उन्ह यह नात हो गया कि विदुला मद्रक जनपद के गणमुख्य की पुत्री है, तो वे उसे पकडकर बघनागार म डाल देंगे। तुमने देखा नही, मा ! जब विदुला को तुमने अपने पास बुलाया था,तो वीरवमा वहाँ उपस्थित था। वह घूर घूरकर विदुला को देख रहा था। कही उसे सन्देह हो गया तो क्या होगा ? मुझे इस पतञ्जलि से बहुत डर लगता है। न जाने पुष्यमित्र इसे वहा स ले आया है। उसके सम्मुख मरी तो आखें ही नही उठती। ऐसे देखता है, मानो उसकी आँखें पारदर्शी हो। किसी के मन म क्या है यह उसे दष्टिपात करते ही नात हो जाता है।'

'तुम इसकी चिता न करो, वत्स ! निपुणक का तुम नही जानते। देववर्मा की हत्या उसी ने की थी। ऐसे वेश बना लेता है कि कोई उस पहचान ही नही सकता। पतञ्जलि की उसके सम्मुख एक न चलेगी।

'अच्छा अब मैं चलू मा ! बहुत रात हो गई है। विश्राम करूँगा।

बहद्रथ अपने शयन कक्ष मे चल गए। माधवी भी अपने कक्ष म जाने को तयार थी कि एक दण्डधर ने आकर उन्ह प्रणाम किया। सिर झुकाकर उसने कहा— आतवाशक आपस मिलना चाहते हैं राजमाता ! उन्होने आपकी सवा म प्रणाम निवेदन किया है।

वीरवर्मा से कह दो यह मेरे विश्राम का समय है। इस समय मैं किसी से नही मिल सकती।'

पर यदि उन्होने इसी समय मिलने का आग्रह किया तो मैं उन्ह क्या

कह राजमाता।

माधवी कुछ देर सोचती रही। फिर उन्होंने आक्रोश के साथ कहा— अच्छा उसे कह दो बाहर के कक्ष में मेरी प्रतीक्षा करे। मैं वस्त्र बदलकर अभी जाती हूं।

जो आज्ञा राजमाता। दण्डधर ने सिर झुकाकर माधवी को फिर प्रणाम किया।

बाह्य कक्ष में वीरवर्मा राजमाता की उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे थे। माधवी के प्रवेश करने पर उन्होंने झुककर अभिवादन किया। राजमाता के आसन ग्रहण कर लेने पर वीरवर्मा ने कहा—

'इस असमय कष्ट देने के लिए मुझे क्षमा करें राजमाता! प्रेक्षा के लिए जो नट नर्तक गायक वादक आदि राजप्रासाद में आए थे वे सब भगवान अपराजित के काष्ठ के प्राङ्गण में वापस लौट गए हैं। पर एक नर्तकी का पता नहीं चल रहा है और उसके साथ के वादक का भी। सुना है उन्हें आपने रोक लिया है।

हाँ तुमने ठीक सुना है।

पर यह तो राजशासन के विरुद्ध है राजमाता।

राजशासन प्रचारित करने का अधिकार किसे है?

सम्राट का राजमाता।

मैंने सम्राट बृहद्रथ से इसके लिए अनुमति प्राप्त कर ली है। उन्हें ज्ञात है कि शशिनंदा और वकत्रतुण्ड यहाँ मेरे पास रह रहे हैं। अब वे दोनों राजप्रासाद में ही रहेंगे।

पर सम्राट स्वयं भी कोई ऐसा आदेश नहीं दे सकते जो राजशासन के विपरीत हो। राजशासन सम्राट के नाम पर प्रचारित किए जाते हैं पर उनका विनिश्चय और स्वरूप निर्धारण मन्त्रिपरिषद् द्वारा किया जाता है। राजशासन के अनुसार कोई भी व्यक्ति तब तक राजप्रासाद में प्रवेश नहीं कर सकता जब तक कि वह आन्तवंशिक से अनुज्ञा-पत्र प्राप्त न कर ले। नट नर्तक आदि को जो अनुज्ञा-पत्र दिए गए थे वे केवल अर्द्धरात्रि तक के लिए थे। अब इन अनुज्ञा-पत्रों की अवधि समाप्त हो चुकी है राजमाता। मेरा आग्रह है कि तुम शशिनंदा और वकत्रतुण्ड के अनुज्ञा-पत्रों की

अवधि बना दो।

'मुझे क्षमा करें राजमाता! इसके लिए सेनानी की अनुमति की आवश्यकता होगी।

यह किस लिए?'

क्योंकि राजशासन के अनुसार यह अधिकार केवल सेनानी को प्राप्त है।

यदि वे राजप्रासाद से बाहर न जाएँ तो तुम क्या करोगे, वीरवर्मा?'

'मुझे यह कहने के लिए क्षमा करें, राजमाता! मुझे उनके विरुद्ध शक्ति का प्रयोग करना होगा।

क्या राजमाता माधवी को इतना भी अधिकार नहीं है कि वह किसी अनाथ भिखारिणी को आश्रय दे सके? कृषक और कमकर तक किसी को भी अपने घर पर ठहरा सकते हैं।

'वह उनका अपना घर होता है राजमाता! पर यह राजप्रासाद किसी की व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं है। यह राज्य का है और इसकी सब व्यवस्था मन्त्रिपरिषद के अधीन है।

तुम कहते हो कि पुष्यमित्र अनुज्ञापत्र की अवधि को बढ़ा सकता है। जो अधिकार एक सेनानी को प्राप्त है वह सम्राट को क्या प्राप्त नहीं है? उनकी अनुमति मैं प्राप्त कर चुकी हूँ, वीरवर्मा!

राजशासन के अनुसार यह अधिकार केवल सेनानी को ही दिया गया है, राजमाता! सम्राट भी राजशासन के अधीन हैं। भारत के राज्यों की यही परम्परा है राजमाता!

माधवी कुछ देर तक सोचती रही। फिर उसने कहा—अच्छा वीरवर्मा! मेरा एक अनुरोध स्वीकार कर लो। रात्रि के तीन प्रहर बीत चुके हैं। केवल एक प्रहर शेष है। सूर्योदय तक इन दोनों को यहाँ रहने दो। रात के समय ये बेचारे कहाँ जाएँगे? बहुत दूर से आए हैं। पाटलिपुत्र के मार्गों और वीथियों में ही भटकते रहेंगे। चोर समझकर कोई इन पर आक्रमण ही न कर बैठे। ये बहुत ही दीन और बेबस हैं वीरवर्मा! आराम से सोए पड़े हैं। दो घड़ी विश्राम कर लें। ब्राह्ममुहूर्त से पूर्व ही इन्हें जगा दूँगी।

राजशासन के विरुद्ध आचरण करना घोर **अपराध है,**

पर आपकी आज्ञा को भी मैं कैसे टाल सकता हूँ। सेनानी पूछेंगे तो कह दूंगा कि शशिलेखा और वक्रतुण्ड का कहीं पता नहीं चला। कल प्रातः तक वे अवश्य मन्दिर के प्राङ्गण में पहुँच जाएँ। वहाँ उन्हें देखकर मैं सेनानी को आश्वस्त कर दूंगा।'

'भगवान् तथागत तुम्हारा कल्याण करें। पूरे सौ वर्ष तक जिओ और फलो फूलो।

वीरवर्मा के चले जाने पर माधवी तुरन्त निपुणक के पास गई। वह अभी सोया नहीं था। राजमाता को देखकर निपुणक शय्या से उठकर खड़ा हो गया। माधवी उसे कुछ कहने को ही थी कि निपुणक ने कहा—मैं सब-कुछ सुन चुका हूँ, राजमाता! जब आप वीरवर्मा से बातें कर रही थीं तो मैं द्वार के पीछे छिपकर खड़ा हुआ था।

तो अब हम क्या करना चाहिए, निपुणक!

अब देर करने का समय नहीं है, राजमाता! सूर्योदय से पूर्व ही बृहद्रथ और विदुला के विवाह की विधि सम्पन्न हो जानी चाहिए। विदुला के साम्राज्ञी बन जाने पर कौन उसे राजप्रासाद से बाहर निकाल सकेगा?

'पर यह कैसे सम्भव है निपुणक! विवाह क्या कोई हँसी-खेल है? उसके लिए कार्तान्तिक को बुलाकर शुभ मुहूर्त निकलवाना होगा। बन्धु बान्धवों को निमन्त्रण देना होगा। मैं न जाने कब से बृहद्रथ के विवाह का स्वप्न देख रही हूँ। शतधनुष अभी अविवाहित था, कि इस नृशंस आततायी पुष्यमित्र ने उसकी हत्या कर दी। बृहद्रथ का विवाह मैं धूमधाम के साथ करना चाहती हूँ, निपुणक!

यह असम्भव है, राजमाता! यदि सूर्योदय से पूर्व ही विदुला का विवाह न हो गया तो पुष्यमित्र उसे अवश्य ही बन्धनागार में डाल देगा। उसे हम पर सन्देह हो गया है। उसके सत्री सर्वत्र नियुक्त हैं। यदि विदुला का वास्तविक परिचय उसे प्राप्त हो गया तो वह कभी उसे जीवित नहीं छोड़ेगा। सद्धर्म की रक्षा के लिए जो योजना स्थविरों ने बनाई है वह व्यर्थ हो जाएगी।'

पर अब रात्रि का केवल एक प्रहर शेष रह गया है। विवाह की विधि को सम्पन्न कर सकना अब कैसे सम्भव हो सकेगा?'

'यह कठिन नही है राजमाता ! गान्धव विवाह शास्त्र द्वारा अनुमत है। सम्राट और विदुला का गान्धव विवाह ही होगा। उसके लिए न किसी समारोह की आवश्यकता है, और न तयारी की।

'पर उसकी भी तो कोई विधि होगी। उसे कौन सम्पन्न कराएगा ?'

'गान्धव विवाह के लिए न कोई विशेष विधि है और न उसके लिए किसी पुरोहित की ही आवश्यकता होती है। बृहद्रथ और विदुला दानो एक-दूसरे के गले म पुष्पमालाएँ डाल देंगे और फिर देवदशन के लिए चत्य म चले जाएँगे। अन्त पुर म मन्दिर भी है और, चत्य भी। मौर्यों की पुरानी परम्परा के अनुसार वे दोनो मे देवदशन कर लेंगे। यदि आप पुरोहित की आवश्यकता समझें तो मैं प्रस्तुत हूँ। अपना आधा जीवन कुक्कुटाराम म बिता चुका हूँ। सब शास्त्रीय विधियाँ और कमकाण्ड मैं भलीभाति जानता हूँ।'

'पर क्या विदुला इस विवाह के लिए सहमत है ?'

'फिर वह शाकल नगरी स इतनी दूर यहाँ क्यो आयी है, राजमाता !'

'तो फिर यही सही। तुम विदुला को जगा लो और उस सब बातें समझा दो। मैं बृहद्रथ को बुलवा लेती हूँ। अब वह गहरी नीद मे सो रहा होगा। जब एक बार पडकर सो जाता है तो दो प्रहर दिन बीत जाने पर ही उसकी नीद खुलती है। पर दासी को भेजकर उसको जगवा लेती हूँ।

बृहद्रथ गहरी नीद म सो रहा था। दासी ने उसे जगाकर कहा—'राजमाता न आपको स्मरण किया है, सम्राट ! कहा है, बहुत आवश्यक काय है, तुरन्त चले आएँ एक क्षण की भी देर न करें।

माधवी उत्सुकतापूवक बृहद्रथ की प्रतीक्षा कर रही थी। उसे देखकर उन्होंने कहा—'रात्रि के वस्त्रा म ही चले आए हो। जाओ, तुरन्त वस्त्र बदल आओ। उत्तम वस्त्र पहनकर आना।

'क्या बात है माँ।

'तुम्हारे विवाह की विधि को सम्पन्न करना है, वत्स ! देर करने का काम नही है। इसस पूव कि पुष्यमित्र को विदुला का वास्तविक परिचय प्राप्त हो सके, तुम्हारे साथ उसका विवाह कर देना है। आप या ब्राह्म विधि से विवाह करने का अब समय नहा है। विदुला स तुम्हारा गान्धव विवाह

यह बलिदान सवथा निरथक हो जाएगा।'

जब विदुला दर तक अपने शयन कक्ष स बाहर नही आई तो माधवी ने द्वार पर आकर कहा—

'क्या बात है निपुणक ! देर क्यो कर रह हो ? बृहद्रथ कब स प्रतीक्षा कर रहा ह।

मैं अभी आई राजमाता !' विदुला न धीर से कहा।

बृहद्रथ और विदुला के विवाह की विधि सम्पन्न हो गई। दोनो न एक दूसर के गले म पुष्पमालाएँ डाल दी। अन्त पुर के चैत्य म जाकर उन्होंने भगवान तथागत की मूर्ति के सम्मुख एक साथ सिर झुकाया। उन्हें आशीवाद दत हुए माधवी ने कहा— यावच्चन्द्रदिवाकरौ तुम्हारा सुहाग स्थिर रह बेटी। जब व चैत्य से बाहर जाने लग तो निपुणक से भी नही रहा गया। उसने कहा— मैं स्थविर नहीं हूँ सम्राट ! पर चिरकाल तक स्थविरो की सगति म रहा हूँ। यद्यपि आशीर्वाद दने का मुझे कोई अधिकार नहीं है पर भगवान तथागत स यही प्राथना करता हूँ, कि आपका यह विवाह शुभ हो और आप दोनो द्वारा बुद्ध, धम और सघ का उत्कष हो। भगवान् आप दोनो को चिरायु करें।

श्रावस्ती की पान्थशाला

श्रावस्ती नगरी के पूर्वी महाद्वार से जो माग जेतवन विहार को गया था उस पर एक पान्थशाला थी, जिसका स्वामी मणिकण नाम का एक श्रेष्ठी था। पाटलिपुत्र स पुष्कलावती जानेवाला राजमाग श्रावस्ती होकर जाता था जिसके कारण मणिकण की पान्थशाला देश विदेश के यात्रियो स सदा परिपूर्ण रहा करती थी। इस पान्थशाला म सौ से भी अधिक शयन कक्ष थ जिनम यात्रियो क लिए सब प्रकार की सुख-सुविधाएँ उपलब्ध थी। पुष्पाभ्तरणो स सुसज्जित शय्याएँ षटरस भोजन, पशलम्पा दासियाँ, नव यौवना गणिकाएँ और विभिन्न प्रकार की मदिराएँ यात्रियो की सवा म वहाँ सदा प्रस्तुत रहा करती थी। केवल सम्पन्न पयटक ही इस पान्थशाला म

ठहर सकते थे क्योंकि एक रात के निवास के लिए उन्हें एक सुवर्ण निष्क प्रदान करना पडता था।

एक दिन की बात है। दिन ढल चुका था, सूर्य अस्ताचल को चला गया था और आकाश मे तारे निकल आए थे। एस समय दो यात्रियो ने मणिकण की पान्थशाला म प्रवेश किया। उनके वस्त्र फटे हुए थे और शरीर पर धूल जमी हुई थी। न उनके सिर पर पगडी थी, और न पैरो म जूते। परिचारक ने समझा, कोई भिखारी हैं। स्थान के विषय मे पूछने पर उसने कह दिया, 'पान्थशाला म कोई भी कक्ष खाली नही है।' यह सुनकर यात्री आपे से बाहर हो गए। क्रुद्ध होकर उन्होंने कहा—'मणिकण कहाँ है, उसे बुलाओ।' अपना नाम सुनकर मणिकण बाहर निकल आया। यात्रियो को ध्यानपूर्वक देखकर उसने शान्त भाव से कहा 'यहाँ कोई भी कक्ष खाली नहीं है भाई। आक्रोश की क्या बात है। समीप ही एक मन्दिर है, वहाँ चले जाओ, रात के विश्राम के लिए वहाँ स्थान मिल जाएगा।'

'पर हम तो यही ठहरेंगे। हम जानते हैं कि यहाँ निवास के लिए हमें दो निष्क प्रदान करने होगे। तुम्हें अपना शुल्क ही तो चाहिए।' एक यात्री ने अपनी पोटली खोलते हुए कहा।

सुवर्ण देखकर मणिकण की मुखमुद्रा प्रसन्न हो गई। हाथ जोडकर उसने सिर झुका दिया और एक परिचारक को बुलाकर कहा—'पचास संख्या का कक्ष खोल दो, और इनके स्नान, भोजन, विश्राम और विनोद की सब व्यवस्था कर दो।'

'स्नान और भोजन की हम कोई जल्दी नहीं है। इनके लिए अभी बहुत समय है। हाँ कक्ष खुलवा दो ताकि हम एक घडी विश्राम कर लें। और तुम भी वही चले आओ। हमें तुमसे एक आवश्यक कार्य है। उस कक्ष में पूर्णतया एकान्त तो है न?' एक यात्री ने मणिकण से कहा।

मणिकण को आश्चर्य हो रहा था ये भिक्षुक कौन है जो न केवल उसका नाम ही जानते हैं अपितु उसे अधिकारपूर्वक आदेश भी दे रहे हैं। जब दोनो यात्री मणिकर्ण के साथ कक्ष म आ गए तो उनम से एक ने हँसते हुए कहा—'तुमने हमें पहचाना नहीं मणिकण? मैं निपुणक हूँ और यह है भवसेन।

'हैं निपुणक ! मौर्य साम्राज्य के भूतपूर्व सेनानी आर्य निपुणक ! क्षमा करें, मैंने आपको पहचाना नहीं था। सेनानी मेरा प्रणाम स्वीकार करें।' मणिकण ने सिर झुकाकर कहा।

'छद्म वेश में पाटलिपुत्र में चला आ रहा हूँ। यदि यह वेश न बनाया होता, तो पुष्यमित्र के गूढ़पुरुषों से कैसे बच पाता।'

मणिकण ने एक दासी को बुलाया, और कक्ष से बाहर जाकर कहा—'मृद्वीका और मरेय के दो कुम्भ ले आओ और साथ में तीन चषक भी। और सुनो, श्यामा से कहना, उसे आज इन यात्रियों की सेवा में रहना है।'

दासी मदिरा के कुम्भ ले आई और श्यामा को भी बुला लाई।

'आप बहुत थके हुए हैं आर्य ! कुछ देर विश्राम कर लीजिए। मृद्वीका के एक चषक से आपकी सब थकान दूर हो जाएगी। इसे मैंने कपिश-गान्धार से विशेष रूप से मँगवाया है। हाँ स्नान करके वस्त्र भी बदल लीजिए। जाओ, श्यामा ! चीन-पट्ट के वस्त्र ले आओ।

'इन दासियों को यहाँ बुलाकर तुमने अच्छा नहीं किया मणिकण ! मेरे यहाँ आने की बात यदि पुष्यमित्र के सचिवों को ज्ञात हो गई तो अनर्थ हो जाएगा।

आप चिन्ता न करें आर्य ! भेदगुप्ति के लिए इन दासियों पर भरोसा किया जा सकता है।

यह जानकर मैं आश्वस्त हुआ। क्या तुम्हें विश्वास है कि इस पान्थशाला में पुष्यमित्र का कोई भी गूढ़पुरुष नहीं है। मेरे यहाँ आने की बात पूर्णतया गुप्त रहनी चाहिए।

मैं यह व्यवस्था कर दूँगा कि इन दासियों के अतिरिक्त कोई भी अन्य व्यक्ति इस कक्ष के समीप न आने पाए।

'ठीक है अब बताओ श्रावस्ती के क्या समाचार हैं ?'

'समाचार अच्छे नहीं हैं आर्य ! पुष्यमित्र की एक सेना श्रावस्ती पहुँच गई है। सुना है यवनराज मिनेन्द्र शीघ्र ही कुरु-पाञ्चाल पर आक्रमण करनेवाले हैं। मद्रक पर उनका अधिकार हो चुका है। वाहीक और कुरु-पाञ्चाल को जीतकर वह कोशल पर भी आक्रमण करेंगे।

'यह तो सुसमाचार है मणिकण ! क्या तुम्हें ज्ञात नहीं है कि मिनेन्द्र

सद्धम को स्वीकार कर चुके हैं। वह जो मध्यदेश का आक्रान्त कर रहे हैं, उसका प्रयोजन पुष्यमित्र की शक्ति का अन्त कर भगवान् तथागत की मध्यमा प्रतिपदा क गौरव की पुन स्थापना करना ही है। इसके लिए सब तयारी हो चुकी ह। मद्र जनपद का सनाएँ भी यवनराज क साथ हैं। सद्धम क अनुयायी सवत्र उनकी सहायता करग। यह एक धम युद्ध ह मणिकण ! अच्छा अब हम कुछ दर विश्राम कर ल और स्नान करके वस्त्र भी बदल लें। भोजन क अनन्तर निश्चिन्त होकर बात करेंगे। हाँ, किसी को यहाँ न आने न्ना। दीवारो क भी कान होत ह और गुप्तचारिकाआ तक स भी मन्त्र की गुप्ति नहा रहने पाती।

अच्छा अब आप विश्राम कीजिए आय !"

श्यामा कौशय वस्त्र ल आई थी। स्नान कर निपुणक और भवगन ने नवीन वस्त्र धारण कर लिए और मृद्वीका के पान से उनकी सब श्रान्ति दूर हो गई।

रात्रि क पहला प्रहर बीत जान पर मणिकण न निपुणक क कान म प्रश्न

हो गया है मद्रव जनपन्द व गणमुख्य मामन्देव की वन्या विदुला के माथ। विदुला की सद्धम म पूण आस्था है, इसक उत्वप वे लिए वह कुछ भी वरन को उद्यत है। सम्राट अब हमारे वश म हैं। पुष्यमित्र उनके आदेश की उपक्षा नही कर सकेगा। राज्य म राजा की स्थिति कूट-स्थानीय होती है मणिकण ! अच्छा, अब तुम यह बताओ, श्रावस्ती के क्या समाचार हैं ?'

जेतवन विहार की दशा तो आप जानत ही हैं आय ! स्थविर, श्रमण और भिक्षु पश्चिम के जनपदा म चल गए हैं। विहार म श्मशान की-सी शान्ति है। सुना है, पुष्यमित्र की जो नई सेना श्रावस्ती आइ है, वह जेतवन म ही अपना स्कन्धावार स्थापित करेगी। मरा एक परिचारक कल जेतवन की ओर गया था। वह बताता था, कि विहार के चारा ओर सनिका का पहरा बिठा दिया गया है। उद्यान म पटमण्डप बनाए जा रहे हैं। सघाराम के जिन भवना म श्रमण त्रिपिटक का पाठ किया करत थे वहा अब अश्व-शाला बनाई जा रही है। अब तो आपका ही भरोसा है, आय ! आप ही इस अनथ का दूर कर सकत हैं।'

श्रावस्ती के नागरिका के क्या विचार हैं ? पौर-सभा के सदस्यो का क्या रुख है ? चत्या और पूजा स्थाना के इस अपमान को वे क्या चुपचाप सहन कर लेंगे ?

पौर-सभा के एक सदस्य से मेरी बातचीत हुई थी। आप शायद उन्हे जानते होग पथचत्वर पर जो एक बडी-सी पण्यशाला है वह उन्ही की है। रविगुप्त उनका नाम है। मेरी पान्थशाला म व आते जाते रहते हैं। यहा की मृद्वीका उन्हे बहुत पसन्द है। भगवान तथागत के प्रति उनकी श्रद्धा है। रविगुप्त बतात थे कि पौर पुष्यमित्र के पक्ष मे हैं। यवनराज दिमित्र को परास्त कर सनानी न जो अदभुत पराक्रम प्रदर्शित किया है सवत्र उसकी चचा होती रहती है। लाग कहत हैं चन्द्रगुप्त के बाद मौय शासन तन्त्र म पुष्यमित्र जसा वीर और कोई नहीं हुआ।

पर श्रावस्ती म क्या कोई भी सद्धम का अनुयायी नही रहा है। क्या यहा के निवासी यह नही जानते कि इसी पुष्यमित्र न कुक्कुटाराम का ध्वस किया था और स्थविरा, श्रमणा और भिक्षुआ की हत्या के लिए अब पुरस्कारा की घोपणा की है। पुष्यमित्र सद्धम का कट्टर शत्रु है मणिकण !

क्या श्रावस्ती के लोगों में उसके विरुद्ध भावना का सर्वथा अभाव है ?'

'श्रावस्ती के निवासी आर्य कुलक्रमानुगत धर्म का पालन करते हैं सब सम्प्रदायों और पाषण्डों के प्रति आदर की भावना रखते हैं और ब्राह्मणों, श्रमणों तथा मुनियों का समान रूप से सम्मान करते हैं। दर्शन के लिए वे मन्दिरों में भी जाते हैं और संघारामों में भी। संकीर्ण साम्प्रदायिक भावना उन्हें छू तक नहीं गई है।

'पर वे पुष्यमित्र का विरोध क्यों नहीं करते ? उस पुष्यमित्र का जो सद्धर्म का शत्रु है जो स्थविरों और श्रमणों के संहार में तत्पर है और जिसने सब सम्प्रदायों का समान रूप से आदर करने की प्राचीन परिपाटी का परित्याग कर दिया है।

दिमित्र के आक्रमण से इस आर्यभूमि पर जो घोर संकट उपस्थित हो गया था उसे श्रावस्ती के निवासी कैसे भुला सकते हैं आर्य ! साकेत यहाँ से दूर नहीं है। जब यवन सेनाओं ने साकेत को आक्रान्त कर लिया था तो न स्त्रियों का सतीत्व सुरक्षित रहा था और न बच्चों का जीवन। यवनों ने मध्यदेश के लोगों पर जो भीषण अत्याचार किए थे जनता उनका स्मरण कर अब भी काँप उठती है। जब वह यह सुनती है कि मिनेन्द्र की यवन सेना फिर मध्यदेश पर आक्रमण करने की तयारी कर रही है तो उसके उद्वेग की सीमा नहीं रहती। इस संकट में उसे आशा की एक ही किरण दिखाई देता है, और वह है पुष्यमित्र। लोग समझते हैं कि पुष्यमित्र जो कुछ भी कर रहा है वह उनके अपने हित के लिए है।

'पर मिनेन्द्र तो सद्धर्म का अनुयायी है, मणिकण ! भगवान् तथागत के अष्टाङ्गिक आर्य धर्म के प्रति उसकी अगाध श्रद्धा है। वह जो मध्यदेश पर आक्रमण करने की आयोजना बना रहा है उसका प्रयोजन सद्धर्म की रक्षा करना ही है। जनता को उससे भयभीत नहीं होना चाहिए।

पर लोगों को यह बात समझाए कौन आर्य !'

'यह कार्य तुम्हें करना होगा मणिकण ! पुष्यमित्र के कारण सद्धर्म पर जो घोर संकट आ गया है उसका निवारण करने में तुम्हें सक्रिय रूप से सहयोग देना होगा। इस बात को न भूलो, मणिकण ! यदि पुष्यमित्र की शक्ति अक्षुण्ण रही तो कोई भी चैत्य, विहार तथा संघाराम सुरक्षित नहीं

रह पाएगा। प्रियदर्शी अशोक जस राजा और उपगुप्त जसे आचाय व प्रक्रम स सद्धम का जो उत्कप हुआ था, वह सब मिट्टी मे मिल जाएगा। तुम्हार जस श्रावको का जीवन भी तव सुरक्षित नहीं रहेगा। तुम्हें भी इस धमयुद्ध मे हाथ बटाना है, मणिक्ण !

मैं सब प्रकार से आपका साथ देने के लिए उद्यत हूँ, आय ! मेरा तन मन धन—सब भगवान तथागत के लिए प्रस्तुत है।

साधु साधु, मुझे तुमसे यही आशा थी, मणिकण ! अब तुम एक काम करो। श्रावस्ती का यह जेतवन विहार तीन सदी पुराना है। यहाँ के स्थविरा और श्रमणो ने दश-देशा तर मे अष्टाङ्गिक आय माग का प्रचार किया है। जम्बूद्वीप म सवत्र उनका श्रद्धापूवक स्मरण किया जाता है। श्रावस्ती के श्रेष्ठी, पौर कमकर और शिल्पी उनके प्रति सम्मान का भाव रखते है। श्रावको की भी इस नगरी मे कमी नही है। आज वे भयभीत हैं। पुष्यमित्र के आतक से उ होने मौन धारण किया हुआ है। वे यह नही जानत कि पुष्यमित्र के पतन म अब अधिक देर नही है। उ हें यह नात नही है कि यवनराज मिने द्र और मद्रक जनपद की सयुक्त सेनाए शीघ्र ही मध्यदश पर आक्रमण करने वाली हैं। जब वे यह समाचार सुनेंगे ता उ हें कितनी प्रस नता हागी ? क्या वे कभी यह सहन कर सकते हैं कि कुक्कुटाराम के समान जेतवन विहार को भी भूमिसात कर दिया जाए ? तुम इन लोगा को यहाँ बुला लो। मैं सबसे खुलकर बात करना चाहता हू। हमारी योजना है कि जब यवन सेना कोशल जनपद को आक्रान्त करे, तो श्रावस्ती म विद्राह हो जाए। पुष्यमित्र की सेना रणक्षेत्र मे यवनो का सामना अवश्य कर सकती है पर जनता के विद्राह को शा त करना उसकी शक्ति म नहीं है। ब्राह्मण चाणक्य न ठीक कहा था कि जनता का कोप अ य सब कोपा की तुलना मे भयकर होता है। हमे श्रावस्ती म इसी जनकाप का प्रादुर्भूत करना है मणिकण !

पुष्यमित्र के सत्री और गूढपुरुष श्रावस्ती मे सवत्र नियुक्त हैं, आय ! आपकी यह योजना उनस छिपी नही रह सकगी।

औपनस नीति मे मैं किसी से भी कम नही हूँ, मणिकण ! पाटलिपुत्र म सत्रियो का आचाय रह चुका हूँ और मागध साम्राज्य का आन्तर्वंशिक

भी। तुम अपनी पाठशाला में किसी उत्सव का आयोजन करो। उसमें सम्मिलित होने के लिए उन सब लोगों को आमन्त्रित करो जिन पर तुम्हें पूर्ण विश्वास हो।

किस उत्सव का आर्य!

अपने अपनी पत्नी या अपनी किसी सन्तान के जन्म दिवस का।

हाँ यह सम्भव है आर्य! मेरी कन्या सुरुचि का जन्म आश्विन मास में हुआ था। अब आश्विन मास ही चल रहा है। तिथि से किसी का क्या प्रयोजन? आप जिस दिन कहें उत्सव का आयोजन किया जा सकता है। पर मैंने अब तक कभी अपनी किसी सन्तान का जन्म दिवस नहीं मनाया। कहीं पुष्यमित्र के मन्त्रियों को सन्देह न हो जाए?

सुरुचि की आयु क्या है?

वह सोलहवाँ वर्ष पूरा कर चुकी है।

ना ठीक है। वह अब विवाह योग्य आयु की हो गई है। युवकों और उनके अभिभावकों से कुमारी कन्या का परिचय कराना का यह ढंग कौशल

'तो ठीक है। उत्सव के पश्चात भाज का आयोजन करो, और भाज के वाद पानगाष्ठी का। शेष सब कार्य मुझ पर छोड दो। हा पुष्यमित्र की जो नई सना श्रावस्ती आई है, उसके नायक और सेनापति को भी निमन्त्रण देना न भूलना।

'पर इनके सम्मुख आपका उत्सव म सम्मिलित हाना क्या निरापद होगा, आय! आपको यहा कौन नही जानता? यदि नायक या सेनापति ने आपको पहचान लिया, या पुष्यमित्र के किसी सदा की दृष्टि आप पर पड गई, ता अनथ हो जाएगा।

'निपुणक की वायविधि को तुम नही समझते मणिकण! मैं अभी एसा वेश बना सकता हूँ कि तुम भी मुझे न पहचान सका। जब मैं पान्थ-शाला म आया था ता क्या तुमने मुझे पहचाना था? मैं एक श्रेष्ठी का वेश बना लूगा। उत्सव म सम्मिलित अतिथिया स मेरा परिचय करात हुए उनसे कहना—यह चम्पा के प्रसिद्ध श्रेष्ठी भद्रम्प ह। सन्तान की अभिलाषा म देवदशन के लिए उत्तराखण्ड जा रहे हैं। भगवान शिव और वश्रवण के यह परम भक्त है। माग म विश्राम के लिए मेरी पान्थशाला म ठहर हुए हैं। हाँ, एक काम और करना। जिन आगन्तुका को तुम पूणतया विश्वस नीय समझो उनका मुझे सकेत कर दना।

आश्विन कृष्णा सप्तमी का कुमारी सुरुचि का जन्मदिवस बडी धूम धाम के साथ मनाया गया। इस उपलक्ष म पान्थशाला का पत्र पुष्पा द्वारा भलीभाँति अलकृत किया गया और सुगधित तल से परिपूण दीपका म पान्थशाला का विशाल प्राङ्गण दीप्यमान हो उठा। श्रावस्ती के बहुत-से सम्भ्रात नागरिक पौर और शिल्पी उत्सव म सम्मिलित हुए और साथ हा अनक सनिक नता भी। मणिकण न पुष्पमालाओ द्वारा सब अभ्यागतो का स्वागत किया। सुरुचि उसके साथ थी। मृदु मुसकान से वह सबकी अभ्यथना करती और अतिथि उसे बहुमूल्य उपहार भेंट करते। श्रेष्ठी भद्रम्प न आगे बढ़कर सुरुचि स कहा— मैं तो देवदशन के लिए चला था, मुझे क्या मालूम था कि यहा आप जसी लक्ष्मी के दशन का सौभाग्य प्राप्त हागा। आपके याग्य कोई उपहार नही [illegible] एक तुच्छ भेंट है इसे स्वीकार करें।' यह कहकर उसने [illegible] मुक्तामाला आगे बढा दी।

इतने बहुमूल्य उपहार को देखकर अन्य अतिथि आश्चर्यचकित रह गए। मणिकण्ठ ने श्रेष्ठी का परिचय कराते हुए कहा— यह चम्पा के श्रेष्ठी भद्ररूप हैं। विदिशा उज्जयिनी हस्तिनापुर आदि कितनी ही नगरियों में इनकी पण्यशालाएं हैं। मुझ पर इनकी कृपा है। जब भी श्रावस्ती आते हैं मेरी पान्थशाला को कृतार्थ करते हैं। पर अब तो यह रेवन्तक के लिए तीर्थयात्रा पर निकले हैं। इसीलिए केवल एक परिचारक को साथ लेकर आए हैं। श्रावस्ती के श्रेष्ठियों ने उनसे परिचय प्राप्त कर प्रसन्नता प्रगट की। एक श्रेष्ठी ने उनसे परिचय प्राप्त करते हुए कहा—'चम्पा तो व्यापार का महत्त्वपूर्ण केन्द्र है। सुवर्ण भूमि और चीन का सब पण्य वहीं पर आता है। चीनपट्ट और मणिमुक्ताओं की मांग इस कोसल जनपद में भी बहुत है। आपसे मैं इस पण्य के क्रय के सम्बन्ध में कुछ बात करना चाहता हूँ।

मुझे तो कल प्रातः ही यहाँ से प्रस्थान कर देना है श्रेष्ठि ! व्यापार और क्रय विक्रय की बात के लिए अब अवसर ही कहाँ है ? भद्ररूप ने उत्तर दिया।

क्यों भाई मणिकण्ठ ! क्या हम अलग बैठकर कहीं बात नहीं कर सकते ?

चम्पा के पण्य की बात सुनकर अन्य अनेक श्रेष्ठियों ने भी भद्ररूप को घेर लिया। यह देखकर मणिकण्ठ ने कहा— बातचीत के लिए अभी बहुत समय है। पहले भोज और पानगोष्ठी से निबट लीजिए।'

इसी बीच में नायक और सेनापति ने भी पान्थशाला में प्रवेश किया। उन्हें देखकर सब अतिथि अपने आसनों से उठकर खड़े हो गए। मणिकण्ठ ने बारह पग आगे बढ़कर उनकी अभ्यर्थना की पुष्पमालाएं गले में डालीं और हाथ जोड़कर कहा— न जाने पूर्वजन्म के मेरे किन सुकृतों का यह फल है कि विशाल मागध साम्राज्य के महाचक्र के सेना-नायक ने आज मेरी पान्थशाला में पदार्पण किया है। आओ बेटी सुरुचि, नायक और सेनापति को प्रणाम करो। सुरुचि आगे बढ़ी और सिर झुकाकर खड़ी हो गई। नायक चण्डवर्मा ने उसे आशीर्वाद देते हुए कहा— फलो फूलो बेटी ! ऐसा वीर जीवन साथी प्राप्त करो जो आर्यभूमि की रक्षा और उत्कर्ष में अपना जीवन

उत्सग कर देने के लिए उद्यत हो। सच्ची वीराङ्गना बनो, और आय युव तियो की मर्यादा को कायम रखा।

नायक और सेनापति देर तक पान्यशाला म नही टिके। श्रावस्ती के सम्भ्रान्त नागरिको श्रेष्ठियो और पौरो से कुशल मगल पूछकर उन्होने मणिकण से विदा ली। भाज और पानगोष्ठी म सम्मिलित होने के लिए मणिकण के आग्रह करने पर चण्डवर्मा न कहा—

'हम बहुत काय है मणिकण ! यवनराज मिनान्द्र की सेना बाहीक देश म प्रवेश कर चुकी है। बाह्य और आभ्यन्तर—दोनो प्रकार के शत्रुओ से कोशल जनपद की रक्षा की उत्तरदायिता मुझ पर है। तुम्हारे आग्रह के कारण हम यहाँ चले आए पर अधिक देर यहाँ ठहर सकना सम्भव नही है।'

नायक और सेनापति के चले जाने पर मणिकण ने शान्ति की साँस ली। भद्ररूप को अलग ले जाकर उसने कहा — बधाई है आय ! चण्डवर्मा आपको नहीं पहचान सका। मैं तो बहुत डर गया था। वसे घूर घूरकर आपको देख रहा था।'

'अच्छा अब जाओ, भाज और पानगोष्ठी की व्यवस्था करो। रात्रि के दो प्रहर बीत गए हैं। मेरी ओर से निश्चिन्त रहो। चण्डवर्मा तो क्या पुष्यमित्र भी मुझे इस वेश म नही पहचान सकता।' भद्ररूप ने कहा।

भोजन करते हुए जनक श्रेष्ठियो ने चम्पा के सम्बन्ध म चर्चा प्रारम्भ कर दी। भद्ररूप ने उन्ह बताया, सुवर्णभूमि मणि माणिक्य और मुक्ता आदि से परिपूर्ण है, वहाँ के व्यापारी जलमार्ग से चम्पा आते हैं और अपना पण्य बेचकर उसके बदले म वस्त्र कम्बल शस्त्र और धान्य अपने देश को ले जाते हैं। इस व्यापार मे बहुत लाभ है। अंग, वंग और मगध के श्रेष्ठी इसके कारण अत्यन्त समृद्ध हो गए हैं। समुद्र मार्ग म व्यापार करनेवाले श्रेष्ठी पाँच पाँच सौ के सार्थों मे सुवर्णभूमि, चीन आदि देशो म जाते हैं और अपार धन कमाकर स्वदेश को वापस लौटते हैं। आप भी इस व्यापार म हाथ बँटा सकते हैं। आप सबने भेंट करके मुझे हार्दिक प्रेम दर्शाया है। यदि मैं आपके किसी काम आ सकूँ तो मैं अपने को सौभाग्यशाली समझूँगा। पर व्यापार की इन बातो को एकान्त म करना ही उचित होगा। आप पान-गोष्ठी से निबट लीजिए। फिर एकान्त कक्ष म जाकर इस विषय मे बातचीत

करेंगे।

भोज और पानगोष्ठी के समाप्त हो जाने पर जब बहुमूल्य अतिथि विदा हो गए तो मणिरण बनिया विश्वस्त श्रेष्ठियों को गर्भगृह के पर कक्ष में ले गया। द्वार को बन्द कर उसने भद्ररूप से कहा— यह कक्ष पूर्ण तया एकान्त है। आप यहाँ निश्चिन्त होकर श्रेष्ठियों से वार्तालाप कीजिए। मुझ मणि मुक्ताओं के व्यापारी से क्या प्रयोजन? मेरे लिए तो यह कार्य मानना ही बहुत है। मैं बाहर खड़ा होकर आपकी प्रतीक्षा करूँगा। सूर्योदय होते ही आपको यहाँ से प्रस्थान भी कर देना है। ये सब श्रेष्ठी श्रावस्ती नगरी के सम्भ्रान्त नागरिक हैं। आप इन पर व्यापार के सम्बन्ध में पूर्णरूप से विश्वास कर सकते हैं। अच्छा अब मैं बाहर जाता हूँ।

जरा सुनो, मणिकर्ण! एक क्षण ठहरो। भद्ररूप ने कक्ष के द्वार पर आकर मणिकर्ण से कहा—'इस कक्ष में क्या कोई गुप्त द्वार भी है?'

जिस आसन पर आप बैठे हुए थे उसके ठीक पीछे एक द्वार है जो सुरंग में खुलता है। जेतवन विहार के दक्षिण-पूर्व में जो सघन वन है उसके मध्य में एक पुराना भग्न मन्दिर है। सुरंग वहाँ तक चली गई है। मणिकर्ण ने भद्ररूप के कान में कहा।

मणिकर्ण के चले जाने पर भद्ररूप ने द्वार को अन्दर से बन्द कर लिया। अपने आसन पर बैठकर उसने श्रेष्ठियों से कहा— आपने शायद मुझे पहचाना नहीं है? मैं निपुणक हूँ।

'मागध साम्राज्य के यशस्वी सेनानी आर्य निपुणक!' श्रेष्ठियों ने आश्चर्यचकित हो एक साथ कहा।

'हाँ, मैं निपुणक ही हूँ। छद्मवेश में श्रावस्ती आया हूँ सद्धर्म के शत्रुओं के विनाश में आप सबका सहयोग प्राप्त करने के लिए। पाटलिपुत्र के समाचार तो आपने सुन ही लिए होंगे। कुक्कुटाराम भूमिसात किया जा चुका है। स्थविरों अर्हतों और श्रमणों का आज कोई चिह्न तक भी मगध में शेष नहीं रहा है। जेतवन विहार की दशा आपकी आँखों के सामने है। जहाँ आप धम्मपद और दीघ निकाय का प्रवचन सुना करते थे वहाँ आज सैनिकों की शय्याएँ लगी हुई हैं। जिन चैत्यों की आप पूजा किया करते थे उनके साथ आज घोड़े बँधे हुए हैं। आप सब श्रावक हैं। भगवान तथागत

की मध्यमा प्रतिपदा म आपकी आस्था है। क्या आप इस अनय को सहन कर सकते हैं ? सद्धम का

निपुणक की बात अभी समाप्त नहीं हुई थी कि गभगह के बाहर कोलाहल को सुनकर सब श्रेष्ठी द्वार की ओर देखन लग। कक्ष के द्वार पर दण्ड से आघात कर किसी न कठोर स्वर म कहा—'द्वार खोल दो।

द्वार खुलने म देर होती देखकर एक व्यक्ति ने आदेश दिया—देखते क्या हो, द्वार को तोड डालो।

लौह दण्डों के आघात स द्वार टूट गया, और चार दण्डधर कक्ष म प्रविष्ट हो गए। एक दण्डधर न आदेश दिया—'कोई अपने स्थान से हिले नहीं। जो जहाँ बैठा है वहीं बैठा रहे।'

दण्डधरों के बाद एक गुल्मपति ने कक्ष म आकर कठोर स्वर म प्रश्न किया—निपुणक कहाँ है ? पर निपुणक अब वहाँ नहीं था। गुप्त द्वार को खोलकर वह सुरग म प्रविष्ट हो चुका था।

गुल्मपति ने मणिकण को बुलाकर कहा—निपुणक कहाँ गया ? बताओ, इस कक्ष म गुप्त द्वार कहाँ है ?

'मैं नहीं जानता सेनापति !'

तुम नहीं जानते ? लातो के भूत बातो से नहीं माना करते। सुनो सिंहवर्मा मणिकण को बाहर ले जाओ। किस उपाय से इसम गुप्तद्वार का पता लगाना है यह तुम भलीभाँति जानते हो। शीघ्र अपना काय प्रारम्भ कर दो एक क्षण की भी देर न करो।

सिंहवर्मा मणिकण को अपने साथ ले गया। उसके चले जाने पर गुल्मपति न श्रेष्ठियो से कहा—'आप सब यहाँ क्या एकत्र हुए थे ? मागध सम्राट् के विरुद्ध षडयन्त्र करने के अपराध म मैं आप सबको बन्दी बनाता हूँ।

'हम तो चम्पा के पण्य के क्रय विक्रय के सम्बन्ध म बात करने के लिए यहाँ आए थे। मणिकण ने हमसे कहा था, कि चम्पा नगरी के प्रसिद्ध श्रेष्ठी भद्ररूप यहाँ आए हुए हैं। राजनीति स हमारा क्या सम्बन्ध सेनापति ! हम गृहस्थ हैं और व्यापार हमारा स्वधम है।' एक श्रेष्ठी ने कहा।

इसका निणय कण्टक शोधन न्यायालय द्वारा किया जाएगा। इस समय आप राजबन्दी है। सुनो व्याघ्रमल्ल, इन्हे बन्धनागार म ले जाओ।'

दण्ड प्रहार से मणिगर्भ जब गुप्त द्वार का पता बताने को उद्यत नही हुआ तो मिहरमान ने यवनसैनिको ने उपाय का आश्रय लिया। पर गुप्तमार्ग के लिए फेर तक प्रतीक्षा कर सकना सम्भव नही था। उसने शिल्पियो और कमकरो को बुलाया और कमरो की दीवारो पर आघात कर गुप्त द्वार का पता लगाने का आदेश दिया। स्थपति और लोहकार अपने काम मे जुट गए। आधी घडी के परिश्रम से कमरे की पश्चिमी दीवार मे एक सन्धि प्रगट हो गई। गुप्त द्वार का पता लगते ही गुल्मपति दण्डधरो के साथ सुरग मे प्रविष्ट हो गया। उल्काओ के प्रकाश मे वे निरन्तर आगे बढते गए। सुरग मार्ग को पार कर जब वे जीर्ण शीर्ण मन्दिर के प्रागण मे बाहर निकले, तो पौ फट चुकी थी। पर निपुणक का कही पता नही था। उसे एक घडी का समय मिल गया था और वह इसी मार्ग से बाहर आकर जंगल मे छिप गया था।

विदुला की सुहाग रात

सूर्योदय होने से पूर्व ही बृहद्रथ और विदुला के विवाह की बात राजप्रासाद मे फैल गई। अन्त पुर की स्त्रियाँ कौतूहल से एक दूसरे से पूछने लगी—'यह कैसा विवाह हुआ ? न मगल वाद्य बजे न वर की शोभा यात्रा निकली न कोई समारोह हुआ और न कोई उत्सव। न जाने यह विदुला कौन है न इसके कुल व अभिजन का कोई पता है और न माता पिता का। आश्चर्य है कि यह राजप्रासाद मे कब और कैसे आ गई।' एक वृद्धा दासी ने कहा — मुझे इस अन्त पुर मे रहते हुए अस्सी साल हो गए। कुणाल, सम्प्रति शतधनुष आदि सबके विवाह इन आखो से देखे हैं। इन विवाहो मे कैसे उत्सव मनाए गए थे। पाटलिपुत्र को ऐसा सजाया गया था मानो इन्द्रपुरी हो। और यह राजप्रासाद ? यहा तो सर्वत्र मणि माणिक्य बिखेर दिए गए थ। अन्त पुर मे सहस्रो दासियाँ हैं सबको चीनपट्ट के वस्त्र दिए गए थे, और साथ ही मुक्ताओ की मालाएँ भी। पर भाई अब वे दिन कहाँ रह गए अब तो कलियुग है। जो न हो जाए वही ठीक है। एक प्रगल्भा दासी हँस हसकर अपनी सहेलियो से कह रही थी—मैं बहुत दिनो से सम्राट की

गतिविधि को देख रही थी। वह किसी के प्रेम म मस्त थ, न हँसत थे और न खुलकर बात ही करते थे। बस प्रेम वियोगी बने हुए थे। मैं समझ गई थी, किसीस प्रेम हो गया है और उसीके विरह म व्याकुल रहते हैं। बडे आदमिया की वडी बातें होती हैं। किसी सखी द्वारा अपनी प्रेयसी का बुलवा लिया और चुपचाप उससे विवाह कर लिया। चलो साम्राज्ञी के दशन ता कर लें। अब तो उन्ही की आज्ञा म रहना है। हा, आज सुहाग रात की तयारी भी ता करनी है। साम्राज्ञी से पूछ लें, कौन-सा कक्ष उन्ह पसन्द है। इस अन्त पुर म सकडो कक्ष हैं। इन बडे लोगो की पसन्द भी बडी अजीब होती है। यदि इनके कक्ष की सज्जा ठीक तरह से न की गई, तो न जाने क्या अनथ हो जाए! कही हम जीते जी दीवार मे न चुनवा दें। एक अन्य दासी ने मुसकराते हुए कहा—'मैंने महारानी जी के दशन कर लिए हैं। यह तो कोई भिक्षुणी सी मालूम होती है। न हँसती है न बोलती है। मुह नीचा किए बठी है। प्रगल्भा दासी यह सुनकर बोली—ठीक कहती हो भाई। सम्राट् भी तो कुक्कुटाराम मे रह चुके हैं। वही की कोई भिक्षुणी होगी। युवावस्था वडी अजीब होती है। वही दोनो की आँखें चार हो गई होगी, और प्रेम हो गया होगा। पर हमे इसस क्या? चलो रानीजी से कोई कक्ष पसन्द करा लें और उसे सुहाग रात के लिए तयार कर दें। एक वद्धा दासी यह सुनकर बोली—मैं जानती हूँ ये नई नवलिया सुहाग रात के लिए किस कक्ष को पसन्द करती हैं। राजप्रासाद के उत्तर म कोने का जो शयनागार है वही इस काय के लिए सबस उपयुक्त है। सामने गगा की धारा वहती दिखाई देती है और पश्चिम की ओर पुष्पोद्यान। गवाक्ष के खोलत ही सुगन्धित वायु के शीतल झोके आने लगते हैं। चलो महारानी से क्या पूछना। उसी कक्ष का रात्रि के लिए सजा कर तयार कर दें।

रात्रि का एक प्रहर बीतने पर एक दासी विदुला को शयनागार म ले गई। वह वस्त्रालकारो स सुसज्जित थी पर उसका मन अशान्त था। वह सोच रही थी, बृहद्रथ के पास आने पर उससे क्या बात करेगी उसके प्रति कसा बरताव करेगी। उसे रह रहकर भवदेव का स्मरण आ रहा था और उसकी आँखो से टप-टप आँसू गिर रह थे। वह शय्या पर बठ गई और अपने मन को शान्त करने का प्रयत्न करने लगी। इसे स्थविर कश्यप

के वे वचन स्मरण आने लगे, जो उसने शाकल नगरी में उसे कहे थे—'मैं जानता हूँ, बृहद्रथ के साथ रहते हुए तुम्हें जो ग्लानि होगी उसकी तुलना में तिल तिलकर अग्नि में भस्म हो जाना बहुत सुगम होगा। तुम्हें केवल बृहद्रथ के साथ रहना ही नहीं होगा, अपितु उसके तन मन तथा प्राण पर तुम्हें अपना आधिपत्य भी स्थापित करना होगा। सद्धर्म की रक्षा के लिए तुम्हें यह बलिदान करना ही होगा, विदुला ?'

विदुला ने अपने मन को दृढ़ किया और बलिदान के लिए उद्यत हो गई। इसी समय बृहद्रथ ने शयन कक्ष में प्रवेश किया। विदुला उठकर खड़ी हो गई। बृहद्रथ ने सहारा देकर उसे अपने साथ शय्या पर बिठा लिया। पर विदुला अपने मानसिक उद्वेग पर काबू नहीं पा सकी। उसकी आँखों से आँसू गिरने लगे। उस रात देख बृहद्रथ ने कहा—'तुम्हें क्या कष्ट है, विदुला! क्या तुम्हारा शरीर स्वस्थ नहीं है ? सुदूर यात्रा से तुम शायद बहुत थक गई हो। या तुम्हें गणमुख्य सोमदेव की स्मृति उद्विग्न कर रही है। कुछ समय विश्राम कर तुम अपनी श्रान्ति को दूर कर लो। मैं यहीं बैठ कर प्रतीक्षा करता हूँ। मेरे लिए तो तुम्हारा सान्निध्य ही पर्याप्त है।'

'नहीं नहीं। ऐसी कोई बात नहीं है। मेरा शरीर स्वस्थ है और मन शान्त है।' विदुला ने मानसिक उद्वेग पर काबू पाते हुए कहा।

'तो फिर इस प्रकार क्यों बैठी हो ?' बृहद्रथ ने विदुला की ओर बढ़ते हुए कहा।

'मेरे शरीर को स्पर्श न कीजिए स्वामी!' विदुला फिर उद्विग्न हो उठी, और उसने रोते रोते कहा।

'क्या बात है ? तुम्हें क्या कष्ट है विदुला!'

'मेरा शरीर अपवित्र है, मेरा मन अपवित्र है, मुझ से आप दूर ही रहें। नहीं नहीं, आइए आगे बढ़िए। मैं बलिदान के लिए तैयार हूँ। स्थविर ने मुझे यही आदेश दिया था। स्थविर मुझे घूर घूरकर देख रहे हैं। आह! उनकी यह क्रूर दृष्टि! मेरे लिए इसे सहन कर सकना असम्भव है। आइए, स्वामी! यह शरीर आपको अर्पण है। आह! स्थविर कश्यप की वह कठोर मुद्रा! मुझसे सही नहीं जाती। [illegible] स्वामी! आप बढ़िए न!' विदुला ने विक्षिप्त होकर कहा।

'तुम क्या कह रही हो, विदुला ! यह स्थविर कौन है जिससे तुम इतना डर रही हो।

'वही बूढ़ा कश्यप। मुडा हुआ सिर, काषाय वस्त्र पहन हुए। मुझे घूर घूरकर देख रहा है। आह ! उसकी दृष्टि कितनी भयकर है ! मैं उसके कोप स भस्म हो जाऊँगी। मुझे बचा लो मेर स्वामी !

मैं तुम्हारे समीप ही हूँ विदुला ! तुम डरती क्या हो ?'

'नही नही ! मुझ हाथ न लगाओ। तुम मेरे स्वामी नही हो। मेरे स्वामी भवन्व हैं। वह तो मुझे लने के लिए पुष्कलावती म जान वाले थे। शायद आ भी गए होग। मेरी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। मैं तो पुष्कलावती जाऊँगी।'

तुम कह क्या रही हो विदुला !'

'मैं कहाँ हू ? यह पुष्कलावती तो नही है। भवदव मेरी प्रतीक्षा म होंगे। मैं उन्हे वचन दे चुकी हूँ। मेरा तन मन सब उनके अपण है। मैं उनकी हूँ। तुम तो भवदेव नही हो। तुम कौन हो ? यहाँ मेरे पास क्या आए हो। जाओ तुरत बाहर चले जाओ, जाओ जाओ।

वृहद्रथ स्तब्ध होकर विदुला की ओर देख रहा था। उसे समझ नही पड रहा था कि विदुला को क्या हो गया है। भवदेव कौन है और वह पुष्कलावती जाने का क्या कह रही है। विदुला छत की ओर एक टक देखती हुई फिर प्रलाप करने लगी— अच्छा तुम आ गए मेरे स्वामी ? मैं अभी तुम्हारे साथ चलती हूँ। उस बूढे ने मुझे यहाँ भेज दिया था—बहुत दूर तुम से बहुत दूर। पर उस बूढे को क्या पता कि प्रेम क्या होता है। क्या प्रेमियो को कोई एक-दूसरे स जुदा कर सकता है। थोडी देर मेरी प्रतीक्षा करो भवदेव ! मैं अभी चलती हूँ। तुम्हारे साथ पुष्कलावती चलूगी। हम सदा एक साथ रहेगे कभी एक दूसरे से अलग नही होगे। मेरा हाथ पकडकर उठा दो। देखते नही मैं कितनी थकी हुई हूँ।

विदुला उठकर बठ गई। वृहद्रथ उसके सामने खडा था, और उसका मुखमण्डल क्रोध से आरक्त हो गया था। उसकी मुखमुद्रा को देखकर विदुला काप गई। वह धीरे धीरे बोली— मुझे होश नही रहा था। उन्माद म न जाने क्या-क्या बक गई। मुझे क्षमा करना, मेरे स्वामी ! दूर क्या खडे हो,

पास आ जाओ न। आज मेरी सुहागरात है। क्या यह रात एम ही बीत जाएगी ?

मैं सब कुछ जान गया हूँ। जब तुम भवस्य से प्रेम करती थी तो मुझ से विवाह क्या किया ? बृहद्रथ ने निष्ठुरता के साथ प्रश्न किया।

'कौन भवस्व ! मैं किसी भवस्य को नहीं जानती।'

'झूठ क्या बोलती हो ? बताओ यह भवस्व कौन है। सवाद मुझसे छिपी नहीं रह सकती।

'ओह ! उन्माद म मैं न जाने क्या कह गई। कभी-कभी मुझे इसी प्रकार से दौरा पड जाया करता है। मैं आपकी विवाहिता पत्नी हूँ। मुझे मेरे अधिकार से वञ्चित न कीजिए स्वामी !

सीधी तरह से तुम सच्ची बात नहीं बताओगी। अच्छा अभी कूरमल्ल को बुलाता हूँ। अभी तुमने उसे देखा नहीं है। देखते ही सब सच-सच उगल दोगी।

बताती हूँ स्वामी ! भवदेव पुष्कलावती के एक श्रेष्ठी के पुत्र हैं। मेरे साथ उनके विवाह की बात चली थी। पर यह तो पुरानी बात है।

'नहीं तुम अब भी भवदेव को प्यार करती हो। प्रेम की गली बहुत सकरी होती है। उसमें दो व्यक्ति एक साथ नहीं समा सकते। तुम्हारा तन, मन और सर्वस्व सब भवदेव के अर्पण है। सच-सच कहो यही बात है न ?'

विद्युला इसका क्या उत्तर देती। वह फफक फफककर रोने लगी। रोते हुए उसने कहा—'ओह ! प्रेम भी मनुष्य को कितना नि शक्त बना देता है। प्रेम के आवेश मे मैं स्थविर कश्यप के आदेश को भूल ही गई थी। उनसे क्या प्रतिज्ञा करके आई थी ? मैं भी कितनी निर्बल हूँ। भगवान तथागत मुझे कभी क्षमा नहीं करेंगे।

तुमने स्थविर से क्या प्रतिज्ञा की थी ?

'भवदेव को सदा के लिए भूल जाने की और आपकी अर्धाङ्गिनी बन कर रहने की।

पर तुम तो अब भी भवदेव को प्यार करती हो। वह तुम्हारे प्राणो में बसा हुआ है और कभी तुमसे पृथक नहीं हो सकता।'

तो मेरे इस विवाह का क्या होगा ?'

गान्धर्व विवाह में मोक्ष शास्त्र सम्मत है और यह तो गान्धर्व विवाह भी नहीं है। विवशता की दशा में ही तुमने मेरे गले में जयमाला डाल दी थी।'

'पर स्थविर कश्यप का आदेश तो मुझे मानना ही होगा मैं उन्हें वचन जो दे चुकी हूँ।'

'प्रणय का अवमान न करो, विदुला ! मैं तुम्हारे प्रेम में बाधक नहीं होना चाहता।'

पर स्थविर का आदेश ! सद्धर्म पर जो घोर संकट उपस्थित है वह आपसे छिपा हुआ नहीं है। स्थविर की आज्ञा में मैं अपने प्रेम की बलि देने के लिए उद्यत हुई हूँ। आर्यभूमि के सब स्थविर और श्रमण इस समय शाकल नगरी में एकत्र हैं। मागध साम्राज्य के शासनतन्त्र का धर्मद्रोही पुष्यमित्र के हाथों से मुक्त करने के लिए वे प्रयत्नशील हैं। मुझे इसी प्रयत्न में अपने जीवन प्रेम और सर्वस्व को स्वाहा कर देने का आदेश हुआ है, सम्राट ! मेरा यह बलिदान सचमुच अद्भुत होगा मेरे स्वामी ! रणक्षेत्र में शत्रु का संहार करते हुए स्वयं मर मिटना बहुत सुगम होता है। तिल तिल कर अग्नि में भस्म हो जाना भी कठिन नहीं है। पर प्रेम के अभाव में किसी की अर्धाङ्गिनी बनकर रहना और प्रियतम की स्मृति का अपने मन में सजाये हुए सदा के लिए उससे पृथक् हो जाना बहुत ही कष्टकर है। पर मुझे तो यही सब कुछ करना होगा सम्राट ! स्थविर कश्यप का मुझे यही आदेश है। पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आज एक ऐसे सम्राट आरूढ हैं जो भगवान तथागत के अष्टाङ्गिक आर्यमार्ग के अनुयायी हैं पर उनके साम्राज्य में स्थविरों और श्रमणों के लिए कोई भी स्थान नहीं है। सब राजशक्ति सद्धर्म के शत्रुओं के हाथों में है। हम इस घोर अनर्थ का निवारण करना है। इसी प्रयोजन से मुझे आपकी सहधर्मिणी बनकर रहने के लिए भेजा गया है।

इसके लिए विवाह की क्या आवश्यकता थी ? तुम वैसे भी तो मेरे साथ रह सकती थी।

आप नहीं समझते सम्राट ! राज्य में राजा की स्थिति कूटस्थानीय

होती है। मन्त्रियो और अमात्यो को राजा का अनुवर्ती होकर रहना चाहिए। पर आज आपके राज्य की क्या दशा है ? राजशक्ति का प्रयोग पूर्णतया पुष्यमित्र के हाथो मे है, और आपकी स्थिति ध्वजमात्र है। पुष्यमित्र की अनुमति के बिना कोई इस राजप्रासाद मे प्रवेश भी नही पा सकता। यदि मैं आपसे विवाह न कर लेती तो क्या एक क्षण भी यहाँ रह सकती थी ? आपसे एकान्त मे मिल सकना क्या कदापि सम्भव हो सकता? अब मैं आ गई हूँ, आपकी विवाहिता पत्नी के रूप मे। अन्त पुर पर मेरा आधिपत्य है और राजप्रासाद मे भी मेरी उपेक्षा नही की जा सकती। साम्राज्य के शासनतन्त्र को भी मैं धीरे धीरे अपने प्रभाव मे ले आऊँगी। आप और मैं पृथक नही हैं। मैं आपकी अर्धाङ्गिनी जो हूँ। वह समय दूर नही है जब आप सच्चे अर्थों मे मगध के सम्राट बनकर रहेंगे और सब मन्त्री एव अमात्य आपके आदेशो का पालन करेंगे। मुझे अबला न समझिए सम्राट ! राजनीति का मैंने भलीभाँति अध्ययन किया है। भगवान् तथागत और स्थविर कश्यप का आशीर्वाद मुझे प्राप्त है।

पर प्रेम के बिना विवाह का क्या अर्थ है विदुला !

'हमारा यह विवाह एक उच्च उद्देश्य की पूर्ति के लिए है, प्रेम के लिए नही। आपको पत्नियो की क्या कमी है ? बहुविवाह मगध के राजाओ की प्राचीन परम्परा के प्रतिकूल नही है। आप जब चाहे किसी ऐसी कुमारी के साथ विवाह कर सकते है जो सचमुच आपसे प्रेम करती हो। मैं प्रसन्नता पूर्वक उसे अपनी सपत्नी स्वीकार कर लूँगी। आपके दाम्पत्य जीवन को सुखी देखकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता होगी। पर मुझे भी अपने चरणो मे रहने दीजिए। हम मिलकर सद्धर्म के शत्रुओ का विनाश करेंगे न !

पुष्यमित्र की शक्ति का अन्त करने के विषय मे तुम्हारी क्या योजना है ?

सद्धर्म के अनुयायियो के लिए मेरे सहारे राजप्रासाद मे प्रवेश कर सकना सुगम हो जाएगा। मैं आपकी सहधर्मिणी हूँ, मौर्य साम्राज्य की साम्राज्ञी हूँ। मेरे सब कुटुम्बी और आत्मीय जन सद्धर्म के अनुयायी हैं। उन्हे मेरे पास आने से कौन रोक सकता है ? धीरे धीरे राजप्रासाद और अन्त पुर पर ऐसे लोग छा जाएँगे जो हमारे सहयोगी हो। चाणक्य ने ठीक कहा था

कि जसे बिल म छिपे हुए साप का पता लगाना कठिन होता है वैसे ही अत पुर क निवासियो की गतिविधि को जान सकना सुगम नही होता। धीरे धीरे आतवशिक सेना को भी हम अपन प्रभाव मे ले आएँगे। बस, केवल आप मेरे साथ रहिए शेष सब काम मुझ पर छोड दीजिए। आपका साहाय्य मुझे प्राप्त होगा न !

पुष्यमित्र को तुम नही जानती, विदुला ! वह अत्यत क्रूर और नशम है। और उसका वह गुरु ! क्या नाम है उसका ? हाँ, याद आ गया, पतञ्जलि। पक्का घाघ है। उसकी स्मृतिमात्र से मर शरीर मे कपकँपी हाने लगती है। एक दिन मुझसे मिलन आया था। कहता था, राजा भी दण्ड के अधीन होता है। कतव्य पालन न करने पर उसे भी दण्ड दिया जा सकता है। पुष्यमित्र और पतञ्जलि का सामना तुम नही कर सकागी, विदुला !'

'धम म अनत शक्ति हाती है, सम्राट ! धार्मिक आवेश म मनुष्या को न अपने प्राणो की चिता रहती है और न अपने सुख वभव की। जो लोग एक तुच्छ कृमि तक को मारना पाप समझते हैं धार्मिक उमाद मे आकर वे नरसहार म भी सकोच नही करते। सद्धम के शत्रुआ के विरुद्ध हम इसी उमाद का प्रादुर्भूत करना है। मगध म भगवान तथागत क भक्ता की काई कमी नही है। आज जो न केवल इस आयभूमि मे अपितु हिमालय और हिंदू कुश पवतमालाआ के पर के प्रदेशा म भी सद्धम का प्रचार है उसका प्रधान श्रेय मगध के श्रमणा को ही है। इसी पाटलिपुत्र मे आचाय उपगुप्त ने देश-देशातर म अष्टाङ्गिक आय माग के प्रसार का महान आयोजन किया था। आपके पूवज राजा अशाक ने यही स अपने पुत्र महेद्र और अपनी पुत्री सघमित्रा को कापाय वस्त्र धारण करा के सुदूर लका मे धमप्रचार के लिए भेजा था। कुक्कुटाराम के स्थविरो और श्रमणा का ससार म सवत्र आदर था। पाटलिपुत्र के सहस्रा नर-नारी प्रतिदिन प्रात और साय इस विहार के चत्य मे देवदशन के लिए एकत्र हुआ करते थे। भगवान् तथागत के प्रति उनके मन म जा अगाध श्रद्धा थी उसका अभी लोप नही हुआ है सम्राट ! मगध का कोई भी नागरिक हृदय से पुष्यमित्र के प्रति अनुरक्त नही है। वे विवश हैं क्यांकि उन्हे समय नेतृत्व प्राप्त नहीं है। आपको उनका नेतृत्व करना है और मैं इस काय म आपकी सहायक बनूँगी।'

पर हम अकेले क्या कर सकते हैं। पुष्यमित्र के सैन्यबल का सामना कर सकना हमारी शक्ति में नहीं है।'

हम अकेले नहीं हैं सम्राट्! यवनराज मिनेन्द्र हमारे साथ हैं। अभी अधिक समय नहीं हुआ जब दिमित्र की सेनाएँ मध्यदेश को आक्रान्त करती हुई साकेत तक पहुँच गई थीं। यदि यवनों के आपस में विग्रह युद्ध प्रारम्भ न हो जाते तो यवन सेनाएँ पाटलिपुत्र को भी आक्रान्त कर लेतीं। अब मिनेन्द्र ने पश्चिम चक्र में अपनी स्थिति को संभाल लिया है। कपिश गान्धार, सिन्धु, केकय, अभिसार आदि के यवन राजा और सेनानी उसके साथ हैं। वाहीक देश के अनेक जनपद भी उसकी सहायता के लिए तत्पर हैं। ज्योंही यवन सेनाएँ मध्यदेश में प्रवेश करेंगी, सर्वत्र विद्रोह की अग्नि प्रदीप्त हो उठेगी। कुरु, पाञ्चाल, मत्स्य, सुघ्न आदि मध्यदेश के सभी जनपदों में सद्धर्म के अनुयायी विद्यमान हैं। वे अपने धर्माचार्यों, चैत्यों और संघारामों की दुर्दशा से उद्वेग अनुभव कर रहे हैं और उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा में हैं। पुष्यमित्र की शक्ति का अन्त होने में अब देर नहीं है। दिमित्र की सेना जब पाटलिपुत्र को घेर लेगी तो हमारे साथी यहाँ भी विद्रोह कर देंगे। पुष्यमित्र और पतञ्जलि को राजप्रासाद में ही बन्दी बना लिया जाएगा। निपुणक एक बार फिर आन्तवंशिक का पद ग्रहण करेगा। उसे तो तुम जानते ही हो। वही जो छद्मवेश में मेरे साथ पाटलिपुत्र आया था और जिसने विवाह विधि के सम्पन्न हो चुकने पर हमें आशीर्वाद दिया था। सम्राट तो आप अब भी हैं, पर राजशक्ति का प्रयोग आपके हाथों में नहीं है। तब आप वास्तविक अर्थों में मगध के सम्राट बनेंगे और मैं उसकी साम्राज्ञी।

पर तुम तो भवदेव से प्रेम करती हो विदुला।

स्थविर कश्यप ने मुझसे कहा था कि प्रेम भी एक भावना है। संसार के अन्य सब उद्वेगों के समान वह भी क्षणिक होता है। उसे स्थायी कैसे समझा जा सकता है। कौन जाने भवदेव के प्रति मेरी प्रेमभावना भी क्षणिक और अस्थायी ही सिद्ध हो।

क्या तुम सचमुच मुझसे प्रेम कर सकोगी विदुला?'

इन बातों पर विचार करने की अभी क्या आवश्यकता है सम्राट!

अशोक जसे प्रतापी राजाओ के वशज हैं यवनो का रक्त भी आपकी धम नियो म विद्यमान है। प्रणय और सुख भोग के लिए अपन कतव्य की उपेक्षा करना आपको शोभा नही देता। मैं आपकी पत्नी हूँ और मगध की साम्राज्ञी। पर मैं यथाथ म साम्राज्ञी बनना चाहती हू पुष्यमित्र के हाथ की कठपुतली बनकर आप रह यह मुझ पसन्द नही है।

मरी शक्ति तो तुम ही हो विदुला। बस तुम मुझे सहारा देती रहो। जसा कहोगी वसा ही मैं करूँगा। तुम मुझ छोडोगी तो नही ?'

मैं सदा आपके साथ रहूगी। आप द्वारा सद्धम के शत्रुआ का विनाश हो भगवान तथागत से मेरी यही प्राथना है। ओह! बातचीत म ही सुबह हो गई अब मैं चलू। राजमाता मेरी प्रतीक्षा कर रही होगी।

दुरभिसन्धि का सूत्रपात

वृहद्रथ और विदुला के विवाह की बात सुनकर आचाय पतञ्जलि के माथ पर चार बल पड गए। पुष्यमित्र को बुलाकर उन्होने कहा— यह मैं क्या सुन रहा हू वत्स! एक अपरिचित युवती राजप्रासाद मे प्रविष्ट हो गई और वृहद्रथ ने उसके साथ विवाह कर लिया। दौवारिक के दण्डधर और प्रहरी क्या सोए पडे थे? तुम्हारे सत्री और गूढपुरुष क्या सवथा अकमण्य हो गए हैं? शासनतन्त्र का सचालन इस प्रकार नही किया जाता वत्स! मुझ तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह विवाह स्थविरो के कुचक्र का परिणाम है। रणक्षेत्र मे शत्रुआ को परास्त करने म तुम अवश्य प्रवीण हो पर आभ्यन्तर शत्रुओ का दमन करने की समुचित व्यवस्था तुम नही कर सके हो। यह विदुला कौन है कहा स आई है और वृहद्रथ के साथ इसका विवाह कसे हो गया?

पतञ्जलि की बात अभी समाप्त नही हुई थी कि एक वटुक ने आकर उन्ह प्रणाम किया और सिर झुकाकर कहा एक युवती आपके दशन करना चाहती है। उसने आपकी सवा म प्रणाम निवेदन किया है।

कौन है वह? क्या नाम है इसका?

'अपना नाम विदुला बताती है।'

विदुला का नाम सुनते ही पतञ्जलि आसन से उठकर खडे हो गए। पर्णकुटी के द्वार पर आकर हाथ जोडते हुए उन्होंने कहा 'मगध की साम्राज्ञी के चरणों में पतञ्जलि ससम्मान प्रणाम निवेदन करता है। आइए, साम्राज्ञी! इस समय आपने कैसे कष्ट किया?'

विदुला ने दण्डवत होकर आचार्य के चरणों का स्पर्श किया और सिर झुकाकर कहा, इस तुच्छ दासी को लज्जित न कीजिए आचार्य! चिरकाल से आपके दर्शन की अभिलाषा थी। पितृपाद से आपके पाण्डित्य, उदात्त चरित्र और त्यागमय जीवन की चर्चा सुनती रही थी। जब मैं शाकल से प्रस्थान करने लगी, तो मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा था— पाटलिपुत्र जा रही हो बेटी! आचार्य के चरणों में मेरा नमस्कार कहना उन्हें अपना पथप्रदर्शक मानना और अब उन्हीं को अपना पिता समझना। परसों रात ही यहाँ आई थी। कल दिन भर राजमाता के साथ रही। मेरा अहोभाग्य है जो आज आपके दर्शन का अवसर प्राप्त हो गया। आपका वरद हस्त सदा मेरे सिर पर रहे यही प्रार्थना है।

'तो तुम शाकल नगरी की रहनेवाली हो। तुम्हारे पिताजी का क्या नाम है?

'गणमुख्य सोमदेव! आप उन्हें अवश्य जानते होंगे। कुछ समय गोनर्द आश्रम में भी रह चुके हैं। उनकी शिक्षा तक्षशिला में हुई थी पर वहाँ की शिक्षा पूर्ण कर कुछ समय के लिए वह गोनर्द भी गए थे। शिष्यों के प्रति आपका जो वात्सल्य है उसकी चर्चा करते हुए वह कभी नहीं थकते।

'बृहद्रथ से आपका परिचय कैसे हुआ?'

मेरे पितृकुल के लोग अष्टांगिक आर्य मार्ग के अनुयायी हैं आचार्य! दो वर्ष हुए मेरे माता पिता तीर्थयात्रा के लिए निकले थे। श्रावस्ती, वाराणसी काम्पिल्य, कपिलवस्तु आदि सब तीर्थस्थानों की यात्रा करते हुए वे पाटलिपुत्र भी आए थे। मैं भी उनके साथ थी। हम कुक्कुट विहार में ठहरे थे। सम्राट भी तब वहीं रह रहे थे। तभी उनसे परिचय हो गया था।

'बृहद्रथ के साथ आपका विवाह गान्धर्व विधि से हुआ है न? दो वर्ष

पूर्व आपका उनसे जो परिचय हुआ था वह प्रणय में कैसे परिणत हो गया? क्या उसके बाद भी आप कभी बृहद्रथ से मिली थीं?

आप मुझे आप क्यों कह रहे हैं आचार्य! मैं तो आपकी पौत्री के समान हूँ। पाञ्जलि ने प्रश्न को टालने के लिए विदुला ने कहा।

आप मागध साम्राज्य की साम्राज्ञी हैं और मैं आपकी प्रजा हूँ। आपके पद के गौरव को मुझे दृष्टि में रखना ही चाहिए।

पर मैं साम्राज्ञी की स्थिति में आपके चरणों में उपस्थित नहीं हुई हूँ, आचार्य! मैं आपका आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए यहाँ आई हूँ।

अच्छा अब से तुम कहकर ही तुम्हें सम्बोधन करूँगा। तुमने मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया विदुला!

'प्रणय एक अनिर्वचनीय तत्त्व है आचार्य! किसी से किसी को क्यों प्रेम हो जाता है इसकी विवेचना कर सकना असम्भव है। सम्राट को देखते ही मैं उनके प्रति आकृष्ट हो गई। जब भी कहीं देवदर्शन को जाती उन्हीं की मूर्ति मेरे सम्मुख उपस्थित हो जाती। मन ही मन मैंने उन्हें अपना भर्ता स्वीकार कर लिया था आचार्य!

पर तुम तो शाकल वापस चली गई थीं?

हाँ आचार्य! पर मेरा मनोभाव सम्राट से छिपा नहीं रह सका था। सच तो यह है कि वे भी मेरे प्रति आकृष्ट हो गए थे। शाकल में रहते हुए ये दो वर्ष मेरे लिए युगों के समान हो गए। उनकी स्मृति मुझे निरन्तर सताती रही। मैंने यत्न किया कि मेरा मनोभाव किसी के सम्मुख प्रगट न होने पाए। पर प्रणय को छिपा सकना बहुत कठिन होता है आचार्य! माँ मेरे मनोभाव को जान गई और मैंने उन्हें सब कुछ बता दिया।

पर बृहद्रथ से तुम्हारा सम्पर्क फिर कैसे हुआ?

यह सब आपसे कैसे कहूँ आचार्य!' विदुला ने संकोच के साथ कहा।

पर तुम पाटलिपुत्र आई कैसे?

पुष्कलावती से एक सार्थ पाटलिपुत्र आ रहा था। मार्ग में वह शाकल नगरी भी रुका। मेरे पिता मद्रक जनपद के गणमुख्य हैं न? उन्होंने सार्थ के साथ मेरी यात्रा की व्यवस्था करा दी।

क्या यह साथ अभी पाटलिपुत्र म ही है ?'

नहीं आचाय ! यह साथ अभी पाटलिपुत्र नहीं पहुँचा है। वाराणसी मे इस दस दिन ठहरना था। मैं इतने दिन कम प्रतीक्षा करती ? शीघ्र से शीघ्र अपने स्वामी के पास पहुँच जाने को उत्सुक जो थी। मैं अकेली ही *वाराणसी स चल पडी, केवल एक वृद्धा दासी के साथ।'*

"तुम्हारे जसी युवती के लिए इस ढग से यात्रा करना क्या निरापद था ?'

'*मार्ग मे मुझे किसी विपत्ति का सामना नहीं करना पडा आचाय !* सेनानी की कृपा स आज मगध म गाय और सिंह एक ही घाट पर पानी पीते हैं। सुवणालकारा से लदी हुई युवतियाँ आज निर्भीक होकर *राजमार्गों पर सवत्र आती जाती हैं। न कहीं दस्युओं का भय है, और न* हिंस्र पशुओ का। पर वाहीक देश म यह दशा नहीं है। इसीलिए शाकल से चलते हुए मुझे एक साथ का आश्रय लेना पडा था। मध्यदेश पहुँचते ही मैंने अनुभव कर लिया कि *यहाँ तो मैं अकेली भी यात्रा कर सकती हूँ।* फिर भी वाराणसी तक साथ के साथ रही। साथवाह धनरूप न मुझे अकेले नही जान दिया। मुझ पर उनकी बहुत कृपा थी। मेरी सुख सुविधा का वह बहुत ध्यान रखते थे।

'सुना है कि जब तुम पाटलिपुत्र आइ, तो एक नतकी के वेश म थी। क्या यह सत्य है ?

इस प्रश्न को सुनकर विदुला घबरा गई। पर शीघ्र ही वह सभल गइ, और हँसते हुए उसने कहा—

'आप तो सवज्ञ हैं आचाय ! बात यह हुई कि जब मैं सोण नद के पास पहुँची तो वादकों और नतकों की एक मडली भी वहाँ नदी के पार उतरने के लिए नौका की प्रतीक्षा कर रही थी। बातचीत म उनसे ज्ञात हुआ कि पाटलिपुत्र म रथयात्रा का उत्सव है। नृत्य और गान म मेरी बहुत रुचि है आचाय ! वाहीक देश के जनपदों म सगीत और उन्मुक्त नृत्य का बहुत चलन है। जब मैंने नतकों की उस मण्डली को देखा, तो अपने नृत्य कौशल को प्रदर्शित करने के प्रलोभन पर काबू पा सकना मेरे लिए सम्भव नहीं रहा। मेरे मन म यह भी आया कि बृहद्रथ जब मुझे नतकी के वेश म देखेंगे,

तो कितन चमत्कृत हागे। युवावस्था की चचनता म भी एक अदभुत आवपण होता है आचाय।

यह तो तुम जानती ही हो कि गान्धव विवाह शास्त्रसम्मत है। फिर तुम्हे छद्म वेश म पाटलिपुत्र आने और छिपकर विवाह करन की क्या आवश्यकता थी ? तुम यह क्या भूल गइ कि तुम एक सम्राट के साथ विवाह कर रही हो और यह विवाह मागध साम्राज्य क अधिपति की स्थिति और मर्यादा क अनुरूप होना चाहिए। यह सही है कि विवाह वर वधू की सहमति से ही होना चाहिए पर राजा के विवाह के समय प्रजा भी उसस कुछ अपक्षा रखती है। प्रजा का रजन राजा का प्रधान कत य है। यदि बृहद्रथ तुम्हे अपनी सहधर्मिणी और मागध साम्राज्य की साम्राज्ञी बनान क विचार को मन्त्रि परिषद के सम्मख प्रस्तुत करत तो क्या वह उसे स्वीकार न करती ? तुम मगध की साम्राज्ञी बनने के सवथा उपयुक्त हो। तुम्हारा विवाह मगध की प्राचीन परम्परा के अनुसार सम्पन्न होना और प्रजा उससे बहुत प्रसन्न हाती।

पर तब वह गा धव विवाह तो न होता आचाय ! प्रणय मनुष्य को अन्धा कर देता है। चिर विरह और मूक प्रम स जो यत्रणा प्राप्त होती है, उसे शब्दों द्वारा कस प्रगट कर आचाय ! दो वष पश्चात जब हमारा पुर्नमिलन हुआ ता हम म उचित-अनुचित का विवक कर सकन की क्षमता ही कहाँ थी। हमन एक-दूसर के गल म पुष्पमालाए डाल दी और हम विवाह बन्धन म बध गए। गान्धव विवाह की यही विधि है आचाय !

अच्छा एक बात और पूछना चाहता हूँ। गणमुख्य सोमदेव जानते थे कि तुम बृहद्रथ स प्रम करती हा और उसके साथ तुम्हार विवाह मे उन्ह कोई विप्रतिपत्ति भी नहा थी। इस दशा म उन्होंने अपन वा क्यों न के पुण्य स क्या वञ्चित रखा ?

मद्रक जनपद म गान्धव विवाह का बहुत चलन है, आचाय ! जब कोई युवा और युवती प्रम क वशीभूत हा विवाह करने का निश्चय कर लते हैं तो व माता पिता को बीच म नहीं डालत। व चुपचाप गान्धव विधि स अपना विवाह सम्पन्न कर लत हैं।

सनानी पुष्यमित्र पतञ्जलि और विदुला क वार्तालाप का बड़ ध्यान स

मुन रह थे। अब उनम नहीं रहा गया। उन्होंने आचाय स कहा—यदि अनुमति हो, तो मैं भी साम्राज्ञी स एक दो बाते पूछ लू।

कहा, वत्म! क्या पूछना चाहते हो?

आपका परिचय? विदुला न प्रश्न किया।

तुम इन्हें नहीं पहचानती? यह मनानी पुष्यमित्र है।

पुष्यमित्र का नाम सुनकर विदुला घबरा गई। वह एकदम आसन म उठकर खडी हो गई और अटक अटककर बोली—मागध साम्राज्य के महा प्रतापी मनानी!

तुमने साम्राज्ञी के प्रति प्रणाम निवेदन नहीं किया वत्स!'' पतञ्जलि ने कहा।

'पुष्यमित्र साम्राज्ञी के चरणो म सम्मानपूर्वक अभिनन्दन प्रस्तुत करता है।

मुझे क्षमा कर सेनानी! मैंने आपको पहचाना नहीं था। आज पहली बार आपके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इस आयभूमि म कौन एसा है जो आपकी वीरता और कीर्तिगाथा से परिचित न हो। पूर्व समुद्र से कपिश गान्धार तक और हिमालय म कृष्णा गोदावरी तक सवत्र आपका यशोगान हो रहा है। मगध का सौभाग्य है जो उस आप सदृश सनानी प्राप्त हुआ है। मैं मद्रक स आ रही हू सनानी! यवन लोग आपके नाम म थर थर कापते हैं। कहिए मेरे लिए क्या आज्ञा है?

'आपके साथ जो दासी शाकल नगरी से आई थी, वह फिर दिखाई नहीं दी। वह अब कहाँ है?'

ओह वह वृद्धा दासी। साठ साल से भी अधिक उसकी आयु थी। मुझे बहुत प्यार करती थी। उसीकी गोद म खेलते हुए मैं बडी हुई थी। क्या कहूँ, सेनानी! कल रात वह स्वगधाम सिधार गई। सुदूर यात्रा स वह बहुत थक गई थी। मुझे उसकी मृत्यु का बहुत दुख है। पर काल के सम्मुख किसी का क्या वश है! सूर्योदय से पूर्व ही उसकी अन्त्येष्टि क्रिया करा दी गई थी।'

क्या उसकी आशुमृतक परीक्षा कराई गई थी?

'नहीं सनानी!

"अच्छा एक बात और पूछना चाहता हूँ। क्या शाकल नगरी म स्थविर मोग्गलान से आपकी भट हुई थी ? कुक्कुटविहार के इन सघ स्थविर को तो आप जानती ही हागी। दो वष पूव जब आप पाटलिपुत्र आई थी तो उनके दशन आपने अवश्य किए हागे।

"सघ-स्थविर का मुझे भली भाति स्मरण है। पर वह शाकल तो नही आए। मेरे पितृचरण तथागत द्वारा प्रतिपान्ति आय माग के अनुयायी हैं। स्थविरो और श्रमणो के प्रति वह अगाध श्रद्धा रखते हैं। मैं भी उनके साथ स्थविरो के दशन के लिए जाया करती था। यदि स्थविर मोग्गलान शाकल जाते तो मैं उनकी चरण पूजा किए बिना कदापि न रहती।'

'क्या आप स्थविर कश्यप को जानती हैं ?

जानती ह सेनानी। उ ही के चरणो म बठकर मैंने त्रिपिटक की शिक्षा ग्रहण की थी।

'क्या कभी यवनराज मिनेन्द्र से भी आपकी भेंट हुई है ?

'हुई है सेनानी। आपको ज्ञात होगा कि वे अब श्रावक हो गए हैं। आचाय नागसन के साथ धमचर्चा म हा उनका सारा समय व्यतीत होता है। हिंसा से वह घणा करने लग है, और उ होने अहिंसा का व्रत ग्रहण कर लिया है।'

'पर मैंने तो सुना है कि मिनेन्द्र मध्यदेश पर आक्रमण करने की तयारी कर रहे हैं।'

यह सत्य नहीं है सेनानी। युद्ध को वह अब गह्य समझने लगे हैं। मगध पर आक्रमण की बात तो अब वह सोच भी नही सकते। आपकी शक्ति का भी उ ह भली भाँति ज्ञान है।'

क्या यह सही है कि मद्रक जनपद ने यवनराज की अधीनता स्वीकार कर ली है ?

नहीं सनानी। मद्रक अब भी स्वतन्त्र है। मिनेन्द्र के साथ उसका मत्री-सम्बध अवश्य है पर इसका कारण विचारो और आदर्शों की समता ही है। उनकी दृष्टि म न युद्ध की आवश्यकता है और न स यशक्ति की। मिनेन्द्र का तो सना की ओर ध्यान दन का अवकाश ही नही है सनानी। वह प्रतिदिन आचाय नागसन की सवा म उपस्थित होते हैं, धर्मोपदेश का

श्रवण करते हैं और उनसे अपनी शकाओ का निवारण कराते हैं। उनका सब समय अब धमचचा मे ही व्यतीत हाता है।'

मध्यदेश के जो बहुत स स्थविर और श्रमण आजकल शाकल नगरी म एकत्र हैं वे अपना समय किस प्रकार व्यतीत करत हैं ?'

'सब धमचर्चा और पूजा-पाठ म व्यापृत रहते हैं सेनानी !

विदुला की बातें सुनकर पुष्यमित्र अत्यत गम्भीर हो गए। उनकी मुख मुद्रा को देखकर विदुला काप गइ। हाथ जोडकर उसने कहा 'मैं एक अबोध बालिका हूँ सेनानी ! आपकी पौत्री के समान। बडा की बातें मैं क्या जानू। जो कुछ मैंन दखा सुना और समझा, आपकी सेवा म निवेदन कर दिया। यदि मुझस कोई भूल हो गई हो, तो क्षमा करें। मैं आपकी शरण म हू सेनानी !"

पुष्यमित्र आसन से उठकर खडे हो गए थे। विदुला की दुरभिसधि का उन्ह आभास मिल गया था। वह चाहत थे कि तुरत आतवशिक को बुलाएँ और स्थविरो के कुचक्र स बृहद्रथ की रक्षा की व्यवस्था करें। उन्होंने पतञ्जलि स कहा, मैं अब चलता हूँ, आचाय ! अनेक आत्ययिक काय मुझे सम्पन्न करने हैं।'

पुष्यमित्र के चले जाने पर विदुला न चन की साँस ली, और सकुचाते हुए कहा, मैं आपस एक प्रायना करना चाहती थी, आचाय !

'नि सकोच होकर कहो।

प्रणय का पाश मुझे अपन घर स बहुत दूर खीच लाया है। पर स्वजना को भुला सकना सुगम नही हाता आचाय ! अपने कुटुम्बियो, सहपाठियो और सहेलियो की याद मुझे अभी म सताने लग गई है। सम्राट हर समय तो मेरे साथ रह नही सकते। उनके बिना मुझे बडा सूना सूना-सा लगता है। अत पुर म कोई एसा नहीं है जिससे मैं अपने मन की बात कह सकू और दो घडी हँस-बोल सकूँ।

'अन्त पुर म स्त्रिया की क्या कमी है और राजमाता भी तो वहाँ हैं।

राजमाता और मेरा क्या साथ आचाय ! न जाने क्या हर समय उनकी आँखो स आँसू टपकते रहते हैं। मैं पूछती हूँ, तो चुप रह जाती हैं।'

अ त पुर दास दासिया से परिपूण है वे सदा मेरी सेवा के लिए उद्यत रहती हैं। मुझे सब सुख प्राप्त है, पर सखियो के बिना मेरा समय कसे कटेगा।"

"तो तुम क्या चाहती हो ?

'यदि अनुमति हो तो अपनी कुछ सहेलियो को पाटलिपुत्र बुला लू। मेरे साथ रहेगी तो मेरा मन बहल जाएगा। अभी मेरी आयु ही क्या है आचाय ! हसने बोलने को जी चाहता है।'

अच्छा मैं आ तवशिव से कह दूगा। तुम जानती ही हो उनकी अनुमति के बिना कोई नया व्यक्ति राजप्रासाद म प्रवेश नही पा सकता। तुम जिन सखियो को पाटलिपुत्र मे बुलाना चाहती हो उनके नाम तथा पते मुझ द दना। उनके शील तथा चरित्र की जाँच क अनन्तर ही उन्हें यहाँ आने की अनुमति दी जा सकगी। कोई और बात ?

एक प्रार्थना और है आचाय ! मद्रक जनपद मे भगवान तथागत का निर्वाण दिवस बडे समारोह के साथ मनाया जाता है। सुना है, पहले यहाँ पाटलिपुत्र म भी इस पव का बडा महत्त्व था। सहस्रो नर नारी उस दिन कुक्कुट विहार म एकत्र हुआ करते थ और चत्या की पूजा कर पुण्य लाभ प्राप्त करते थे। एक दासी मुझे बता रही थी, कि कुक्कुट विहार अब भूमि सात हो गया है और उसके सब स्थविर और श्रमण अन्यत्र चल गए है। मगध म सबको धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त है और सब कोई अपने विश्वास के अनुसार पूजा-पाठ कर सकते ह। मैं भी अपने पव को स्वच्छापूवक मना सकती हूँ। क्या यह सम्भव नही होगा कि एक बार फिर बुद्ध के निर्वाण दिवस को धूमधाम क साथ मनाया जाए ?

इसम सम्भव न होने की क्या बात है ? मैं जानता हूँ, कि पाटलिपुत्र क बहुत से निवासियो का तथागत क प्रति अगाध श्रद्धा है। मैं स्वय सत्य सनातन वदिक धम का अनुयायी हू पर शाक्यमुनि बुद्ध को भी मैं सम्मान की दृष्टि म दखता हूँ। उन्होने जिस अष्टागिक आय माग का प्रतिपादन किया था, वह प्राचीन आय परम्परा क अनुरूप है। तथागत क निर्वाण पव को मनाने का यहाँ कोई निषेध नही है।

पर पुरोधा के अभाव म यज्ञ को कसे सम्पन्न किया जा सकता है, आचाय ! सुना है यहाँ पाटलिपुत्र म अब कोई भी स्थविर तथा श्रमण नहा

रह गए है। भगवान के निर्वाण पव के अवसर पर त्रिपिटक का श्रवण किया जाता है। सत्शास्त्रो के प्रवचन का अधिकार कवल स्थविरो को ही है, आचाय ! चत्यो की विधिवत पूजा भी वही करा सकते हैं। उनके बिना निर्वाण दिवस का कसे मनाया जा सकेगा ? क्या यह सम्भव नही होगा कि मैं कतिपय स्थविरो और श्रमणो को इस अवसर पर पाटलिपुत्र निमन्त्रित कर सकू ?

"स्थविरो और श्रमणो के यहाँ आने जाने म कोई रुकावट नही है। इसके लिए मेरी अनुमति की क्या आवश्यकता है ? व स्वेच्छापूवक जहाँ चाहें आ जा सकते है।

'यह जानकर मैं आश्वस्त हुई आचाय !

पतञ्जलि के चरणो को स्पश कर विदुला अन्त पुर को वापस लौट गई। उसका मन प्रसन्न था। उसे सतोष था कि जिस महान उद्देश्य को सम्मुख रखकर स्थविर कश्यप न उसके प्रणय की बलि दी थी उसकी पूर्ति का माग अब निष्कटक होना प्रारम्भ हो गया है। कितनी ही स्त्री स्त्रिया अब शीघ्र ही उसकी सखियो के रूप म अन्त पुर म आ जाएँगी, और कितने ही स्थविर तथा श्रमण उसकी सहायता के लिए पाटलिपुत्र पहुच जाएँगे। मगध की जनता के हृदय म भगवान तथागत की मध्यमा प्रतिपदा के प्रति अगाध श्रद्धा है। स्थविरो का वह सम्मान करती है, और चत्यो की पूजा कर पुण्यलाभ के लिए उत्सुक रहती है। कुक्कुट विहार का विध्वस कर पुष्यमित्र न जो घोर अनथ किया है उससे वह असतुष्ट है। मैं असतोष की इस अग्नि को भडकाऊँगी। बृहद्रथ को उकसाऊँगी कि वह पुष्यमित्र को सेनानी पद से अपदस्थ कर दे। आ तवशिक सेना के कितने ही दण्डधर, नायक और गुल्मपति अब तक भी निपुणक के प्रति अनुरक्त हैं। वह चिर-काल तक आन्तवशिक पद पर भी रह चुका है। निपुणक अब भी पाटलिपुत्र मे ही है। जब मिनान्द्र की यवन सेना मध्य देश पर आक्रमण करेगी, निपुणक के नतत्व म पाटलिपुत्र के बहुत से सनिक पुष्यमित्र के विरुद्ध विद्रोह कर देंगे। सद्धम के उत्कष का अब यही एकमात्र उपाय है। इसी के लिए तो मुझे स्थविर कश्यप न पाटलिपुत्र भेजा है। मैं शाघ्र निपुणक से सम्पर्क स्थापित करूँगी। औशनस नीति म वह अत्यन्त प्रवीण है। बृहद्रथ

हो ही गया है। मैं सच्चे अर्थों मे मगध की साम्राज्ञी बनूंगी। बृहद्रथ मगध पर शासन करेंगे और मैं उन पर।

पतञ्जलि का चिन्तन

कोई दो दिन बाद सेनानी पुष्यमित्र फिर पतञ्जलि की पर्णकुटी पर उपस्थित हुए। वह अत्यन्त उद्विग्न थे। उनका मुख म्लान था और वह क्रोध से थर थर कांप रहे थे।

'स्थविरो का यह कैसा दुर्दान्त चक्र है आचार्य ! आर्यभूमि के विरुद्ध जो षडयन्त्र इस समय स्थविरो द्वारा प्रारम्भ किए गए हैं शाकल नगरी उन सबकी केन्द्र है। विदुला मद्रक जनपद के गणमुख्य की पुत्री है, और शाकल से यहा आई है। बृहद्रथ से उसका विवाह एक घोर अनर्थ का श्रीगणेश है। उसे कश्यप द्वारा पाटलिपुत्र भेजा गया है, सम्राट को अपने प्रभाव में लेआने के लिए और मौर्यों की शासनशक्ति का अस्त व्यस्त कर देने के लिए।'

'तुम्हे यह कैसे ज्ञात हुआ, वत्स !'

'मुझे अपने सत्रियो द्वारा सब कुछ ज्ञात हो गया है, आचार्य ! कश्यप ने ही विदुला को पाटलिपुत्र भेजा है। बृहद्रथ के साथ अपने प्रणय की जो बात वह कह रही थी सब मिथ्या है। न वह पहले कभी पाटलिपुत्र आई थी, और न कभी बृहद्रथ से मिली थी। निपुणक शाकल से ही उसके साथ था। निपुणक को तो आप जानते ही है। नए नए भेस बनाने में वह अत्यन्त कुशल है। वादक का भेस बनाकर वक्रतुण्ड नाम से उसने विदुला के साथ पाटलिपुत्र मे प्रवेश किया था और एक वृद्धा दासी बनकर विदुला के साथ अन्त पुर में गया था। हमे विदुला को तुरन्त बन्दी बना लेना होगा, आचार्य !'

'यह उचित नही है वत्स ! विदुला अब मगध की साम्राज्ञी है। बृहद्रथ के साथ उसका विधिवत विवाह हो चुका है। जनता में राजकुल के प्रति एक स्वाभाविक अनुराग होता है। इन्द्र, मित्र, वरुण आदि सब देवताओ के अंश को लेकर राजा का निर्माण होता है यह विचार सर्वसाधारण लोगो में बद्धमूल है। उसका अपमान वे सहन नही कर सकते। विदुला को कारा

गार मे डाल देने से जनता हमारे विरुद्ध विद्रोह कर देगी। पाटलिपुत्र म हमारे विरोधियो की कमी नही है। कितने ही गहस्थ, राजपुरुष वैदेहक और शिल्पी कुक्कुट विहार के ध्वस से उद्विग्न हैं। स्थविरो के कुचक्र का उन्हे पता नही है। वे समझते है कि इस प्राचीन विहार का विध्वस कर हमने पुरातन आर्य मर्यादा का अतिक्रमण किया है। हम इस समय सोच समझ कर शान्ति से काम लेना चाहिए।'

तो इस आसन्न विपत्ति का सामना किस प्रकार किया जाए आचार्य!'

'तुम अभी प्रतीक्षा करो वत्स! कश्यप के षडयन्त्र को आगे बढने दो। विदुला का सहारा पाकर कितने ही स्थविर और श्रमण फिर मगध वापस आ जाएँगे। शत्रु के कितने ही मन्त्री और गूढपुरुष भी फिर राजप्रासाद म प्रवेश पा जाएँगे। इन्हे आने से न रोको, पर इन पर दष्टि रखो। इनकी कोई भी गतिविधि तुमसे छिपी हुई न रहे। ये बहद्रथ को अपने प्रभाव में ले आएँगे और मिनेन्द्र की सेनाएँ ज्यो ही मध्यदेश म अग्रसर होगी, ये पाटलिपुत्र म विद्रोह का झण्डा खडा कर देंगे। कश्यप की योजना यही तो है न? तुम इस योजना मे बाधा न डालो। बृहद्रथ भी शालिशुक और शतधनुष के समान ही अकर्मण्य और निर्वीर्य है। उसके सम्राट पद पर रहते हुए मगध के शासनतन्त्र म शक्ति का सचार कर सकना सम्भव नही है। मैं उससे एक बार भेंट कर चुका हूँ। मुझे उससे कोई भी आशा नही है। उसे हम राज्य च्युत करना ही होगा। पर इसका समय अभी नही आया है। हम उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करनी होगी। सब काम समय पर ही हुआ करते हैं वत्स! सम्राट के विरुद्ध दण्डशक्ति का प्रयोग करना एक असाधारण बात है। यह सही है कि राजा भी दण्ड से ऊपर नही होता। प्रतिनादुवल राजा के विरुद्ध दण्ड का प्रयोग शास्त्र द्वारा अभिमत है। पर जनता म राजा के प्रति भक्ति की जो स्वाभाविक भावना होती है उस दृष्टि म रखकर हम यह विश्वास दिलाना होगा कि बृहद्रथ को राजसिंहासन से च्युत करने म ही मागध साम्राज्य का हित है। यह तभी सम्भव होगा जब कि बृहद्रथ पूर्णतया स्थविरो के कुचक्र म फँसकर आर्यभूमि के अहित म प्रवृत्त हो जाए। अभी तुम विदुला को अपना काम करने दो।

'पर यह तो नहर खोदकर मगरमच्छ को घर म निमन्त्रित करने के

समान होगा, आचार्य !

नहीं वत्स ! पाटलिपुत्र इस समय भी स्थविरों के कुचक्र से पूर्णतया मुक्त नहीं है। निपुणक अब भी राजप्रासाद में ही रहता होगा। पाटलिपुत्र से बाहर तो वह गया ही नहीं है। मगध के जो नर-नारी स्थविरों के अन्ध भक्त हैं उनके साथ वह सम्पर्क भी स्थापित कर रहा होगा। राज्य में राजा की स्थिति कूटस्थानीय होती है, चाणक्य के इस मन्तव्य को न भूलो। मौर्य शासनतन्त्र की जो दुर्दशा है उसका मूल कारण राजाओं का अकर्मण्य और प्रतिज्ञादुर्बल होना ही है। अशोक के समय में ही मागध साम्राज्य में निर्बलता के चिह्न प्रकट होने प्रारम्भ हो गए थे। पर सम्प्रति ने उसे सम्भाले रखा। जब वह भी मुनिव्रत ग्रहण करने की धुन में राज्यकार्य की उपेक्षा करने लगा, तो अन्तःपुर और राजप्रासाद में षड्यन्त्रों का चक्कर प्रारम्भ हो गया। विविध सेनानी, अमात्य और राजपुरुष विभिन्न राजकुमारों का पक्ष लेकर अपने स्वार्थसाधन में तत्पर हो गए। स्थविरों और श्रमणों ने इस दशा से लाभ उठाया, और वे विशाल मागध साम्राज्य के शासनतन्त्र को अपने हाथ का खिलौना समझने लग गए। आज भी यही दशा है, वत्स ! बृहद्रथ फिर स्थविरों के कुचक्र का शिकार होने लग गया है। हमें उसे राजसिंहासन से हटाना ही होगा। इसके सिवाय अन्य कोई उपाय नहीं है।'

पर मौर्य कुल में कौन ऐसा कुमार है, जो सम्राट पद के योग्य हो। चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार की परम्परा अब रह ही कहाँ गई है, आचार्य !

इस प्रश्न पर विचार करने का अभी समय नहीं है, वत्स ! बृहद्रथ को हम तभी राजसिंहासन से च्युत कर सकते हैं, जब जनता यह भलीभाँति अनुभव कर ले कि उसके अपदस्थ हो जाने में ही मागध साम्राज्य का हित है। यह तभी सम्भव है, जबकि बृहद्रथ की अकर्मण्यता, क्लैब्य और प्रतिज्ञादुर्बलता प्रत्यक्ष रूप से लोगों के सम्मुख आ जाए। मद्रक जनपद में एक बार स्थविरों के कुचक्र में फँसकर जब वह राज्य के अहित में प्रवृत्त हो जाएगा, तभी उसके विरुद्ध दण्डशक्ति का प्रयोग करना समुचित होगा। इस बीच में तुम विदुला को अपना काम करने दो। वह चाहती है कि तथागत के निर्वाण दिवस को धूमधाम के साथ मनाया जाए और उसमें सम्मिलित होने के लिए जो स्थविर और श्रमण बाहर से आना चाहें, उनके मार्ग में कोई बाधा न

डाली जाए। उसकी यह भी इच्छा है कि वह अपनी कुछ सखियों दास दासियों तथा कुटुम्बी-जनों को शाकल नगरी में बुला ले, ताकि उसका मन बहला रहे। उसे मैंने इसकी अनुमति दे दी है। पर मैं उसकी दुरभिसंधि को भलीभांति समझता हूँ। उसका सहारा पाकर मोग्गलान और कश्यप के बहुत से गूढ़पुरुष पाटलिपुत्र आ जाएंगे और बृहद्रथ उनके कुचक्र में फँस जाएगा। स्थविर तुम्हें सद्धर्म का सबसे बड़ा शत्रु समझते हैं। तुम्हें वे अपने मार्ग से हटा देना चाहते हैं। वे बृहद्रथ को तुम्हारे विरुद्ध भड़काएँगे। तुम्हारे नेतृत्व में मौर्य शासनतन्त्र का जिस ढंग से संचालन किया जा रहा है और तुम जिस प्रकार बृहद्रथ को उत्थानशील बनाने के लिए प्रयत्न कर रहे हो, वह स्वयं भी उससे उद्विग्न अनुभव करता है। वह तुमसे छुटकारा पाना चाहता है। विदुला को भी तो इसी प्रयोजन से पाटलिपुत्र भेजा गया है और उसे साम्राज्ञी के पद पर अधिष्ठित कर दिया गया है। तुम अभी कुछ दिन प्रतीक्षा करो विदुला को अपना कार्य करने दो। पर उसकी कोई भी गतिविधि तुम्हारे मन्त्रियों और गूढ़पुरुषों की दृष्टि से छिपी न रहने पाए।'

पतञ्जलि की बात सुनकर पुष्यमित्र कुछ आश्वस्त हुए। प्रणाम निवेदन कर जब वह पर्णकुटी से चले गए तो आचार्य पतञ्जलि ने अपने प्राङ्गण में टहलना प्रारम्भ कर दिया। उनकी मुखमुद्रा गम्भीर थी और वह किसी विकट समस्या पर विचार करने में मग्न थे। वह सोच रहे थे पुष्यमित्र ने ठीक ही तो कहा था कि मौर्य कुल में कौन ऐसा कुमार है, जो सम्राट पद के योग्य हो जो चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार के मार्ग पर चलकर मौर्य शासनतन्त्र में शक्ति का संचार कर सके और मागध साम्राज्य में कूटस्थानीय होकर शासन का नेतृत्व कर सके। देर तक यही प्रश्न उनके मन को उद्विग्न करता रहा। फिर आशा की एक किरण उनके सम्मुख प्रगट हुई। उन्होंने मन ही मन कहा—ठीक है, यह समस्या बहुत जटिल नहीं है। यदि मौर्य कुल में शक्ति का संचार नहीं किया जा सकता तो इस कुल के शासन का अन्त कर देने में ही आर्यभूमि का हित है। मगध के लिए यह कोई अनहोनी बात भी नहीं होगी। कोई तीन सौ साल हुए जब इस जनपद पर बार्हद्रथ वंश के राजाओं का शासन था। इस वंश के अन्तिम राजा रिपुञ्जय के

के अमात्य पुलिक ने विद्रोह कर दिया था और उसे मारकर अपने पुत्र बालक (कुमारसेन) को मगध के राजसिंहासन पर आसीन कर दिया था। पर कुमारसेन भी शासनतन्त्र का संचालन करने के अयोग्य सिद्ध हुआ। उसका सेनापति भट्टिय नाम का एक वीर था। वह यह नहीं सह सका कि मगध के राजसिंहासन पर एक अकर्मण्य एवं निर्बल व्यक्ति आसीन हो। षडयन्त्र कर उसने कुमारसेन की हत्या करा दी। महाकाल के उत्सव में महामांस की बिक्री के प्रश्न को लेकर एक झगड़ा उठ खड़ा हुआ था, उससे लाभ उठाकर तालजंघ नाम के एक वेताल ने भट्टिय के इशारे से अकस्मात कुमारसेन पर आक्रमण कर दिया और उसे मौत के घाट उतार दिया। भट्टिय के वंशज भी देर तक मगध के राजसिंहासन पर नहीं रह सके। उसके वंश में बिम्बसार और अजातशत्रु जैसे प्रतापी राजा हुए जिन्होंने मगध की शक्ति का बहुत उत्कर्ष किया। पर जब उनके उत्तराधिकारी राजा क्लीव और अकर्मण्य हो गए तो राजा नागदासक के विरुद्ध शिशुनाग ने विद्रोह कर दिया और स्वयं सम्राट पद प्राप्त कर लिया। मगध की यही परम्परा रही है। पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर सदा किसी एक राजवंश का ही शासन नहीं रहा है। चन्द्रगुप्त भी तो मोरिय गण का कुमार था। उसने भी तो नन्द वंश का अन्त कर मगध का सिंहासन प्राप्त किया था। राज्यलक्ष्मी को चंचला कहा गया है वह कभी एक वंश में स्थिर नहीं रह पाता। सुख-वैभव तथा धन-सम्पदा से मनुष्यों में एक प्रकार की अकर्मण्यता आ जाती है और राजकुल भी इस नियम के अपवाद नहीं होते। मौर्य वंश के साथ भी यही हुआ है। इसके राजा या तो धर्मविजय की धुन में अपने कर्तव्यों से विमुख हो गए और या भोगविलास में फँसकर। अब इसमें शक्ति का संचार कर सकना असम्भव है। इसका अन्त कर देने में ही आर्यभूमि का कल्याण है। पुष्यमित्र सब प्रकार से योग्य है। उसमें उद्दण्ड साहस है और साथ ही आर्यभूमि तथा आर्य मर्यादा के प्रति अगाध आस्था है। क्यों न वह पुलिक, भट्टिय, शिशुनाग और चन्द्रगुप्त की परम्परा का अनुसरण करे और बृहद्रथ को पदच्युत कर स्वयं राजसिंहासन को प्राप्त कर ले। यह सही है कि वह ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुआ है, कुल से क्षत्रिय नहीं है। पर मगध के राजसिंहासन पर तो कितने ही अधमज और शूद्रप्राय

व्यक्ति आसीन हो चुके हैं। कुमारसेन जघन्यज ही तो था और महापद्म नन्द ? वह तो नापितपुत्र था। फिर पुष्यमित्र के राजा बनने में क्या बाधा हो सकती है। यवनों के आक्रमण और स्थविरों के कुचक्र का निवारण करने के लिए पुष्यमित्र को सम्राट पद पर अभिषिक्त करना ही होगा। इसी में मागध साम्राज्य और आर्यभूमि का हित-कल्याण है।

पतञ्जलि अब अपने को आश्वस्त अनुभव कर रहे थे। मगध के शासन तन्त्र की जो नौका मँझधार में फँसती जा रही थी उसके उद्धार का उपाय उनके सम्मुख स्पष्ट हो गया था।

विदर्भ में द्वैराज्य की स्थापना

मागध साम्राज्य के दक्षिण चक्र के सेनापति यज्ञसेन बहुत उद्विग्न थे। उनकी पत्नी रुक्मिणी उन्हें हर समय कोचती रहती थी। कहती थी, मेरा भाई बुधगुप्त पाटलिपुत्र के कारागार में बन्द है और तुम चैन से बैठे हो। मेरा प्रिय भाई मागध साम्राज्य का आन्तर्वंशिक! कभी उसका कितना रोब दाब था। पाटलिपुत्र की सेना उसके अधीन थी, और राज-प्रासाद पर उसका एकच्छत्र शासन था। पर आज वह कारागार में पड़ा है और तुम शान्त बैठे हो। तुम्हारी सैन्यशक्ति किस काम की है ?

'तो मैं क्या करूँ ?' यज्ञसेन ने कहा।

'तुम विद्रोह क्यों नहीं कर देते ? पहले विदर्भ के शासन को अपने हाथ में कर लो और फिर सेना को साथ ले पाटलिपुत्र पर आक्रमण कर दो। मेरे भाई को बन्धनागार से मुक्त करा दो। इसके बिना मुझे चैन नहीं पड़ेगा ?'

'पर विदर्भ का शासन तो माधवसेन के हाथों में है। वह मेरे पितृव्यपुत्र हैं, मेरे बड़े भाई हैं और दक्षिणापथ के शासन के लिए नियुक्त हैं। सेना का प्रयोग उनकी अनुमति के बिना नहीं किया जा सकता। अपने भाई के विरुद्ध मैं कैसे विद्रोह कर सकता हूँ।'

'मैं नहीं जानती थी कि तुम इतने निर्वीर्य हो। मेरा भाई कारागार में

पड़ा सड़ता रहे और तुम अपने चार भाई से देखते रहो।' यह कहते हुए रुक्मिणी ने रोना प्रारम्भ कर दिया। उसे चुप कराते हुए यवनसेन ने कहा—'तो तुम चाहती क्या हो?'

'माधवसेन पुष्यमित्र के प्रति अनुरक्त है। जब तक विदर्भ का शासन उसके हाथों में रहेगा, दक्षिणापथ की सेना कभी पुष्यमित्र के विरुद्ध प्रयुक्त नहीं हो सकेगी। सेना तुम्हें बहुत मानती है। वह अवश्य तुम्हारा साथ देगी। शत्रुओं से विदर्भ की रक्षा के लिए खून-पसीना तुम बहाओ, और राज करे वसुमती। उसके सुख-वैभव को देखकर मेरा जी जल जाता है। मुझसे अच्छी तो मदनिका और ज्योत्स्निका ही हैं। नाम को तो माधवसेन की दासियाँ हैं, पर उनकी शान-शौकत का क्या ठिकाना। कौशेय वस्त्र पहनती हैं और सुवर्णालङ्कारों से लदी रहती हैं। मुझे देखकर नाक चढ़ाती हैं। कहती हैं तुम भी तो वसुमती की दासी ही हो। ठीक ही तो कहती हैं। अन्तःपुर पर वसुमती का राज है, वहाँ मुझे कौन पूछता है। मेरी तुम्हें परवाह ही कहाँ है। सेनापति पद पाकर ही खुश हो।'

'पर जनता माधवसेन के प्रति अनुरक्त है। सेना में भी कितने ही नायक, दण्डपाल, गुल्मपति और दण्डधर ऐसे हैं जिनकी मौर्य शासनतन्त्र के प्रति भक्ति है। वे अवश्य माधवसेन का साथ देंगे। सैन्यशक्ति द्वारा हम उसे परास्त नहीं कर सकेंगे।'

'मैं नहीं जानती थी कि तुम में साहस की इतनी कमी है। पर मैं भी बुधगुप्त की बहिन हूँ। कूटनीति में अपने भाई के समान ही प्रवीण हूँ। मैं अपने भाई को कारागार से छुड़ाकर ही दम लूँगी। वसुमती का सुख-वैभव मुझसे नहीं देखा जाता। मुझे उस दिन ही चैन पड़ेगी, जब अपनी आँखों से वसुमती को सींकचों में बन्द देख लूँगी। मुझे एक असहाय स्त्री न समझो। सब स्थविर और श्रमण मेरे भाई को बहुत मानते हैं। उन्हीं की सहायता से उन्होंने मगध का आन्तवंशिक पद प्राप्त किया था। वे अवश्य मेरा साथ देंगे।'

'तुम्हारी क्या योजना है?'

'अग्निमित्र को जानते हो? पुष्यमित्र का पुत्र है, और विदिशा का शासक नियुक्त होकर आया है। उसने माधवसेन को बुलाया है। यवनराज

मिनेद्र मध्यदेश पर आक्रमण करने की तयारी कर रहा है। उसका प्रतिरोध करने के सम्बध म वह माधवसन से परामश करना चाहता है। सुना है कि माधवसन शीघ्र विदिशा के लिए प्रस्थान कर रहा है।'

सेनापति ता मैं हूँ। मुझ ता नही बुलाया गया।

यही तो मैं कहती हूँ। विदभ म तुम्हारी स्थिति ही क्या है। तुम तो नाम को ही सनापति हो। अच्छा, पहले मेरी बात सुन लो। बीच म मत बोलो। मालविका भी माधवसेन क साथ विदिशा जा रही है। अग्निमित्र उससे विवाह करना चाहता है। दो दो स्त्रिया पहले है फिर भी उस सतोष नही है। मालविका के रूप का वणन सुनकर उस पर मोहित हो गया है। धारिणी और इरावती क सिर पर एक नई सौत बिठाना चाहता है। बूढा हो गया है पर कामवासना अभी शान्त नही हुई है। और इस माधवसन को देखो अपनी बहन को इस बूढे स ब्याह दने के लिए सहमत हो गया है। सोचता है अग्निमित्र की कृपा प्राप्त कर सम्पूण दक्षिण चक्र का अधिपति बन जाएगा। हमारे लिए यह अच्छा अवसर है। सिहनत्र को तो तुम जानते ही हो वही जो विदभ के उत्तर पश्चिम सीमान्त का अन्तपाल है। वह मेरे भाई बुधगुप्त का घनिष्ठ मित्र है। मैं तुरन्त उससे मिलूगी। वह अवश्य मेरी सहायता करेगा। विदिशा पहुँचने स पूव ही माग म माधवसन को बन्दी बना लिया जाएगा। कहो मेरी योजना ठीक है या नही।

तुम्हारी योजना तो ठीक है। पर आयभूमि पर सकट की इस घडी म माधवसेन को बन्दी बना लेना क्या उचित होगा?'

तुम्ह उचित अनुचित की पडी है। पर क्या मेरे भाई को कारागार म डालकर यत्रणाएँ दना उचित है। मैं तुम्हारी कोई बात नही सुनूगी। मुझे अपना काय करने दो। तुम यहाँ सुख भाग करते रहो। मैं आज ही विदभ के उत्तर पश्चिमी सीमान्त के लिए प्रस्थान कर रही हू। शीघ्र सिहनख स मिलूगी और उसे अपनी योजना समझा दूगी। माधवसन के साथ वसुमती और मालविका भी बन्दी बना ली जाएगी और साथ ही मदनिका तथा ज्योत्स्निका भी। विदभ का राजसिंहासन तब तुम्हारे हाथो मे आ जाएगा। तुम विदभ का शासन कराेगे और मैं तुम्हारे हृदय पर राज करूँगी। कहो, यह ठीक होगा न? मगध म अब वह शक्ति ही कहाँ है जो तुम्हारे स्वतन्त्र

राज्य म हस्तक्षेप कर सके। आध्र और कलिङ्ग मौर्यों की अधीनता के जुए को उठाकर परे फक चुके हैं। अब विदभ भी स्वतत्र हो जाएगा। तुम उसक सम्राट बनोग, और मैं उसकी साम्राज्ञी।'

रुक्मिणी के सम्मुख यज्ञसन की एक न चली। अतपाल सिहनख का उसने अपन षडयन्त्र म सम्मिलित कर लिया। अग्निमित्र स मिलने के लिए जब माधवसन ने विदिशा की ओर प्रस्थान किया, तो न केवल वसुमती और मालविका अनेक दास दासियो सहित उनके साथ थीं अपितु विदभ के मन्त्री सुमति भी अपनी बहिन कौशिका के साथ उनकी मण्डली म थे। अग रक्षक सेना के अनेक सनिक भी उनके साथ यात्रा के लिए चल। पर विदिशा पहुच सकना उनके लिए सम्भव नही हुआ। महादव पवतमाला की घाटी म अतपाल सिहनख के सनिको ने अकस्मात उन पर आक्रमण कर दिया। माधवसन का स्वप्न म भी इस बात की सम्भावना नही थी कि अपने ही प्रदश मे उनकी यात्रा निरापद नही हो पाएगी। उसके अगरक्षको न डटकर शत्रुओ का सामना किया पर अकस्मात् आक्रमण के कारण वे हतप्रभ हो गए। कुमार माधवसन रानी वसुमती और उनकी दासियो को बन्दी बना लिया गया, और उन्ह अतपाल दुग के कारागार म डाल दिया गया।

पर अमात्य सुमति न इस अवसर पर बडे कौशल स काम लिया। वह न केवल स्वय सिहनख के हाथ स बच गए अपितु अपनी बहिन कौशिकी और कुमारी मालविका को भी बन्दी होन स बचाने म समथ हो गए। महान्ब पहाडियो म अपने को छिपाते हुए वे तीनो नमदा नदी के तट पर जा पहुँचे। वहाँ उन्ह एक साथ मिल गया, जो भृगुकच्छ स विदिशा होता हुआ मथुरा जा रहा था। साथवाह पण्यपुण्य स भेंट कर उन्होने साथ के साथ यात्रा करने की अनुमति प्राप्त कर ली। पर व अभी कुछ ही दूर गए थे कि दस्युओ के एक दल ने साथ पर आक्रमण कर दिया। साथ की रक्षा के लिए जो सनिक थे उन्होने डटकर दस्युओ का सामना किया, पर वे उनके सम्मुख नहीं टिक सके। अमात्य सुमति ने अपने स्वामी माधवसन की बहिन मालविका की रक्षा के लिए प्राणपण स चेष्टा की और वह दस्युओ स लडते हुए स्वगधाम को सिधार गए। मालविका दस्युओ के हाथो म पड गई, और उसे वे अपने साथ ले गए। लूटमार तथा रक्तप्रवाह को देखकर

कौशिकी अचेत हो गई थी। दस्युओं ने समझा वह मर गई है। इसलिए उसे व वहां छोड गए। जब उसे सुध आई, तो उसने देखा कि सुमति पञ्चत्व को प्राप्त हो चुके हैं और मालविका का कहीं पता नहीं है। अकेली वह क्या करती? उसने विधिवत अपने भाई का दाहकर्म सम्पन्न किया और विदिशा के मार्ग पर चल पडी। पर उसकी यात्रा निरापद नहीं थी। दस्युओं से अपनी रक्षा करने के लिए उसने काषाय वस्त्र धारण कर लिए, और परिव्राजिका के वेश में वह विदिशा पहुँच गई।

मालविका उससे पहले ही विदिशा आ गई थी। दस्युओं ने उसे दासी के रूप में वहां बेच दिया था। दासियों का क्रय विक्रय उस समय विदर्भ तथा विदिशा में एक साधारण बात थी। अग्निमित्र की रानी धारिणी का भाई उन दिनों विदिशा में ही था। अग्निमित्र ने उसे इन्द्रप्रस्थ से अपने पास बुला लिया था। वीरसेन ने दस्युओं से मालविका को खरीद लिया था, और अपनी बहिन की सेवा के लिए अन्तःपुर में भेज दिया था। कौशिकी भी मालविका को ढूंढती हुई अग्निमित्र के अन्तःपुर में पहुँच गई। पर अग्निमित्र यह नहीं जान सका कि जो नई दासी उसके अन्तःपुर में आई है वह माधवसेन की बहिन मालविका है। पर दासी के रूप तथा गुणों से वह आकृष्ट होने लगा और यह आकर्षण शीघ्र ही प्रेम में परिणत हो गया।

सिंहनख द्वारा माधवसेन के बन्दी बना लिए जाने और विदर्भ में यज्ञसेन द्वारा अपने को राजा घोषित कर देने के समाचार से अग्निमित्र बहुत उद्विग्न हुआ। उसने यज्ञसेन को पत्र लिखा कि माधवसेन को कारागार से मुक्त कर दिया जाए। पर वह इसके लिए उद्यत नहीं हुआ। उत्तर में उसने लिखा कि यदि मेरी पत्नी के भाई बुद्धगुप्त को पाटलिपुत्र के बन्दनागार से मुक्त कर दिया जाए तो बदले में मैं भी माधवसेन को छोड दूंगा। अग्निमित्र इससे बहुत क्रुद्ध हुआ और उसने विदर्भ पर आक्रमण करने के लिए वीरसेन को आदेश दिया। विदर्भ में यज्ञसेन की स्थिति अभी सुदृढ नहीं हुई थी। उसने अपने को स्वतन्त्र राजा अवश्य घोषित कर दिया था पर प्रजा में उसकी जड अभी जम नहीं पाई थी। सेना भी उसके विरुद्ध थी। वीरसेन का सामना वह नहीं कर सका। वरदा नदी के तट पर घनघोर युद्ध हुआ जिसमें यज्ञसेन परास्त हो गया और वीरसेन ने विदर्भ को अपने अधीन

कर लिया। माधवसेन को कारागार से मुक्त करा दिया गया और साथ म वसुमती तथा उसकी दासिया को भी।

विदर्भ को विजय कर जो उपहार वीरसेन न अग्निमित्र की सेवा मे भेजे उनम मदनिका और ज्योत्स्निका नाम की व दो दासियाँ भी थी जिन्ह अन्तपाल सिहनख ने माधवसेन क साथ बन्दी बना लिया था। जब वे अन्त - पुर म आइ तो उन्होंने तुरन्त मालविका और कौशिकी को पहचान लिया। अब अग्निमित्र से यह छिपा नही रह सका, कि रूप गुणसम्पन्न जो दासी उसके अन्तपुर म रह रही थी वह वस्तुत माधवसेन की बहिन कुमारी मालविका थी। वह पहले ही उस पर मुग्ध था। अब उसक साथ विवाह म कोई बाधा नहा रह गई। अग्निमित्र और मालविका का विवाह बडी धूमधाम के साथ सम्पन्न हुआ और धारिणी तथा इरावती न भी उस सहर्ष सपत्नी क रूप मे स्वीकार कर लिया।

माधवसेन अब बन्धनागार से मुक्त हो चुक थ। प्रश्न यह उत्पन्न हुआ, कि विदर्भ क सम्बन्ध म क्या व्यवस्था की जाए। यज्ञसेन युद्ध म परान्त हो गया था पर अग्निमित्र उसक साथ मैत्री सम्बन्ध स्थापित करने को उत्सुक थ। यवना के आसन्न आक्रमण को दृष्टि में रखकर वह चाहत थे कि मौर्य साम्राज्य के दक्षिणी सीमान्त म शान्ति स्थापित रहे, और यज्ञसेन मौर्य शासनतन्त्र का विरोधी न होकर उसक साथ सहयोग करने लग। उन्हान अपने मन्त्री वाहतक को बुलाकर कहा—

'कहिए अमात्य! विदर्भ की नई व्यवस्था के सम्बन्ध म आपका क्या विचार है?'

'मन्त्रिपरिषद न इस प्रश्न पर विचार विमर्श किया है आर्य! सेनानी पुष्यमित्र का एक आदेश प्राप्त हुआ था। वह चाहते हैं कि दशार्ण और विन्ध्य की सब सेनाए शीघ्र ही पाटलिपुत्र आ जाए।'

"यह किसलिए?

"मागध साम्राज्य की मन्यशक्ति का वहाँ प्रदर्शन करन की योजना है।"

"पर इसका कारण?

"यह तो मुझे ज्ञात नही, आर्य! पर सेनानी के आदेश का पालन तो

हम करना ही होगा।'

'पर क्या यह निरापद होगा? दक्षिणापथ मे हमारे विरोधियो की कमी नही है। सेना के अभाव म क्या वे विद्रोह के लिए तत्पर नही हो जाएँगे। विदभ के बहुत से सनिक और नायक यज्ञसेन के प्रति अनुरक्त हैं। क्या वह एक बार फिर विद्रोह का झण्डा खडा नही कर देगा?

'इसी को दष्टि म रखकर मन्त्रिपरिषद् ने यह निणय किया है, कि विदभ म द्वराज्य शासन स्थापित किया जाए। वरदा नदी के उत्तर का प्रदेश यज्ञसेन के अधिकार म रहे और दक्षिण का माधवसेन के। द्वराज्य शासन राजशास्त्र द्वारा अभिमत है। राजकुल के दो कुमार जब शौय चरित्र और गुणो म एक समान हो, और उनकी प्रतिद्वद्विता को किसी अन्य प्रकार से दूर कर सकना सम्भव न रहे तो द्वराज्य शासन स्थापित करना श्रेयस्कर रहता है। सेनानी की आना का पालन कर जब विदभ की सेना भी पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान कर देगी, तो वहाँ शान्ति और व्यवस्था स्थापित रख सकना सुगम नहीं रहेगा। पर यदि यज्ञसेन भी राज्य म अधिकार प्राप्त कर सन्तुष्ट हो जाए तो सब समस्या हल हो जाएगी।

'पर यज्ञसेन की पत्नी का भाई बुधगुप्त पाटलिपुत्र म बन्दी है। यह भूतपूव 'मौय सचिव सेनानी का कट्टर शत्रु है। उसकी बहिन रुक्मिणी ने अपने भाई को बन्धनमुक्त कराने के लिए ही सिंहनख के साथ मिलकर माधवसेन के विरुद्ध षडयन्त्र किया था। क्या यह उचित नही होगा, कि यज्ञसेन को बन्दी बना लिया जाए?'

'नही आय! मैं यज्ञसेन को भलीभाति जानता हूँ। वह प्राचीन आय धम का अनुयायी है। स्थविरो के कुचक्र में वह अपरिचित नहा है। यवन सनाए फिर आयभूमि का आक्रान्त करें यह वह कदापि सहन नही कर सकेगा। रुक्मिणी के प्रभाव मे आकर उसने एक बार जो भूल की थी, उसे क्षमा कर देन म ही मौय शासनतन्त्र का हित है। विदभ के शासन म समान अधिकार प्राप्त कर वह अवश्य सतुष्ट हो जाएगा।'

'तो फिर यही सही। मन्त्रिपरिषद का निणय मुझे स्वीकार है।

विदभ म द्वराज्य की स्थापना कर दी गई। माधवसेन भी इससे सन्तुष्ट था, क्योंकि अपने पितृव्यपुत्र के प्रति उसके हृदय मे स्नेह था। व्यक्तिगत

उनके रूप की तुलना में वह आर्यभूमि के हित को अधिक महत्त्व देता था और उसने यह भलीभाँति समझ लिया था कि सिन्ध में शान्ति स्थापित रहना मागध साम्राज्य की सुरक्षा के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

बुद्ध जयन्ती का समारोह

बौद्ध धर्म के अनुयायियों की दृष्टि में वैशाख पूर्णिमा का बहुत महत्त्व है। इसी दिन गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था और इसी दिन उनका निर्वाण भी हुआ था। बौद्ध धर्म का यह सबसे बड़ा पर्व है और इसे बड़े समारोह के साथ मनाया जाता है। मगध के निवासी भगवान तथागत के प्रति अगाध श्रद्धा रखते थे और वैशाख पूर्णिमा के दिन पाटलिपुत्र के कुक्कुट विहार में सुदूर ग्रामों और नगरों से आए हुए लोगों की भीड़ लग जाती थी। इस दिन लोग चैत्यों की पूजा करते, स्थविरों के प्रवचन सुनते और स्तूपों की प्रदक्षिणा करते। पाटलिपुत्र के वणिक, शिल्पी और कर्मकर इस दिन की बड़ी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा किया करते थे क्योंकि इसके कारण उन्हें अपने पण्य की बिक्री का उत्तम अवसर मिल जाता था। पर कई वर्षों से यह उत्सव नहीं मनाया गया था। कुक्कुट विहार का ध्वंस हो चुका था और स्थविर तथा श्रमण मगध को छोड़कर सुदूर मद्र जनपद में चले गए थे।

राजमहिषी विदुला ने बुद्ध जयन्ती को धूमधाम के साथ मनाने की अनुमति आचार्य पतञ्जलि से प्राप्त कर ली थी। पाटलिपुत्र के नागरिक इससे बहुत प्रसन्न थे। उत्सव की तैयारी में वे अपने राजमार्गों, पथचत्वरों तथा पण्यशालाओं को सजाने में तत्पर थे। अनेक स्थविरों, श्रमणों और भिक्षुओं ने भी पाटलिपुत्र आना प्रारम्भ कर दिया था। राजा अशोक द्वारा बनवाए गए विशाल स्तूप का पुनः संस्कार किया जा रहा था और कुक्कुट विहार के ध्वंसावशेषों पर बहुत सी कुटियाँ बना ली गई थीं, जिनमें श्रमणों और भिक्षुओं ने आसन जमा लिए थे। विदुला इससे बहुत प्रसन्न थी। स्थविर मोग्गलान की अनेक गूढ़ स्त्रियाँ उसकी सहेलियों तथा दासियों के रूप में शाकल नगरी से पाटलिपुत्र के अन्तःपुर में आ गई थीं, और कुछ स्थविरों

तथा श्रमणो न भी राजप्रासाद म आना-जाना प्रारम्भ कर दिया था। विदुला इनसे एकान्त म मिलती और अपनी योजना को क्रियान्वित करन के लिए विचार विमश किया करती। निपुणक अभी पाटलिपुत्र म ही था, और मल्लाह क वेश म गगा के दक्षिणी तट पर रह रहा था। अवसर पान ही वह अन्त पुर में प्रविष्ट हो जाता, और विदुला से गूढ मन्त्रणा किया करता। एक दिन उसन विदुला से कहा— राजप्रासाद मे हमारे जो अनेक साथी कद हैं उन्हे बन्धनमुक्त करान का प्रयत्न करो। आन्तवशिक बुधगुप्त हमारे लिए बहुत सहायक हो सक्त हैं। राजप्रासाद के कितने ही कर्मचारी तथा आन्तवशिक सेना के बहुत से सनिक उनके प्रति अनुरक्त हैं। विदभ का शासक यज्ञसेन उनकी भगिनी का पति है। वह बुधगुप्त की बात कभी नही टालगा। दक्षिणापथ की सेना अवश्य हमारा साथ देगी।

'आपकी क्या योजना है ?'

'तुम बृहद्रथ से कहकर सब बन्दियो को बन्धनमुक्त करा दो। बुद्ध-जयन्ती जसे विशेष पर्वों पर बन्दियो को बन्धनमुक्त करा देना मगध की प्राचीन परम्परा के अनुकूल है। तुम बृहद्रथ पर ज़ोर डालकर यह काम करवा दो।

पर इसके लिए तो मन्त्रिपरिषद की सहमति की आवश्यकता होगी। मौय शासनतन्त्र मे राजा का स्थान 'ध्वजमात्र' है। वास्तविक शासनशक्ति तो मन्त्रिपरिषद के हाथो म है।

'आचाय पतञ्जलि तुमसे बहुत प्रभावित हैं और तुम्हे बहुत मानते हैं। तुम उनसे मिलो और यह प्राथना करो कि जो बहुत से बौद्ध इस समय पाटलिपुत्र के बन्धनागार म बन्दी हैं, उन्हे बन्धनमुक्त कर दिया जाए। जनता इससे बहुत प्रसन्न होगी। पतञ्जलि तुम्हारे अनुरोध की उपेक्षा नही करेगा। प्रजा का रजन वह अपना कतव्य समझता है।

विदुला इसके लिए उद्यत हो गई। वह पतञ्जलि की पणकुटी पर गई, और प्रणाम निवेदन के अनन्तर आचाय से बोली मेरी एक प्राथना है, आचाय !'

''साम्राज्ञी का मेरे लिए क्या आदेश है ?

''आदेश नही, प्राथना है, आचाय ! बुद्ध जयन्ती के पव को समारोह के

साथ मनाने की अनुमति प्रदान कर जो कृपा आपने की है, उसस मगध की जनता बहुत सतुष्ट है। यह सही है कि मगध के सब निवासी भगवान तथागत के अष्टांगिक आय माग के अनुयायी नहीं हैं पर सब कोई हृत्य स उनका आदर करते हैं। आयभूमि म सब धर्मों सम्प्रदायों तथा पाषण्डो को पूण स्वतन्त्रता प्राप्त है और जनता सबका समान रूप स सम्मान करती है। वैशाख पूर्णिमा बौद्धा का सबस महत्त्वपूण पव है। एस अवसर पर बन्दियो को कारागार स बन्धनमुक्त कर देने की प्रथा बहुत प्राचीन है। क्या न उन बन्दियो को मुक्त कर दिया जाए जिनपर सम्राट देववर्मा की हत्या क षडयन्त्र म सम्मिलित होने का आरोप है। कारागार म रहते हुए उन्ह अनेक वष हो चुके है। राजप्रासाद म षडयन्त्र हुआ ही करते हैं आचाय! अनेक सरल व्यक्ति उनके प्रभाव म आ जाते हैं और क्षणिक आवेश म आकर जघन्य अपराध कर बठते है। बाद म वे अपने कृत्य के लिए पश्चात्ताप करने लगते हैं। इन बन्दियो के बन्धनमुक्त हो जाने से जनता बहुत सतोष अनुभव करेगी। आज मागध साम्राज्य म सवत्र शान्ति है। सेनानी के रहते हुए किसम साहस है जो आयभूमि को आक्रान्त कर सके।

विदुषी की बात सुनकर पतञ्जलि गम्भीर हो गए। कुछ देर तक चुप रहकर उन्होंने कहा इस बात का निणय तो मन्त्रिपरिषद् द्वारा ही किया जा सकता है।

मैं एक प्राथना लेकर आपकी सेवा म उपस्थित हुई हू आचाय! आपकी कृपा स कितने ही स्थविर श्रमण और भिक्षु फिर पाटलिपुत्र आ गए हैं। जनता इसस बहुत प्रसन्न है आचाय। उसे अब फिर त्रिपिटक के पवित्र सूत्रों के श्रवण का अवसर प्राप्त हो गया है। क्षमा सबस सशक्त अस्त्र है आचाय! जिन लोगों ने पथभ्रष्ट होकर एक जघन्य माग का आश्रय ले लिया था उन्हें अपने कृत्य पर पश्चात्ताप है। क्षमा प्रदान कर उन्हे मौय शासनतन्त्र का सहयोगी एव अनुचर बना लेना क्या उचित नहीं होगा आचाय! मैंने यह भी सुना है कि क्षमा प्रदान करना मागध सम्राटो का विशेषाधिकार होता है। मैं मद्र जनपद की रहनेवाली हूँ। मगध की शासन परम्पराओं म मेरा विशेष परिचय नहीं है। पर मुझे ज्ञात हुआ है कि मगध के राजा विशेष अवसरों पर अपने विशेषाधिकार का प्रयोग कर

अपराधियों को क्षमा करते रहे हैं।"

"सम्राट वृहद्रथ को अपने विशेषाधिकार को प्रयुक्त करने में क्या कोई बाधा है ?'

'मैं इन बातों को क्या जानूं, आचार्य ! मैं तो आपके चरणों में एक प्रार्थना लेकर उपस्थित हुई हूँ। सम्राट कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहते, जो आपको अभिमत न हो।

"जो बात सम्राट के अधिकार में है उसमें मैं कैसे बाधा डाल सकता हूँ।'

"यदि सम्राट वृहद्रथ ने अपने विशेषाधिकार का प्रयोग कर बंदियों को क्षमा कर दिया तो आप रुष्ट तो न होंगे आचार्य !

'इसमें मेरे रोष का क्या प्रश्न है। यह बात सम्राट के स्वविवेक की जो है।

आचार्य के चरणों का स्पर्श कर विदुला अन्त पुर को वापस लौट गई। निपुणक वहाँ उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। विदुला की बात सुनकर वह प्रफुल्लित हो गया। प्रसन्न होकर उसने कहा तो फिर देर किस बात की है। वृहद्रथ की दन्तमुद्रा तो आपके पास है न ? मैं राजशासन लिखवा देता हूं। आप उसे दन्तमुद्रा से मुद्रित कर दीजिए।

सम्राट के राजशासन से वे सब बन्दी बन्धनमुक्त कर दिए गए स्थविरों के षडयन्त्र में सम्मिलित होने के अपराध में जो कारागार में अपने दिन बिता रहे थे। राजशासन द्वारा निपुणक को भी क्षमा प्रदान कर दी गई थी। उसने मल्लाह का वेश उतार फेंका और बुधगुप्त आदि बंदियों का साथ ले पाटलिपुत्र के प्रमुख पथचत्वर की ओर प्रस्थान कर दिया। लोगों की एक भीड़ उसके साथ हो गई। उसने उच्च स्वर से कहा—सम्राट वृहद्रथ की जय हो, साम्राज्ञी विदुला की जय हो। जयजयकार को सुनकर बहुत से लोगों ने उसे घेर लिया। उन्हें सम्बोधन करते हुए निपुणक ने कहा 'आज कैसा हर्ष का दिन है, जो पाटलिपुत्र के राजप्रासाद से सब बन्दियों को बन्धनमुक्त कर दिया गया है। सम्राट वृहद्रथ को अपनी प्रजा के सुख का कितना ध्यान है। यह सम्राट की ही कृपा है जो आप इस साल बुद्धजयन्ती को समारोह के साथ मनाने के लिए तत्पर हैं। बोलो, भाइयो सम्राट

बृहद्रथ की जय ! साम्राज्ञी विदुला की जय ! अनेक श्रमण और भिक्षु भी इस समय पथ चत्वर पर आ गए थे। उन्होंने जय जयकार में निपुणक का साथ दिया। राजमार्गों से होती हुई यह मण्डली कुक्कुट विहार की ओर आगे बढती गई। कितने ही नर-नारी भी उसके साथ होते गए। जब तक वे कुक्कुट विहार के ध्वंसावशेषों के समीप पहुँचे हजारों लोगों की भीड उनके साथ हो गई थी। राजा अशोक द्वारा बनवाए हुए विशाल स्तूप के पास पहुँचकर निपुणक एक ऊँचे प्रस्तर खण्ड पर चढ गया और भीड को सम्बोधन कर उसने कहना प्रारम्भ किया "भाइयो, बुद्धजयन्ती के पुण्य पर्व मे अब केवल चार दिन शेष रह गए है। सम्राट् बृहद्रथ की कृपा से आप इस अवसर पर एक बार फिर सत्शास्ता का श्रवण कीजिए पवित्र स्तूप की प्रदक्षिणा कीजिए, स्थविरो के प्रवचनो को सुनिए और चैत्यो की पूजा कीजिए। मगध मे आज फिर सबको धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त है, सब कोई अपने विश्वासो के अनुसार धर्म का आचरण कर सकते हैं। भगवान तथागत की मध्यमा प्रतिपदा मे आप सबकी अगाध आस्था है। राजा अशोक के प्रयत्न से आज न केवल मागध साम्राज्य मे अपितु उसके प्रयत्नो से और उनसे भी परे जो यवनो के अनेक राज्य हैं, उन सबमे भगवान् के अष्टांगिक आर्यमार्ग का अनुसरण हो रहा है। हम सबके लिए यह कितने गौरव की बात है। सम्राट बृहद्रथ अशोक द्वारा निर्दिष्ट मार्ग के अनुसरण मे तत्पर हैं। सब मिलकर बोलो—सम्राट बृहद्रथ की जय साम्राज्ञी विदुला की जय !"
सम्राट और साम्राज्ञी के जय जयकार से सम्पूर्ण आकाश गूंज उठा।

पुलकित होकर निपुणक ने फिर कहना प्रारम्भ किया, "आज देश देशान्तर मे सर्वत्र सद्धर्म का प्रचार है। आर्यभूमि के धर्म सभ्यता और संस्कृति का यह कैसा अनुपम साम्राज्य है जो आज हिन्दूकुश पर्वतमाला से भी परे विस्तीर्ण है। कितने ही यवन, पवथ बाल्हीक पार्थव और शक आज भगवान् तथागत द्वारा प्रतिपादित मध्यमा प्रतिपदा को स्वीकार कर भिक्षुव्रत ग्रहण कर चुके हैं। वे भी बुद्ध जयन्ती के इस पुण्य पर्व के समारोह मे सम्मिलित होने के लिए पाटलिपुत्र पधार रहे हैं। कुक्कुट विहार आज नही रहा है, तो क्या हुआ ? हम सब उनका स्वागत करने के लिए तैयार हैं। उनका स्थान हमारे हृदयो मे है। उनके निवास, भोजन तथा सुख

सुविधा की समुचित व्यवस्था करना हमारा कर्तव्य है। सौभाग्य से हमारे बीच में मौर्य सचिव बुधगुप्त भी उपस्थित हैं। आप सब उन्हें भलीभाँति जानते हैं। चिरकाल तक वह मागध साम्राज्य के आन्तवंशिक पद पर रहे हैं। उन्होंने सब अभ्यागतों के आतिथ्य का भार स्वीकार कर लिया है। पर यह न भूलिए, कि सम्राट् बृहद्रथ और साम्राज्ञी विदुला की कृपा से ही आज यह अवसर उपस्थित हुआ है जबकि बुद्ध जयन्ती का यह पुण्य पर्व एक बार फिर आप इतने समारोह के साथ मना सकेंगे। इसलिए भाइयो बोलो, सम्राट् बृहद्रथ की जय, साम्राज्ञी विदुला की जय ! सम्राट् और साम्राज्ञी के जय जयकार से एक बार फिर दिग्दिगन्त गूँज उठे। पाटलिपुत्र में ऐसे लोगों की कोई कमी नहीं थी जिनकी बौद्ध धर्म के प्रति श्रद्धा थी और कुक्कुट विहार के विध्वंस से जो अत्यन्त उद्विग्न थे। निपुणक के भाषण को सुनकर उनमें उत्साह और आशा का संचार हो गया। श्रेष्ठी भवरूप आगे बढ़े और उन्होंने निपुणक से कहा 'कुक्कुट विहार के पुनर्निर्माण के लिए जो भी धन अपेक्षित हो मैं उसे प्रदान करने को उद्यत हूँ। आप आज ही कार्य प्रारम्भ करा दीजिए। वैशाख पूर्णिमा के शुभ दिन नये कुक्कुट विहार का शिलान्यास हो जाए तो कितना अच्छा हो। यह सुनकर निपुणक की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं रहा। उसने उच्च स्वर से कहा, सुनो भाइयो ! आर्यभूमि में आज भी अनाथपिण्डक जैसे सद्गृहस्थ विद्यमान हैं। कभी कोटि-कोटि सुवर्ण मुद्राएँ व्यय कर अनाथ पिण्डक ने भगवान तथागत के लिए जेतवन का उद्यान प्राप्त किया था। श्रेष्ठी भवरूप ने आज उनके मार्ग का अनुसरण करने का संकल्प प्रगट किया है। कुक्कुट विहार का पुनर्निर्माण करने के लिए जो भी धन चाहिए भवरूप उसे प्रदान करने को तैयार हैं। बुद्ध जयन्ती के दिन पाटलिपुत्र के इस नये विहार का शिलान्यास भी किया जाएगा। बोलो, भाइयो भगवान तथागत की जय ! श्रेष्ठी भवरूप की जय !

पाटलिपुत्र में बुद्धपूर्णिमा का पर्व एक बार फिर बड़ी धूमधाम के साथ मनाया गया। कुक्कुट विहार इस समय नहीं रहा था पर अशोक द्वारा बनवाया हुआ विशाल स्तूप अब भी विद्यमान था। उसके समीप बहुत-से पट मण्डप लगा दिए गए और सुदूर जनपदों से आए हुए सहस्रों श्रद्धालु

लोग उनमे रहने लगे। स्थविरो श्रमणों और भिक्षुओं की बहुत-सी मण्डलियाँ फिर पाटलिपुत्र के राजमार्गों पथ चत्वरा तथा पण्यवीथियाँ म घूमती हुई दिखाई देने लगी। इनम बहुत से विदेशी व्यक्ति भी थे। उन्होंने भी काषाय वस्त्र धारण किए हुए थे। यवन शक पार्थिव और वाल्हीक आदि जातिया के स्थविरा और श्रमणा को पाटलिपुत्र के नर-नारी घेर लेते और उन्ह देखकर जोर-जोर से कहते—बुद्ध शरण गच्छामि धम शरण गच्छामि। लोग अपनी आँखो से राजा अशोक द्वारा स्थापित धमविजय के परिणाम को प्रत्यक्ष रूप से देखकर गव अनुभव कर रहे थे। वे बातचीत करते हुए कहते— कौन कहता है कि यवन विदेशी हैं। हममे और उनम भेद ही क्या है। देश जाति और रग के भेद मिथ्या हैं। भगवान बुद्ध के अष्टांगिक आय माग को अपनाकर य भी आय ही बन गए हैं। इन बाता को सुनकर एक नागरिक न कहा— इन विदेशी श्रमणा से हम सावधान रहना चाहिए भाई ! कहीं यवनराज मिनेन्द्र के गूढपुरुष न हो। यवन लोग कितनी बार भारत भूमि को आक्रान्त कर चुके है। सेनानी पुष्यमित्र की सन्य शक्ति के सम्मुख अपने को असहाय पाकर अब उन्हाने कूटनीति का आश्रय लिया है। इस बात से कुछ लोग क्रुद्ध हो गए। एक नागरिक न आवश म आकर कहा— तुम्ह तो सब जगह शत्रुओ की दुरभिसन्धि ही नजर आती है। मरी एक यवन स्थविर से बात हुई थी। वह बताते थे कि यवन राज्या मे सवत्र सघाराम विद्यमान हैं। उनम सहस्रा भिक्षु निवास करते है यवन नर-नारी श्रद्धापूवक त्रिपिटक के सूत्रा का श्रवण करते हैं और चैत्या की वहाँ सवत्र पूजा होती है। उन्ह यह सब देखकर आश्चय होता है कि यहाँ मगध म भगवान् तथागत के प्रति वैसी श्रद्धा नही रही है, जसी कि यवन राज्या मे है। यवनराज मिनेन्द्र ने सद्धम की दीक्षा ले ली है। उनका सब समय आचाय नागसेन के साथ व्यतीत होता है वह धमचर्चा म ही दिन रात लगे रहते हैं। तुम व्यथ म छाया से डर रहे हो। यवनो के आक्रमण की आशका सवथा निमूल है। इस पर एक अन्य नागरिक ने कहा— भाई, चुप भी रहो। दीवारो के भी कान होते हैं। पथ चत्वर पर खडे होकर एसी बातें न करो। यहाँ सेनानी के गूढपुरुषो न सुन लिया, तो जन्म भर के लिए कारागार म बन्द कर दिए जाओगे।'

वुद्ध पूर्णिमा का पव जिस ढग से पाटलिपुत्र म मनाया जा रहा था, उसके समाचार सुनकर पुष्यमित्र तुरन्त आचाय पतञ्जलि की पणकुटी पर गए और प्रणाम निवेदन के अनन्तर उन्होने कहा—यह मैं क्या सुन रहा हूँ, आचाय !'

मुझे सब कुछ ज्ञात है वत्स ! तुम कोई चिन्ता न करो। जब फोडा पक जाता है, तभी उस पर शल्य क्रिया की जाती है। कुशल चिकित्सक कच्चे फोडे को नही छेडा करते।

निपुणक के कुचक्र के कारण कितने ही विदशी गूढपुरुष इस समय स्थविरो श्रमणा और भिक्षुओं के वश म पाटलिपुत्र आ गए हैं। विदुला का सहारा पाकर राजप्रासाद भी शत्रुओं के गूढपुरुषो स परिपूण हो गया है। मोग्गलान ने शाकल नगरी मे रहते हुए जिस षडयन्त्र का सूत्रपात किया था, वह सफल होता हुआ प्रतीत होता है। हम कब तक इसे सहते रहगे। वृहद्रथ ने अपनी दन्तमुद्रा से मुद्रित राजशासन जारी कर मौय शासनतन्त्र के सब शत्रुओं को बन्धनमुक्त कर दिया है। यह सब एक आसन्न विपत्ति का परिचायक है आचाय ! क्या हम इस सबको चुपचाप देखत रह सकत हैं ?

'हम अभी प्रतीक्षा करनी होगी वत्स ! बुद्ध जयन्ती के उत्सव को सकुशल समाप्त हो लेने दो। जनता की भावनाओं को ठेस न पहुँचाओ।

पर पाटलिपुत्र की जनता एक वार फिर स्थविरों के प्रभाव मे आ गई है उन स्थविरो के जो आयभूमि के शत्रु हैं जो मिनेन्द्र के साथ मिलकर मध्यदेश पर आक्रमण करने के लिए तयारी म सलग्न हैं। बुद्ध जयन्ती का यह समारोह उन्ही के षड्यन्त्र का परिणाम है।

यह सही है, वत्स ! पर हमे धैय से काम लेना होगा। मागध साम्राज्य की सम्पूण सना को पाटलिपुत्र बुला लो अपनी सन्यशक्ति का यहाँ प्रदशन करो।'

'यह किस लिए आचाय ! सीमान्तों से सना को पाटलिपुत्र बुला लेना क्या निरापद होगा ?

वृक्ष की जड को सींचा जाता है वत्स ! शाखाओ और पत्तो को नहीं। मागध साम्राज्य की जड पाटलिपुत्र है। स्थविरो के कुचक्र के कारण

'कुक्कुट विहार के पट मण्डपो मे आग किस प्रकार लगी थी ?' सेनानी न प्रश्न किया।

'दो यात्री सन्देह म बन्दी बनाए गए हैं। वे सदिग्ध अवस्था मे काशी की दिशा म चले जा रह थे।

वे कहा हैं ?

वीरवर्मा क ताली वजाते ही एक गुल्मपति उन दोनो को अपने साथ ले आया। उन्ह देखकर पुष्यमित्र ने उनसे पूछा— तुम कौन हा और कहाँ के निवासी हो ?'

'हम सवथा निरपराध है, सेनानी ! बुद्ध जयन्ती के समाराह म सम्मिलित होन के लिए पाटलिपुत्र आए थे। हम कुछ नही जानत।' एक व्यक्ति ने हाथ जोडकर कहा।

मैं पूछता हूँ, तुम्हारे नाम क्या हैं, और तुम कहा के रहन वाले हो ?

'मरा नाम सारसक है, सनानी ! वाराणसी का निवासी हूँ, और वहा लोहकार का काय करता हूँ। मेरा यह साथी भी वही का रहन वाला है, और इसका नाम वज्रमुख है। वहाँ यह पक्वमासिक का व्यवसाय करता है।'

'तुम कब पाटलिपुत्र आए थे ?

कोई दो दिन हुए सेनानी !

यहाँ कहाँ ठहर थे ?'

यात्रियो के लिए जो अनक पट-मण्डप पाटलिपुत्र के नागरिका द्वारा बनवाए गए थे उन्ही म स एक म हमने भी डेरा जमा लिया था सेनानी ! दो दिन यहाँ बडे सुख स बिताए। स्थविरा और श्रमणो के प्रवचना का श्रवण करत रहे, और देवदशन कर पुण्यलाभ प्राप्त किया। पर हम निधन कमकर हैं, सेनानी ! यहाँ कब तक ठहर सकते थे ? श्रम ही हमारी आजीविका का आधार है। जा थोडे से कार्षापण साथ लेकर आए थे व समाप्त हो गए थे। अब यही चिन्ता थी कि शीघ्र से शीघ्र वाराणसी वापस लौट जाए और फिर स अपना काय प्रारम्भ कर दें।

ता तुम्हे बन्दी क्या बना लिया गया ?'

'यह हम क्या जानें, सेनानी ! हमन आग नही लगाई, हम सवथा

निरपराध हैं।

उनकी बात सुनकर गुल्मपति चण्डसेन ने कहा— क्षमा करें, सेनानी! लातों के भूत बातों से नहीं माना करते। मुझे आदेश दीजिए, मैं इनसे सच्ची बात उगलवा देता हूँ।

पुष्यमित्र की अनुमति प्राप्त कर चण्डसेन उन्हें बाहर ले गया। दण्ड का आघात प्रारम्भ होते ही वज्रमुख ने हाथ जोड़कर कहा— मैं कोई बात नहीं छिपाऊँगा, नायक! सब कुछ सच सच बता दूँगा। मुझे मारिए नहीं।'

गुल्मपति वज्रमुख को साथ लेकर पुष्यमित्र के सम्मुख उपस्थित हुआ, और पैर से वज्रमुख पर आघात कर जोर से बोला— बोल तुझे क्या कहना है?

'मैं बहुत गरीब आदमी हूँ सेनानी! धन के लालच में आ गया और यह कुकर्म कर बैठा।

यह काम तुमसे किसने करवाया? किसने तुम्हें धन का लालच दिया?'

मैं उसका नाम नहीं जानता सेनानी! जब हम स्तूप की प्रदक्षिणा कर रहे थे, तो एक स्थूलकाय आदमी ने इशारे से हमें बुलाया और एकान्त में ले जाकर हमारा नाम धाम पूछने लगा। हमारा परिचय प्राप्त कर उसने कहा—बुद्ध जयन्ती के पर्व का वास्तविक पुण्य तुमने अभी प्राप्त नहीं किया। चलो मेरे साथ चलो तुम्हें जाग्रत देवता के दर्शन करा दूँ। वह हमें एक पट मण्डप में ले गया जहाँ कुछ तापस बैठे हुए थे। उन्होंने हमारी हस्त रेखाएँ देखीं और गणना करके कहा—तुम्हारा भविष्य बहुत उज्ज्वल है शीघ्र ही भगवती लक्ष्मी की तुम पर कृपा होने वाली है। अब तुम्हें न लोह कार का कर्म करने की आवश्यकता रहेगी, और न माँस पकाकर बेचने की। वाराणसी में तुम्हारे महल खड़े हो जाएँगे और दासियाँ तुम्हारी सेवा किया करेंगी। हमने कहा—महाराज! हमारे ऐसे भाग्य कहाँ? इस पर उन्होंने कहा—लक्ष्मी बड़ी चञ्चला होती है, श्रावक! अब वह तुम पर अनुरक्त है। पर तुम्हें एक काम करना होगा। स्तूप के पास वह जो छोटा-सा पट-मण्डप है। चुपचाप वहाँ चले जाओ कोई तुम्हें देखे नहीं। यह चूर्ण ले

जाओ, और इसे वहाँ छिडक देना। पट मण्डप के दक्षिणी कोने म लक्ष्मी की एक मूर्ति रखी है, दीप जलाकर उसकी आरती उतारना। भगवती लक्ष्मी तुमसे प्रसन्न हो जाएँगी, और धन सम्पत्ति की तुम्ह कोई कमी नही रहेगी। लालच बहुत बुरी चीज होती है, सेनानी! हमने वही किया, जो करने को तापस ने हमसे कहा था। हमे क्या मालूम था कि जो चूण हम तापस ने दिया था वह अग्निचूर्ण था। आरती के लिए दीप जलाते ही उस चूण मे आग लग गई और सारा पट मण्डप जल उठा। देखते-देखते कुक्कुट विहार के सब पट मण्डप भस्म हो गए। हम तो व्यथ मे मारे गए सेनानी! हमे एक कार्षापण भी नही मिला, और इस सकट में फँस गए।'

"क्या तुम सच कह रहे हो?" आतवशिक वीरवर्मा ने प्रश्न किया।

'हम गरीब आदमी हैं लालच म फँसकर यह कुकृत्य हमस हो गया।

वीरवर्मा के इशारे पर गुल्मपति वज्रमुख उन्ह फिर बाहर ले गया और दण्ड उठाकर गरजते हुए उसने कहा— 'तुम ऐसे नही मानोगे। सच बताओ, तुमने किसके कहने पर आग लगाई और तुम कौन हो?' दण्ड के आघात को सारसक नही सह सका। उसने हाथ जोडकर कहा— मैं मर जाऊँगा नायक! मेरे बाल-बच्चे है उन्हे कौन पालेगा? मैं शाकल का निवासी हूँ। स्थविर कश्यप के आदेश से पाटलिपुत्र आया था। उन्होने ही मुझे आग लगाने के लिए कहा था। मेरा यह साथी भी शाकल का ही रहनेवाला है। वहाँ हम गूढपुरुष का काय करते है।

सत्रियो के किस वग से तुम्हारा सम्बन्ध हैं?'

'तीक्ष्ण वग के साथ नायक!

'कश्यप ने तुम्हे क्या कहकर यहाँ भेजा था?

"उन्होने हमस कहा था, मगध का शासनतन्त्र सद्धम से विमुख हो गया है। सेनानी के आदेश स कुक्कुट विहार का ध्वस किया जा चुका है। वह सद्धम के शत्रु है। मगध मे फिर स भगवान् तथागत के अष्टाङ्गिक आय माग को स्थापित करना है। अब भी वहाँ बहुत स ऐसे लोग हैं जो सद्धम के प्रति आस्था रखत है। पट मण्डपो म आग लगते ही पाटलिपुत्र म उपद्रव प्रारम्भ हो जाएगा। तीथ यात्रियो के भेस मे जो बहुत-से तीक्ष्ण सत्री बुद्ध जयन्ती के उत्सव म सम्मिलित होने के लिए यहाँ आए हुए हैं वे लूटमार

शुरू कर देंगे और सर्वत्र अव्यवस्था मच जाएगी। हमें क्षमा करें, नायक! मैंने सब सच सच बता दिया है।'

सारसक और वज्रमुख को कारागार भेज दिया गया। आन्तवंशिक वीरवर्मा को पुष्यमित्र ने आदेश दिया— जो भी स्थविर, श्रमण और भिक्षु इस समय अन्य जनपदों से पाटलिपुत्र आए हुए हैं, सबको बन्दी बना लो। कोई भी यहाँ से जाने न पाए।

'इह पुष्यमित्रं याजयामः'

वीरवर्मा के चले जाने पर आचार्य पतञ्जलि ने पुष्यमित्र से कहा— सीमान्तों की सेनाओं को पाटलिपुत्र आने का आदेश भेजा जा चुका है न?

हाँ आचार्य! नर्मदा के तट पर हमारा जो अन्तपाल दुर्ग है, उसके दुर्गपति वीरसेन पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान कर चुके हैं। विदर्भ की सेना भी माधवसेन के नेतृत्व में चम्बल नदी को पार कर चुकी है। पर अहिच्छत्र, इन्द्रप्रस्थ और कुरु देश में हमारी जो सेनाएँ हैं, उन्हें यहाँ आने का आदेश नहीं दिया गया है। मिनेन्द्र के आक्रमण की आशंका अभी दूर नहीं हुई है। यवन सेना का प्रतिरोध करने के लिए उत्तर पश्चिमी सीमान्त पर हमारी सेनाओं का रहना आवश्यक है।

विदिशा और विदर्भ से जो सेनाएँ आ रही हैं, उनमें कितने सैनिक हैं?

साठ सहस्र के लगभग, आचार्य!

यहाँ पाटलिपुत्र में जो आन्तवंशिक सेना है, उसमें सैनिकों की कितनी संख्या है?

दस सहस्र।

विदर्भ और स्मार्ण जनपदों की सेनाएँ कब तक पाटलिपुत्र पहुँच जाएँगी?

एक मास का अन्त होने से पूर्व ही, आचार्य!

"ठीक है, आषाढ़ कृष्णा पञ्चमी के दिन पाटलिपुत्र में सैन्यशक्ति का विशाल प्रदर्शन किया जाएगा। राजप्रासाद के दक्षिण में जो विशाल उद्यान है, उसमें नया स्कन्धावार स्थापित करने की व्यवस्था कर दो। पदाति अश्वारोही रथी और गजारोही—चारों प्रकार के सैनिकों के निवास के लिए पृथक्-पृथक् प्रबन्ध किया जाए। एक नया आयुधागार भी वहाँ बनवा दो, जिसमें सब प्रकार के अस्त्र, शस्त्र और अन्य युद्ध सामग्री प्रचुर परिमाण में संचित रहे। हाँ, हमारी सैन्यशक्ति में नौसेना का भी स्थान है। हिमिरका नौकाओं को भी गंगा के तट पर एकत्र कर दिया जाए।"

'आपकी आज्ञा शिरोधार्य है आचार्य! पर यह सब किस लिए। पाटलिपुत्र पर किसी बाह्य आक्रमण की अभी कोई आशंका नहीं है। यवन सेना का सामना करने के लिए कुरुक्षेत्र, इन्द्रप्रस्थ और अहिच्छत्र में हमारी सेनाएँ तैयार हैं ही।"

हमें आभ्यन्तर शत्रु का भय है। बाह्य शत्रु की हमें कोई परवाह नहीं है। कश्यप और मोग्गलान के नेतृत्व में आर्यभूमि के विरुद्ध जिस कुचक्र का सूत्रपात किया जा रहा है उसका कुछ आभास तुम्हें मिल ही चुका है। यह एक अत्यन्त व्यापक तथा गम्भीर षड्यन्त्र है वत्स! स्थविरों की यह योजना है कि मिनेन्द्र की यवन सेनाएँ जब मध्यदेश पर आक्रमण करें तो मगध में विद्रोह हो जाए और बौद्ध धर्म के अनुयायी पाटलिपुत्र के शासन तन्त्र के विरुद्ध उठ खड़े हों। वे धर्म के नाम पर जनता में विद्वेष की अग्नि को प्रदीप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं। [illegible] इस षड्यन्त्र में सम्मिलित है। विदुला को इसी प्रयोजन से शाकल से पाटलिपुत्र भेजा गया था ताकि वह बृहद्रथ को अपने प्रभाव में ले आए और उसे हमारे विरुद्ध कर दे। स्थविरों की यह योजना सफल भी हो गई है। बुद्ध पूर्णिमा के अवसर पर पाटलिपुत्र में जो उपद्रव हुए वे इसी योजना के परिणाम थे। हमें बृहद्रथ को राजसिंहासन से च्युत करना होगा।

पर इसके लिए सैन्यशक्ति के प्रयोग की क्या आवश्यकता है आचार्य! गत वर्षों में कितने ही मौर्य कुमार राजसिंहासन पर आरूढ़ हुए और पदच्युत भी कर दिए गए। मौर्य राजकुल के लिए तो यह अत्यन्त साधारण बात है।'

'हम अब मौर्य कुल का ही अंत करना है वत्स ! मौर्यों में कोई भी ऐसा कुमार नहीं है जिसे कूटस्थानीय बनाकर मगध के शासनतंत्र में शक्ति का संचार किया जा सके। चिरकाल तक राजशक्ति और धन-सम्पत्ति का भोग कर मौर्यकुल सर्वथा अकर्मण्य तथा निर्वीर्य हो गया है। मैं इस प्रश्न पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर चुका हूँ। मैंने यही निर्णय किया है कि पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर किसी ऐसे व्यक्ति को आसीन कराया जाए जो वस्तुत सशक्त हो और जिसके नेतृत्व में आर्यभूमि की शत्रुओं से रक्षा की जा सके। मेरी दृष्टि में ऐसे व्यक्ति केवल तुम हो। पाटलिपुत्र के राजसिंहासन को तुम्हें ही संभालना होगा वत्स ! इसी में मगध और आर्यभूमि का कल्याण है। राजकुल में इस ढंग से परिवर्तन मगध की शासन परम्परा के सर्वथा अनुकूल है।

'पर मैं अब युवक नहीं रहा हूँ आचार्य ! मेरा पौत्र वसुमित्र तक किशोर हो गया है। इस आयु में राज्य का भार संभाल सकना मेरे लिए सुगम नहीं होगा। एक बात और भी है। मैं राजकुल का नहीं हूँ। ब्राह्मण वंश में उत्पन्न व्यक्ति को मगध की जनता राजा के रूप में स्वीकार नहीं करेगी।'

"यह सब सोचना तुम्हारा काम नहीं है वत्स ! जनता द्वारा राजा का वरण किया जाना आर्य जनपदों की प्राचीन परम्परा है। मन्त्री अमात्य पुरोहित पौर जनपद और ग्रामणी परिषद् में एकत्र होते हैं, और राजा का वरण किया करते है। मगध में चिरकाल से इस प्रथा का पालन नहीं किया गया। कितने ही वीर पुरुषों ने शक्ति का प्रयोग कर पाटलिपुत्र का राजसिंहासन प्राप्त किया और उनके वंशज तब तक राजा के पद पर रहे जब तक कि उनमें शक्ति थी। चन्द्रगुप्त मौर्य भी अपने शौर्य और साहस के कारण ही मगध का सम्राट् बना था। पर उसके वंशज अब पूर्णतया क्लीव हो गए हैं। उनमें स्वयं तो शक्ति है ही नहीं। यही कारण है जो वे दूसरों के कुचक्र में फँस जाते हैं। मौर्य कुल में कोई भी ऐसा कुमार नहीं है जो शासनतंत्र को संभाल सके। यवनों के आक्रमण से आर्यभूमि की रक्षा तभी सम्भव है जब पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर कोई ऐसा व्यक्ति आरूढ़ हो जो चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार के समान प्रतापी शूर और साहसी हो। तुम में ये सब गुण विद्यमान है। प्राचीन आर्य परम्परा का अनुसरण कर मैं परिषद

का अधिवेशन बुलाऊँगा। मगध के सब मन्त्री, अमात्य, पुरोहित, पौर, जानपद और ग्रामणी उसमे आमन्त्रित किए जाएँगे। यदि उन्हे राजा के पद के लिए तुम्हे वरण करना स्वीकार हो तब तो तुम्हे कोई विप्रतिपत्ति नही होनी चाहिए। मगध के राजसिंहासन पर तो कितने ही जघन्यज तथा शूद्रप्राय व्यक्ति भी आसीन हो चुके हैं। तुम तो ब्राह्मण कुल मे उत्पन्न हुए हो। राजसूय यज्ञ द्वारा ही कोई व्यक्ति राजा का पद प्राप्त करने का अधिकारी होता है। तुम्हारे राजसिंहासन पर आसीन होने के समय जो राजसूय यज्ञ होगा उसका पौरोहित्य मैं स्वय करूँगा।

'आपके सम्मुख मैं क्या कह सकता हूँ आचार्य !'

पर बृहद्रथ को पदच्युत कर सकना सुगम नही होगा वत्स ! मगध मे बहुत-से नर नारी मौर्य कुल के प्रति अनुरक्त हैं। पाटलिपुत्र के कितने ही श्रेष्ठिया सदेहका और शिल्पियो ने मौर्य राजाओ का अनुग्रह प्राप्त कर अपार धन-सम्पदा एकत्र की है। मौर्य वश के अन्त से ये उद्वेग अनुभव करेंगे। फिर साम्प्रदायिक समस्या का भी हमे सामना करना होगा। मोग्गलान और कश्यप के सत्री और गूढपुरुष मगध मे सर्वत्र छाए हुए हैं। वे जनता को हमारे विरुद्ध उकसा रहे हैं। उनका कहना है कि हम बौद्ध-धर्म के शत्रु हैं। कुक्कुट विहार के विध्वस की दुहाई देकर वे लोगो को भड़काने मे तत्पर हैं। सर्वत्र साम्प्रदायिक विद्वेष की अग्नि सुलगनी प्रारम्भ हो गई है। बृहद्रथ भगवान् तथागत का अनुयायी है अत बौद्ध लोग समझते हैं कि उनका राजसिंहासन पर आसीन रहना सद्धर्म के उत्कर्ष के लिए आवश्यक है। आर्य भूमि की रक्षा का उन्हे जरा भी ध्यान नही है। यवनराज मिनेन्द्र को भी वे अपने धर्म का सरक्षक मानते है। मुझे भय है कि बृहद्रथ को राज्यच्युत करते समय पाटलिपुत्र मे कोई नया उपद्रव न खडा हो जाए। मिनेन्द्र इसी अवसर की प्रतीक्षा कर रहा है। मगध मे विद्रोह होते ही वह मध्यदेश पर आक्रमण कर देगा। सैन्य शक्ति के प्रदर्शन का जो निश्चय मैंने किया है उसका यही कारण है। वाहीक, कुरु तथा पाञ्चाल मे तुम्हारी जो सेनाए है वे तो पर्याप्त है न '

हाँ आचार्य ! वहाँ हमारे एक लाख से भी अधिक सनिक विद्यमान हैं।

'क्यों न अग्निमित्र को ही इस पद पर नियुक्त किया जाए? वह कुशल सेनानी है और सेनाओं का उसे अच्छा अनुभव है। उसके नेतृत्व में वहाँ की सेना में नवीन उत्साह का संचार हो जाएगा।'

'परन्तु विदिशा में अग्निमित्र की उपस्थिति आवश्यक है, आचार्य! विदर्भ की स्थिति से मैं पूर्णतया आश्वस्त नहीं हूँ। कुछ ही समय हुआ जब यज्ञसेन ने वहाँ अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने का प्रयत्न किया था। उसने वहाँ के शासक माधवसेन को बन्दी बना लिया था और पाटलिपुत्र के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था। दक्षिण की सेनाएँ पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान कर चुकी हैं। यज्ञसेन युधगुप्त का सम्बन्धी है और उसकी पत्नी रुक्मिणी उसे हमारे विरुद्ध उकसाती रहती है। दक्षिणी सीमान्त की रक्षा का भी हमें ध्यान रखना है। यदि अग्निमित्र विदिशा में रहेगा तो विदर्भ से हम निश्चिन्त रह सकेंगे।'

'ठीक है। अग्निमित्र को विदिशा में ही रहने दो। किसी अन्य सेनापति को कुम्भज भेज देना।'

ज्येष्ठ कृष्णा पंचमी से पूर्व ही दक्षिणापथ की सेनाएँ पाटलिपुत्र पहुँच गईं। राजप्रासाद के दक्षिण में मागध साम्राज्य की सैन्य शक्ति का प्रदर्शन किया गया। बृहद्रथ इस समारोह में सम्मिलित होने के लिए निमंत्रित था। जब वह सेना का निरीक्षण कर रहा था, अकस्मात् उस पर आक्रमण कर दिया गया और उसे बन्दी बना लिया गया। पाटलिपुत्र की प्राचीर पर तत्काल कुछ तूयकर प्रकट हुए और तुरही-नाद के उन्होंने उद्घोषित किया—'बृहद्रथ को शासनच्युत कर दिया गया है। मन्त्रिपरिषद् का निर्णय है कि सेनानी पुष्यमित्र को राजा के पद पर अभिषिक्त किया जाए। मगध के अमात्य, पौर, जानपद, पुरोहित और ग्रामणी शीघ्र परिषद में एकत्र होंगे और मन्त्रियों के निर्णय पर विचार विमर्श करेंगे। यदि परिषद् ने मन्त्रियों के निर्णय को स्वीकार कर लिया तो सेनानी के राज्याभिषेक का समारोह सम्पन्न किया जाएगा। बोलो, नागरिको! सेनानी पुष्यमित्र की जय! आचार्य पतञ्जलि की जय!'

तूयकरों के घोष को सुनकर जनता ने भी पुष्यमित्र और पतञ्जलि का जय जयकार किया। मौग्गलान और कश्यप के सत्री और गूढ़पुरुष इससे

स्तब्ध रह गए। सैन्यशक्ति के सम्मुख वे पूर्णतया असहाय थे। आतवशिक वीरवर्मा के सैनिक राजप्रासाद में गए और उन्होंने विदुला उसकी सखिया तथा साथियों को भी बन्दी बना लिया।

मगध की परिषद् ने मन्त्रियों के निर्णय का उत्साह के साथ समर्थन किया। यह निश्चय किया गया, कि आषाढ के प्रथम दिन सेनानी पुष्यमित्र को राजा के पद पर अभिषिक्त करने के लिए राजसूय यज्ञ का अनुष्ठान किया जाए। इसके लिए जिस जिस सम्भार की आवश्यकता थी उसे तुरत एकत्र करने का आदेश दे दिया गया। चिर काल से मगध में ऐसे राजाओं का शासन था वैदिक धर्म तथा याज्ञिक कर्मकाण्ड में जिनकी आस्था नहीं थी। अनेक मागध राजा जन्म से क्षत्रिय न होकर 'जघन्यज' या 'शूद्रप्राय' तक थे। वे 'मूर्धाभिषिक्त' नहीं थे और बल या कूटनीति का अनुसरण करके ही उन्होंने राजसिंहासन प्राप्त किये थे। मौर्य वंश के राजा भी शुद्ध क्षत्रिय न होकर 'व्रात्य' या 'वृषल' थे। अशोक सदृश मौर्य राजाओं ने बौद्ध धर्म को अपना लिया था और राजा सम्प्रति ने जैन धर्म को। मगध के ये राजकुल वैदिक विधि विधानों को विशेष महत्त्व नहीं देते थे। इसीलिए उनके राज्याभिषेक के समय राजसूय तथा वाजपेय यज्ञों का विधिवत अनुष्ठान नहीं किया गया था। प्राचीन परम्परा के अनुसार उनका अभिषेक अवश्य किया जाता था, और प्रजा के पालन की प्रतिज्ञा भी उनसे कराई जाती थी। पर राज्याभिषेक के समय की गई प्रतिज्ञा का पालन करने पर प्रजा उन्हें दण्ड नहीं दे पाती थी और वे मनमाने ढंग से शासनतन्त्र का सचालन किया करते थे। प्रतिज्ञादुर्बल बृहद्रथ को राजसिंहासन से च्युत कर मगध की परिषद ने जब सेनानी पुष्यमित्र को राजा के पद पर अभिषिक्त करने का निर्णय किया तो आचार्य पतञ्जलि ने यह निश्चय किया कि उसे राजसूय यज्ञ द्वारा राजा बनाया जाए और राज्याभिषेक की वैदिक विधि का अविकल रूप से अनुसरण किया जाए।

राजसूय यज्ञ पाटलिपुत्र के लिए एक नई बात थी। वहाँ के लोग इसे देखने के लिए उत्सुक थे। पतञ्जलि की पर्णकुटी के प्राङ्गण में एक विशाल मण्डप का निर्माण किया गया, और शास्त्रीय विधि से यज्ञवेदी बनाई गई। विधिवत अग्नि का आधान करने के अनन्तर पुष्यमित्र से कहा गया कि वह

पुरोहित मन्त्री, अमात्य सेनापति सूत राजमहिषी, ग्रामणी आदि प्रमुख व्यक्तियो को 'हवि प्रदान करे। हवि द्वारा उनके प्रति सम्मान प्रगट करते हुए पुष्यमित्र ने कहा— मैं आपके लिए ही अभिषिक्त हो रहा हूँ, और आपको अपना अनुगामी बनाता हू। इसके पश्चात देवताओ की पूजा की गई। सत्य की प्रसूति के लिए सविता को गाहपत्य गुणा के लिए अग्नि को वनस्पतियो तथा धन धान्य की वद्धि के लिए सोम को, वाक्शक्ति के विकास के लिए बृहस्पति को गोधन तथा अन्य पशुओ की रक्षा के लिए पशुपति रुद्र को सबसे श्रेष्ठ हाकर रह सकने की याग्यता के लिए इन्द्र को सत्य के लिए मित्र को और धर्मपति बनने के लिए वरुण को हवि प्रदान की गई। यह हवि यव व्रीहि आदि अन्नो द्वारा तयार की गई थी। हवि प्रदान के पश्चात जलो द्वारा पुष्यमित्र का अभिषेक किया गया। ये जल सरस्वती गगा यमुना आदि नदिया विविध जलाशयो कुओ समुद्र और वर्षा से प्राप्त किए गए थे। विविध जलो से अभिषेक के अनन्तर पुष्यमित्र को उष्णीष आदि वस्त्र धारण कराए गए और धनुष तथा तीन बाण उसके हाथ म देकर यह कहा गया कि पृथिवी अन्तरिक्ष तथा द्यौ —इन तीनो लोगो की रक्षा करना तुम्हारा कतव्य है। अभिषेक की विधि सम्पन्न हो जाने पर पुष्यमित्र स प्रजापालन की यह शपथ ग्रहण कराई गई— जिस रात्रि म मेरा जन्म हुआ और जिसम मेरी मृत्यु होगी उनके बीच मे जो भी शुभकर्म मैंने किए हो वे सब नष्ट हो जाए और मैं सब सुकृतो आयु और पूजा स वञ्चित हो जाऊँ यदि मैं किसी भी प्रकार स प्रजा के विरुद्ध विद्रोह करूँ।

प्रजा पालन की शपथ ग्रहण करने के पश्चात पुष्यमित्र को एक आसन्दी पर बिठाया गया और उस सम्बोधन करते हुए आचाय पतञ्जलि ने कहा— तुम यन्ता (सचालक) और यमन (नियामक) हो तुम अपने पद पर ध्रुव होकर रहो। तुम्हे राजा का पद इस प्रयोजन स दिया गया है कि तुम द्वारा देश म कृषि की वद्धि हो प्रजा का योगक्षेम सम्पन्न हो धन-सम्पन्न निरन्तर बनी रहे और सब कोई सुखी तथा समृद्ध हो। इसके पश्चात पुष्यमित्र की पीठ पर दण्ड द्वारा धीरे आघात किया गया ताकि वह भी यह भलीभाँति समझ ले कि वह भी दण्ड स ऊपर नहा है प्रतिज्ञा पालन

म प्रमाद करने पर उसे भी दण्ड दिया जा सकता है। राजसूय की विधि के सम्पन्न हो जाने पर पतञ्जलि ने एकत्र जनता को सम्बोधन करते हुए कहा—"पुष्यमित्र ने अब राजा का पद प्राप्त कर लिया है। इस विधि द्वारा वह अब महान् हो गया है। पृथिवी अब उससे भय खाती है। पर वह भी भय खाता है कि कहीं पृथिवी (जनता) उसे पदच्युत करके उसका अनादर न कर दे। वह अब जनता के साथ मैत्री सम्बन्ध स्थापित करके रहेगा, क्योंकि न माता पुत्र की हिंसा करती है, और न पुत्र माता की।" अन्त में पुष्यमित्र ने यह प्रार्थना की— हे पृथिवी! तू मेरी माता है। न तू मेरी हिंसा कर और न मैं तेरी हिंसा करूँ।'

राजसूय यज्ञ की प्राचीन वैदिक विधि अब सम्पन्न हो गई थी। प्रजा ने पुष्यमित्र का राजा के रूप में वरण कर लिया था और वह पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आरूढ हो गए थे। यज्ञ सभा के विसर्जन से पूर्व आचार्य पतञ्जलि अपने आसन से उठकर खड़े हुए और सभासद वर्ग को सम्बोधन करते हुए उन्होंने कहा—

'मगध का यह अहोभाग्य है जो पुष्यमित्र जैसा वीर, साहसी और सुयोग्य पुरुषसिंह उसके राजसिंहासन पर आरूढ हुआ है। राज्य में राजा की स्थिति कूटस्थानीय होती है। यदि राजा उत्थानशील और कर्मठ हो तो मन्त्री अमात्य, सेनापति आदि सब राजकर्मचारी भी उत्थानशील हो अपने-अपने कर्तव्यों के पालन में तत्पर रहते हैं। पर यदि राजा प्रमादी हो जाए, तो राजपुरुष भी प्रमाद करने लगते हैं। राजा का जो शील हो, वही शील प्रजा का भी हो जाता है। भीष्म ने ठीक कहा था, कि काल राजा का निर्माण नहीं करता अपितु राजा द्वारा ही काल का निर्माण किया जाता है। इसीलिए ऐसे व्यक्ति को ही राजा के पद पर होना चाहिए, जिसकी बुद्धि तीक्ष्ण हो प्रतिभा और शौर्य की जिसमें अतिशयता हो, और काम, क्रोध मोह लोभ तथा चापल्य पर जिसने काबू पाया हुआ हो। यह आवश्यक है कि राजा प्रज्ञा और उत्साह के गुणों से सम्पन्न हो। मौर्य कुल के राजा सर्वथा अकर्मण्य और निर्वीर्य हो गए थे। चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार के आदर्शों को उन्होंने भुला दिया था। बाह्य और आभ्यन्तर शत्रुओं से देश की रक्षा करने के अपने प्रधान कर्तव्य की भी उन्होंने उपेक्षा करना प्रारम्भ कर दिया

था। यही कारण था जो यवनराज दिमित्र भारतभूमि को आक्रान्त करता हुआ साकेत नगरी तक चला आ सका था। मुझे विश्वास है कि पुष्यमित्र के नेतृत्व में मगध के शासनतन्त्र में नई शक्ति और स्फूर्ति का संचार होगा और यवन लोग हमारी आर्य भूमि की ओर आँख उठाकर भी नहीं देख सकेंगे। हम सब धर्मों सम्प्रदायों और पाषण्डों का आदर करते हैं। शासन तन्त्र किसी के धर्म में हस्तक्षेप नहीं करता। सब कोई अपने विचारों और विश्वासों के अनुसार पूजा पाठ कर सकते हैं। आर्यों की यही सनातन परम्परा है। ब्राह्मणों और श्रमणों में विरोध व विद्वेष का कोई समुचित कारण नहीं है। पर यदि किसी सम्प्रदाय के नेता और गुरु अपनी धार्मिक मर्यादा का अतिक्रमण कर विदेशी शत्रुओं के साथ मिल जाएं और आर्यभूमि के विरुद्ध षड्यन्त्र करने में तत्पर हो जाएँ तो उनके इस कुकृत्य को शासन कैसे सह सकता है। भारत हम सबकी मातृभूमि है हम सब इसके पुत्र हैं। इसकी रक्षा करना और इसके उत्कर्ष के लिए प्रयत्नशील रहना हम सबका पुनीत कर्तव्य है। मेरा आशीर्वाद है कि पुष्यमित्र के नेतृत्व में हमारी इस पुण्य भूमि का हित एवं कल्याण सम्पादित हो।

पुष्यमित्र और पतञ्जलि के जय-जयकार के साथ राजसूय यज्ञ की समाप्ति हुई और पाटलिपुत्र की जनता में नई आशा तथा उत्साह का संचार हो गया।

बृहद्रथ की पाटलिपुत्र से विदा

राजसूय यज्ञ के सकुशल सम्पन्न हो चुकने पर आचार्य पतञ्जलि ने मन्त्रिपरिषद की बैठक बुलाने का आदेश दिया। जब मन्त्री सभाभवन में एकत्र हो गए तो उन्हें सम्बोधन करते हुए आचार्य ने कहा— आर्यों की यह प्राचीन परम्परा है कि राजसूय जैसे यज्ञों के कुशलपूर्वक सम्पन्न हो जाने पर बहुत से बन्दियों को कारागार से मुक्त किया जाए और अपराधियों को सर्वक्षमा प्रदान की जाए। सर्वक्षमा की यह परिपाटी बहुत उपयोगी है। क्योंकि इससे जनता संतोष और सुख अनुभव करती है। राजा के प्रति

उनका अनुराग बढ़ जाता है। मेरा प्रस्ताव है कि बृहद्रथ, विदुला और उनके साथियों को राजसूय के उपलक्ष में बन्धनमुक्त कर दिया जाए। इस विषय में आपके क्या विचार हैं?"

पतञ्जलि के प्रस्ताव को सुनकर आन्तवंशिक वीरवर्मा ने कहा—'यह सही है कि स्थविरों के कुचक्र का अब अन्त हो गया है और पुष्यमित्र जैसा वीर मगध के राजसिंहासन पर आरूढ़ है। पर हम अभी अपने को निरापद नहीं समझ सकते। जनता पर स्थविरों का प्रभाव अब भी विद्यमान है, और बहुत से स्थविरों और श्रमणों ने शाकल जाकर आश्रय ग्रहण कर लिया है। मद्रक जनपद में यवनों का विशाल स्कन्धावार स्थापित है और यवनराज मिनन्द्र वहाँ अपनी शक्ति के सचय में तत्पर है। मगध में ऐसे लोगों की भी कमी नहीं है जो मौर्य कुल के प्रति अनुरक्त हैं। बृहद्रथ का पक्ष लेकर ये नया उपद्रव खड़ा कर सकते हैं। विदुला औशनस नीति के प्रयोग में अत्यन्त प्रवीण है। वह जनता को नये शासनतन्त्र के विरुद्ध उकसा सकती है। इस दशा में बृहद्रथ और उसके साथियों को बन्धनमुक्त कर देना समुचित नहीं होगा। शत्रुओं का मूलोच्छेद करके ही राज्य निरापद हो सकते हैं।

सन्निधाता शिवगुप्त ने भी वीरवर्मा के विचार का समर्थन किया। उसने कहा—

'मगध के इतिहास में यह पहला अवसर है, जब कि राज परिवर्तन के समय पुराने राजकुल का मूलोच्छेद नहीं किया गया। बार्हद्रथ वंश के राजा रिपुञ्जय की हत्या करके ही उसके अमात्य पुलिक ने राजशक्ति प्राप्त की थी। पुलिक के वंशज बालक के विरुद्ध विद्रोह कर जब श्रेणिय बिम्बिसार ने राजसिंहासन पर अधिकार किया, तो उसने भी बालक को मौत के घाट उतार दिया था। शिशुनाग और महापद्म नन्द ने भी अपने पूर्ववर्ती राजाओं का मूलोच्छेद करके ही राजशक्ति प्राप्त की थी। जब चन्द्रगुप्त मौर्य ने मगध के राजसिंहासन को अधिगत किया, तो उसने भी नन्द वंश का विनाश कर देना ही उचित समझा था। चाहिए तो यह था कि बृहद्रथ जैसे निर्वीर्य राजा को भी जीवित न रहने दिया जाए क्योंकि मगध में ऐसे लोग पर्याप्त संख्या में विद्यमान हैं जो मौर्य राजकुल के प्रति अनुरक्त हैं। स्थविरों के कुचक्रों का भी अभी पूर्णतया अन्त नहीं हुआ है। वे बृहद्रथ को फिर से

पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आरूढ़ कराने का प्रयत्न कर सकते हैं। इस दशा में उसे बन्धनमुक्त कर देना कभी भी वाञ्छनीय नहीं है। नीतिकारों के इस कथन को हम भुलाना नहीं चाहिए कि बाम्बी में बैठे हुए सांप से भी भय बना रहता है। सांप को खुला छोड़ देना तो कभी भी उचित नहीं है। अन्य मन्त्रियों ने भी प्रस्तुत प्रश्न पर अपने-अपने विचार प्रगट किए। उन्हें सुनकर पतञ्जलि ने कहा— आपके मन में जो आशङ्काएँ हैं उन्हें निराधार नहीं कहा जा सकता। पर आप यह न भूलिए कि डेढ़ सदी के लगभग तक मगध पर मौर्यों का शासन रहा है। जनता के हृदय में इस राजकुल के प्रति सम्मान का भाव विकसित हो गया है इस तथ्य की हम कैसे उपेक्षा कर सकते हैं। लोग चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार जैसे प्रतापी मौर्य राजाओं की वीर गाथाओं का गौरव के साथ स्मरण करते हैं और अशोक तथा सम्प्रति की नीति से भारतीय धर्म तथा संस्कृति का विभिन्न देशों में जिस ढंग से प्रचार हुआ है, उससे गर्व अनुभव करते हैं। मौर्य वंश के कुछ राजा चाहे कितने ही अकर्मण्य व निर्वीर्य क्यों न रहे हों पर जनता उनके प्रति आदर की भावना रखती है। पाटलिपुत्र में बहुत से ऐसे परिवार विद्यमान हैं मौर्यों के सम्पर्क तथा कृपा के कारण जिन्हें बहुत लाभ हुआ है। हम इनकी भी सद्भावना प्राप्त करनी है। बृहद्रथ को बन्धन में रखे रखने से लाभ ही क्या है? वह इतना अशक्त तथा क्लीव है कि नये शासनतन्त्र के विरुद्ध वह कोई पग उठा ही नहीं सकता। राज्य के शासन में क्षमा का भी महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। बृहद्रथ और उसके साथियों को बन्धनमुक्त कर देने से प्रजा को सन्तोष होगा। उसकी सद्भावना को प्राप्त करने में इससे हमें सहायता मिलेगी।

मन्त्रिपरिषद् ने बहुमत से आचार्य पतञ्जलि के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। आन्तर्वंशिक वीरवर्मा राजप्रासाद के बन्धनागार में गए और राजकीय मुद्रा से अंकित राजशासन को दिखाकर उन्होंने बृहद्रथ से कहा— 'अब आप बन्धनमुक्त हैं सम्राट्! राजमहिषी विदुला और मौर्यसचिव बुधगुप्त को भी कारागार से छोड़ दिए जाने का आदेश प्रचारित किया जा चुका है। कहिए अब आप कहाँ जाना चाहेंगे? आपकी यात्रा की सब व्यवस्था कर दी जाएगी।

बन्धनमुक्ति के समाचार से बृहद्रथ स्तब्ध रह गए। मन्दस्मित के साथ उन्होंने कहा— पतञ्जलि का यह कौन-सा नया कुचक्र है, वीरवर्मा! उस बुड्ढे से मुझे बहुत डर लगता है। वह कोई नई चाल चल रहा होगा। विदुला से विचार विमर्श करके ही मैं कोई निर्णय करूँगा।

राजमहिषी भी यही पधार रही हैं। साम्राज्ञी के चरणों में वीरवर्मा सम्मानपूर्वक प्रणाम निवेदन करता है।

'क्या हम अभी कुछ समय राजप्रासाद में ही निवास कर सकते हैं?' विदुला ने प्रश्न किया।

'अब आप बन्धनमुक्त है, राजमहिषी? जहाँ चाहे रहें, जहाँ चाहें जाएँ।' वीरवर्मा ने उत्तर दिया।

बृहद्रथ का साथ लेकर विदुला राजप्रासाद के एक एकान्त कक्ष में चली गई।। बुधगुप्त को भी वहाँ बुला लिया गया। कुछ देर सोचकर विदुला ने कहा— मागध साम्राज्य में कहीं भी रहना हमारे लिए निरापद नहीं होगा। क्या न हम किसी सुदूर प्रदेश में चले जाएँ?"

मुझे कहीं भी ले चलो, विदुला! किसी ऐसे स्थान पर चले चलो, जहाँ इस बुड्ढे की छाया तक भी न हो। क्या नाम है उसका? हाँ, याद आ गया पतञ्जलि। उसकी आँखें कैसी तेज है। एक निगाह में मन की सब बातें जान लेता है। उससे मुझे डर लगता है।

क्या न हम शाकल नगरी चले चलें। वहाँ के गणमुख्य सोमदेव अवश्य हमारा स्वागत करेंगे। स्थविर कश्यप तो वहाँ हैं ही। मोग्गलान और निपुणक भी वहाँ पहुँच रहे हैं। क्या न हम कोशल जाकर उनसे परामर्श करें? मगध की जनता के हृदय में मौर्यकुल के प्रति अगाध सम्मान भाव विद्यमान है। शाकल पहुँचते ही हम घोषणा कर देंगे कि सम्राट बृहद्रथ अब भी मागध साम्राज्य के स्वामी हैं। उनके आदेश से अब पाटलिपुत्र के स्थान पर शाकल नगरी को मागध साम्राज्य की राजधानी बना दिया गया है। भविष्य में शासन का सञ्चालन शाकल से ही किया जाएगा। मध्यदेश के लाखों नर-नारी भगवान् तथागत द्वारा प्रतिपादित अष्टाङ्गिक आर्य मार्ग के अनुयायी हैं। सम्राट तथा चातुरन्त संघ के आह्वान पर वे पुष्यमित्र के विरुद्ध उठ खड़े होंगे। यवन तो हमारा साथ देंगे ही। उनकी शक्ति **अभी**

पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आरूढ कराने का प्रयत्न कर सकते हैं। इस दशा मे उसे बन्धनमुक्त कर देना कभी भी वाञ्छनीय नहीं है। नीतिकारो के इस कथन को हमे भुलाना नहीं चाहिए कि बाम्बी मे बैठे हुए सर्प से भी भय बना रहता है। सर्प को खुला छोड देना तो कभी भी उचित नहीं है। अन्य मन्त्रियो ने भी प्रस्तुत प्रश्न पर अपने अपने विचार प्रगट किए। उन्हे सुनकर पतञ्जलि ने कहा—'आपके मन मे जो आशङ्काएँ है, उन्हे निराधार नही कहा जा सकता। पर आप यह न भूलिए कि डेढ सदी के लगभग तक मगध पर मौर्यों का शासन रहा है। जनता के हृदय मे इस राजकुल के प्रति सम्मान का भाव विकसित हो गया है इस तथ्य की हम कैसे उपेक्षा कर सकते हैं। लोग चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार जैसे प्रतापी मौर्य राजाओ की वीर गाथाओ का गौरव के साथ स्मरण करते हैं और अशोक तथा सम्प्रति की नीति से भारतीय धर्म तथा संस्कृति का विभिन्न देशो मे जिस ढग से प्रचार हुआ है उससे गर्व अनुभव करते हैं। मौर्य वश के कुछ राजा चाहे कितने ही अकर्मण्य व निर्वीर्य क्यो न रहे हो, पर जनता उनके प्रति आदर की भावना रखती है। पाटलिपुत्र मे बहुत से ऐसे परिवार विद्यमान हैं, मौर्यों के सम्पर्क तथा कृपा के कारण जिन्हें बहुत लाभ हुआ है। हम इनकी भी सदभावना प्राप्त करनी है। बृहद्रथ को बन्धन मे रख रखने से लाभ ही क्या है? वह इतना अशक्त तथा क्लीव है, कि नये शासनतन्त्र के विरुद्ध वह कोई पग उठा ही नहीं सकता। राज्य के शासन मे क्षमा का भी महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। बृहद्रथ और उसके साथियो को बन्धनमुक्त कर देने से प्रजा को सन्तोष होगा। उसकी सदभावना को प्राप्त करने मे इससे हमे सहायता मिलेगी।

मन्त्रिपरिषद् ने बहुमत से आचार्य पतञ्जलि के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। अग्निवर्शिष वीरवर्मा राजप्रासाद के बन्धनागार मे गए और राजकीय मुद्रा से अकित राजशासन को दिखाकर उन्होंने बृहद्रथ से कहा—अब आप बन्धनमुक्त हैं सम्राट! राजमहिषी विदुला और मौर्यसचिव बुधगुप्त को भी कारागार से छोड दिए जाने का आदेश प्रचारित किया जा चुका है। कहिए अब आप कहाँ जाना चाहते? आपकी यात्रा की सब व्यवस्था कर दी जाएगी।

बंधनमुक्ति के समाचार से वृहद्रथ स्तब्ध रह गए। मंदस्मित के साथ उन्होंने कहा—'पतञ्जलि का यह कौन-सा नया कुचक्र है, वीरवर्मा ! उस बुड्ढे से मुझे बहुत डर लगता है। वह कोई नई चाल चल रहा होगा। विदुला से विचार विमर्श करके ही मैं कोई निर्णय करूँगा।'

'राजमहिषी भी यही पधार रही हैं। साम्राज्ञी के चरणों में वीरवर्मा सम्मानपूर्वक प्रणाम निवेदन करता है।'

'क्या हम अभी कुछ समय राजप्रासाद में ही निवास कर सकते हैं ?' विदुला ने प्रश्न किया।

'अब आप बंधनमुक्त हैं राजमहिषी ? जहाँ चाहें रहें, जहाँ चाहें जाएँ।' वीरवर्मा ने उत्तर दिया।

वृहद्रथ का साथ लेकर विदुला राजप्रासाद के एक एकांत कक्ष में चली गई।। बुधगुप्त को भी वहाँ बुला लिया गया। कुछ देर सोचकर विदुला ने कहा— मागध साम्राज्य में कहीं भी रहना हमारे लिए निरापद नहीं होगा। क्या न हम किसी सुदूर प्रदेश में चले जाएँ ?"

'मुझे कहीं भी ले चलो विदुला ! किसी ऐसे स्थान पर चले चलो, जहाँ इस बुड्ढे की छाया तक भी न हो। क्या नाम है उसका ? हाँ, याद आ गया पतञ्जलि। उसकी आँखें कैसी तेज हैं। एक निगाह में मन की सब बातें जान लेता है। उससे मुझे डर लगता है।'

क्या न हम शाकल नगरी चले चलें। वहाँ के गणमुख्य सोमदेव अवश्य हमारा स्वागत करेंगे। स्थविर कश्यप तो वहाँ हैं ही। मोग्गलान और निपुणक भी वहाँ पहुँच रहे हैं। क्या न हम कोशल जाकर उनसे परामर्श करें ? मगध की जनता के हृदय में मौर्यकुल के प्रति अगाध सम्मान भाव विद्यमान है। शाकल पहुँचते ही हम घोषणा कर देंगे कि सम्राट बृहद्रथ अब भी मागध साम्राज्य के स्वामी हैं। उनके आदेश से अब पाटलिपुत्र के स्थान पर शाकल नगरी को मागध साम्राज्य की राजधानी बना दिया गया है। भविष्य में शासन का सञ्चालन शाकल से ही किया जाएगा। मध्यदेश के लाखों नर-नारी भगवान तथागत द्वारा प्रतिपादित अष्टाङ्गिक आर्य मार्ग के अनुयायी हैं। सम्राट तथा चातुरन्त संघ के आह्वान पर वे पुष्यमित्र के विरुद्ध उठ खड़े होंगे। यवन तो हमारा साथ देंगे ही। उनकी शक्ति अभी

नष्ट नही हुई है। बुधगुप्त ने कहा।

पर मैं शाकल नही जाना चाहती सचिव। पितृचरण को धोखा देकर वहाँ से चली आई थी। पता नही उन्होने मुझे क्षमा किया है या नही। विदुला ने कहा।

बृहद्रथ अब तक चुप बैठ थे। विदुला की बात सुनकर उन्होने कहा—'अरे भाई मुझ राजपाट नही चाहिए। राज्य के झगडो मे पडने से क्या लाभ? मोग्गलान ठीक ही कहा करते थे—ससार का सब सुख वभव मिथ्या है। भगवान तथागत म ध्यान लगाओ। यह जो विदुला है न वह भगवान ही का तो रूप है। उसम ध्यान लगाकर जीवन के शेष दिन शान्ति स काट दूगा। तुम मेरे साथ रहती रहो विदुला। मुझ और कुछ नही चाहिए। किसी ऐसे प्रदेश मे चले चलो जहाँ पाटलिपुत्र के कोई भी समाचार न मिलें और जहाँ इस पतञ्जलि का नाम तक भी न सुनाई दे। तुम किसी ऐस स्थान को जानते हो बुधगुप्त।

सुदूर दक्षिण म एक प्रदेश है जिसे सौराष्ट्र कहते हैं। मागध साम्राज्य क सीमान्त स परे समुद्र के तट पर यह स्थित है। भगवान् तथागत का धर्मानुशासन वहाँ भलीभाँति विद्यमान है और धन धान्य स भी वह प्रदेश परिपूर्ण है।

वहाँ शासन किसका है?

यवनराज दिमित्र ने उस प्रदेश को जीतकर अपने अधीन कर लिया था। दिमित्र तो अब इस लोक म नही रहे। पर उनके वशजो ने वहाँ अनेक छोटे-छोटे राज्य स्थापित कर लिए हैं। व अवश्य हमारा स्वागत करेंगे। जब उन्हे ज्ञात होगा कि विशाल मागध साम्राज्य क प्रतापी सम्राट उनके राज्य म पधारे हैं तो व अत्यन्त प्रसन्न होगे। यवन लोग बड महत्वाकाक्षी हैं सम्राट। आपके नाम पर व मध्यदेश पर आक्रमण कर देंगे और पुष्यमित्र का पराभव कर आपको पाटलिपुत्र क राजसिहासन पर आसीन करा देंगे।

तुम फिर राजपाट की बात करन लग बुधगुप्त। मुझ अब इन झगडो म नही पडना है। पर यदि पाटलिपुत्र म तो अब रहा ही नही जा सकता। चलो सौराष्ट्र ही चले चलो।

वुधगुप्त ने वहद्रथ के निणय की सूचना आन्तवशिक वीरवर्मा को दे दी। उनकी यात्रा की सब तयारी कर दी गई। पाटलिपुत्र और मगध को सदा के लिए नमस्कार कर मौय वश के पदच्युत सम्राट वहद्रथ न विदुता और वुधगुप्त के साथ दक्षिण पश्चिम की ओर प्रस्थान कर लिया। कई मास की निरतर यात्रा के अनतर वे वल्लभी नगरी पहुँच गए। जीवन क शेप दिन उन्होंने वहीं पर व्यतीत किए और उनके वशजा न वहा एक छोटा-सा राज्य स्थापित कर लिया जो कई सदियो तक कायम रहा।

अश्वमेध यज्ञ

शाकल नगरी के विशाल सघाराम के सुविस्तीर्ण प्राङ्गण मे खडे हुए स्थविर कश्यप उत्सुक्ता के साथ किसी के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनका मुखमण्डल आक्रोश से रक्तवण हो रहा था और उनके मस्तक पर चिन्ता की रेखाएँ उभरी हुई थी। कभी वह तेज कदमो से टहलने लगन और कभी पूव दिशा की ओर एकटक दृष्टि से देखने लगते। उन्ह अधिक दर प्रतीक्षा नही करनी पडी। सूर्यास्त स पूव ही दो अश्वारोही वहा प्रगट हुए और उन्होंने नतमस्तक हो स्थविर को प्रणाम किया। कश्यप उन्ह सघाराम के गुप्तगह मे ले गए और उद्वेग के साथ उन्होंने प्रश्न किया—

यह क्या हो गया, निपुणक ! पुष्यमित्र ने बहद्रथ को राज्यच्युत कर दिया और तुम देखत ही रह गए। तुम तो औशनस नीति म अपने को वहुत प्रवीण समझते थे।

मैं क्या करता, स्थविर ! यह पतञ्जलि अत्यन्त चतुर और धूत है। उसके सम्मुख मरी एक नहा चली। साम्राज्य की सब मेनाआ को उमन पाटलिपुत्र बुला लिया और सैन्यशक्ति का प्रदशन करते हुए वहद्रथ को बन्दी बना लिया। मना का सेनापतित्व पुष्यमित्र के हाथो म था ही, उसके सामने हम कर ही क्या सकत थे ? मैं वहुत लज्जित हू स्थविर !'

'बृहद्रथ अव कहाँ है ? क्या वह पाटलिपुत्र के कारागार मे बन्दी का जीवन व्यतीत कर रहा है ?

नष्ट नही हुई है। बुधगुप्त ने कहा।

'पर मैं शाक्ल नही जाना चाहती सचिव ! पितृचरण को धोखा देकर वहाँ से चली आई थी। पता नही उन्होने मुझे क्षमा किया है या नही। विदुला ने कहा।

बृहद्रथ अब तक चुप बैठे थे। विदुला की बात सुनकर उन्होने कहा—'अरे भाई मुझे राजपाट नही चाहिए। राज्य के झगडो मे पडने से क्या लाभ ? मोग्गलान ठीक ही कहा करते थे—संसार का सब सुख-वैभव मिथ्या है। भगवान तथागत मे ध्यान लगाओ। यह जो विदुला है न, वह भगवान ही का तो रूप है। उसमे ध्यान लगाकर जीवन के शेष दिन शान्ति से काट दूगा। तुम मेरे साथ रहती रहो विदुला ! मुझे और कुछ नही चाहिए। किसी ऐसे प्रदेश में चले चलो जहा पाटलिपुत्र के कोई भी समाचार न मिलें और जहाँ इस पतञ्जलि का नाम तक भी न सुनाई दे। तुम किसी ऐसे स्थान को जानते हो बुधगुप्त !

'सुदूर दक्षिण में एक प्रदेश है जिसे सौराष्ट्र कहते हैं। मागध साम्राज्य के सीमान्त से परे समुद्र के तट पर यह स्थित है। भगवान तथागत का धर्मानुशासन वहाँ भलीभाँति विद्यमान है और धन धान्य से भी वह प्रदेश परिपूर्ण है।'

'वहाँ शासन किसका है ?

'यवनराज दिमित्र ने उस प्रदेश को जीतकर अपने अधीन कर लिया था। दिमित्र तो अब इस लोक मे नही रहे। पर उनके वशजो ने वहाँ अनेक छोटे-छोटे राज्य स्थापित कर लिए हैं। वे अवश्य हमारा स्वागत करेंगे। जब उन्हे ज्ञात होगा कि विशाल मागध साम्राज्य के प्रतापी सम्राट उनके राज्य मे पधारे हैं, तो वे अत्यन्त प्रसन्न होंगे। यवन लोग बडे महत्त्वाकाक्षी है सम्राट ! आपके नाम पर वे मध्यदेश पर आक्रमण कर देंगे और पुष्यमित्र को परास्त कर आपको पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर आसीन करा देंगे।

तुम फिर राजपाट की बात करने लगे बुधगुप्त ! मुझे अब इन झगडो मे नहीं पडना है। पर यहा पाटलिपुत्र मे तो अब रहा ही नहीं जा सकता। चलो सौराष्ट्र ही चले चलो।

वुधगुप्त न वृहद्रथ के निणय की सूचना आन्तवशिक वीरखमा को द दी। उनकी यात्रा की सब तयारी कर दी गई। पाटलिपुत्र और मगध को सदा के लिए नमस्कार कर मौय वश के पदच्युत सम्राट् बहद्रथ न विदुला और वुधगुप्त के साथ दक्षिण-पश्चिम की ओर प्रस्थान कर दिया। कई मास का निरतर यात्रा के अनतर वे वलभी नगरी पहुँच गए। जीवन के शेष दिन उन्होने वही पर यतीत किए और उनके वशजा न वहाँ एक छोटा-सा राज्य स्थापित कर लिया जो कई सदियो तक कायम रहा।

अश्वमेध यज्ञ

शाकल नगरी के विशाल सघाराम के सुविस्तीर्ण प्राङ्गण मे खडे हुए स्थविर कश्यप उत्सुकता के साथ किसी के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनका मुखमण्डल आक्रोश से रक्तवण हो रहा था, और उनके मस्तक पर चिन्ता की रेखाएँ उभरी हुई थी। कभी वह तज कदमा मे टहलने लगते और कभी पूव दिशा की ओर एकटक दृष्टि से देखने लगते। उन्ह अधिक देर प्रतीक्षा नही करनी पडी। सूयास्त से पूव ही दो अश्वारोही वहा प्रगट हुए, और उन्होंने नतमस्तक हो स्थविर को प्रणाम किया। कश्यप उन्ह सघाराम के गुप्तगृह मे ले गए और उद्वेग के साथ उन्होंने प्रश्न किया—

'यह क्या हो गया निपुणक! पुष्यमित्र ने वृहद्रथ का राज्यच्युत कर दिया और तुम देखते ही रह गए। तुम तो औशनस नीति म अपने को बहुत प्रवीण समझते थे।

मैं क्या करता स्थविर! यह पतञ्जलि अत्यत चतुर और धूत है। उसके सम्मुख मेरी एक नही चली। साम्राज्य की सब सनाओ का उसन पाटलिपुत्र बुला लिया और सैन्यशक्ति का प्रदशन करते हुए बहद्रथ का बन्दी बना लिया। सना का सेनापतित्व पुष्यमित्र के हाथों म था ही, उनके सामने हम कर ही क्या सकते थे? मैं बहुत लज्जित हूँ स्थविर!'

वृहद्रथ अब कहाँ है? क्या वह पाटलिपुत्र के कारागार म बन्दी का जीवन व्यतीत कर रहा है?'

'नही स्थविर ! उसे पतञ्जलि ने बन्धनमुक्त कर दिया है। विदुला, बुधगुप्त और उनके सब साथी भी कारागार से छोड दिए गए हैं। पर अब वे सौराष्ट्र चले गए हैं और वहीं निवास करने लगे हैं। बुधगुप्त ने बहुत प्रयत्न किया कि सम्राट शाकल चले आएँ पर उन्होंने स्वीकार नही किया। वह राजपाट से विरक्त हो गए है।'

'और विदुला ? वह तो सद्धर्म के उत्कर्ष के प्रयोजन से ही पाटलिपुत्र गई थी।

'राजमहिषी भी सम्राट के साथ सौराष्ट्र में ही जा बसी हैं।'

'मोग्गलान के क्या समाचार है ?

'मुझे उनसे मिले बहुत समय हो गया है स्थविर ! श्रावस्ती के जेतवन विहार में उनके दर्शन किए थे। वह बहुत उद्विग्न थे। कहते थे शीघ्र ही शाकल आकर सघ-स्थविर से भेंट करेंगे।'

तुम्हारे सत्री और गूढपुरुष क्या कर रहे हैं ?

पाटलिपुत्र में उनका रह सकना अब सम्भव नही रहा है, स्थविर ! सर्वसाधारण लोग शक्ति के सम्मुख सिर झुका देते हैं। पुष्यमित्र की शक्ति के सामने सब अपने को असहाय अनुभव कर रहे है।

क्या सद्धर्म मध्यदेश से पूर्णतया लुप्त हो गया है ? स्थविरो और श्रमणों का क्या वहाँ कोई भी प्रभाव नही रहा है ? पुष्यमित्र और पतञ्जलि एक ऐसे मार्ग का अनुसरण करने में तत्पर है जो आदि में असत्य है मध्य में असत्य है और अन्त में असत्य है। क्या वे इस मिथ्या पाखण्ड को मध्य देश में फिर से स्थापित करने में समर्थ हो जाएँगे ? भगवान तथागत ने जहाँ जन्म लिया जहाँ उन्हें बोध हुआ और जहाँ उन्होंने निर्वाण पद प्राप्त किया उस पवित्र भूमि पर क्या अब ब्राह्मणों का आधिपत्य स्थापित हो जाएगा ?

लगता तो ऐसा ही है स्थविर !

श्रावस्ती काम्पिल्य और कौशाम्बी आदि के सघारामों में जो सहस्रों भिक्षु और श्रमण निवास कर रहे हैं क्या उनको अपने कर्तव्य का उन्हें जरा भी ध्यान नहीं है ?

शाकल आते हुए मार्ग में मैं अनेक सघारामों में गया था। स्थविरो और

श्रमणों से भी मैंने भेंट की थी। उन्हें पुष्यमित्र के शासन से कोई भी उद्वेग अनुभव नहीं होता। उनका कहना है कि मगध के नये शासनतन्त्र को सद्धर्म से कोई भी विरोध नहीं है। गृहस्थ लोग अब भी पहले के समान त्रिपिटक के सूत्रों का श्रवण करते हैं, देवदर्शन कर पुण्य लाभ प्राप्त करते हैं और चैत्यों की पूजा करते हैं। धर्म और पूजापाठ की सबको पूरी-पूरी स्वतन्त्रता है। मध्यदेश के स्थविर और भिक्षु सन्तुष्ट हैं, क्योंकि पुष्यमित्र उनके धार्मिक कार्यकलाप में कोई बाधा नहीं डालता।'

ये तो बहुत बुरे लक्षण हैं, निपुणक! क्या सद्धर्म में अब वह शक्ति नहीं रह गई है, जिससे मध्यदेश में भगवान तथागत के शासन को फिर से स्थापित किया जा सके ?

क्या कहूँ स्थविर! मगध और उसके साम्राज्य में आज सर्वत्र पुष्यमित्र और पतञ्जलि का जय जयकार हो रहा है। सर्वसाधारण जनता उदीयमान सूर्य की पूजा किया करती है, अस्तगामी सूर्य की नहीं। पाटलिपुत्र में अब अश्वमेध यज्ञ की तैयारी की जा रही है। उसका अनुष्ठान कर पुष्यमित्र सार्वभौम सम्राट का पद प्राप्त करने के लिए कटिबद्ध है। प्रजा इससे सन्तुष्ट है। लोग कहते हैं, चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार के दिन एक बार फिर वापस आ जाएंगे। हिन्दूकुश पर्वत तक फिर से मगध की विजयपताका फहराने लग जाएगी।'

अश्वमेध यज्ञ की विधि को मैं भलीभांति जानता हूँ। सद्धर्म के शत्रुओं की यह पुरानी परम्परा है। इसी का अनुष्ठान कर वे सार्वभौम और सम्राट का पद प्राप्त किया करते थे। अच्छा, यह बताओ, यज्ञीय अश्व की रक्षा के लिए जो सेना जाएगी, उसका सेनापति कौन होगा ?'

अग्निमित्र का पुत्र वसुमित्र।'

'वाहीक देश में जो बहुत से जनपद और गणराज्य हैं, क्या उन्हें पुष्यमित्र के विरुद्ध खड़ा नहीं किया जा सकता ? इन्हें अपनी स्वतन्त्रता बहुत प्रिय है। यज्ञीय अश्व जहाँ-जहाँ निर्विरोध रूप से चलता जाता है वे सब प्रदेश अश्वमेधयाजी राजा के अधीन मान लिए जाते हैं। अश्वमेध का अनुष्ठान करते हुए पुष्यमित्र द्वारा जो घोड़ा छोड़ा जाएगा, वह पश्चिम दिशा में अग्रसर होता हुआ वाहीक देश भी अवश्य ही जाएगा। यौधेय महाराज

कुणिन्द आदि गणराज्यों के प्रदेशों को पदाक्रान्त करता हुआ ही वह म जनपद पहुँच सकेगा। क्या तुम इस यज्ञीय अश्व की गति को अवरुद्ध क के लिए प्रयत्न नहीं कर सकते ? क्या ये गणराज्य फिर से मगध की अ नता स्वीकार कर लेंगे ?'

मैंने यौधेय और कुणिन्द गणों के कुलमुख्यों से बात की थी, स्थविर उनका कहना है कि अश्वमेध आर्य राज्यों की प्राचीन परम्परा के अनु है। अश्वमेधयाजी आर्य राजा किसी जनपद, गण या राज्य की स्वतन्त्र का अपहरण नहीं किया करते। वे उनका सहयोग तथा मैत्री प्राप्त करके सन्तोष अनुभव कर लेते हैं। मगध के अनेक पुराने राजाओं ने इस परम्प को त्याग कर अपने साम्राज्य के निर्माण का प्रयत्न किया था। जरास जिन जनपदों को अपनी अधीनता में ले आता था उनके राजकुलों का भ वह उच्छेद कर देता था। सहस्रों राजाओं, गणमुख्यों और राजपुरुषों क उसने अपने कारागार में बन्दी बना लिया था। इसी कारण अन्धक-वृष्णि संघ के संघमुख्य वासुदेव कृष्ण ने उसका संहार कराया था। मगधराज महा पद्मनन्द भी 'सर्वक्षत्रान्तक' था। पर कुरु, पाञ्चाल, कोशल आदि राज्य के महत्त्वाकांक्षी राजाओं ने सार्वभौम पद प्राप्त करने के लिए अन्य राजाओं व गणमुख्यों का उच्छेद नहीं किया था। जनमेजय, भीमसेन, श्रुत सेन, भरत आदि कितने ही प्राचीन आर्य राजाओं ने अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान कर चक्रवर्ती और सार्वभौम पद प्राप्त किये थे। इन राजाओं ने अन्य जनपदों से अपनी सार्वभौम सत्ता को स्वीकार कराया, पर उनकी स्वतन्त्र सत्ता का अन्त नहीं किया। वाहीक देश के जनपद समझते हैं कि पुष्यमित्र भी आर्य राजाओं की इसी प्राचीन परम्परा का अनुसरण कर रहा है। वे उससे कोई भय व उद्वेग अनुभव नहीं करते। उनका विचार है कि हिमालय से समुद्रपर्यन्त विस्तीर्ण इस भूमि में एक शक्तिशाली सार्वभौम शासन की स्थापना उनकी अपनी स्वतन्त्र एवं पृथक सत्ता की रक्षा के लिए भी उपयोगी है। यवनराज दिमित्र के महाक्रोध का उन्हें भलीभाँति स्मरण है। वे कहते हैं कि पुष्यमित्र के नेतृत्व में आर्य भूमि में जिस नई शक्ति का संचार हो रहा है उसके कारण उनकी अपनी स्वतन्त्रता भी सुरक्षित रह सकेगी। यज्ञीय अश्व की गति को अवरुद्ध करने का वह कोई प्रयत्न नहीं

करें स्थविर !'

'तो तुम भी पुष्यमित्र के प्रभाव मे आ गए हो। तुम्हारी औशनस नीति क्या सवथा पगु हो गई है ? कोई नई योजना वनाओ, निपुणक ! हाथ पर हाथ धर कर बठे रहना तुम्हे शोभा नही देता ।

'सक्ट की इस घडी म मिनेन्द्र ही सद्धम की रक्षा कर सकते हैं। भगवान् तथागत द्वारा प्रतिपादित मध्यमा प्रतिपदा म उनकी अगाध श्रद्धा है। सद्धम पर जो यह नया सक्ट उपस्थित हुआ है, उसके निवारण मे वह अवश्य हमारा साथ देंगे ।

हा तुम्हारा यह विचार सही है। मैं आज ही मिनेन्द्र से भेंट करूँगा।'

यवनराज मिनेन्द्र आचाय नागसन से धम्मपद का प्रवचन सुनने मे निमग्न थे। स्थविर कश्यप को आता देखकर वह आसन से उठकर खडे हो गए। सिर झुकाकर उन्होने कहा— आपने कसे कष्ट किया स्थविर !

सद्धम पर महान् सक्ट उपस्थित है यवनराज ! पुष्यमित्र पाटलिपुत्र के रार्जसिहामन पर आसीन हो गया है और अव वह अश्वमेघ यज्ञ के अनुष्ठान म तत्पर है।'

यह यज्ञ क्या होता है स्थविर !'

ब्राह्मण लोग कुण्ड म अग्नि का आधान कर देवताओ का आवाहन करत हैं और बलि प्रदान कर उन्हें सतुष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। इसी को व यन वहत हैं। उनके यन अनेक प्रकार के होते हैं। अश्वमेघ भी इनमे एक है। इस यन म अश्व की बलि दी जाती है, और ब्राह्मण यह मानते हैं कि इस यज्ञ का अनुष्ठान करके ही कोई राजा सावभौम चक्रवर्ती सम्राट का पद प्राप्त कर सकता है।

तो पुष्यमित्र अब चक्रवर्ती सम्राट् बनना चाहता है ?'

'हाँ, यवनराज ! उसकी आकाक्षा है कि सिन्धु नदी को पार कर कपिश-गान्धार पर फिर से अपना आधिपत्य स्थापित करे और हिन्दूकुश से परे वाल्हीक देश को भी अपनी अधीनता म ले आए। सद्धर्म का वह कट्टर शत्रु है। उसके कारण मध्यदेश के लोग अब भगवान तथागत के अष्टागिक आय माग स विमुख होत जा रहे हैं। स्थविरो श्रमणो और भिक्षुओ के लिए वहाँ रह सकना अब निरापद नही रह गया है। सद्धर्म अब केवल मद्र, गान्धार

और कपिश म ही शेप है। वह इनसे भी उसका अन्त कर दने के लिए कटि-बद्ध है।'

हमारे रहते हुए यह कदापि सम्भव नही होगा।'

इसीलिए तो मैं आपकी सेवा म उपस्थित हुआ हूँ यवनराज ! मैं समझता था कि विदुला और बृहद्रथ द्वारा सद्धम के उत्कप म सहायता मिलेगी। पर इस अनाय पुष्यमित्र ने उन्हे कारागार म डालकर राजसिंहासन पर अधिकार जमा लिया है।'

तो क्या तुरन्त मध्यदेश पर आक्रमण कर दिया जाए ? जो काय दिमित्र नही कर सका था उसे मैं सम्पन्न करूगा। यवन सेनाए एक बार फिर साकेत को आक्रान्त करेंगी और वहा से आगे बढकर पाटलिपुत्र तक पहुँच जाएगी। पुष्यमित्र हमारे सामने नही टिक सकगा।

इसकी आवश्यकता नही होगी यवनराज ! अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान करते हुए एक घोडा छोडा जाता है और उसके पीछे-पीछे एक सेना चला करती है। यदि कोई उस अश्व की गति को अवरुद्ध करे, तो सेना उससे युद्ध करती है। पुष्यमित्र का यज्ञीय अश्व पाटलिपुत्र से चल चुका है, और पश्चिम दिशा म तीव्र गति से आगे बढ रहा है। वाहीक देश के जनपदो में उसे रोकने का साहस नही है। शीघ्र ही वह मद्रक पहुच जाएगा।'

तो उसे शाकल आने दो। यहाँ हम उसे पकड लेंगे। देखें पुष्यमित्र की सेना उसे हमसे कैसे छुडा सकती है। हा, आप मद्रक जनपद के गणमुख्य सोमदेव से भी मिल लें। सद्धम के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा है। वह भी हमारी सहायता करेंगे।

स्थविर कश्यप ने गणमुख्य सोमदेव से भेंट की। स्थविर की बात सुन कर सोमदेव ने कहा 'हम सद्धम के अनुयायी हैं स्थविर ! उसकी रक्षा और उत्कप के लिए अपना सवस्व न्यौछावर कर सकते हैं। भगवान् तथागत के लिए आपने मेरी प्रिय पुत्री विदुला के प्रणय की बलि दे दी। उसके कष्ट का ध्यान कर मेरा मन सदा बेचैन रहता है। पर मुझे संतोष है कि वह सद्धम के लिए काम आ सकी। पर पुष्यमित्र के सैन्यबल का सामना कर सकना मद्रक लोगो की शक्ति म नही है। आपने ही तो हमे यह शिक्षा दी थी कि हिंसा का माग गर्ह्य और त्याज्य है और अहिंसा ससार का सबसे

प्रबल अस्त्र है। मद्रक म आज कोई सनिक है ही कहा, स्थविर !

तो क्या तुम यह चाहते हो कि मद्रक जनपद फिर मगध की अधीनता म आ जाए शाकल नगरी के सघाराम भी कुक्कुट विहार के समान पुष्यमित्र द्वारा ध्वस कर दिए जाएँ और इस पश्चिम चक्र से भी सद्धम का लोप हो जाए ?

नहीं, स्थविर !

'क्या धम है और क्या कतव्य है, इस तुम नही समझते। सद्धम पर इस समय जो घोर सकट उपस्थित है उसका सामना करने के लिए मद्रक लोगो को भी शक्ति का प्रयोग करना होगा।

'पर हम अपने बल अबल को भी तो दृष्टि मे रखना है स्थविर ! यवनराज मिनेद्र का स्कधावार शाकल नगरी म स्थापित है। हजारो यवन सनिक यहाँ निवास कर रहे हैं। उनके होते हुए हम अपनी रक्षा की क्या चिन्ता है ? पुष्यमित्र के यज्ञीय अश्व की गति को यवन सेना ही अवरुद्ध कर सकती है।'

मिनेद्र अपने कतव्य को भलीभांति समझते हैं। उनकी सेना पुष्यमित्र का सामना करने को उद्यत है। पर शौय की परम्परा का मद्रक लोगो म भी अभी अन्त नही हुआ है। सद्धम की रक्षा के लिए उन्हे भी अपने कतव्य का पालन करना चाहिए।

'आपका आदेश हम स्वीकार है, स्थविर ! कहिए मेरे लिए क्या आज्ञा है ?

'तो फिर चलो ! यवनराज तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। उनके सेनानायक भी वहाँ उपस्थित हैं। सद्धम के शत्रुओ का विनाश करने का यह उत्तम अवसर है।

गणमुख्य सोमदेव स्थविर कश्यप के साथ मिनेद्र के पास गए। यज्ञीय अश्व की गति को किस प्रकार अवरुद्ध किया जाए इस पर विचार विमश करते हुए सोमदेव ने कहा— पुष्यमित्र की सायशक्ति बहुत अधिक है। शाकल म उसका सामना नही किया जा सकता। सिन्धु नदी के तट पर अम्बुनिम नाम की जो पल्ली है उसी के घाट म सिन्धु नद का पार किया जाता है। यज्ञीय अश्व भी वहीं से सिन्धु को पार कर गन्धार म प्रवेश करेगा। क्या

न वहीं पर उसकी गति को अवरुद्ध करने का प्रयत्न किया जाए ? ज्यों ही यज्ञीय अश्व अम्बुलिम के घाट पर पहुँचे, उसे पकडकर सिन्धु के पार ले जाया जाए। उसे छुडाने के लिए पुष्यमित्र की सेना जब नदी को पार करने लगे तो डटकर उसका मुकाबला किया जाए। इसके लिए हम अपनी सेना सिन्धु के पश्चिमी तट पर भेज देनी चाहिए और व्यूह रचना कर उसे वहाँ मागध सेना की प्रतीक्षा करनी चाहिए। यही वह स्थान है जहाँ पुष्यमित्र ने यवनराज दिमित्र को परास्त किया था। इस बार युद्ध में अवश्य ही हमारी विजय होगी। मद्रक जनपद से जो भी सैनिक एकत्र किए जा सकेंगे, वे यवनों का साथ देंगे। मैं स्वयं मद्रक सेना का सेनापतित्व करूँगा।

यवन सेनानायकों ने सोमदेव के प्रस्ताव का समर्थन किया। अम्बुलिम पल्ली के सामने सिन्धु नदी के पश्चिमी तट पर स्कन्धावार डाल दिया गया और यवनों तथा मद्रकों की सेना व्यूह रचना कर यज्ञीय अश्व की प्रतीक्षा करने लगी। वाहीक देश में निर्बाध गति से विचरण करता हुआ यज्ञीय अश्व जब अम्बुलिम पहुँचा तो कुछ यवन सैनिकों ने उसे पकड लिया। एक नौका पहले ही वहाँ तैयार थी। अश्व को तुरन्त सिन्धु के पश्चिमी तट पर ले जाया गया। एक बार फिर सिन्धु तट पर यवनों और मागध सेना में घनघोर युद्ध हुआ। सैकडों राजपुत्रों और सहस्रों वीर सैनिकों से घिरे हुए कुमार वसुमित्र ने इस युद्ध में अनुपम वीरता प्रदर्शित की। सिन्धु नदी को पार कर मागध सेना ने यज्ञीय अश्व को बन्धन से मुक्त करा दिया और मिनेन्द्र को परास्त कर वसुमित्र पाटलिपुत्र लौट आया। सुवर्णालंकारों से विभूषित यज्ञीय अश्व को सकुशल यज्ञ मण्डप में वापस आया देखकर मगध की जनता के हर्ष का कोई ठिकाना नहीं रहा। पूर्व समुद्र से सिन्धुनद तक अब पुष्यमित्र का अबाध शासन स्थापित हो गया था यवनों ने उसके सम्मुख हथियार डाल दिए थे और मगध के शासन तन्त्र में एक बार फिर शक्ति का संचार हो गया था।

पर अभी अश्वमेध यज्ञ पूर्ण नहीं हुआ था। राजा पुष्यमित्र ने जिस यज्ञ का अनुष्ठान प्रारम्भ किया था वह तभी पूरा हो सकता था जबकि उनकी अर्धांगिनी भी यज्ञमण्डप में उपस्थित हों। सहधर्मिणी के बिना आर्यों का कोई भी यज्ञ पूर्ण नहीं होता। राजमहिषी दिव्या अपने पुत्र अग्निमित्र के

पास विदिशा गई हुई थी और चिरकाल से वही रह रही थी। उनकी अनुपस्थिति मे पुष्यमित्र अन्य सम्भ्रान्त राजपुरुषों के साथ गंगा और सोण नदियों के संगम पर प्रतिदिन स्नान करते और यज्ञमण्डप में आकर देव सविता के निमित्त आहुतियां प्रदान करते। उस समय बहुत से वीणावादक वहां उपस्थित रहते, और राजा की स्तुति मे स्वरचित पद्य गा कर सभा जनों का मनोरंजन करते। पर यज्ञीय अश्व के सकुशल पाटलिपुत्र वापस आ जाने पर अश्वमेध की शेष विधियाँ तभी पूर्ण की जा सकती थी जबकि राजमहिषी दिव्या भी यज्ञमण्डप में उपस्थित हों। आचार्य पतञ्जलि के आदेश से एक पत्र अग्निमित्र के पास भेजा गया। उसे लेकर जब राजदूत विदिशा पहुँचा, अग्निमित्र अपनी मन्त्रि-परिषद के साथ विचार विमर्श में व्याप्त थे। मगध की राजमुद्रा से मुद्रित पत्र को देखकर वह आसन से उठ खड़े हुए और सम्मान के साथ उन्होंने राजकीय पत्र को ग्रहण किया। पत्र इस प्रकार था— स्वस्ति! सेनानी पुष्यमित्र विदिशा में स्थित अपने पुत्र आयुष्मान अग्निमित्र को स्नेह के साथ आलिंगन कर यज्ञ भूमि से यह पत्र भेज रहे हैं। विदित हो कि अश्वमेध के अनुष्ठान की दीक्षा लेकर मैंने जो यज्ञीय अश्व निर्बाध रूप से विचरण करने के लिए छोड़ा था, उसकी रक्षा का भार वसुमित्र को दिया गया था। सौ राजपुत्र और बहुत-से सैनिक इस कार्य में सहायता के लिए वसुमित्र के साथ कर दिए गए थे। स्वच्छन्द रूप से विचरण करता हुआ यज्ञीय अश्व जब सिन्धु नदी के तट पर पहुँचा, तो यवन अश्वारोहियों के एक दल ने उसे पकड़ लिया। उत्कृष्ट धनुर्धर वसुमित्र ने तब युद्ध में शत्रुओं को परास्त किया और बलपूर्वक अपहरण किए गए यज्ञीय अश्व को यवनों से छुड़ा लिया। अब वसुमित्र अश्व के साथ सकुशल पाटलिपुत्र लौट आया है। यज्ञ का अब समापन किया जाना है। जिस प्रकार राजा सगर ने अपने पौत्र अंशुमान द्वारा यज्ञीय अश्व के सकुशल वापस लौटा लाने पर यज्ञ की विधि को पूर्ण किया था, वैसे ही मैं भी करूँगा। अतः आप एक क्षण भी नष्ट किये बिना तुरन्त सपरिवार यज्ञभूमि में उपस्थित हो जाएँ। राजमहिषी दिव्या और तीनों वधुओं का भी यज्ञ में सम्मिलित होना आवश्यक है। सबको शीघ्र से शीघ्र पाटलिपुत्र पहुँच जाना चाहिए।

सेनानी के पत्र को पढ़कर अग्निमित्र की आँखों से हर्ष के आँसू प्रवाहित होने लगे। धारिणी के पास जाकर उन्होंने कहा— सेनानी का पत्र आया है। जानती हो उन्होंने क्या लिखा है? आज तुम सचमुच 'वीरसू' हो गई हो। तुम्हारे पुत्र ने सिन्धु तट पर यवनों को परास्त कर वीरों में मूर्धन्य स्थान प्राप्त किया है। सेनानी ने वसुमित्र को जो आशीर्वचन कहे थे वे अब सफल हो गए हैं। जब तक गंगा और यमुना में जल की एक भी बूँद रहेगी, तुम्हारे पुत्र की वीर गाथा इस आर्यभूमि में गौरव के साथ गाई जाया करेगी। अब उठो पाटलिपुत्र की यात्रा की तैयारी करो। हम सबको कल ही विदिशा से प्रस्थान कर देना है।

यात्रा की तैयारी में अधिक समय नहीं लगा। नर्मदा के तट पर स्थित मागध सेना के नायक वीरसेन उस समय विदिशा में ही थे। कुछ चुने हुए सैनिकों को साथ लेकर वह भी अपने बहनोई अग्निमित्र के साथ हो लिए। पाटलिपुत्र पहुँचते ही धारिणी ने वसुमित्र को अंक में भर लिया। पुत्र के सिर पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा— याद है बेटा! जब तुम बहुत छोटे थे सेनानी ने तुम्हें क्या आशीर्वाद दिया था। तुम्हारे जैसे पुत्र को पाकर मैं धन्य हो गई हूँ। अपने पिता और पितामह के चरण चिह्नों का अनुसरण कर सदा आर्यभूमि के हित के लिए प्रयत्नशील रहो।

राजमहिषी दिव्या के यज्ञ मण्डप में आ जाने पर अश्वमेध की शेष विधियाँ पूर्ण की गई। इक्कीस अरत्नि ऊँचे इक्कीस यूप बनाए गए। ये देवदारु बिल्व खदिर आदि की लकड़ी से निर्मित किये गए थे। यज्ञीय अश्व को तीन अन्य घोड़ों के साथ रथ में जोतकर गंगा और सोन के संगम पर स्नान के लिए ले जाया गया। पुष्यमित्र और पतञ्जलि रथ पर आरूढ़ थे दिव्या भी उनके साथ थी। अश्व को स्नान कराने से पूर्व दिव्या ने उस पर घृत मला। स्नान के अनन्तर १०१ सुवर्ण निष्कों द्वारा यज्ञीय अश्व को अलंकृत कर यज्ञ मण्डप में लाया गया और केन्द्रीय यूप के साथ उसे बाँध दिया गया। अब दिव्या तथा राजकुल की अन्य महिलाओं ने अनेक बार उसकी प्रदक्षिणा की। प्रदक्षिणा करते हुए वे यह उच्चारण कर रही थीं— गणानां त्वा गणपतिं हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिं हवामहे। तदनन्तर यज्ञीय अश्व का आलम्भन कर बलि की विधि भी पूरी कर दी

गई। फिर पुष्यमित्र को व्याघ्रचम पर विठाया गया, और दानपुण्य प्रारम्भ हुआ। ब्रह्मा, अध्वयु आदि सब ऋत्विगो को एक एक सहस्र गौएँ तथा सौ सौ सुवण निष्क प्रदान किये गए। विजित प्रदेशो और अधीनता स्वीकार कर लेने वाले जनपदो से जो धन-सम्पत्ति यज्ञ के अवसर पर उपहारस्वरूप प्राप्त हुई थी, वह सब ब्राह्मणो और श्रमणो को दान दे दी गई।

अश्वमेध यज्ञ की सब विधिया अब पूण हो गई थी। पाटलिपुत्र के नागरिको न इस यज्ञ को कौतूहल की दष्टि से देखा। सदियो से वहाँ के किसी भी राजा न इस यज्ञ का अनुष्ठान नही किया था। मगध के 'सवक्षत्रान्तक' और 'शूद्रप्राय राजा अपने उत्कप के लिए अन्य राजाओ तथा राजकुलो का मूलोच्छेद कर देने मे ही विश्वास रखते थ। पर आर्यों की पुरानी परम्परा इससे भिन्न थी। आय राजा भी सावभौम चक्रवर्ती पद की प्राप्ति के लिए प्रयत्न किया करते थे। उनकी भी यह आकाक्षा रहती थी कि सारी पृथ्वी को जीतकर 'सब राजाओ मे श्रेष्ठ' स्थिति को प्राप्त करें। पर विजित राजाओ का वे मूलोच्छेद नही करते थे उनसे अधीनता स्वीकार कराके ही व सतोष कर लिया करते थे। बहुत समय पश्चात पुष्यमित्र न एक बार फिर आय राजाओ की प्राचीन मयादा का अनुसरण कर एक एस साम्राज्य का निर्माण किया था जिसम अन्य राजाओ तथा जनपदो की स्वतन्त्रता सुरक्षित थी। इसी प्रयोजन से उन्होने अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान किया था और सम्पूण आय भूमि पर अपना आधिपत्य स्थापित करन मे सफलता प्राप्त की थी। हिमालय से समुद्र पयन्त सहस्र योजन विस्तीण जो यह पृथ्वी है, वह एक बार फिर एक शासन म आ गई थी, और उसका शासन सूत्र एक ऐसे व्यक्ति के हाथो म था जो चन्द्रगुप्त और बिन्दुसार के समान ही वीर साहसी और पराक्रमी था।

सिन्धु नदी के तट पर वसुमित्र द्वारा परास्त होकर यवनराज मिनेन्द्र गान्धार की राजधानी पुष्कलावती चले गए थे। आचाय नागसेन भी उनके साथ थ। मिनेन्द्र अब भी उनसे भगवान तथागत की मध्यमा प्रतिपदा के सम्बन्ध मे अपनी शकाओ का निवारण करते रहते थे। एक दिन यवनराज न आचाय से प्रश्न किया— पुष्यमित्र और पतञ्जलि के कारण क्या मध्यदेश से अब सद्धम का पूर्णतया लोप हो जाएगा ? इसका उत्तर देते हुए नागसेन

ने कहा— जिसका आदि है उसका अन्त होना भी अवश्यम्भावी है। कार्यकारण भाव से जिन वस्तुओं व सत्ताओं का प्रादुर्भाव होता है उनका विनाश भी अवश्य होता है। तथागत की यही शिक्षा है। पर किसी भी सत्ता का कभी पूर्णरूप से अन्त नहीं होता। जिसे हम वस्तुओं का विनाश कहते हैं, वस्तुतः वह उनका रूपान्तर ही हुआ करता है। सद्धर्म का भी कभी अविकल रूप से अन्त नहीं होगा। भगवान् तथागत की शिक्षाएँ मध्यदेश में स्थिर रहेंगी और वहाँ के निवासियों को सदा प्रेरणा देती रहेंगी। प्राणी मात्र के प्रति करुणा की भावना, अहिंसा और सबका हित एवं कल्याण के जो उपदेश भगवान् बुद्ध ने दिये थे भारतभूमि से उनका कभी लोप नहीं होगा। इस देश के सब धर्म, सम्प्रदाय और पाषण्ड तथागत की इन शिक्षाओं को आत्मसात् कर लेंगे।

• •

परिशिष्ट १

स्थान-परिचय

अग्रोदक नगरी—आग्रेय गण की राजधानी। वतमान अगरोहा (हिसार जिले म)

अधक वण्णि—एक सघ राज्य (मथुरा के क्षेत्र मे)

अभिसार—एक जनपद जो दक्षिणी कश्मीर के जेहलम और चनाब नदियो के मध्यवर्ती क्षेत्र म स्थित था।

अम्बुलिम—सिन्धु नदी को पार करने के घाट के समीप स्थित एक बस्ती जो वतमान अटक के समीप थी।

अमरकण्टक—छोटा नागपुर के जागल प्रदेश के दक्षिणी पाश्व मे स्थित एक नगर।

अवन्ति—एक जनपद जो मध्य प्रदेश के मालवा क्षेत्र मे था और जिसकी राजधानी उज्जन थी।

असिक्नी—चनाब नदी (पजाब मे)।

अश्मक—हैदराबाद के प्रदेश मे स्थित एक प्राचीन जनपद।

अहिच्छत्र—उत्तर पाञ्चाल जनपद की राजधानी। वतमान समय के बरली जिले म आवला नगर क समीप।

आग्रय—हिसार (हरियाणा) म स्थित एक गणराज्य।

आजु नायन—एक गणराज्य जिसकी स्थिति पूर्वी पजाब मे थी।

इन्द्रप्रस्थ—कुरु राज्य की राजधानी। दिल्ली के पुराने किले के क्षेत्र म स्थित प्राचीन नगरी।

इरावती—रावी नदी (पजाब म)।
उद्यानपुरी—अफगानिस्तान की एक प्राचीन नगरी।
कटवप्र—मसूर राज्य म एक प्राचीन स्थान।
कठ—एक गणराज्य जो रावी और व्यास नदियो म बीच म स्थित था।
कपिलवस्तु—शाक्य गण की राजधानी। बस्ती (उत्तर प्रदेश) जिले क क्षेत्र म।
कपिश—हिन्दूकुश पर्वतमाला स काबुल नदी तक का प्रदेश।
कलिंग—उडीसा का प्रदेश।
काम्पिल्य—दक्षिण पाञ्चाल की राजधानी। कन्नौज के समीप गगातट पर।
कामरूप—असम प्रदेश।
कुभा—काबुल नदी (अफगानिस्तान म)।
क्रमु नदी—कुर्रम (अफगानिस्तान म)।
कुणिन्द—एक गणराज्य (पजाब म)।
काकनद—साञ्ची के समीप एक प्राचीन नगरी।
कुरु—गगा-यमुना नदियो का मध्यवर्ती तथा यमुना के पश्चिम का प्रदेश, जिसमे मेरठ व उसके समीपवर्ती जिले तथा दिल्ली अन्तर्गत थे।
केकय—जेहलम तथा चनाव नदियो का मध्यवर्ती प्रदेश जो अभिसार जनपद के दक्षिण म था। वर्तमान जेहलम गुजरात और शाहपुर (पाकिस्तान म)।
कोशल—आधुनिक अवध।
कौशाम्बी—प्राचीन वत्स जनपद की राजधानी। इलाहाबाद जिले म।
क्षुद्रक—एक गणराज्य जिसकी स्थिति मोन्टगोमरी (पाकिस्तान) के क्षेत्र म थी।
गान्धार—इस नाम के दो जनपद थे पूर्वी गान्धार और पश्चिमी गान्धार। सिन्ध और जेहलम नदियो के बीच के प्रदेश म पूर्वी गान्धार स्थित था, जिसकी राजधानी तक्षशिला थी। पश्चिमी गान्धार सिन्ध नदी के पश्चिम मे था, और उसकी राजधानी पुष्कलावती था।
ग्लुचुकायन—एक गणराज्य (पजाब म)।

चम्पा—अग जनपद की राजधानी जो चम्पा नदी के तट पर स्थित था।
चत्यगिरि—विदिशा (भिनसा) के समीप एक पहाडी, जिस पर साञ्ची का प्राचीन स्तूप विद्यमान है।
च द्रभागा—चनाव नदी।
तक्षशिला—पूर्वी गा धार की राजधानी। वतमान टक्सिला (पाकिस्तान म)
दशाण—मध्य प्रदेश का वह भाग जहा विदिशा और भापाल आदि हैं।
नवराजगह—वाल्हीक नगर का एक भाग।
प्रतिष्ठान—वतमान पठन (महाराष्ट मे)।
पाथव—पार्थिया का प्रदेश जिसकी स्थिति कस्पियन सागर के दक्षिण-पूव के खुरासान तथा समीपवर्ती क्षेत्र म थी।
पाञ्चाल—यह एक जनपद था जो दो भागा मे विभक्त था उत्तर पाञ्चाल और दक्षिण पाञ्चाल। वतमान समय का रुहलखण्ड उत्तर पाञ्चाल को और कानपुर फरुखाबाद-कनौज दक्षिण पाञ्चाल को सूचित करते हैं।
पुष्कलावती—पश्चिमी गा धार की राजधानी।
पुष्पपुर—पेशावर नगर।
भद्र—एक गणराज्य जो आग्रेय गण के पश्चिम मे स्थित था।
बहु धायक—यौधेय गण की राजधानी। आधुनिक हरियाणा के क्षेत्र म, सम्भवत रोहतक जिल म।
ब्रह्मावत—एक प्राचीन तीथ जा दक्षिण पाञ्चाल म गगातट पर स्थित था।
बाल्ही—बैक्ट्रिया (हि दूकुश पवतमाला के उत्तर-पश्चिम मे)।
भगुकच्छ—भडौच।
मगध—दक्षिणी विहार।
मत्स्य—एक जनपद, जो यमुना के दक्षिण-पश्चिम म उस क्षेत्र म स्थित था जहाँ अब भरतपुर और अलवर हैं।
मद्रक—एक गणराज्य जिसकी स्थिति रावी और चनाब नदियो के मध्य-वर्ती उस प्रदेश म थी जहाँ अब सियालकोट (पाकिस्तान म) है।
मध्यदेश—उत्तर भारत का वह क्षेत्र जहाँ वतमान समय म बिहार, उत्तरप्रदेश हरियाणा आदि स्थित हैं प्राचीन समय मे मध्यदेश

कहलाता था।

माध्यमिका—शिवि जनपद की राजधानी आधुनिक चित्तौड़ के समीप।

मालव—एक गणराज्य जो रावी और चनाब नदियों के संगम के क्षेत्र में स्थित था।

मूलक—गोदावरी नदी के तट पर स्थित एक जनपद।

यवन—ग्रीक यूनानी।

यौधेय—एक गणराज्य जिसकी स्थिति आधुनिक हरियाणा में थी।

राजन्य—एक गणराज्य जो यौधेय गण के समीप स्थित था।

राजगृह—केकय जनपद की राजधानी।

रोहितक—एक गणराज्य जो हरियाणा के रोहतक जिले में स्थित था।

लुम्बिनी वन—बुद्ध का जन्मस्थान, नेपाल की तराई में।

वत्स—एक जनपद, राजधानी कौशाम्बी इलाहाबाद के क्षेत्र में।

वज्जि—एक गणराज्य, उत्तरी बिहार के तिरहुत क्षेत्र में।

वरदा नदी—वर्धा नदी (महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र में)।

वाल्हीक—बल्ख बाख्त्री या बैक्ट्रिया।

वाहीक देश—वर्तमान समय का पंजाब (भारत और पाकिस्तान में)।

विदर्भ देश—बरार (महाराष्ट्र का एक भाग)।

वितस्ता—जेहलम नदी।

विदिशा—वर्तमान भिलसा (मध्य प्रदेश में)।

वक्षु—आमू नदी (अफगानिस्तान के उत्तर पश्चिम में)।

शतुद्रि—सतलज नदी।

शाकल—वर्तमान सियालकोट, मद्रक गण की राजधानी।

शाक्य—उत्तरी बिहार का एक गणराज्य राजधानी कपिलवस्तु।

शिवि—एक गणराज्य जो मालव गण के समीप स्थित था।

श्रावस्ती—गोंडा और बहराइच जिलों की सीमा पर स्थित कोशल जनपद की राजधानी (बौद्ध युग में)।

साकेत—कोशल जनपद की महत्वपूर्ण नगरी वर्तमान अयोध्या के समीप।

साञ्ची—भिलसा (विदिशा) के समीप एक स्थान जहां एक प्राचीन बौद्ध स्तूप विद्यमान है।

सारनाथ—वाराणसी के समीप, जहा बुद्ध ने धमचक्र का प्रवतन किया था।

सौवीर—सिध (पाकिस्तान) के दक्षिण-पूर्वी भाग मे स्थित एक प्राचीन जनपद।

स्रुघ्न—कुरु देश के उत्तर म। सहारनपुर और अम्वाला जिलो के उत्तरी भाग इसके अतगत थे।

परिशिष्ट २

शब्द-अर्थ

अभिचार क्रिया—मारण सम्मोहन आदि के तान्त्रिक प्रयोग।

अभियान—आक्रमण।

अधिकरण—राजकीय शासन का विभाग डाइरेक्टोरेट।

अन्तपाल—सीमावर्ती प्रदेश की रक्षा के लिए नियुक्त सेनानायक।

अपराजित—एक देवता जिसकी पूजा प्राचीन काल म प्रचलित थी।

अप्रतिहत—एक देवता।

अमात्य—राजपदाधिकारी।

अरत्नि—एक माप १८ इंच के लगभग।

अष्टाङ्गिक आर्य धर्म—बौद्ध धर्म। सम्यक् दृष्टि सम्यक संकल्प, सम्यक वचन सम्यक कर्म सम्यक आजीविका, सम्यक प्रयत्न, सम्यक विचार और सम्यक ध्यान ये बौद्ध धर्म के आठ अंग हैं। इसीलिए उसे अष्टांगिक आर्य धर्म भी कहते है।

अर्थ—धन सांसारिक साधन, ऐसी पृथ्वी जहाँ मनुष्य बसे हुए हों।

आथर्वण—अथर्व वेद म प्रतिपादित ऐसे साधन जिनसे बाद म तन्त्र मन्त्र का विकास हुआ।

आपूपिक—रोटी एव पूड़े बनाने वाला रसोइया।

आन्तर्वशिक—मौर्य युग का एक राजपदाधिकारी राजप्रासाद और राजा की रक्षा जिसके अधिकार-क्षेत्र मे होते थे।

आन्वीक्षकी—दर्शन शास्त्र।

आटविक—अटवि-जगल। आटविक-जगल के निवासी।
आयुक्त—राजपदाधिकारी, कमिश्नर।
आत्ययिक—तुरत करणीय काय।
आशु मृतक परीक्षा—पोस्टमाटम।
आलभन—स्पश घात।
उपधा—परख, परीक्षा।
उच्छल ध्वज—बुज।
उदास्थित—परिव्राजको का एक भेद।
उशना—आचाय शुक्र।
औदनिक—चावल पकाने वाला रसोइया।
औपनिपिदिक—तान्त्रिक एव रहस्यमयी अभिचार क्रियाओ को करने वाला।
औशनस—आचाय शुक्र द्वारा प्रवर्तित राजनीति शास्त्र का एक सम्प्रदाय।
कक्ष्या—कोठरी। कक्ष्या विभाग—पृथक होकर बठने के लिए बनाया हुआ कमरा।
कमकर—मजदूर।
कर्मान्त कमशाला—कारखाना।
कल्पनाथ—भगवान शिव का एक नाम।
कण्टक शोधन—फौजदारी न्यायालय।
कार्तान्तिक—ज्योतिषी।
कापटिक—कपट वेशधारी गुप्तचर।
कातिकेय—स्कन्द, एक देवता।
कार्षापण—मौय युग का प्रमुख सिक्का।
कुल मुख्य—कुल (क्लन) का मुखिया।
कूटस्थानीय—जिसका स्थान केन्द्रीय एव प्रमुख हो।
कोष्ठ (कोष्ठक)—मन्दिर, जहाँ देवता की मूर्ति स्थापित हो।
गण (गणराज्य)—एसा राज्य जिसम किसी वशक्रमानुगत राजा का शासन न हो।
गण मुख्य—गणराज्य का प्रधान, राष्ट्रपति।

गर्भगृह—तहखाना म छिपा ि
गण पुरस्कृत—यौधेय गणरा—
गणिका—वेश्या।
गुल्मपति—गुल्म का नायक।
गुल्म—सनिक टुकडी।
गूढ़ पुरुष—गुप्तचर।
ग्रामणी—ग्राम का प्रधान।
चरित्र—कानून का अन्यतम अग।
परम्परागत कानून।
चर—पकाय हुए चावलो से निर्मित।
चातुरन्त—चारो दिशाओ म व्याप्त।
चीवर—बौद्ध भिक्षुओ द्वारा धारण ि
जन—कबीला ट्राइब।
जनपद—एसा राज्य जिसम प्रधानतया
प्राचीन भारत म बहुत-से जनपद थ
जटिल—जटा धारण करने वाला तपस्वी
जयन्त—एक देवता।
जानपद सभा—जनपद की सभा।
जानपद—जानपद सभा का सदस्य।
ज्येष्ठ (ज्येष्ठक)—व्यवसायियो तथा व्यापा
तीर्थ—राज्य क प्रमुख शासकीय विभाग, मु—
तूर्यकर—तुरही बजाने वाला।
दण्ड—शासन। दण्डनीति—शासन विज्ञान।
शक्ति।
दण्ड मुद्रा—राजकीय मुहर।
दण्डपाल—सना का अन्यतम अधिकारी।
दुरभिसंधि—साजिश षडयन्त्र।
दौवारिक—दुग एव राजप्रासाद के प्रवेश-द्वार का मुख
धर्म—कानून कर्तव्य कानून का अन्यतम अग।
धर्मस्थीय—दीवानी न्यायालय।

धर्मस्थ—धर्मस्थीय न्यायालय का न्यायाधीश।
ध्वजमात्र—जिसके पास वास्तविक राजशक्ति न हो, जो राजशक्ति का चिह्नमात्र हो।
निगम—व्यापारियों का संगठन।
निष्क—सोने का प्राचीन सिक्का।
निःश्रयण—सीढ़ी।
नैमित्तिक—ज्योतिषियों का एक भेद।
पण—प्राचीन काल का एक सिक्का।
पण्य—विक्रय पदार्थ।
पण्यशाला—दूकान।
पक्व—पक्वान्न पकवान।
पक्वान्न पण्य—हलवाई।
पक्वमासिक—मास प्रदान वाला।
पण्यवीथि—बाजार।
पर्णमणि—पत्तों से निर्मित विजयोपहार।
पल्ली—छोटी नगरी।
प्रवहण—नौका।
प्लव—नौका।
प्रत्यन्त—सीमान्त प्रदेश।
प्रत्यपाय—विपत्ति, विघ्न संकट।
प्रव्रज्या—संन्यास।
प्रदेष्टा—कण्टक शोधन न्यायालय का न्यायाधीश।
पान्थशाला (पान्थागार)—यात्रियों के निवास का स्थान, होटल।
पानागार—शराब खाना।
पाषण्ड—धार्मिक सम्प्रदाय।
पेशलरूपा—परम सुन्दर, सुकुमारी।
पौर—पुरसभा। पुरसभा का सदस्य।
ब्रह्मण्यदेव—एक देवता। स्कन्द कार्तिकेय।
भृति—वेतन।

गर्भगृह—देवस्थान में स्थित निवास-स्थान।
गण पुरस्कृत—यौधेय गणराज्य के प्रधान की संज्ञा।
गणिका—वेश्या।
गुल्मपति—गुल्म का नायक।
गुल्म—सैनिक टुकड़ी।
गूढ़ पुरुष—गुप्तचर।
ग्रामणी—ग्राम का प्रधान।
चरित्र—कानून का अन्यतम अंग। विविध जनपदों, ग्रामों व जातियों के परम्परागत कानून।
चरु—पकाये हुए चावलों से निर्मित हवि।
चातुरन्त—चारों दिशाओं में व्याप्त।
चीवर—बौद्ध भिक्षुओं द्वारा धारण किया जाने वाला वस्त्र।
जन—कबीला, ट्राइब।
जनपद—ऐसा राज्य जिसमें प्रधानतया किसी एक जन का निवास हो। प्राचीन भारत में बहुत-से जनपदों की सत्ता थी।
जटिल—जटा धारण करने वाला तपस्वी साधु।
जयन्त—एक देवता।
जानपद सभा—जनपद की सभा।
जानपद—जानपद सभा का सदस्य।
ज्येष्ठ (ज्येष्ठक)—व्यवसायियों तथा व्यापारियों के संगठन का प्रधान।
तीर्थ—राज्य के प्रमुख शासकीय विभाग, मुख्य अमात्य।
तूर्यकर—तुरही बजाने वाला।
दण्ड—शासन। दण्डनीति—शासन विज्ञान। दण्डशक्ति—शासकीय शक्ति।
दण्ड मुद्रा—राजकीय मुहर।
दण्डपाल—सेना का अन्यतम अधिकारी।
दुरभिसन्धि—साजिश, षड्यन्त्र।
दौवारिक—दुर्ग एवं राजप्रासाद के प्रवेश-द्वार का मुख्य अधिकारी।
धर्म—कानून, कर्तव्य, कानून का अन्यतम अंग।
धर्मस्थीय—दीवानी न्यायालय।

धमस्थ—धमस्थीय न्यायालय का न्यायाधीश।
ध्वजमात्र—जिसके पास वास्तविक राजशक्ति न हो, जो राजशक्ति का चिह्नमात्र हो।
निगम—व्यापारियों का संगठन।
निष्क—सोने का प्राचीन सिक्का।
निःश्रेयस—मोक्ष।
नैमित्तिक—ज्योतिषियों का एक भेद।
पण—प्राचीन काल का एक सिक्का।
पण्य—विक्रय पदार्थ।
पण्यशाला—दूकान।
पक्थ—पख्तून पठान।
पक्वान्न पण्य—हलवाई।
पक्वमांसिक—मांस पकाने वाला।
पण्यवीथि—बाजार।
पर्णमणि—पत्तों से निर्मित विजयोपहार।
पल्ली—छोटी नगरी।
प्रवहण—नौका।
प्लव—नौका।
प्रत्यन्त—सीमान्त प्रदेश।
प्रत्यपाय—विपत्ति, विघ्न, संकट।
प्रव्रज्या—संन्यास।
प्रदेष्टा—कण्टक शोधन न्यायालय का न्यायाधीश।
पान्थशाला (पान्थागार)—यात्रियों के निवास का स्थान, होटल।
पानागार—शराब खाना।
पाषण्ड—धार्मिक सम्प्रदाय।
पेशलरूपा—परम सुन्दर, सुकुमारी।
पौर—पुरसभा। पुरसभा का सदस्य।
ब्रह्मण्यदेव—एक देवता। स्कन्द कार्तिकेय।
भृति—वेतन।

भृतसेना—भृति प्राप्त कर काम करनेवाले सैनिकों की सेना।
मध्यमा प्रतिपदा—बुद्ध द्वारा प्रतिपादित मध्यमार्ग बौद्ध धर्म।
महानस—रसोईघर।
मन्त्रयुद्ध—कूटनीति का युद्ध।
मानव—मनु द्वारा प्रवर्तित विचार सम्प्रदाय।
मायायोग—तन्त्र मन्त्र की सिद्धि।
मायायोग सिद्ध—तन्त्र-मन्त्र में प्रवीण।
मौल सेना—राज्य के मूल निवासी नागरिकों की सेना।
मौहूर्तिक—ज्योतिषी।
रक्ष—राक्षस रहस्यमयी दुष्ट सत्ताएँ।
रसद—विष देनेवाला।
राजशासन—राजा व राज्य द्वारा प्रचारित आदेश।
रूपाजीवा—रूप द्वारा आजीविका चलानेवाली वेश्या।
व्यवहार—कानून का अन्यतम अंग। व्यक्तियों एवं व्यक्ति-समूहों द्वारा जो संविदाएं (कन्ट्रैक्ट) की गई हों।
वार्ता—कृषि पशुपालन और वाणिज्य।
वार्तोपजीवि संघ या गण—ऐसे गणराज्य, जिनके निवासी अपनी आजीविका के लिए कृषि, पशुपालन और वाणिज्य का अनुसरण करते हों।
वदेहक—व्यापारी सौदागर।
शासन—राजकीय आदेश सरकार।
शासनतन्त्र—सरकार।
श्रमण—बौद्ध तथा जैन साधु।
श्वपाक—चाण्डाल।
श्रावक—बौद्धधर्म का अनुयायी गृहस्थ।
श्रेणि—व्यवसायियों और शिल्पियों के संगठन गिल्ड।
श्रेणिमुख्य, श्रेणिज्येष्ठक—श्रेणि का प्रधान।
सन्निधाता—राजकीय कोष का प्रधान अधिकारी।
समाहर्ता—राजकीय करों को एकत्र करने वाला प्रधान अधिकारी।
समाज—पान, नृत्य आदि के निमित्त समारोह या गोष्ठी।

सत्री—गुप्तचर।
सचिवायत्तसिद्धि—जो राजा शासन के सम्बन्ध में मन्त्रियों पर निर्भर करे।
सर्वोपधाशुद्ध—ऐसा व्यक्ति जो सब परखों से शुद्ध सिद्ध हो।
सार्थ—काफिला।
सार्थवाह—काफिले का नेता।
स्कन्धावार—छावनी।
सन्दोह—समूह।
सभार—सामग्री, आवश्यक वस्तुएँ।
सघाराम—बौद्ध भिक्षुओं व आचार्यों का आश्रम, विहार।
सहत—सघ या सगठन में सगठित।
सघात—सघ सगठन।
सयात्य—युद्ध के लिए प्रयुक्त होनेवाली नौकाएँ।
स्थविर—बौद्ध धर्मगुरु, थेर।
त्रयी—वैदिक सहिताएँ। ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद।
त्रिपिटक—बौद्ध धर्म के धर्म ग्र